ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स टेलकेम कास्टिंग (प्रा॰) लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

WP(C) No. 2643 of 2007. Decided on 12th July, 2013.

झारखंड औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकरण (संशोधन) अधिनियम–धारा 6 (2)—भूमि का आवंटन–इस आधार पर कि याची परिसर में निर्माण गतिविधि, जिसके लिए भूखंड आवंटित किया गया था, करने में लिप्त नहीं हुआ था और परिसर को पट्टा पर देकर पट्टा शर्तों का उल्लंघन किया था, आवंटन का रद्दकरण और जमा की गयी राशि का समपहरण–आरंभ में, जब आक्षेपित आदेश पारित किया गया था, याची ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ द्वारा उसको आवंटित भूखंड में किसी निर्माण गतिविधि में लिप्त नहीं रहा था जो आवंटन रद्द करते आक्षेपित आदेश को पारित किए जाने की ओर ले गया–याची उच्च न्यायालय द्वारा पहले पारित किए गए अंतरिम आदेश के फलस्वरुप आवंटित भूमि पर काबिज बना रहा–याची ने गंभीर प्रयास करके इकाई को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया–इकाई एक बार फिर पुनर्जीवित हुआ है और यह प्रत्यर्थी ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के पदधारियों द्वारा दिए गए रिपोर्ट के मुताबिक जैसा उनके निरीक्षण में पाया गया था, काम कर रही है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 9 से 13)

अधिवक्तागण.–M/s. M.S. Mittal, Shilpi John, For the Petitioner; JC to GP IV, Mr. C.A. Bardhan, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची प्रत्यर्थी सं॰ 2 आदित्यपुर औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकरण द्वारा जारी दिनांक 18.4.2007 के आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय के पास आया है जिसके द्वारा झारखंड औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकरण (संशोधन) अधिनियम की धारा 6 (2) खंड (a) और (b) के अधीन शक्ति के प्रयोग में भूमि का आवंटन और पट्टा विलेख रद्द कर दिया गया था और उसके द्वारा जमा राशि समपहृत कर ली गयी है।

3. रद्दकरण का आधार यह था कि याची परिसर में निर्माण गतिविधि करने में लिप्त नहीं था जिसके लिए भूखंड आवंटित किया गया था और उसने परिसर को पट्टा पर देकर पट्टा शर्तों का उल्लंघन किया था।

4. जब मामला दिनांक 14.5.2007 को सुनवाई के लिए लिया गया था, इस प्रभाव का अंतरिम आदेश पारित किया गया था कि प्रत्यर्थीगण याची को बेदखल करने के लिए कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाएँगे। तत्पश्चात, मामला कुछ समय के लिए लंबित पड़ा रहा। दिनांक 5 नवंबर, 2012 को जब मामला सुनवाई के लिए लिया गया था, याची ने यह प्रकथन करते हुए पूरक शपथपत्र दाखिल किया कि कास्टिंग प्रयोजन से नयी प्रौद्योगिकी का उपयोग करके कारखाना पुनर्जीवित किया जा रहा है। याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया था कि औद्योगिक क्षेत्र में भूखंड आवंटित करने का पूर्ण प्रयोजन और उद्देश्य औद्योगिकरण के लिए इकाई को प्रोत्साहन करना है। याची औद्योगिक प्रयोजन से परिसर का उपयोग करने में सद्भावपूर्ण रूप से हितबद्ध है और ऐसा करने की प्रक्रिया में है। प्रत्यर्थीगण उसको बेदखल करने में और नया उद्योग स्थापित करने के लिए एक अन्य हितबद्ध इकाई को उसी भूमि को आवंटित करने में न्यायोचित नहीं होंगे।

5. प्रत्यर्थी ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के अधिवक्ता को उक्त शपथ पत्र का प्रत्युत्तर दाखिल करने के लिए समय दिया गया था और उन्होंने याची की प्रश्नगत इकाई के परिसर में किए गए निरीक्षण के आधार पर उत्तर दाखिल किया। यद्यपि प्रत्यर्थी ए॰ आई॰ ए॰ ए॰ डी॰ की ओर से शपथ पत्र पर निरीक्षण रिपोर्ट दाखिल किया गया था किंतु, यह प्रश्नगत इकाई के बारे में कतिपय भ्रम के कारण सही नहीं था। प्रबंध निदेशक के अनुदेश पर सचिव, ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ द्वारा गठित टीम द्वारा याची की इकाई का आगे निरीक्षण किया गया था। एक अन्य शपथ पत्र द्वारा ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ की ओर से दाखिल सदस्य कमिटी की निरीक्षण रिपोर्ट निम्नलिखित निबंधनों में है:–

^^,e0 Mh0 d vun'kkulkj] vkfnR;iqj vk|kfxd {k=] vk|kfxd lfefr d fudV Hk[kM l0 A/3 ij vofLFkr bdkb ell Vyde dkfLVx (çk0) fy0 dk fnukd 20.2.2013 dk iu% fujh{k.k fd;k x;k FkkA

ell Vyde dkfLVx (çk0) fy0 dk nk fofHkUu vkn'kk e 46200 ox QhV dy {k=Qy okyk Hk[kM A-03 vkofVr fd;k x;k FkkA çFke vkn'k 30000 ox QhV d fy, fnukd 19.4.1976 d vkn'k l0 1197 d rgr tkjh fd;k x;k Fkk vkj f}rh; vkn'k 16200 ox QhV d fy, fnukd 19.10.1985 d vkn'k l0 3228 d rgr tkjh fd;k x;k FkkA

pfd bdkb mRiknu 'k: dju e foQy gb vkj blu ifjlj dk fdjk;k ij n fn;k] fnukd 18.4.2007 d ,e0 Mh0 d vkn'k l0 989 d rgr vkofVr Hk[kM jí dj fn;k x;k FkkA

ekeyk fnukd 8/5.11.2012 dk ekuuh; mPp U;k;ky; d le{k luk x;k ekuuh; U;k;ky; u ;kfpdk c;ku fd dkj[kkuk fnukd 18.11.2012 dk 'k: gku tk jgk g] d vkèkkj ij vko';d fujh{k.k d ckn 'kiFki= nkf[ky dju dk dgkA ,e0 Mh0 dk dfeVh }kjk bdkb dk fujh{k.k dju dk ijke'k fn;k x;kA lfpo] ,0 vkb0 ,0 Mh0 ,0 u

(a) Jh t0 d0 flg lh0 vkb0(

(b) Jh eukt dekj flg] vkb0 b0 vk0(

(c) Jh vkj0 d0 flUgk] Vh0 lh0(vkj

(d) Jh lj'k okYVj ihVj frd] vkb0 b0 vk0 l xfBr dfeVh dk vuekfnr fd;kA

fnukd 20.2.2013 dk fujh{k.k d nkjku bdkb dk pyrk ik;k x;k Fkk vkj vfrfjDr vkèkkjHkr ljpuk dk fuek.k fd;k x;k gA Qfcd'ku dke dk Hkh dj fn;k x;k ik;k x;k FkkA ,d Qul d lkFk 50 KW d byfDVd iuy dk dke djrk ik;k x;k FkkA t0 ,l0 b0 ch0 l fo|r duD'ku fy;k x;k gA byfDVd iuy vkj Qul d fy, Øe'k% 70 KW vkj 50 KW dh Hkkj etjh gA 125 KVA dk tujVj Hkh gA nl etnjk dk dk;jr ik;k x;k FkkA dkLV dh x;h lkefx;k dk HkMkj e j[kk x;k Fkk vkj o fiNy nkj dh ryuk e vfèkd ek=k e FkhA bdkb dk dj chtd dh fcy dh Nk;k çfrfyfi nu d fy, dgk x;k FkkA mUgku 13 dj chtd fn;k g tk 15.12.2012 l 28.2.2012 rd gA

*fjikV fn;k x;kA***

6. याची की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची की इकाई अब पूर्णत: कार्यरत/परिचालित है और उस प्रयोजन से उत्पादन किया जा रहा है जिसके लिए इकाई मूलत: आवंटित की गयी थी। विद्वान वरीय अधिवक्ता आगे दिनांक 18.9.2012 को दाखिल शपथ पत्र को निर्दिष्ट करते हुए आगे निवेदन करते हैं कि ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के संबंध में याची के समस्त बकायों का भुगतान

कर दिया गया है जिसके लिए उक्त शपथ पत्र के परिशिष्ट–15 श्रृंखला के रूप में रसीदों को संलग्न किया गया है, अत: कोई देय बकाया नहीं है।

7. किंतु ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के विद्वान अधिवक्ता यह कथन करने की अवस्था में नहीं हैं कि क्या समस्त बकायों का अंतिम रूप से भुगतान कर दिया गया है या नहीं क्योंकि ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के कार्यालय द्वारा इसके सत्यापन की आवश्यकता है।

8. किंतु, याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अब याची की इकाई कार्यशील है और प्रयोजन, जिसके लिए भूखंड का आवंटन किया गया था, याची की ओर से परिश्रमपूर्वक और सद्भावपूर्वक किया जा रहा है। याची के विरुद्ध पारित आवंटन और पट्टा के रद्दकरण का आदेश जो वर्तमान रिट याचिका में आक्षेपित है को अपास्त किया जाय क्योंकि याची के आवंटन को अब रद्द करके किसी प्रयोजन को पूरा नहीं किया जाएगा।

9. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। यद्यपि यह प्रतीत होता है कि आरंभ में, जब आक्षेपित आदेश पारित किया गया था, याची ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ द्वारा उसको आवंटित भूखंड में कोई निर्माण गतिविधि में लिप्त नहीं था जो आवंटन रद्द करने वाले आक्षेपित आदेश को पारित करने की ओर ले गया। किंतु, याची इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के फलस्वरुप आवंटित भूमि पर काबिज बना रहा। तत्पश्चात, याची ने कास्टिंग आयरन के प्रयोजन से नयी प्रौद्योगिकी का उपयोग करके गंभीर प्रयासों द्वारा इकाई को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया जिसे न्यायालय के ध्यान में लाया गया था। प्रत्यर्थीगण को याची की इकाई के परिसर में निरीक्षण पर इसे सत्यापित करने का निर्देश दिया गया था। ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के पदधारियों की टीम द्वारा किए गए ऐसे निरीक्षण के आधार पर निरीक्षण रिपोर्ट प्रत्यर्थी सं॰ 2 के दिनांक 29.4.2013 के पूरक प्रति शपथ पत्र के रूप में अभिलेख पर लायी गयी है। यह प्रकट करती है कि इकाई को चलायमान पाया गया था और अतिरिक्त आधारभूत संरचना का निर्माण किया गया है। फैब्रिकेशन काम भी किया गया पाया गया है। एक फर्नेस भी संकार्यरत है। जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ से इलेक्ट्रिक पैनल और फर्नेस के लिए 70 KW तथा 50 KW के मंजूर भार के साथ विद्युत कनेक्शन लिया गया है। इसके अतिरिक्त, इकाई के पास 125 KVA का जेनरेटर है और 10 मजदूरों को कार्यरत पाया गया था। कास्ट की गयी सामग्री भी भंडार में रखी थी और इकाई ने दिसंबर, 2012 और फरवरी, 2013 के बीच इसके द्वारा भुगतान किए गए कर बीजकों को प्रस्तुत किया। सम्पूर्ण रिपोर्ट यहाँ ऊपर उद्धृत की गयी है।

10. अत:, इन परिस्थितियों में, यह प्रतीत होता है कि एक बार फिर इकाई को पुनर्जीवित किया गया है और प्रत्यर्थी ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के पदधारियों द्वारा दिए गए रिपोर्ट के मुताबिक यह कार्यशील है। इकाई ने बकायों का भुगतान भी कर दिया है, किंतु, यह ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ के पदधारियों के सत्यापन के अध्यधीन है।

11. अत:, इन परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश को संपोषित करना समुचित नहीं होगा जिसके द्वारा याची के पक्ष में भूखंड और पट्टा का आवंटन रद्द कर दिया गया था जब इकाई वर्ष 2007 में कार्यशील नहीं थी।

12. अत:, पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों तथा उपर चर्चा किए गए कारणों की संपूर्णता में दिनांक 18.4.2007 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। किंतु निर्माण गतिविधि करने में याची की इकाई की प्रगति को मॉनिटर करने की छूट प्रत्यर्थी ए॰ आई॰ ए॰ डी॰ ए॰ को होगी जैसा आवंटन आदेश और पट्टा के निबंधनों और शर्तों के अधीन आवश्यक है। यदि अभी भी याची के विरुद्ध कोई देय बकाया है, याची युक्तियुक्त समय के भीतर इनका भुगतान करने का दायी होगा।

13. पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

14. आई॰ ए॰ सं॰ 3569/2012 और 3568/2012 भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

हेमन्त कुमार सिन्हा एवं एक अन्य (132, 165 में)

मेसर्स एम॰ एस॰ एस॰ एण्ड हेल्थकेयर आयुर्वेदिक ट्रस्ट (3292 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (दोनों में)

Cr. Revision No. 132 and165 of 2011 with I.A. No. 3292 of 2013. Decided on 27th June, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—जब्त संपत्ति की निर्मुक्ति–याचीगण के पक्ष में नगद, बैंक पासबुक, चेकबुक और लैपटॉप निर्मुक्त करने के लिए आवेदन अस्वीकार किया जाना–याचीगण जो न्यास के पदाधिकारी हैं ने अत्यन्त संक्षिप्त अवधि के भीतर ऊँचा रिटर्न देने के आश्वासन के साथ अनेक व्यक्तियों से धन संग्रहित किया था–अवर न्यायालय ने इस मामले के संबंध में नगद, बैंक पासबुक, चेकबुक और अन्य जब्त वस्तुओं को निर्मुक्त करने से इनकार करने के लिए तर्कपूर्ण कारण दिया है क्योंकि मामले का अन्वेषण अभी भी चल रहा है–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 5 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Sahani, For the Petitioners; A.P.P., For the State; M/s Mukesh Kumar, K.P. Deo, Nehala Sharmin, M.L.K. Chitra, For the Intervenors.

आदेश

इन दोनों पुनरीक्षण आवेदनों को एक ही आक्षेपित आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है और इस प्रकार उन्हें इसे एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. आई॰ ए॰ सं॰ 3292 वर्ष 2013 जिसे याचीगण की प्रार्थना का विरोध करते हुए 253 व्यक्तियों द्वारा दाखिल किया गया है, में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और मध्यक्षेपी-याचीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. इन दोनों मामलों में याचीगण डोरंडा (आरगोरा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 281 वर्ष 2010, जी॰ आर॰ सं॰ 3474 वर्ष 2010 के तत्सम, में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 1.2.2011 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा याचीगण के पक्ष में नगद, बैंक पासबुक, चेकबुक और लैपटॉप, आदि निर्मुक्त करने के लिए याचीगण द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा यह कथन करते हुए कि मामला अभी भी अन्वेषण के चरण पर है अस्वीकार कर दिया गया है। यह कथन किया जा सकता है कि इस पुनरीक्षण आवेदन के लंबित रहने के दौरान निजी व्यक्तियों द्वारा कुछ अंतर्वर्ती आवेदनों को दाखिल किया गया है जिसे दांडिक पुनरीक्षण 165 वर्ष 2011 में आई॰ ए॰ सं॰ 1109 वर्ष 2011 में दिनांक 2.4.2013 के आदेश द्वारा और आई॰ ए॰ सं॰ 1115 वर्ष 2011 में दिनांक 27.2.2013 के आदेश द्वारा भी अनुज्ञात किया गया था जिसके द्वारा मध्यक्षेपी–याचीगण को इन आवेदनों में विरोधी पक्षकारों के रूप में जोड़े जाने के लिए अनुमति दी गयी थी।

4. पुन: दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 132 वर्ष 2011 में 253 व्यक्तियों द्वारा मेसर्स एम॰ एस॰ एस॰ एन्ड हेल्थकेअर आयुर्वेदिक ट्रस्ट में निवेशक होने का दावा करते हुए आई॰ ए॰ सं॰ 3292 वर्ष 2013 दाखिल किया गया है। इस तथ्य की दृष्टि में कि इस न्यायालय द्वारा मुख्य आवेदनों को निपटाया जा रहा है उक्त आई॰ ए॰ सं॰ 3292 वर्ष 2013 में पृथक रूप से आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं है।

5. अभिलेख के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि यह अभिकथन करते हुए कि याचीगण, जो मेसर्स एम॰ एस॰ एस॰ एन्ड हेल्थकेयर आयुर्वेदिक ट्रस्ट, राँची के पदधारी हैं, ने अत्यन्त संक्षिप्त अवधि के भीतर उच्च रिटर्न देने के आश्वासन के साथ अपने एजेंटों के माध्यम से अनेक व्यक्तियों में से प्रत्येक से 3000/- रुपया संग्रहित किया, सूचक द्वारा दी गयी लिखित सूचना पर याचीगण को डोरन्डा (अरगोरा) पी॰ एस॰ केस सं॰ सं॰ 281 वर्ष 2010, जी॰ आर॰ सं॰ 3474 वर्ष 2010 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है। मामला संस्थापित किया गया था और उक्त न्यास के कार्यालय पर पुलिस द्वारा छापा मारा गया था और भारी नगद राशि के अतिरिक्त एक मारुति वाहन, पासबुक, चेकबुक और अन्य दस्तावेजों तथा लैपटॉपों को जब्त किया गया था। याचीगण को इस मामले में भी अभियुक्त बनाया गया था।

6. तत्पश्चात् याचीगण ने जब्त वस्तुओं की निर्मुक्ति के लिए अपना आवेदन दाखिल किया और दिनांक 1.2.2011 के आदेश द्वारा विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने प्रतिभूतियों और बंधपत्रों को प्रस्तुत किए जाने पर इसके स्वामी गोरख भगत के पक्ष में इस मामले के संबंध में जब्त वाहन को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया गया था किंतु जहाँ तक भारी नगद राशि की निर्मुक्ति के लिए प्रार्थना का संबंध है, इसे अवर न्यायालय द्वारा यह कथन करते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि मामला अभी भी अन्वेषण के चरण पर है और यह नहीं कहा जा सकता है कि यह याचीगण का है क्योंकि नगद निवेशकों के थे और पुलिस को अभी भी यह स्थापित करना है कि कौन न्यास में निवेशक थे। समरुप आधार पर बैंक पासबुक, चेकबुक और लैपटॉप की निर्मुक्ति के लिए प्रार्थना भी अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था कि मामले के अन्वेषण में इनकी आवश्यकता हो सकती थी।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश बिल्कुल अवैध है और इस तथ्य की दृष्टि में कि नगद एवं अन्य वस्तुओं को न्यास के कार्यालय से जब्त किया गया था, याचीगण के पदाधिकारी होने के नाते इन्हें याचीगण के पक्ष में निर्मुक्त किया जा सकता है।

8. राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने प्रार्थना का विरोध किया है।

9. मामले के तथ्यों में, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने इस मामले के संबंध में नगद, बैंक पासबुक, चेक बुक और अन्य जब्त वस्तुओं को निर्मुक्त करने से इनकार करने के लिए तर्कपूर्ण कारण दिया है क्योंकि मामले का अन्वेषण अभी भी चल रहा है।

10. मामले के उस दृष्टिकोण में, याचीगण की प्रार्थना अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में मैं कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इन पुनरीक्षण आवेदनों में गुणागुण नहीं है और इन्हें एतद् द्वारा खारिज किया जाता है। परिणामस्वरुप, आई॰ ए॰ सं॰ 3292 वर्ष 2013 भी निपटाया जाता है।

11. यह कहना अनावश्यक है कि याचीगण समुचित चरण पर अवर न्यायालय में अपनी प्रार्थना नवीकृत कर सकते हैं और निवेशक विरोधी पक्षकारगण तथा आई॰ ए॰ सं॰ 3292 वर्ष 2013 में याचीगण भी और न्यास में निवेशक होने का दावा करते हुए व्यक्ति भी अवर न्यायालय में याचीगण की प्रार्थना का विरोध कर सकते हैं और अवर न्यायालय विधि के अनुरुप समुचित आदेशों को पारित करेगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

हविलदार राजेन्द्र सिंह उर्फ राजेन्द्र सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1530 of 2004. Decided on 4th July, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

सेवा विधि–दंड–दो वर्षों के लिए वेतनवृद्धि रोका जाना–याची पुलिस बल में हवलदार था–सामग्रियाँ, जिनका उपयोग दंड अधिरोपित करने के लिए किया जा रहा था, को अपचारी को प्रस्तुत किया जाना चाहिए–याची पर दूसरे कारण बताओ नोटिस और जाँच रिपोर्ट के तामीले की अनुपस्थिति में अनुशासनिक कार्यवाही दूषित हो गयी प्रतीत होती है–निर्णय लेने की प्रक्रिया विधि की गलतियों से पीड़ित है और इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है–याची को जाँच रिपोर्ट की प्रति प्रस्तुत किए जाने के बाद दूसरे कारण बताओ नोटिस के चरण से अग्रसर होने की स्वतंत्रता प्रत्यर्थीगण को देते हुए आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 3, 7 से 10)

निर्णयज विधि.–1993(4) SCC 727; 2011(4) SCC 589—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s. A.K. Sinha, P.K. Jha, For the Petitioner; Mr. Rohit, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची को आरक्षी अधीक्षक (रेलवे), धनबाद द्वारा पारित दिनांक 4.2.2003 के आक्षेपित आदेश, जैसा परिशिष्ट-7 में अंतर्विष्ट है, द्वारा दो वर्षों की वेतनवृद्धि रोके जाने, जो तीन काले निशानों के समतुल्य है, का दंड दिया गया है। अपीलीय प्राधिकारी-सह-डी॰ आई॰ जी॰ (रेलवे) ने दिनांक 26.12.2003 के आदेश, जैसा परिशिष्ट-9 में अंतर्विष्ट है, के तहत दंड के मूल आदेश को अभिपुष्ट किया है। वर्तमान रिट याचिका में ये दोनों आदेश चुनौती के अधीन हैं।

3. याची जी॰ आर॰ पी॰, धनबाद में पदस्थापित समय के प्रासंगिक बिंदु पर पुलिस बल में हवलदार था जब उस पर दिनांक 1.12.1999 से किसी सूचना अथवा अवकाश की पूर्वानुमति के बिना कर्तव्य से अप्राधिकृत रूप से अनुपस्थित बने रहने के लिए और बिहार विधान सभा के होने वाले चुनाव में कर्तव्य से बचने के लिए परिशिष्ट-4 में अंतर्विष्ट आरोप-पत्र तामील किया गया था। दिनांक 27.1.2000 के पत्र के माध्यम से संसूचित किए जाने के बावजूद वह आरक्षी अधीक्षक (रेल) के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ था और आरोप-पत्र तामील किया गया था। दिनांक 27.1.2000 के पत्र के माध्यम से संसूचित किए जाने के बावजूद वह आरक्षी अधीक्षक (रेल) के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ था और आरोप-पत्र में अभिकथित किया गया था कि कर्तव्य पर होने से बचने के लिए उसकी ओर से ऐसी अप्राधिकृत अनुपस्थिति अनुशासनहीनता के गंभीर अपचार, कर्तव्यपालन में उपेक्षा, उच्च प्राधिकारियों के आदेशों की अवज्ञा और पुलिस बल के सदस्य के अयोग्य होने का परिचायक है। याची के अनुसार, उसने अपनी अनुपस्थिति का कारण देते हुए कि वह पूर्वोक्त अवधि के दौरान क्षयरोग से पीड़ित था, पूर्वोक्त आरोप-पत्र का विस्तृत उत्तर, जो परिशिष्ट-5 में अंतर्विष्ट है, दिया था। तत्पश्चात, पुलिस इंस्पेक्टर (रेल) धनबाद द्वारा जाँच संचालित की गयी थी। जाँच के दौरान, डॉक्टर जिसने उसका इलाज किया था ने अभिसाक्ष्य दिया था कि वह क्षयरोग से पीड़ित होने के कारण समय की कतिपय अवधि के लिए इनडोर इलाज में था। याची की ओर से निवेदन किया गया है कि जाँच के समापन के बाद उस पर जाँच रिपोर्ट तामील नहीं किया गया था और न ही प्रस्तावित दंड उपदर्शित करते हुए अनुशासनिक प्राधिकारी-सह-आरक्षी अधीक्षक (रेल) द्वारा कोई कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। तत्पश्चात, अनुशासनिक कार्यवाही के संचालन की प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना जिसमें अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दंड का कोई आदेश पारित करने

के पहले द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किया जाना और जाँच रिपोर्ट का तामील अनिवार्य है, आक्षेपित आदेश पारित किया गया है जो मुख्य दंड की प्रकृति का है। उन्होंने **प्रबंध निदेशक, ई॰ सी॰ आई॰ एल॰, हैदराबाद एवं अन्य बनाम बी॰ करुणाकर एवं अन्य, 1993 (4) SCC 727,** और **भारत संघ एवं अन्य बनाम एस॰ के॰ कपूर, 2011 (4) SCC 589,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों पर विश्वास किया है। उनके अनुसार, पूर्वोक्त निर्णयों का निर्णयाधार यह है कि जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद और अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा दंड का आदेश पारित किए जाने के पहले प्रस्तावित दंड के विरुद्ध स्वयं का बचाव करने की अनुमति उसको देने के लिए सामग्रियों, जिनका उपयोग दंड अधिरोपित करने के लिए किया जा रहा है, को अपचारी को दिया जाना चाहिए।

4. ऐसी परिस्थितियों में, अपीलीय आदेश, जिसने क्षयरोग से पीड़ित होने के कारण याची की अप्राधिकृत अनुपस्थिति के वास्तविक आधारों को विचार में लेने के बाद भी मूल आदेश को संपुष्ट किया, इन्हीं कारणों से विधि में दोषपूर्ण है।

5. याची की ओर से निवेदन किया गया है कि जाँच रिपोर्ट तामील नहीं किए जाने और द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किए जाने के संबंध में रिट याचिका में पैराग्राफ सं॰ 14 और 15 में दिए गए विनिर्दिष्ट बयानों से प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रतिशपथ पत्र के पैरा 21 में दिए गए बयानों में इनकार नहीं किया गया है। प्रत्यर्थीगण द्वारा उक्त पैराग्राफ में किए गए निवेदन के समर्थन में जो संलग्न किया गया है, वह जाँच संचालन अधिकारी के समक्ष याची द्वारा प्रस्तुत बचाव बयान है और न कि द्वितीय कारण बताओ नोटिस का उत्तर।

6. किंतु प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता दंड के आक्षेपित आदेश और अपीलीय आदेश का समर्थन करते हैं। यह निवेदन किया गया है कि याची किसी प्राधिकृत अवकाश अथवा पर्याप्त कारण के बिना कर्तव्य से बच रहा था और कर्तव्य से अनुपस्थित था। सक्षम प्राधिकारी-सह-आरक्षी अधीक्षक (रेल), धनबाद द्वारा आरोप पत्र जारी किए जाने के बाद उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही की गयी थी। जाँच के दौरान प्रस्तुत सामग्रियों पर जाँच अधिकारी द्वारा विचार किया गया था और जाँच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत जाँच रिपोर्ट में दोष का निष्कर्ष दर्ज किया गया था। अनुशासनिक प्राधिकारी ने इस निष्कर्ष पर आने के लिए कि याची का अवचार पूर्णत: स्थापित किया गया है और वह दो वर्षों के लिए दो वर्षों की वेतनवृद्धि रोके जाने, जो तीन काले चिन्हों के समतुल्य है, का दंड अधिरोपित किए जाने योग्य है, इन समस्त साक्ष्यों, प्रदर्शों और प्रस्तुत दस्तावेजों तथा जाँच अधिकारी की रिपोर्ट को विचार में लिया है। अत: कार्यवाही किसी प्रक्रियात्मक गलती अथवा विधि तथा तथ्य की गलती से पीड़ित नहीं है। रिट याचिका में, इस न्यायालय को अवचारी कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही में पहुँचे गए निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। स्वीकृत रूप से याची दिनांक 1.12.1999 से आरंभ होने वाले समय की कतिपय अवधि के लिए अनुपस्थित बना रहा था। उस पर दिनांक 29.2.2000 के परिशिष्ट-4 में अंतर्विष्ट आरोप-पत्र तामील किया गया था। तत्पश्चात जाँच संचालन अधिकारी-सह-पुलिस इंस्पेक्टर, रेल धनबाद के समक्ष संचालित जाँच के दौरान याची की ओर से अपने बचाव में तात्विक साक्ष्य और अन्य नुस्खों तथा इनडोर मरीज के रूप में कतिपय अवधि के लिए उसके इलाज का प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया गया था। किंतु जाँच अधिकारी

ने उसके विरुद्ध आरोपों को स्थापित पाया था। तत्पश्चात दंड का आक्षेपित आदेश अधिरोपित किया गया है जो मुख्य दंड की प्रकृति का है क्योंकि यह पुलिस निर्देशिका नियम, 824 के मुताबिक तीन काले चिन्हों के समतुल्य है। किंतु मुख्य दंड अधिरोपित करने की प्रक्रिया भी अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा प्रस्तावित दंड को उपदर्शित करते हुए उसके साथ संलग्न जाँच रिपोर्ट की प्रति के साथ द्वितीय कारण बताओ नोटिस का जारी किया जाना अनुध्यात करती है। वर्तमान मामले में, जहाँ याची ने स्पष्ट कथन किया है कि उस पर न तो द्वितीय कारण बताओ नोटिस और न ही जाँच रिपोर्ट की प्रति तामील की गयी है, प्रतिशपथ पत्र में पैराग्राफ 21 पर प्रत्यर्थीगण का बयान केवल टालमटोल करने वाला उत्तर है न कि विनिर्दिष्ट इनकार/उक्त पैराग्राफ में निर्दिष्ट और प्रतिशपथ पत्र के साथ संलग्न परिशिष्ट-D जाँच अधिकारी के समक्ष अपचारी कर्मचारी द्वारा प्रस्तुत केवल अंतिम बचाव बयान है और द्वितीय कारण बताओ नोटिस के उत्तर की प्रकृति का नहीं है।

8. ऐसी परिस्थितियों में, **प्रबंध निदेशक, इ॰ सी॰ आई॰ एल॰, हैदराबाद (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित और बाद के निर्णयों में अनुसरित सुस्थापित निर्णयाधार की दृष्टि में, याची पर द्वितीय कारण बताओ नोटिस और जाँच रिपोर्ट की तामीले की अनुपस्थिति में अनुशासनिक कार्यवाही विधि में दूषित हो गयी प्रतीत होती है। ऐसी परिस्थितियों में, निर्णय लेने की प्रक्रिया विधि की गलतियों से पीड़ित है और इस न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन शक्ति के प्रयोग में इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है। तद्नुसार, आक्षेपित आदेश अर्थात् दिनांक 4.2.2003 का दंड का मूल आदेश और दिनांक 26.12.2003 का अपीलीय आदेश अभिखंडित किया जाता है।

9. याची की ओर से निवेदन किया गया है कि याची सेवानिवृत्त होने वाला है। किंतु जैसा प्रतीत होता है कि याची अभी भी सेवा में है, अतः, विधि के अनुरूप विभागीय कार्यवाही में याची पर जाँच रिपोर्ट की प्रति तामील करने के बाद द्वितीय कारण बताओ नोटिस के चरण से अग्रसर होने की छूट प्रत्यर्थीगण को है यदि वे ऐसा करना चुनते हैं।

10. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

रेड्डी वीरन्ना

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 503 of 2013. Decided on 26th June, 2013.

बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986—धाराएँ 3 एवं 14 (1) (a)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—निर्माण कार्य में बाल श्रमिक को काम पर लगाया जाना–संज्ञान–एक बाल श्रमिक को कार्यस्थल पर कार्यरत पाया गया था जिससे पथ निर्माण का काम लिया जा रहा था–पथ निर्माण को पेशा में सम्मिलित नहीं किया गया है जैसा अनुसूची-A में दिया गया है–जब एक बार वह पेशा वहाँ नहीं है, बालक से काम लिए जाने को भी धारा 3 के प्रावधान का उल्लंघन करता हुआ नहीं कहा जा सकता है–संज्ञान का आदेश अभिखंडित किया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 10 से 15)

निर्णयज विधि.–(2008) 5 SCC 668—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. R.S. Majumdar, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन जी॰ ओ॰ सी॰ आर॰ केस सं॰ 26 वर्ष 2011 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 13.10.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची और अन्य के विरुद्ध बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 14 (1) (a) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है।

3. परिवादी का मामला जैसा परिवाद याचिका से प्रतीत होता है यह है कि जब विरोधी पक्षकार सं॰ 2 श्रम प्रवर्तन अधिकारी-सह-निरीक्षक ने कार्य स्थल का निरीक्षण किया जहाँ मेसर्स रेड्डी वीरन्ना कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰, जिसका याची प्रबंध निदेशक है, के रूप में ज्ञात कंपनी द्वारा काम निष्पादित किया जा रहा था, यह पाया गया था कि बाल श्रमिक को भी पथ निर्माण का काम निष्पादित करने में लगाया गया था।

4. अत:, उसमें यह अभिकथन करते हुए परिवाद दर्ज किया गया था कि याची ने मेसर्स रेड्डी वीरन्ना कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ का प्रबंध निदेशक होने के नाते उक्त अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन दंडनीय बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 3 के प्रावधान का उल्लंघन किया है।

5. ऐसे परिवाद पर, बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है जो चुनौती के अधीन है।

6. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री मजुमदार ने निवेदन किया कि बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम के प्रावधान के उल्लंघन के अभिकथन पर मेसर्स रेड्डी वीरन्ना कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ कंपनी का प्रबंध निदेशक होने के नाते याची को उक्त अधिनियम के अधीन अभियोजित किया जा रहा है यद्यपि ऐसा कोई भी अभिकथन बिल्कुल नहीं है कि यह याची कंपनी के कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार था और इसके प्रभार में था और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अवैधता से पीड़ित है।

7. आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि कंपनी को अभियुक्त नहीं बनाया गया है और कंपनी को अभियुक्त बनाए जाने की अनुपस्थिति में याची जो कंपनी का निदेशक है को अभियोजित नहीं किया जा सकता है।

8. अपने निवेदन के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने **मकसूद सैयद बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 668,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

9. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें यह कथन किया गया है कि जब परिवादी ने कतिपय नियमों का उल्लंघन पाया, उक्त नियमों के अनुपालन के लिए इस याची को नोटिस दी गयी थी किंतु नोटिस दिए जाने के बावजूद उक्त नियम का अनुपालन नहीं किया गया है और न ही दिए गए नोटिस का उत्तर दिया गया है।

10. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर प्रतीत होता है कि याची जो मेसर्स रेड्डी वीरन्ना कंस्ट्रक्शन प्रा॰ लि॰ का प्रबंध निदेशक है को बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम

की धारा 3 में अंतर्विष्ट प्रावधान के उल्लंघन के लिए अभियोजित किया जा रहा है क्योंकि एक बाल श्रमिक को कार्यस्थल पर कार्यरत पाया गया था जिससे पथ निर्माण का काम लिया जा रहा था। इस प्रकार, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या ऐसे अभिकथन पर किसी को अधिनियम की धारा 3 के प्रावधान का उल्लंघन करता हुआ कहा जा सकता है?

धारा 3 का पठन निम्नलिखित है:–

***^^dfri; i'kk vkj çfØ;kvk e ckydk d fu;ktu dk çfr"kèk-**&fdlh ckyd dk vulph d Hkkx A e of.kr i'kk e l fdlh e vFkok fdlh dk;'kkyk ftle vulph d Hkkx B e of.kr çfØ;kvk e l fdlh dk fd;k tkrk g] e dke dju d fy, fu;kftr ugh fd;k tk,xk vFkok vuefr ugh nh tk,xhA*

*ijUrq ;g fd bl èkkjk e vrfo"V dN Hkh fdlh dk;'kkyk ij ykxw ugh gkxh ftle viu ifjokj dh enn l i'koj }kjk vFkok ljdkj }kjk LFkkfir vFkok bll lgk;rk vFkok ekU;rk ikIr fo|ky; }kjk dh tk jgh çfØ;k ij ykxw ugh gkxhA***

11. इसके परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि पूर्वोक्त प्रावधान के अधीन किसी को अनुसूची के भाग A में वर्णित पेशों में से किसी में काम लेने से प्रतिषिद्ध किया गया है। भाग A उन पेशों के बारे में अनुबंधित करती है जिसमें बाल श्रमिक से काम नहीं लिया जा सकता है।

अनुसूची का भाग A निम्नलिखित है:–

1. jyo }kjk ;kf=;k] ekyk vFkok i=k dk ifjogu

2. vfXunXèk oLr mBk;k tkuk] ,'k fiV lkQ fd;k tkuk vFkok jyo ifjlj e fuek.k ldk;(

3. foØrk vFkok LFkkiu d fdlh vU; depkjh dk ,d lyVQke l nlj lyVQke rd vkokxeu vFkok pyrh Vu d Hkhrj ;k ckgj vkuk&tkuk vrxLr dju oky jyo LV'ku d dVfjx LFkkiu e dke(

4. jyo LV'ku d fuek.k l lcfèkr dke vFkok dkb vU; dke tgk ,lk dke jy iVjh d fudV vFkok bld chp fd;k tk jgk g(

5. fdlh cnjxkg dh lhekvk d Hkhrj cnjxkg çkfèkdkj(

6. vLFkk;h vuKflr;k oky ndkuk e iVk[kk dk cpu l lcfèkr dke(

7. dlkb[kkuk@cpM[kkuk(

8. vkVkekfcy od'kki vkj xjkt(

9. QkmUMht(

10. fo"ky vFkok Toyu'khy vFkok foLQkVdk dk lHkkyk tkuk(

11. gMye vkj ikojye m|kx(

12. [kku (Hkfexr vkj tyxr) vkj dkfy;jh(

13. lykfLVd bdkb;k ,o Qkbcj Xykl dk;'kkyk(

14. ?kjy dedkjk vFkok lodk d :i e ckydk dk fu;ktu(

15. <kckvk (lMd fdukj Hkktu'kkyk)] jLVjV] gkVy] ekVy] pk; ndku] fjlkV] Lik vFkok vU; eukjtu dnk e ckydk dk fu;ktu(

16. xkrk yxkuk(

17. ldl(

18. gkfFk;k dh n[kHkkyA

12. यह गौर करना महत्वपूर्ण होगा कि पथ निर्माण को उन पेशों में सम्मिलित नहीं किया गया है जिन्हें अनुसूची A में दिया गया है। जब एक बार वह पेशा वहाँ नहीं है, बाल श्रमिक से काम लेने पर भी किसी को धारा 3 के प्रावधान का उल्लंघन करता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

13. इन परिस्थितियों के अधीन, न्यायालय ने निश्चय ही बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 की धारा 14 (1) (a) के अधीन अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया।

14. तद्नुसार, वह आदेश जिसके अधीन याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया है एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

15. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सीताराम खंडेलवाल एवं एक अन्य

cuke

राँची नगर निगम एवं अन्य

WP (C) No. 5634 of 2012. Decided on 8th July, 2013.

झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011—धारा 387 (7)—भवन के भंजन के लिए अनुमति–नगरपालिका अधिनियम, 2011 की धारा 387 के प्रावधान न केवल स्वामी को बल्कि पट्टाधारी अथवा बंधकदार अथवा किसी अन्य व्यक्ति जिनका भवन में हित हो सकता है को समुचित नोटिस आवश्यक बनाते हैं–याची को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 9 से 12)

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioner; M/s. Sumeet Gadodia, R.R. Nath, For the Respondents.

आदेश

याचीगण जो निजी प्रत्यर्थी के किराएदार हैं ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 उप मुख्य कार्यपालक अधिकारी, राँची नगर निगम द्वारा जारी दिनांक 15.3.2012 के पत्र सं॰ 908 को चुनौती दिया है जिसके अधीन राँची जिला में मौजा चादरी में एम॰ एस॰ भूखंड सं॰ 1526, 1527, 1528, 1529, 1530 और 1531 में खड़े भवन का भंजन करने के लिए झारखंड नगरपालिका अधिनियम, 2011 की धारा 387 (7) के अधीन अनुमति दी गयी है।

2. याचीगण का मामला यह है कि वे वर्ष 1968 से निजी प्रत्यर्थीगण के किराएदार हैं। याचीगण का प्रतिवाद यह है कि निजी प्रत्यर्थी ने अब इसे जीर्णशीर्ण भवन घोषित करवाकर नगरपालिका अधिनियम,

2011 के अधीन प्रावधानित प्रावधानों का सहारा लेकर भवन के भंजन का सहारा लिया है यद्यपि उक्त अधिनियम की धारा 387 की आवश्यकता न केवल भवन के स्वामी पर बल्कि भवन में हित रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति पर, चाहे वह पट्टादार हो या अन्यथा, पर यह कारण बताने के लिए नोटिस अनुबंधित करती है कि भवन का भंजन क्यों नहीं किया जाए। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण को कोई नोटिस जारी किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

3. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी नगर निगम ने कथन किया है कि प्रश्नगत घर जीर्णशीर्ण दशा में है और इसके भंजन के लिए अनुमति इप्सित की गयी थी। निगम के अभियंता द्वारा प्रश्नगत घर का निरीक्षण किया गया था और दिनांक 20.1.2012 के प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट–D निगम के कनीय अभियंता का निरीक्षण रिपोर्ट है। उक्त रिपोर्ट के मुताबिक यह पाया गया है कि भवन 70-75 वर्ष पुराना है और जीर्णशीर्ण दशा में है। दीवारों में अनेक दरारों को पाया गया है और उर्ध्व दरारें भी पायी गयी है जो दर्शाती है कि भवन गिरती दशा में है और भवन की संरचना में भी दरारें हैं। ईंट और शहतीर का उपयोग करके भवन का निर्माण किया गया था और काष्ठ भाग का क्षय हो गया है। भवन का आंशिक भाग भी गिर गया है। इन परिस्थितियों में भवन को खतराग्रस्त भवन कहा जा सकता था।

4. निगम के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि निजी प्रत्यर्थी और याचीगण को नोटिस जारी की गयी थी। किंतु, याचीगण ने इसका उत्तर देना नहीं चुना है और इस न्यायालय के पास आए हैं।

5. निरीक्षण किए जाने के पहले ही याचीगण और निजी प्रत्यर्थी को मामले में सही निर्णय लेने के लिए अपना उत्तर देने के लिए नोटिस दी गयी थी। किंतु, याचीगण कारण बताने में विफल रहे। अत: जैसा निगम के कनीय अभियंता द्वारा रिपोर्ट किया गया है, भवन की खतरनाक दशा को विचार में लेते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

6. निजी प्रत्यर्थी भी उपस्थित हुआ है और अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। दिनांक 1.10.2012 का अंतरिम आदेश रिक्त करने के लिए अंतर्वर्ती आवेदन भी दाखिल किया गया है जो उसके अनुसार निजी प्रत्यर्थी को नोटिस जारी किए बिना एकपक्षीय रूप से पारित किया गया था।

7. निजी प्रत्यर्थी की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि भवन की मंजूरी योजना नगरपालिका आयुक्त, राँची के कार्यालय द्वारा जारी दिनांक 25.5.1927 की है और तत्पश्चात् तुरन्त निर्माण किया गया था। अब भवन जीर्णशीर्ण हो गया है और, इसलिए, नगरपालिका अधिनियम, 2011 के प्रावधानों का अवलंब लेते हुए इसे भंजित करने के लिए कदम उठाए गए हैं। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण संपूर्ण प्रक्रिया में विलंब करने का प्रयास कर रहे हैं यद्यपि जीवन और संपत्ति के प्रति गंभीर खतरे की आशंका है यदि भवन भारी वर्षा के कारण मानसून के दौरान गिर जाता है। अत:, यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में पूर्णत: न्यायोचित और समुचित है, इसे अभिखंडित नहीं किया जा सकता है और अंतरिम आदेश रिक्त किया जा सकता है।

8. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और पक्षों द्वारा विश्वास किए गए विधि के प्रावधानों सहित अभिलेख पर प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है।

9. निजी प्रत्यर्थी के बयान के मुताबिक प्रश्नगत भवन वर्ष 1927 में किसी समय निर्मित किया गया प्रतीत होता है जब नगर निगम के तत्कालीन सक्षम प्राधिकारी द्वारा भवन योजना मंजूर की गयी थी। कनीय

अभियंता का रिपोर्ट, जिसे प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट-D के रूप में अभिलेख पर लाया गया है, बताता है कि भवन 70-75 वर्ष पुराना है और इसमें दरार पड़ चुकी है। किंतु नगरपालिका अधिनियम, 2011 की धारा 387 के प्रावधान न केवल स्वामी को बल्कि पट्टादार अथवा बंधकदार अथवा किसी अन्य व्यक्ति जिनका भवन में हित हो सकता है को समुचित नोटिस दिया जाना आवश्यक बनाते हैं। किंतु, यह विश्वासोत्पादक प्रतीत नहीं होता है कि आक्षेपित कार्रवाई का प्रत्युत्तर देने के लिए याचीगण को समुचित रूप से नोटिस तामील की गयी है।

10. इन परिस्थितियों में, चूँकि यह प्रतीत होता है कि याचीगण को सुनवाई का समुचित अवसर दिए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है, इसे अभिखंडित किया जाता है। किंतु प्रत्यर्थी निगम और निजी प्रत्यर्थी निवेदन करते हैं कि याची को तिथि विशेष पर प्रत्यर्थी निगम के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाना चाहिए क्योंकि वह नोटिस के तामीले से बच रहा है।

11. किंतु, याची के अधिवक्ता ने इससे इनकार किया और निवेदन किया कि याची युक्तियुक्त समय के भीतर इस न्यायालय द्वारा नियत की गयी किसी तिथि पर निगम के सक्षम प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित होगा।

12. इन परिस्थितियों में, याचीगण दो सप्ताह की अवधि के भीतर, प्राथमिकत: दिनांक 19.7.2013 को राँची नगर निगम के सक्षम प्राधिकारी/मुख्य कार्यपालक अधिकारी के समक्ष उपस्थित होंगे और दिनांक 7.1.2012 के नोटिस के उत्तर में अपना कारण बताओ दाखिल करेंगे जिसे पहले ही अभिलेख पर निगम के प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट-C के रूप में लाया गया है। तत्पश्चात् नगर निगम के सक्षम प्राधिकारी, याचीगण और मकानमालिक को सुनने के बाद तत्पश्चात चार सप्ताह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप मामले में सही निर्णय लेंगे।

तद्नुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

आई॰ ए॰ सं॰ 3492 वर्ष 2013 भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

देवराम सोरेन

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 352 of 2013. Decided on 12th July, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–अवयस्क अवैध पुत्री के भरण-पोषण के लिए 1000/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश–भरण-पोषण का दावा इस आधार पर किया गया कि लड़की की माता उसके साथ विवाह करने के झूठे बहाने पर याची के साथ सहवास करने के कारण गर्भवती हो गयी–याची को इसी अभिकथन पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया था और वह कारा में दंडादेश भुगत रहा है–अवर न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर सही निष्कर्ष पर आया है कि आवेदक याची की अवैध संतान है–आक्षेपित आदेश अभिपुष्ट किया गया–आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 9 से 11)

अधिवक्तागण.–Mr. Shree Prakash Jha, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक विविध याचिका सं॰ 125 वर्ष 2007 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, दुमका द्वारा पारित दिनांक 27.2.2013 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में अवर न्यायालय ने याची को अपनी अवैध अवयस्क पुत्री के भरण–पोषण के लिए 1000/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया है।

3. लगभग आठ माह की अवयस्क लड़की ने यह दावा करते हुए कि उसकी माता (इसके बाद 'X' के रूप में निर्दिष्ट) उसके साथ विवाह करने के झूठे बहाने पर याची के साथ सहवास करने के कारण गर्भवती हो गयी, अपनी माता के माध्यम से अवर न्यायालय में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन आवेदन दाखिल किया था। याची ने अंततः 'X' के साथ विवाह करने से इनकार कर दिया और 'X' तथा याची के बीच उक्त सहवास के कारण संतान का जन्म हुआ था। याचिका में कथन किया गया था कि 'X' ने याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 376 और 417 के अधीन अपराध के लिए दांडिक मामला दाखिल किया था जिसे जामा पी॰ एस॰ केस सं॰ 23 वर्ष 2007 के तौर पर दर्ज किया गया था, जिसमें याची को अंततः एस॰ सी॰ केस सं॰ 174 वर्ष 2007 में विचारण किया गया था और उसे भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध का दोषी पाया गया था और उसे दोषसिद्ध किया गया था और इसके लिए दंडादेश दिया गया था जिसके लिए याची अभी कारा में दंडादेश भुगत रहा है। यह दावा करते हुए कि 'X' के पास संतान को भरण–पोषण करने के लिए साधन नहीं है और पिता कृषि से आय के अतिरिक्त मजदूर के रूप में 80/- रुपया रोज कमा रहा है, अवर न्यायालय में भरण–पोषण के लिए दावा दाखिल किया गया था।

4. याची नोटिस दिए जाने पर अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ और अपना कारण बताओ दाखिल किया जिसमें याची ने अभिकथनों से पूरी तरह इनकार किया है। दोनों पक्षों ने अवर न्यायालय में साक्ष्य दिया है। अवर न्यायालय में आवेदक संतान की ओर से पाँच गवाहों का परीक्षण किया गया है जो उसके नाना, नानी, संतान के मामा और संतान की माता को सम्मिलित करता है। समस्त पाँचों गवाहों ने आवेदक के मामले और इस दावा का समर्थन किया कि उसके साथ विवाह करने के झूठे बहाना पर 'X' को याची के साथ सहवास करने के अध्यधीन किया गया था जिस कारण वह गर्भवती हो गयी और उसने संतान को जन्म दिया। पुलिस मामला भी दाखिल किया गया था और अंततः याची को सत्र न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया था। उन्होंने यह कथन करते हुए कि याची को कृषि से आमदनी थी, याची के आय के बारे में भी अभिसाक्ष्य दिया है। गवाहों ने पुलिस थाना में किसी समझौते के बारे में भी कथन किया है और पुलिस थाना में उक्त समझौते के संबंध में दस्तावेज प्रदर्श 2 के रूप में सिद्ध किया गया था जिसने दर्शाया कि पक्षों के बीच विवाद में सुलह हुआ था और याची 'X' को अपने घर लाया किंतु आवेदक के मामले के अनुसार उसे पुनः घर से बाहर निकाल दिया गया था। प्रदर्श 3 एस॰ सी॰ सं॰ 174 वर्ष 2007 में सत्र न्यायालय द्वारा पारित निर्णय की प्रमाणित प्रति है जिसमें याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए दोषी पाया गया था और दोषसिद्ध किया गया था और दंडादेश दिया गया था।

5. दूसरी ओर, याची ने अवर न्यायालय में स्वयं सहित सात गवाहों का परीक्षण किया है जिसमें याची सहित गवाहों द्वारा अभिकथनों से पूरी तरह इनकार किया गया है। किंतु, आक्षेपित आदेश में चर्चा किए गए साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि वि॰ प॰ सा॰ 3 दिलीप सोरेन ने अपने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया था कि याची ने 'X' के साथ संबंध स्थापित किया था और जब गर्भ धारण आठ माह का था, 'X'

के परिवार ने याची पर उसके साथ विवाह करने का दबाव दिया किंतु उसने उसके साथ विवाह करने से इनकार कर दिया। अन्य गवाह वि॰ प॰ सा॰ 6 बसंती मरांडी जिसने याची की पत्नी होने का दावा किया और वि॰ प॰ सा॰ 7 स्वयं याची ने स्वीकार किया कि याची 'X' द्वारा दाखिल बलात्कार मामले के संबंध में कारा में था।

7. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर अवर न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि उसके साथ विवाह करने के झूठा बहाना पर याची और 'X' के बीच सहवास हुआ था जिस कारण वह गर्भवती हो गयी और अंतत: आवेदक का जन्म हुआ और वह याची की अवैध संतान थी। याची के आय के बिंदु पर अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य को विचार में लिया है और यह पाया गया था कि स्वयं याची द्वारा परीक्षण किए गए गवाहों ने स्वीकार किया था कि याची मजदूर के रूप में दैनिक मजदूरी कमा रहा था और एक गवाह ने यह कथन भी किया है कि उसकी आय लगभग 300/- रुपया रोजाना थी। गवाह ने यह भी स्वीकार किया कि याची के पास कृषि भूमि थी और भूमि के पर्चा ने दर्शाया कि याची के पूर्वज के नाम में लगभग 62 बीघा कृषि भूमि थी। दैनिक मजदूरी पर याची की आय लगभग 150/- रुपये से 200/- रुपए तक को विचार में लेते हुए और कृषि भूमि से भी आय को ध्यान में लेते हुए याची को अपनी अवैध संतान के भरण–पोषण के लिए 1000/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची की ओर से परीक्षण किए गए गवाहों ने याची और 'X' के बीच किसी सहवास के अभिकथन से पूरा इनकार किया है और यह निवेदन किया है कि आवेदक की ओर से परीक्षण किए गए गवाह इस तथ्य को सिद्ध नहीं कर सके थे कि वह याची की अवैध संतान है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और अपास्त किए जाने योग्य है।

8. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

9. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य पर चर्चा किया है और इस निष्कर्ष पर आया है कि उसके साथ विवाह करने के झूठा बहाना पर याची और 'X' के बीच सहवास था जिस कारण वह गर्भवती हो गयी थी और अंतत: आवेदक को जन्म दिया था। याची को इसी अभिकथन पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था और वह कारावास में दंडादेश भुगत रहा है। आक्षेपित आदेश में साक्ष्य पर चर्चा से यह भी प्रतीत होता है कि एक गवाह वि॰ प॰ सा॰ 3 दिलीप सोरेन ने अपने प्रति परीक्षण में याची और 'X' के बीच सहवास के बारे में स्वीकार किया था। वि॰ प॰ सा॰ 6 बसंती मरांडी जो याची की पत्नी होने का दावा करती है ने भी और वि॰ प॰ सा॰ 7 स्वयं याची ने भी स्वीकार किया कि याची को 'X' द्वारा दाखिल बलात्कार मामले के संबंध में दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया था।

10. इस मामले के तथ्यों में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अवर न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर सही निष्कर्ष पर आया है कि आवेदक याची की अवैध संतान है। न्यायालय ने याची की स्वीकृत आय को भी विचार में लिया है और तद्नुसार, याची को उसके भरण–पोषण के लिए अवैध संतान को 1000/- रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया है जिसे अत्यधिक नहीं कहा जा सकता है।

11. मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने योग्य आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सेंट पीटर्स इवांजेलिकल एण्ड एडुकेशनल सोसाइटी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.C. No. 5322 of 2012. Decided on 15th July, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—संकर्म संविदा–शेष राशि का गैर-भुगतान–आवंटित काम निष्पादित करने के याची के दावा को तथ्यों पर विवादित किया गया है और अभिकथन है कि आवंटित निधि दूसरे प्रयोजन के लिए इस्तेमाल की गयी है–उच्च न्यायालय परियोजना के निष्पादन के विरुद्ध याची द्वारा दावा की गयी शेष राशि के भुगतान के लिए निर्देश जारी करने का इच्छुक नहीं है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s J.P. Jha, Altaf Hussain, Afaque Ahmad, For the Petitioner; Mr. Abhijeet Kr. Singh, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची 7,75,000/- रुपयों की शेष राशि का भुगतान याची संगठन के पक्ष में करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए इस न्यायालय के पास आया है जो इसके अनुसार बकाया है यद्यपि इसने पूर्वी सिंहभूम जिला के डुमरिया और मुसाबनी प्रखंडों के अनुसूचित जाति की लड़कियों के आवासीय केंद्रों की मंजूर परियोजना को सफलतापूर्वक पूरा कर दिया है।

3. याची के अनुसार, 4,25,000/- रुपए की निश्चित राशि निर्मुक्त की गयी थी किंतु शेष राशि निर्मुक्त नहीं की गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सोसाइटियों/संगठनों से ऐसे प्रस्तावों को आमंत्रित करने वाले विज्ञापन के मुताबिक काम की प्रकृति ने उपदर्शित किया कि आशय रखने वाले व्यक्ति को महिलाओं के शैक्षिक विकास के लिए काम निष्पादित करना होगा और उक्त परियोजना के पैरा 2 में विहित विनिर्दिष्टताओं के साथ शैक्षणिक कॉम्पलेक्सों को स्थापित करना होगा। उक्त विज्ञापन के पैरा 2 (ii) के मुताबिक आरंभ में शैक्षणिक कॉम्पलेक्सों में कक्षा 1 से 5 तक शिक्षण दिया जाएगा जिसे कक्षा 12 तक बढ़ाया जा सकता था जिसके लिए आवश्यकता मुताबिक आधारभूत संरचना और सुविधाएँ बढ़ायी जाएँगी। याची का मामला यह है कि उसने उक्त काम को निष्पादित किया किंतु इसके बदले शेष राशि का भुगतान करने से इनकार किया जा रहा है।

4. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता उपस्थित हुए हैं और अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट-A अर्थात् प्रधान सचिव, कल्याण विभाग, झारखंड सरकार द्वारा जारी दिनांक 12.2.2008 की संसूचना पर विश्वास करते हुए निवेदन किया कि याची को आवंटित काम कल्याणकारी योजनाओं के अधीन उनके स्वनियोजन को सुनिश्चित करने के लिए अनुसूचित जाति के

कोटि से आने वाली महिलाओं के चार आवासीय केंद्रों के निर्माण के लिए था। किंतु याची द्वारा उपरोक्त प्रयोजन से निधि का उपयोग नहीं किया गया है और इसे डुमरिया और मोसाबनी प्रखंडों में कक्षा 1 से 5 तक अनुसूचित जाति की लड़कियों के लिए दो आवासीय विद्यालयों को संचालित करने के लिए इस्तेमाल में लाया गया है। यद्यपि दिनांक 12.2.2008 की संसूचना में खंड 7 पर और क्रमांक सं॰ 9 पर अनुमोदन पत्र में भी (परिशिष्ट-A और B) विनिर्दिष्ट अनुबंध था कि इन प्रयोजनों के लिए आशयित आवंटन मोड़ा नहीं जाएगा। ऐसी परिस्थितियों में, उपायुक्त, पूर्वी सिंहभूम में दिनांक 27.5.2011 के अपने संसूचना (परिशिष्ट-C) के माध्यम से कल्याण विभाग को सूचित किया है कि चूँकि कतिपय अन्य प्रयोजन के लिए निधि इस्तेमाल में लायी गयी है, पूर्वोक्त मंजूर राशि की दूसरी किस्त याची के पक्ष में निर्मुक्त नहीं की जानी चाहिए। किंतु याची द्वारा अपने प्रत्युत्तर में इस तथ्य का खंडन किया गया है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और परिशिष्ट 2 पर विज्ञापन तथा प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्टों A से C तक सहित अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। प्रथम दृष्टया, यह प्रतीत होता है कि याची के पक्ष में निधि का आवंटन गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से अनुसूचित जाति समुदाय के बेरोजगार सदस्यों को स्वरोजगार की सुविधा मुहैया कराने की परियोजना के संबंध में महिलाओं के लिए चार आवासीय केंद्रों के निर्माण के लिए था तथा अनुमोदित राशि 8.82 लाख रुपया थी। परियोजना के लंबित रहने के दौरान याची के पक्ष में 4.25 लाख रुपयों की राशि निर्मुक्त की गयी थी। किंतु यह गौर किया गया है और पता लगाया गया है कि याची ने आवंटित परियोजना के अधीन अनुसूचित जाति की महिलाओं के लिए चार आवासीय केंद्रों का निर्माण करने के बजाए 4.25 लाख रुपयों की आवंटित निधि के विरुद्ध कक्षा 1 से 5 तक के लिए अनुसूचित जाति की लड़कियों के लिए दो आवासीय विद्यालयों के रख-रखाव के लिए निधि इस्तेमाल में लाया है। ऐसी परिस्थितियों में, उपायुक्त, पूर्वी सिंहभूम द्वारा दिनांक 27.5.2011 के अपने पत्र (परिशिष्ट C) के माध्यम से याची का दावा इनकार किया गया है। अत: इस पृष्ठभूमि में यह प्रतीत होता है कि आवंटित काम को निष्पादित करने का याची का दावा तथ्यों पर विवादित किया गया है और अभिकथन है कि आवंटित निधि को भिन्न प्रयोजन के लिए इस्तेमाल में लाया गया है।

6. मामले के उस दृष्टिकोण में, रिट अधिकारिता में, यह न्यायालय परियोजना के निष्पादन के विरुद्ध याची द्वारा दावा किए गए शेष राशि के भुगतान के लिए निर्देश जारी करने का इच्छुक नहीं है। यदि याची के पास विधि के अधीन कोई अन्य उपचार उपलब्ध है। इसे अपना शिकायत करने की स्वतंत्रता है जहाँ तथ्यों के विवादित प्रश्नों को न्यायनिर्णीत किया जा सकता है।

7. तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ,l~ lh~ feJk] U;k;efr

एकराम अहमद

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड)

Criminal Revision No. 100 of 2000 (R). Decided on 12th July, 2013.

दांडिक अपील सं॰ 106 वर्ष 1997/19 वर्ष 1997 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 4.9.1999 के निर्णय के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 360—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–दोषसिद्धि-परिवीक्षा के लाभ से इनकार–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं था कि याची ने पहली बार अपराध नहीं किया था और फिर भी कोई तर्कपूर्ण कारण दिए बिना याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 के लाभ से इनकार किया गया था–अतः भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दण्डादेश अपास्त किया गया और याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 का लाभ दिया गया। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Nilesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Anand Kumar Pandey, For the State.

न्यायालय द्वारा.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ सुने गए।

2. याची दांडिक अपील सं॰ 106 वर्ष 1997/19 वर्ष 1997 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 4 सितंबर, 1999 के निर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 248 वर्ष 1992/टी॰ आर॰ सं॰ 384 वर्ष 1997 में विद्वान सब डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, लोहरदग्गा द्वारा पारित दिनांक 9.9.1997 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध दाखिल अपील अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दंडादेश में उपांतरण के साथ खारिज कर दी गयी है। यह कथन किया जा सकता है कि विचारण न्यायालय ने याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420 के अधीन अपराधों का दोषी पाया था और उसे इसके लिए दोषसिद्ध किया था। दंडादेश के बिंदु पर सुनवाई पर, यद्यपि विचारण न्यायालय ने पाया कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं था कि याची ने पहली बार अपराध नहीं किया था, याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अपराध के लिए दो वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन अपराध के लिए तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया था और दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निर्देश दिया गया था। उक्त निर्णय के विरुद्ध दाखिल अपील में, भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध के लिए याची की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया गया था किंतु भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन याची की दोषसिद्धि पोषित की गयी थी किंतु उसका दंडादेश एक वर्ष की अवधि के कठोर कारावास में उपांतरित किया गया था और दंडादेश में इस उपांतरण के साथ अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील खारिज कर दी गयी थी।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि उन्हें मामले के गुणागुण पर तर्क नहीं करना है बल्कि उन्होंने केवल याची के दंडादेश के बिंदु तक अपना तर्क सीमित रखा और निवेदन किया कि याची को गलत रूप से दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 का लाभ नहीं दिया गया था यद्यपि याची ने पहली बार अपराध किया था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पहली बार अपराध करने के कारण याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 का लाभ दिया जाए।

4. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने प्रार्थना का विरोध किया है।

5. मामले के तथ्यों में, मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय स्पष्टतः दर्शाता है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं था कि याची ने पहली बार अपराध नहीं किया था और फिर भी याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 के लाभ से इसका कोई तर्कपूर्ण कारण दिए बिना इनकार किया गया था। अतः दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 406 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया

जाता है और याची को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 360 का लाभ दिया जाता है।

6. तद्नुसार, याची को जी॰ आर॰ सं॰ 248 वर्ष 1992/टी॰ आर॰ सं॰ 384 वर्ष 1997 में एक वर्ष की अवधि के लिए शांति बनाए रखने के लिए विद्वान सब डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, लोहरदग्गा की संतुष्टि के प्रति समान राशि की प्रत्येक दो प्रतिभूतियों के साथ 10,000/- रुपयों का परिवीक्षा बंध पत्र प्रस्तुत करने का और एक वर्ष की अवधि के लिए अच्छा आचरण करने का और उक्त अवधि के दौरान बुलाए जाने पर दंडादेश प्राप्त करने के लिए अवर न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है। याची को आज के दिन से दो माह की अवधि के भीतर परिवीक्षा बंध पत्र प्रस्तुत करने के लिए अवर न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल रहने पर अवर न्यायालय याची का जमानत बंध रद्द कर देगा और परिवीक्षा बंध पत्र प्रस्तुत करने के लिए उसकी पेशी अनिवार्य बनाते हुए याची के विरुद्ध आदेशिका जारी करेगा। परिवीक्षा बंध पत्र प्रस्तुत करने पर याची को उसके जमानत बंध पत्र के दायित्वों से उन्मोचित कर दिया जाएगा।

7. दंडादेश में इस उपांतरण के साथ, यह पुनरीक्षण आवेदन एतद् द्वारा खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेखों को तुरन्त वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

सुरेश चंद जैन एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 911 of 2013. Decided on 18th June, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 323 एवं 504—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—उपहति एवं प्रहार–संज्ञान–भूमि विवाद–याचीगण का उस झगड़े से कुछ लेना-देना नहीं था जो हुआ था–उसके बावजूद अपराध का संज्ञान लिया गया था जो मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में बिल्कुल अवैध प्रतीत होता है। (पैराएँ 8 से 11)

अधिवक्तागण.–M/s. Pandey Neeraj Rai, Rohit Ranjan Sinha, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. Sanjay Kumar, For the O.P. No.2

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन परिवाद केस सं॰ 601 वर्ष 2011 के संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 4.8.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, कोडरमा ने याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 323, 504 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया है।

3. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री पांडे नीरज राय निवेदन करते हैं कि परिवादी का मामला यह है कि परिवादी का मुहुआ टांड में भूमि के टुकड़ा के उपर अपना घर है जो भूखंड सं॰ 1351 खाता सं॰ 55 वाली भूमि से सटा हुआ है जिसे उसके पिता द्वारा वर्ष 1991 और 1994 में मोस्मात

धर्मी एवं भाटू यादव से खरीदा गया था और वह उस भूमि पर काबिज बना हुआ है। समयक्रम में जब उसके द्वारा यह पाया गया था कि विक्रय विलेख में भूखंड संख्या गलत रूप से 1353 के रूप में उल्लिखित की गयी है, परिवादी ने विक्रेताओं से भूखंड संख्या सही करने का अनुरोध किया किंतु उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया था।

4. आगे मामला यह है कि अभियुक्तगण यमुना साव और उसकी पत्नी सावित्री देवी ने इन दोनों याचीगण द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित करवाया किंतु बेचे गए भूखंड की चौहद्दी विक्रय विलेखों में स्पष्ट रूप से उल्लिखित नहीं की गयी थी और, इसलिए, उन दोनों व्यक्तियों ने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ, जिन्हें भी अभियुक्त बनाया गया है, भूमि जो उसकी है का कब्जा लेने का प्रयास किया। मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया था जिस पर दं० प्र० सं० की धारा 144 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी। जब आदेश का प्रभाव बीत गया, अभियुक्तगण (वे याचीगण नहीं) विधि विरुद्ध जमाव निर्मित करने के बाद भूखंड पर आए और इसे खोदने लगे। मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया था। इसके बावजूद अभियुक्तगण ने गाली दी और गंभीर परिणामों की धमकी दी।

5. ऐसे अभिकथन पर परिवाद दर्ज किया गया था जिसमें पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान दिनांक 4.8.2012 के आदेश के तहत लिया गया है जो चुनौती के अधीन है।

6. याचीगण की ओर से निवेदन किया गया था कि याचीगण ने केवल भूखंड सं० 1351 वाले भूमि को अन्य अभियुक्तगण को बेचा था। परिवादी का मामला यह कभी नहीं है कि ये याचीगण भूखंड पर थे जब अन्य अभियुक्तगण कब्जा लेने गए थे और, तद्द्वारा याचीगण अपराध नहीं कर सकते थे जिसमें अपराध का संज्ञान लिया गया है और इसलिए, न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया था।

7. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं० 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि न्यायालय ने परिवाद में किए गए अभिकथन के आधार पर अपराध का संज्ञान लिया है और तद्द्वारा, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय कभी नहीं है।

8. स्वीकृत रूप से, इन याचीगण ने परिवादी को भूखंड सं० 1351 की किसी भूमि को कभी नहीं बेचा था बल्कि उसके अनुसार परिवादी ने भूखंड सं० 1351 की भूमि को अन्य व्यक्तियों से खरीदा था किंतु उसके अनुसार भूखंड सं० गलत रूप से विक्रय विलेख में भूखंड सं० 1353 के रूप में उल्लिखित की गयी थी। याचीगण ने उस भूखंड सं० 1351 की भूमि को परिवादी को कभी नहीं बेचा था बल्कि उक्त भूमि अभियुक्त सं० 2 और उसकी पत्नी को बेची गयी थी जिनके साथ झगड़ा हुआ था जब वे परिवार के सदस्यों के साथ भूमि का कब्जा लेने गए थे।

9. इस प्रकार, परिवादी के मामले से यह प्रतीत होता है कि याचीगण का उस झगड़े से कुछ लेना-देना नहीं था जो भूखंड सं० 1351 पर हुई थी। उसके बावजूद, अपराध का संज्ञान लिया गया था जो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में बिल्कुल अवैध प्रतीत होता है।

10. इन परिस्थितियों के अधीन, परिवाद केस सं० 601 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 4.8.2012 का संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है, जहाँ तक पूर्वोक्त दोनों याचीगण का संबंध है।

11. तद्नुसार, यह याचिका अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

नजहल परवीन

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 2215 of 2013. Decided on 16th July, 2013.

बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956—धाराएँ 3 एवं 6 (2)—अधिक्रमण हटाया जाना–अंचलाधिकारी से नोटिस नहीं प्राप्त किया जाना–अंचलाधिकारी ने कारण बताओ नोटिस के अनुसरण में प्रत्युत्तर देने के लिए कोई अन्य तिथि नहीं दिया है–अंचलाधिकारी द्वारा एकपक्षीय कार्यवाही की गयी थी और याची को सात दिनों की अवधि के भीतर आदेश का अनुपालन करने के लिए कहा गया था–आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का और विधि की सम्यक एवं स्थापित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना पारित किया गया है–आक्षेपित नोटिस अभिखंडित की गयी–अंचलाधिकारी को नया नोटिस जारी करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s. Birat Kumar, Ashok Kr. Sinha, For the Petitioner; M/s. Vikash Kishore Prasad, For the Respondents.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल करके अधिक्रमण केस सं॰ 3 वर्ष 2012-13 में प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित दिनांक 24.12.2012 के नोटिस को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए समुचित रिट जारी करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 2 ग्राम कपाली, थाना सं॰ 332, पी॰ एस॰ चांडिल, जिला सरायकेला, खरसावाँ के 0.02 और 0.04 एकड़ के भूखंड सं॰ 1392 से अधिक्रमण हटाने के लिए बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (1) के खंड (c) के अधीन पारित आदेश का अनुपालन करने के लिए याची को नोटिस दिया है।

2. याची और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों का परिशीलन किया गया।

3. यह प्रतीत होता है कि याची बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन जारी नोटिस के विरुद्ध इस न्यायालय के पास आया है।

4. उक्त नोटिस के परिशीलन से यह पता चलता है कि याची को दिनांक 21.9.2012 को अंचलाधिकारी, चांडिल के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा गया था। किंतु याची के अनुसार, उसने उक्त नोटिस की प्रति को प्राप्त नहीं किया है और इसलिए वह अंचलाधिकारी, चांडिल द्वारा नियत तिथि पर उपस्थित नहीं हो सका था। बाद में याची ने अंचलाधिकारी, चांडिल के कार्यालय से नोटिस की प्रति प्राप्त किया। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार याची ने उक्त कारण बताओ नोटिस की प्रति प्राप्त करने के बाद उक्त कारण बताओ नोटिस के प्रत्युत्तर में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है। यह प्रतीत होता है कि उक्त कारण बताओ नोटिस के अनुसरण में प्रत्युत्तर देने के लिए कोई अन्य नोटिस नहीं दी गयी है। यह प्रतीत होता है कि अंचलाधिकारी, चांडिल द्वारा एक पक्षीय कार्यवाही की गयी है और याची को बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन जारी नोटिस

की तिथि से सात दिनों की अवधि के भीतर आदेश का अनुपालन करने के लिए कहा गया था।

5. इन परिस्थितियों के अधीन, यह प्रतीत होता है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों और विधि की सम्यक तथा स्थापित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना उक्त आदेश पारित किया गया है और, इसलिए, बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन दिनांक 24.12.2012 को जारी नोटिस को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और अंतिम निर्णय लिए जाने के पहले याची को सुनवाई का अवसर देने की आवश्यकता है चूँकि कारण बताओ नोटिस के अनुसरण में याची को सुना नहीं गया है।

6. तद्नुसार, बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 6 की उपधारा (2) के अधीन दिनांक 24.12.2012 को जारी उक्त नोटिस (परिशिष्ट 4/A) को अभिखंडित और अपास्त करने का आदेश दिया जाता है। अंचलाधिकारी, चांडिल याची को बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 3 के अधीन नया नोटिस जारी करेंगे।

7. अंचलाधिकारी, चांडिल इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से एक माह के भीतर नोटिस जारी करेंगे। अंचलाधिकारी, चांडिल उपस्थित होने का समय और तिथि उपदर्शित करते हुए याची पर नोटिस तामील करेंगे और तत्पश्चात याची उक्त नोटिस के प्रत्युत्तर से अंचलाधिकारी द्वारा नियत तिथि पर उपस्थित होगा और कार्यवाही में सहयोग करेगा। अंचलाधिकारी उसको सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देने के बाद निर्णय करेगा और इसे लिखित में उसको बताएंगें।

8. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 235 of 2011. Decided on 27th June, 2013.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 29—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—अधिनिर्णय का अभिकथित गैर क्रियान्वयन–संज्ञान–ज्योंही रिट आवेदन खारिज किया गया, याचीगण ने अधिनिर्णय क्रियान्वित करने के लिए कदम उठाया जिसे अंततः क्रियान्वित किया गया–यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा यदि याचीगण को विचारण की कठिनाई का सामना करने दी जाती है–दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Mehta, For the Petitioners; Mr. M.B. Lal, For the State.

आदेश

यह आवेदन आई॰ डी॰ केस सं॰ 322 वर्ष 2010 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 14.9.2010 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा याचीगण के विरुद्ध औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 29 के अधीन दंडनीय अपराध

का संज्ञान लिया गया है।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मेहता निवेदन करते हैं कि दिनांक 4.3.2008 को याचीगण के विरुद्ध अधिनिर्णय पारित किया गया था जिसके अधीन याचीगण को मृतक कर्मचारी की विधवा को अनुकंपा आधार पर नियोजन देने का निर्देश दिया गया था। याचीगण ने अधिनिर्णय से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष मामला डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 5701 वर्ष 2008 दाखिल किया। ग्रहण के बिंदु पर सुने जाने पर इस न्यायालय ने दिनांक 9.11.2009 के अपने आदेश के तहत अधिनिर्णय का प्रवर्तन स्थगित कर दिया। अंतत: वह रिट आवेदन दिनांक 23.8.2010 को खारिज कर दिया था। इस पर दिनांक 14.9.2010 को अधिनिर्णय के गैर क्रियान्वयन के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया गया था जिसके द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया था जिसे इस आवेदन द्वारा चुनौती दी गयी है।

3. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि ज्यों ही रिट आवेदन खारिज किया गया, याचीगण ने अधिनिर्णय के क्रियान्वयन के लिए कदम उठाया जिसे अंतत: क्रियान्वित किया गया था जो श्रम प्रवर्तन अधिकारी, धनबाद के समक्ष मृतक कर्मचारी की विधवा द्वारा दिए गए बयान से स्पष्ट होगा जिसमें उसने स्वीकार किया है कि उसे रोजगार दिया गया है और ऐसी स्थिति में अधिनिर्णय क्रियान्वित होता है। अत: यह घोर अन्याय होगी यदि याचीगण को विचारण की कठिनाई का सामना करने की अनुमति दी जाती है।

4. स्वीकृत रूप से, अधिनिर्णय क्रियान्वित किया गया है।

5. मामले के उस दृष्टिकोण में, यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा यदि याचीगण को विचारण की कठिनाई का सामना करने की अनुमति दी जाती है।

6. तद्नुसार, दिनांक 14.9.2010 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित आई॰ डी॰ केस सं॰ 322 वर्ष 2010 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

7. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr ;k] e[; U;k;kèkh'k ,o t ;k jk;] U;k;efr

जिला अधिवक्ता संघ, देवघर

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 5575 of 2011. Decided on 4th July, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 173 (8)—पी॰ आई॰ एल॰–भूमि घोटाला–सी॰ बी॰ आई॰ अन्वेषण–बड़े पैमाने पर भूमि घोटाला हुआ और भू-माफिया ने संबंधित राजस्व अधिकारियों के साथ दुरभिसंधि में सार्वजनिक भूमि लूटने के लिए षडयंत्र किया जो जमाबंदी रैयती भूमि तथा गोचर एवं पोखर भूमि थी–सी॰ बी॰ आई॰ अन्वेषण चल रहा है–सामान्यत: उच्च न्यायालय पुनर्अन्वेषण का आदेश नहीं दे सकता है–जब राज्य सरकार द्वारा सी॰ बी॰ आई॰ को पहले ही मामला निर्दिष्ट किया गया है, यह समुचित नहीं होगा कि दो अन्वेषण एजेंसियाँ अर्थात् सी॰ बी॰ आई॰ और राज्य पुलिस अपराधों, एक भूमि घोटाला का और दूसरा अपराध का साक्ष्य विनष्ट करने का, में अन्वेषण के लिए अग्रसर हों–राज्य सरकार को सी॰ बी॰ आई॰ को आगे का अन्वेषण सौंपने का निर्देश दिया गया।(पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–AIR 1979 SC 1971; (2008) 2 SCC 383; (2009) 6 SCC 332; (2008) 5 SCC 413; (2010) 3 SCC 571; (2010) 2 SCC 254; (2011) 9 SCC 182; 1988 (Supp.) SCC 482; (2012) 7 SCC 407; (2013)1 SCC 197; AIR 2004 SC 3114; (2009)9 SCC 129—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioner; JC to AAG & Mr. M. Khan, For the Respondents.

आदेश

यह याचिका जिला अधिवक्ता संघ, देवघर द्वारा झारखंड न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को संबोधित दिनांक 9 सितंबर, 2011 के पत्र के आधार पर जनहित याचिका के रूप में दर्ज की गयी है। जिला अधिवक्ता संघ, देवघर के पत्र में यह उल्लेख किया गया है कि क्षेत्र में भूमि घोटाला के मामले पर जिला अधिवक्ता संघ, देवघर द्वारा अत्यावश्यक बैठक बुलाकर विचार किया गया था और यह पाया गया था कि बड़े पैमाने पर भूमि घोटाला हुआ है और भू–माफिया ने उनके कार्यरत कर्मचारियों सहित संबंधित राजस्व अधिकारियों के साथ दुरभिसंधि करके सार्वजनिक भूमि, जो गैर अंतरणीय है और जो जमाबंदी रैयत भूमि तथा गोचर एवं पोखरा भूमि थी, को लूटने का षडयंत्र किया और उस प्रयोजन से अनेक दस्तावेजों को कूटरचित किया गया था और राजस्व प्राधिकारियों द्वारा बोगस भूमि अर्जन आदेशों के आधार पर अनेक नामांतरण आदेश पारित किए गए है और भूमि की प्रकृति को अंतरणयोग्य होने का रंग दिया गया है और पूरी संभावना है कि साक्ष्य विनष्ट और नुकसान किया जा सकता है और उस क्रम में पुराने अभिलेखों में भी छेड़छाड़ किया जा सकता है। प्रशासन द्वारा जाँच संचालित किया गया था और भारतीय दंड संहिता के अनेक प्रावधानों के अधीन प्राथमिकी दर्ज करके देवघर पी॰ एस॰ केस सं॰ 260 वर्ष 2011 पहले ही दर्ज किया गया है। तब राज्य सरकार ने विचार किया कि मामले पर केंद्रीय जाँच ब्यूरो द्वारा अन्वेषण किए जाने की आवश्यकता है और इसलिए दिनांक 26 नवंबर, 2011 के आदेश के तहत मामला केंद्रीय जाँच ब्यूरो को निर्दिष्ट किया गया था।

2. केंद्रीय जाँच ब्यूरो अन्वेषण कर रहा है। इस अन्वेषण के दौरान अनेक दस्तावेजों, जिन्हें विभागीय रूप से संग्रहित किया गया था और देवघर के अभिलेख कक्ष में रखा गया था, को चुरा लिया गया था। यह स्थिति पाते हुए, अपर कलक्टर, देवघर द्वारा जिला भूमि अर्जन अधिकारी और अंचलाधिकारी की उपस्थिति में जाँच संचालित की गयी थी। यह रिपोर्ट दिनांक 6 सितंबर 2011 का है। अतः, दिनांक 26 नवंबर, 2011 को मामला केंद्रीय जाँच ब्यूरो को सौंपे जाने के पहले महत्वपूर्ण तात्विक साक्ष्य को पहले ही हटा अथवा विनष्ट कर दिया गया है।

3. दिनांक 6 सितंबर, 2011 की जाँच रिपोर्ट चौंकानेवाली है। जाँच रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि किसी सुनील कुमार, पुत्र ज्योतेंद्र पोद्दार, को आवश्यकतानुसार विभाग के स्थापन खंड में बुलाया जाता था। प्राप्त सूचना के मुताबिक दिनांक 30 अगस्त, 2011 की घटना के एक दिन पहले अर्थात् दिनांक 29 अगस्त, 2011 को दोपहर में उक्त सुनील कुमार अभिलेख कक्ष में आया। यह सुनील कुमार अभिलेख कक्ष में विभाग के भूतपूर्व कर्मचारी जो दिनांक 31 जनवरी, 2011 तक सेवा में था, का पुत्र है। यह अभिलेख पर आया है कि उक्त ज्योतेंद्र पोद्दार की खराब दृष्टि के कारण उसका पुत्र सुनील कुमार अपने पिता का काम करने अभिलेख कक्ष में आता था और अपने पिता के लिए उपस्थिति रजिस्टर पर हस्ताक्षर करता था। वह लंबी अवधि तक वहाँ काम करता रहा और, इसलिए, उसने अभिलेख कक्ष के अभिलेखों को संभालने में अच्छा अनुभव अर्जित कर लिया। उस कारण से, उसे अभिलेख कक्ष के काम में मदद करने के लिए बुलाया जाता था। यह अभिलेख पर आया है कि एक बार वर्ष 2010 में उक्त सुनील कुमार

को राजस्व निष्पादन रजिस्टर के अभिलेख से कुछ महत्वपूर्ण पृष्ठों को हटाते हुए पाया गया था और उसे पकड़ा गया था जब वह उन दस्तावेजों को अपनी जेब में रखे हुए था। उसकी जेब से दस्तावेजों को बरामद किया गया था किंतु ''सद्विश्वास'' में उसके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गयी थी और इस मामले को कहीं भी लिखित में रिपोर्ट नहीं किया गया था। इस घटना के कारण कर्मचारी ज्योंतेंद्र पोद्दार को स्थानांतरित कर दिया गया था। इन समस्त चीजों की जानकारी होने के बावजूद उक्त सुनील कुमार को अभिलेख कक्ष में अभिलेखों को संभालने की अनुमति दी गयी थी।

उक्त तथ्यों के अतिरिक्त, कुछ अन्य प्रासंगिक तथ्य ये हैं कि अभिलेख कक्ष में पहला ग्रिल गेट और तत्पश्चात दूसरा ग्रिल गेट और तत्पश्चात तीसरा लड़की का दरवाजा है। इन तीनों गेटों पर तीन भिन्न तालों को लगाया जाता था और तीनों गेटों के तालों को खोलने के बाद ही कोई अंदर जा सकता है। तत्पश्चात, एक और ताला है और तत्पश्चात उसको खोलने के बाद ही कोई अंदर जा सकता है। दिनांक 30 अगस्त, 2011 को यह रिपोर्ट किया गया था कि प्रासंगिक दस्तावेज मुहरबंद बॉक्स से गायब हैं और यह पाया गया था कि समस्त चारों ताले अपनी जगह पर थे, अत: यह प्रतीत होता है कि समस्त चारों गेटों को चाबियों से खोला गया था जिसके लिए डुप्लीकेट और/अथवा मूल चाबियों का उपयोग किया जा सकता था। दिनांक 6 सितंबर, 2011 की यह रिपोर्ट अत्यन्त सुविस्तृत है।

4. हम पुनर्स्मरण कर सकते हैं कि यह एक जिला में हजारों एकड़ भूमि को लूटने के अभिकथन से संबंधित मामला था। इस चोरी को पाने पर राज्य पुलिस द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और इस जनहित याचिका के लंबित रहने के दौरान और जब केंद्रीय जाँच ब्यूरो द्वारा मुख्य अपराध का अन्वेषण संचालित किया जा रहा है और यह पाते हुए कि क्या बड़ी सीमा तक गंभीर अपराधिता थी, पुलिस अन्वेषण एजेंसी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन दो व्यक्तियों के विरुद्ध चालान दाखिल किया है और उनमें से एक सुनील कुमार है। एक अन्य अभियुक्त ध्रुव नारायण परिहस्त है। यह कहा गया है कि उक्त ध्रुव नारायण परिहस्त के पिता के नाम में कुछ जमाबंदी सृजित की गयी थी और इसलिए उसे दिनांक 30 अगस्त, 2011 की प्राथमिकी सं॰ 260 के अनुसरण में उक्त दांडिक मामले में लिप्त किया गया है।

5. विद्वान न्यायमित्र श्री पांडे नीरज राय ने जोरदार निवेदन किया कि राज्य पुलिस प्राधिकारियों/अन्वेषण अधिकारी द्वारा कोई पूर्ण अन्वेषण संचालित नहीं किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि मामला प्रभावशील व्यक्तियों और सरकारी पदधारियों को अंतर्ग्रस्त करने वाला हजारों एकड़ भूमि से संबंधित था। उस स्थिति में, यह बिल्कुल अविश्वसनीय है कि केवल एक व्यक्ति की मदद करने के लिए केवल एक कर्मचारी का पुत्र हजारों एकड़ भूमि के प्रयोजन से प्रासंगिक साक्ष्य विनष्ट कर देगा। यह निवेदन किया गया है कि मामले के तथ्यों, जिन्हें अपर कलक्टर की दिनांक 6 सितंबर, 2011 की रिपोर्ट से एकत्रित किया जा सकता है और जिसे जिला अधिवक्ता संघ द्वारा संचालित जाँच से आगे सुदृढ बनाया गया है, से यह स्पष्ट है कि अनेक व्यक्ति अंतर्ग्रस्त हो सकते हैं और सी॰ बी॰ आई॰ के चंगुल से उनको बचाने के लिए दांडिक मामले जिसका अन्वेषण सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा किया जा रहा है के साक्ष्य को विनष्ट करने के चोरी के मामले में अन्वेषण में आरोप-पत्र दिखावा मात्र है और सी॰ बी॰ आई॰ मामले के अभियुक्त को बचाने के लिए है।

विद्वान न्यायमित्र ने आगे निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने लगभग समस्त पूर्व निर्णयों में अभिनिर्धारित किया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 (8) के मुताबिक, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 (2) के अधीन न्यायालय में रिपोर्ट (आरोप पत्र) दाखिल करने के बाद भी अन्वेषण अधिकारी अतिरिक्त साक्ष्य अथवा दस्तावेज, यथास्थिति, को प्राप्त करने के लिए अग्रसर हो सकता है और संबंधित दंडाधिकारी को

अपना रिपोर्ट अग्रसर कर सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अन्वेषण, पुनर्अन्वेषण और अतिरिक्त अन्वेषण के बीच भिन्नता है। जहाँ तक पुनर्अन्वेषण का संबंध है, कुछ निर्बंधन हो सकते हैं और न्यायालय से कुछ आदेश की आवश्यकता हो सकती है किंतु जहाँ तक दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा की धारा 178 (8) का संबंध है, यह वैसे मामले में भी, जहाँ दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन अन्वेषण अधिकारी द्वारा पहले ही रिपोर्ट दाखिल कर दिया गया है, अतिरिक्त साक्ष्य, मौखिक अथवा दस्तावेजी, प्राप्त करने के लिए अन्वेषण अधिकारी की शक्ति को मान्यता देता है। पूर्वतम मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **राम लाल नारंग बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन), AIR 1979 SC 1791,** मामले में संप्रेक्षित किया है कि ऐसे मामले में जब संबंधित दंडाधिकारी के समक्ष दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन रिपोर्ट (आरोप पत्र) दाखिल कर दिया गया है, तब अतिरिक्त अन्वेषण के लिए औपचारिक अनुमति की आवश्यकता है जो विद्वान न्यायमित्र के अनुसार केवल न्यायालय के प्राधिकार को सम्मान देने के लिए प्रक्रिया है जहाँ अन्वेषण अधिकारी द्वारा मामला पहले ही दाखिल कर दिया गया है। किंतु **आंध्र प्रदेश राज्य बनाम ए॰ एस॰ पीटर, (2008)2 SCC 383,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामले में अन्वेषण अधिकारी द्वारा साक्ष्य के संग्रहण के लिए ऐसी अनुमति की आवश्यकता नहीं है जहाँ दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 की उपधारा (2) के अधीन रिपोर्ट दाखिल किया गया है। किंतु पुनर्अन्वेषण के लिए न्यायालय की अनुमति की आवश्यकता है। **मीठा भाई पाशाभाई पटेल एवं अन्य बनाम गुजरात राज्य, (2009)6 SCC 332,** मामले में यही दृष्टिकोण अपनाया गया है। किंतु **रामाचंद्रन बनाम आर॰ उदय कुमार एवं अन्य, (2008)5 SCC 413,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि पुनर्अन्वेषण अनुज्ञेय नहीं है किंतु बाद के निर्णय में उस दृष्टिकोण को अनुमोदित नहीं किया गया है और **पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य बनाम जनतांत्रिक अधिकार संरक्षण कमिटी, पश्चिम बंगाल एवं अन्य, (2010)3 SCC 571,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह संप्रेक्षित किया गया है कि आपवादिक परिस्थितियों में पुनर्अन्वेषण अनुज्ञेय है।

बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2010)12 SCC 254, और **पंजाब राज्य बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, (2011)9 SCC 182,** जैसे मामलों में अन्य निर्णयों में भी विवाद्यक पर विचार किया गया था जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि सामान्यत: उच्च न्यायालय पुनर्अन्वेषण का आदेश नहीं दे सकता है। इसके काफी पहले वर्ष 1988 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **काश्मीरी देवी बनाम दिल्ली प्रशासन एवं एक अन्य, (1988) [Supp.]SCC 482,** में अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय को पुनर्अन्वेषण की अनुमति प्रदान करने के लिए निर्देश दे सकता है। **समाज परिवर्तन समुदाय एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य, (2012)7 SCC 407,** में दिया गया माननीय सर्वोच्च न्यायालय का हाल का निर्णय कहता है कि पुनर्अन्वेषण और नया अन्वेषण अनुज्ञेय है और वर्ष 2013 में **विपुल शीतल प्रसाद अग्रवाल बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2013)1 SCC 197,** मामले में भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 के अधीन चालान दाखिल करने के बाद आगे अन्वेषण संचालित किया जा सकता है। किंतु **जाहिरा हबीबुल्ला एच॰ शेख एवं एक अन्य बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, AIR 2004 SC 3114,** मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय पुनर्अन्वेषण के लिए निर्देश जारी कर सकता है। **रीता नाग बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य, (2009)9 SCC 129,** मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय में पुनर्अन्वेषण के संबंध में विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया है जो कहता है कि पुनर्अन्वेषण मामले में स्वप्रेरित शक्ति नहीं है।

6. चाहे जो भी हो, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 (8) सार–संक्षेप में स्पष्टत: निम्नलिखित कहती है:–

èkkjk 173(8) nO iO lO

173. ***vUo"k.k d lekIr gk tku ij ifyl vfèkdkjh dh fjikV-***
&xxx xxx

*(8) bl èkkjk dh dkb ckr fdlh vijkèk d ckj e mièkkjk (2) d vèkhu eftLVV dk fjikV Hkt nh tku d i'pkr vkx vkj vUo"k.k dk çokfjr dju okyh ugh le>h tk,xh rFkk tgk ,l vUo"k.k ij ifyl Fkku d Hkkjlkèkd vfèkdkjh dk dkb vfrfjDr ekf[kd ;k nLrkoth lk{; fey ogk ,l lk{; d lcèk e vfrfjDr fjikV ;k fjikV eftLVV dk fofgr çk:i e Hktxk] vkj mièkkjk (2) l (6) rd d micUèk ,lh fjikV ;k fjikVk d ckj e] tgk rd gk ld] ,l ykx gkx] tl o mièkkjk (2) d vèkhu Hkth xb fjikV d lEcUèk e ykx gkr gA***

7. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 173 (2) के अधीन न्यायालय में आरोप–पत्र दाखिल करने के बाद आगे अन्वेषण करने की शक्ति पुलिस के पास है और उच्च न्यायालय भी अन्वेषण अधिकारी को आगे अन्वेषण करने के लिए निर्देश दे सकता है। यह सुयोग्य मामला है जहाँ दांडिक मामले में साक्ष्य विनष्ट करने के मामले में निजी व्यक्तियों और सरकारी कर्मचारियों की अंतर्ग्रस्तता प्रतीत होती है और पुलिस द्वारा उनका अन्वेषण नहीं किया गया है, अत: आगे अन्वेषण आवश्यक है। सी॰ बी॰ आई॰ को आगे अन्वेषण सौंपना समुचित है।

मामले के तथ्यों की संपूर्णता में और उक्त निर्दिष्ट निर्णयों का परिशीलन करने के बाद हमारा सुविचारित मत है कि जब दिनांक 26 नवंबर, 2011 के राज्य सरकार के निर्णय द्वारा मामला पहले ही केंद्रीय जाँच ब्यूरो को निर्दिष्ट किया जा चुका है, यह समुचित नहीं होगा कि दो अन्वेषण एजेंसियाँ अर्थात् सी॰ बी॰ आई॰ और राज्य पुलिस अपराधों के अन्वेषण में अग्रसर हो एक भूमि घोटाला के मामले में और दूसरा उक्त अपराध के साक्ष्य को विनष्ट करने के मामले में।

8. अत:, हम मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, देवघर की अधिकारिता के अधीन देवघर टाऊन पुलिस थाना में दाखिल दिनांक 30 अगस्त, 2011 की प्राथमिकी सं॰ 260 के अनुसरण में दर्ज दांडिक मामले में केंद्रीय जाँच ब्यूरो को आगे अन्वेषण सौंपने के लिए राज्य सरकार को निर्देश देना समुचित समझते हैं और जहाँ जिसके अनुसरण में रिपोर्ट (चालान) स्थानीय पुलिस द्वारा दो अभियुक्त के विरुद्ध पहले ही दाखिल कर दिया गया है, केंद्रीय जाँच ब्यूरो इस मामले का भी अन्वेषण करेगा।

9. अभिलेख पर, सी॰ बी॰ आई॰ की दिनांक 26 नवंबर, 2012 की रिपोर्ट है। अत: सी॰ बी॰ आई॰ को दिनांक 12 अगस्त, 2013 को अथवा इसके पहले नया स्टेट्स रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है।

10. इस मामले को दिनांक 12 अगस्त, 2013 को रखा जाए।

कार्यालय को विद्वान न्यायमित्र को आर्डरशीट/आदेशों का पूर्ण संवर्ग और भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता को आज के आदेश की प्रति देने का निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

बरुण मंडल एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 3750 of 2013. Decided on 8th July, 2013.

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धारा 34—भूमि का अर्जन–मुआवजा–ब्याज–मुआवजा की राशि पर 15% ब्याज का दावा–प्रत्यर्थी को इस तथ्य कि समरुप परिस्थिति में उच्च न्यायालय ने संबंधित प्राधिकारी को अभ्यावेदन पर विधि के अनुरुप निर्णय लेने का निर्देश दिया है, को विचार में लेते हुए याचीगण द्वारा दाखिल अभ्यावेदन पर विचार करने और निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. K.K. Ambastha, For the Petitioners; Mr. Ratnakar Bhengra, For the State-Resp.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस रिट याचिका को दाखिल करके भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 की धारा 34 में अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुरुप मुआवजा की राशि पर 15% की दर पर ब्याज का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण पर रिट/आदेश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, भू–अर्जन संदर्भ केस सं॰ 1 वर्ष 2001 में उप–न्यायाधीश–सह–भूमि अर्जन न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा अधिनिर्णय पारित किया गया है। किंतु विद्वान न्यायाधीश ने उक्त अधिनियम की धारा 34 की दृष्टि में 15% की दर पर ब्याज के भुगतान के संबंध में आदेश पारित नहीं किया है। अत: वर्तमान याचीगण परिशिष्ट 3 के तहत अभ्यावेदन दाखिल करके संबंधित प्राधिकारी के पास गए। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, समरुप स्थिति में इस न्यायालय ने संबंधित प्राधिकारी को अभ्यावेदन पर विचार करने और विधि के अनुरुप समुचित निर्णय लेने के लिए निर्देश दिया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्ट 4 श्रृंखला के तहत डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 440 वर्ष 2006, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 522 वर्ष 2006 और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1514 वर्ष 2007 में पारित आदेशों को निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है।

3. प्रत्यर्थीगण राज्य सरकार के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याचीगण को समुचित कार्यवाही दाखिल करने की आवश्यकता है यदि वे विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और अधिनिर्णय से व्यथित और असंतुष्ट है किंतु उन्हें कोई आपत्ति नहीं है यदि याचीगण द्वारा दाखिल अभ्यावेदन पर विचार करने के लिए परिशिष्ट–4 श्रृंखला आदेशों के निबंधनानुसार संबंधित प्राधिकारी को आवश्यक निर्देश दिया जाता है।

4. उक्त निवेदनों की दृष्टि में और विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में की याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 को दिनांक 21.3.2012 का अभ्यावेदन और दिनांक 17.5.2013 का एक अन्य अभ्यावेदन (परिशिष्ट–3 श्रृंखला) दिया है, संबंधित प्राधिकारी को उक्त अभ्यावेदन पर विधि के अनुरुप निर्णय लेने की आवश्यकता है। आगे यह प्रतीत होता है कि समरुप परिस्थितियों में इस न्यायालय ने परिशिष्ट–4 श्रृंखला के तहत प्रस्तुत आदेश के मुताबिक संबंधित प्राधिकारी को अभ्यावेदन पर विधि के अनुरुप निर्णय लेने का निर्देश दिया।

5. उक्त अवस्था की दृष्टि में, वर्तमान रिट याचिका को प्रत्यर्थी सं॰ 4 को याचीगण द्वारा दाखिल अभ्यावेदनों पर विचार करने और निर्णय लेने के लिए आवश्यक निर्देश देकर निपटाने की आवश्यकता है। संबंधित प्राधिकारी प्राथमिकत: इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर याचीगण द्वारा दाखिल अभ्यावेदन (परिशिष्ट-3 श्रृंखला) पर निर्णय लेंगे।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड

cuke

श्री बी॰ के॰ घोष की अध्यक्षता में उनके कर्मकार एवं एक अन्य

W.P. (L) No. 3381 of 2001. Decided on 7th August, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन।

ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970—धारा 12—ठेका श्रमिक का नियमितिकरण—छोटे ठेकेदार को अंतर्ग्रस्त करने वाली टर्न की संविदा—कोई प्रतिषेध अधिसूचना जारी नहीं की गयी थी—ऐसे मामले में भी अधिकरण को स्वतंत्र निष्कर्ष पर आना था कि क्या याची प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था याची के नियोजन में कर्मकारों के नियमितिकरण निर्देशित किए जा सकने के पहले छद्मावरण अथवा चाल की प्रकृति में की थी—जब स्वयं कर्मकारों ने स्वीकार किया कि वे छोटे ठेकेदार के अधीन कार्यरत थे, अधिकरण ने आक्षेपित निर्णय देकर विधि की गंभीर गलती की जो मामले की जड़ तक जाती है—आक्षेपित अधिनिर्णय अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 19 से 23)

निर्णयज विधि.—(2001)7 SCC 1—Applied; 1997 Lab. I.C. 365—Since overruled; 1999 LLR 433; (1992)1 SCC 695; (2002)4 SCC 609; AIR 1978 SC 1410—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Mehta, For the Petitioner; Mr. Mahesh Tiwari, For the Respondents.

अपरेश कुमार सिंह, न्यायमूर्ति.—पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. रिट याची-प्रबंधन निर्देश केस सं॰ 101 वर्ष 1991 में केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं॰ 1, धनबाद द्वारा दिए गए दिनांक 20 मार्च, 2011 के अधिनिर्णय से व्यथित है जिसके द्वारा निर्देश का उत्तर देते हुए इसने अभिनिर्धारित किया है कि निर्देश के साथ संलग्न सूची में नामित कर्मकार कोटि I सामान्य मजदूर में मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ लि॰ के मधुबन वाशरी परियोजना के स्थायी कर्मचारियों के रूप में नियमितिकरण के हकदार हैं। प्रबंधन को इसके प्रकाशन की तिथि से 30 दिनों के भीतर अधिनिर्णय क्रियान्वित करने का निर्देश दिया गया था।

3. केंद्र सरकार, श्रम मंत्रालय ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 (1) (d) और उपधारा (2A) के अधीन प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में दिनांक 11 अक्टूबर, 1991 की अधिसूचना के तहत निम्नलिखित विवाद को न्यायनिर्णयन के लिए इस अधिकरण के पास निर्दिष्ट किया था:—

*^^D;k e l l chO lhO lhO ,yO d eèkcu ok'kjh ifj;ktuk dk çcèku mi&Bdnkj e l l jru bthfu;fjx oDl d ekè;e l fu;kftr fuEufyf[kr 14 dedkjk dk ,uO lhO MCY;O ,O IV d erkfcd lefpr dkfVdj.k ,o rRle etnjh Hkxrku d lkFk fu;fefrdj.k ugh nu e U;k;kfpr g\ ;fn ugh] rk dedkj fdl vurk"k d gdnkj g***

(1) Jh vtu egrk(

(2) Jh txy egrk(

(3) Jh enu egrk(

(4) Jh lj'k çlkn(

(5) Jh }kfjdk çlkn(

(6) Jh jkeno çlkn(

(7) Jh xkjh 'kdj lko(

(8) Jh jketh lko(

(9) Jh egUn flg(

(10) Jh ekFkj eMy(

(11) Jh fd'ku egrk(

(12) Jh ftru egrk(

(13) Jh v?k# egrk(

(14) ekO fljktíhu vlkjhA

4. विद्वान अधिकरण के समक्ष दाखिल उनके लिखित कथन के मुताबिक कर्मकारों का मामला यह था कि मेसर्स एम॰ ए॰ एम॰ सी॰ लि॰ को मधुबन वाशरी परियोजना के प्रबंधन द्वारा निर्माण कार्य के लिए ठेकेदार के रूप में नियुक्त किया गया था। मेसर्स एम॰ ए॰ एम॰ सी॰ लि॰ ने बदले में मेसर्स एच॰ एस॰ सी॰ एल॰ को काम उप ठेका पर दे दिया था। मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स उपठेकेदारों का अधीनस्थ ठेकेदार था। अनुसूची में नामित अर्जुन महतो एवं 13 अन्य नियोजन के मुताबिक ऑपरेटरों, फिटर्स, वेल्डर्स, गैस कटिंग, हेल्पर्स और मजदूरों का काम करते हुए अधीनस्थ ठेकेदार के पंजी पर थे। ये अधीनस्थ ठेकेदार कोयला कंपनी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा अधिनिर्णीत संविदा के अधीन कार्यरत थे। अत: संबंधित कर्मकार कोयला उद्योग के अन्य समस्त कर्मचारियों के भाँति मजदूरी के समुचित वेतनमान पर नियमित किए जाने के हकदार थे क्योंकि उन्हें राष्ट्रीय कोयला मजदूरी अधिनियम (एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰) के मुताबिक तत्सम काम के लिए कोटि मजदूरी की तुलना में कमतर मजदूरी का भुगतान मनमाने तरीके से किया जा रहा था। अत:, समुचित कोटिकरण और एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के निबंधनानुसार, तत्सम मजदूरी भुगतान में इन कर्मकारों को नियमित नहीं करने में प्रबंधन की कार्रवाई औचित्यपूर्ण नहीं है। ऐसी परिस्थितियों में, उन्होंने बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन के नियोजन के अधीन नियमित किए जाने का दावा किया जिसके लिए उन्होंने औद्योगिक विवाद उठाया जिसे विद्वान अधिकरण के समक्ष निर्दिष्ट किया गया था।

5. प्रबंधन ने अपने लिखित कथन में दृष्टिकोण अपनाया कि इसने दिनांक 9 दिसंबर, 1985 के करार के तहत 72,50,00,000/- (बहत्तर करोड़ पचास लाख) रुपयों की कीमत पर 2.5 एम॰ टी॰ ए॰ के कोल वाशरी के पूर्ण डिजाइन, इंजीनियरिंग, सप्लाई, स्थल पर डिलीवरी, खड़े किए जाने और चालू करने के लिए भारत सरकार के उपक्रम मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰, दुर्गापुर को टर्न की संविदा अधिनिर्णीत किया था। मेसर्स एम॰ ए॰ एम॰ सी॰ को अनुबंधित समय के भीतर संयंत्र

खड़ा करने और इसको चालू करने तथा मेसर्स बी० सी० सी० एल० को प्रभार सौंपने की आवश्यकता थी। वाशरी प्रबंधन के मधुबन परियोजना पर अवस्थित थी।

6. उनकी ओर से आगे कथन किया गया है कि मेसर्स एम० ए० एम० सी० ने दिनांक 30 सितंबर, 1986 के करार के अधीन मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि०, कलकत्ता को संविदा अधिनिर्णीत किया। ठेकेदार द्वारा किए जाने वाले कामों के विवरणों को मात्राओं की अनुसूची में संगणित किया गया था और मूल्य केवल 11,11,97,463/- (ग्यारह करोड़ ग्यारह लाख नब्बे हजार चार सौ तिरसठ) रुपया था। चूँकि संविदा अनेक प्रकार के कामों को अंतर्ग्रस्त करती थी, ठेकेदार ने काम के कतिपय वस्तुओं पर विशिष्टता रखने वाले उप-ठेकेदारों का चयन किया और उनको काम पर लगाया। उस प्रक्रिया में मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि० ने समय-समय पर अनेक उप-ठेकेदारों को काम पर लगाया। इन उप ठेकेदारों ने स्वयं अपने मजदूरों का चयन किया और उनको भरती किया, उनको उनकी मजदूरी का भुगतान किया, उनके कामों का पर्यवेक्षण किया और उनके उपर समस्त प्रकार के नियंत्रणों का प्रयोग किया। उपठेकेदारों ने उनके कामों के पूरा होने के बाद छँटनी मुआवजा नोटिस मजदूरी का भुगतान उनको किया और इस प्रकार उनको पूर्ण एवं अंतिम भुगतान देने के बाद निर्मुक्त किया। ये संबंधित कर्मकार मेसर्स हिंदुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि० के अधीन उसकी संविदा की अवधि के दौरान उपठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स के अधीन काम करने का दावा कर रहे हैं। उपठेकेदारों का काम 1991 के मध्य में समाप्त हो गया था और समस्त कर्मकारों को संविदा काम पूरा होने के समय पर छँटनी मुआवजा और नोटिस मजदूरी का भुगतान किया गया था। उन्होंने उप-ठेकेदारों के अधीन अपनी सेवा समाप्ति के समय पर अन्य समस्त बकायों को प्राप्त किया। मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि० ने भी मध्य 1991 में अपने समस्त सिविल कंस्ट्रक्शन कार्य पूरा किया और विभिन्न संविदा कामों में गैर-जरुरी समस्त अधिशेष कर्मकारों का छँटनी किया। अत: मेसर्स बी० सी० सी० एल० ने मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि० को टर्न की संविदा अधिनिर्णीत किया था और इसका डिजाइनिंग, प्लानिंग, प्रबंधन, प्रशासन अथवा कंपनी के दैनंदिन काम के साथ कोई सरोकार नहीं था। इसे चालू किए जाने और प्रमाण पत्रित किए जाने के बाद वाशरी के कार्यपालन को जाँचने की आवश्यकता थी। अत:, मेसर्स माईनिंग एण्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि० द्वारा अथवा मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि० द्वारा अथवा उपठेकेदार द्वारा नियोजित कर्मकारों के संबंध में प्रबंधन का किसी प्रकार का दायित्व नहीं था। बी० सी० सी० एल० का प्रबंधन परियोजना के निर्माण की अवधि के दौरान अंतर्ग्रस्त नहीं था और परियोजना खान नहीं थी, काम कोयला के खनन से संबंधित नहीं था। परियोजना मुख्यत: सिविल निर्माण काम, संरचनात्मक और मशीनरी के स्थापन से गठित थी। इस प्रकार, यह खान अथवा नियंत्रण उद्योग की परिभाषा के अंतर्गत नहीं आता था और विद्वान अधिकरण की अधिकारिता की कमी के कारण निर्देश स्वयं अक्षम था। समय के किसी बिंदु पर कर्मकारों का बी० सी० सी० एल० के प्रबंधन के साथ नियोक्ता अथवा कर्मचारी का संबंध नहीं था। उन्होंने अपनी मजदूरी उप ठेकेदार से पाया था जो विहित न्यूनतम मजदूरी की तुलना में कम मजदूरी का भुगतान नहीं कर सकता था। अत: ये कर्मकार बी० सी० सी० एल० के प्रबंधन के नियोजन में नियमितिकरण अथवा आमेलन का दावा नहीं कर सकते हैं। अत: कर्मकारों का दावा गुणागुण हित था और निर्देश का उत्तर उनके विरुद्ध दिया जाना चाहिए।

7. टर्न-की आधार पर मेसर्स माइनिंग एण्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि० को अधिनिर्णीत काम के करार की छाया प्रतिलिपि को प्रदर्श M1 और M-1/1 के रूप में कतिपय तात्विक प्रदर्शों को प्रबंधन की ओर से विद्वान अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। उन्होंने ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धारा 12 के अधीन मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि० की

दिनांक 18 नवंबर, 1986 की अनुज्ञप्ति की छाया प्रति को भी प्रस्तुत किया है जिसे प्रदर्श M/2 के रूप में चिन्हित किया गया है। उन्होंने 1970 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन ठेकेदार के रूप में मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ के दिनांक 18 नवंबर, 1988 की अनुज्ञप्ति को दाखिल किया था। उन्होंने मेसर्स रबि एन्ड कं॰ और मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स द्वारा संबंधित व्यक्तियों को किए गए पूर्ण एवं अंतिम भुगतान के संबंध में मजदूरी–शीट को भी दाखिल किया था जिसे प्रदर्श M/3 और M-3/1 के रूप में चिन्हित किया गया है। मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन वर्ष 1986 से मधुबन कोल वाशरी में कार्यरत अधीक्षक अभियन्ता अशोक कुमार का परीक्षण एम॰ डब्ल्यू॰ 1 के रूप में किया गया था जिन्होंने अभिसाक्ष्य दिया कि मधुबन कोल वाशरी के निर्माण के लिए मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा मेसर्स माइनिंग एण्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को काम आवंटित किया गया था जिसने भारत सरकार के उपक्रम मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ को उपठेकेदार नियुक्त किया जिसने बदले में मेसर्स रबि एवं कं॰ और मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स सहित अन्य ठेकेदारों को छोटे कामों को अधिनिर्णीत किया।

8. उक्त प्रबंधन गवाह ने यह अभिसाक्ष्य भी दिया कि इन कर्मकारों को छोटे ठेकेदारों द्वारा नियोजित किया गया था जिनके कामों का पर्यवेक्षण उपठेकेदार द्वारा किया गया था और भुगतान भी उपठेकेदार द्वारा किया गया था। उन्होंने यह कथन भी किया कि मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ का पर्यवेक्षण यह देखने के लिए था कि क्या काम को मेसर्स एम॰ ए॰ एम॰ सी॰ लि॰ के साथ संविदा ने विनिर्देशों के अनुसार किया गया था।

9. यूनियन ने संबंधित कर्मकारों में से दो अर्थात् खेदम महतो और अर्जुन महतो का परीक्षण एल॰ डब्ल्यू॰ 1 और एन॰ डब्ल्यू॰ 2 के रूप में किया था जिन्होंने अभिसाक्ष्य दिया कि वे मई, 1987 से जून, 1991 तक मधुबन वाशरी परियोजना जो मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की है में छोटे ठेकेदार के अधीन कार्यरत थे। वे फिटर, हेल्पर, आदि का काम भी कर रहे थे और विनिर्देशों के मुताबिक कॉलम बीम तथा अन्य वस्तुओं को तैयार करते थे। आरंभ में, उन्हें 17/- रुपया प्रतिदिन मिलता था जिसे बाद में महत्तम 27/- रुपयों तक बढ़ाया गया था जो एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ की मजदूरी की तुलना में काफी कम था। तद्नुसार, उन्होंने मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के नियोजन के अधीन नियमितिकरण का मांग किया था।

10. विद्वान अधिकरण विरोधी पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य पर चर्चा के बाद इस निष्कर्ष पर आया कि यह मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ का स्वीकृत मामला है कि संबंधित व्यक्तियों ने छोटे ठेकेदारों, मेसर्स रबि एन्ड कंपनी और मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स के अधीन मधुबन वाशरी परियोजना के निर्माण कार्य में काम किया है। इसने इन दोनों छोटे ठेकेदारों के किसी लाइसेंस को यह दर्शाने के लिए दाखिल नहीं किया था कि वे 1970 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन लाइसेंसी थे। मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन ने 1970 के अधिनियम की धारा 7 के अधीन किसी रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र को यह दर्शाने के लिए दाखिल नहीं किया था कि मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की मधुबन वाशरी परियोजना ठेकेदार को काम पर लगाने के लिए मुख्य नियोक्ता के रूप में रजिस्टर्ड की गयी थी। अत:, विद्वान अधिकरण इस निष्कर्ष पर आया कि मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की मधुबन वाशरी परियोजना के पास 1970 के अधिनियम की धारा 7 के अधीन रजिस्ट्रेशन नहीं था और छोटे ठेकेदारों के पास भी इसी अधिनियम की धारा 12 के अधीन लाइसेंस नहीं था। अत:, यह ये अभिनिर्धारित करने के लिए अग्रसर हुआ कि विधि के सुनिश्चित सिद्धांत की दृष्टि में, जैसा **सचिव, हरियाणा राज्य विद्युत बोर्ड बनाम सुरेश एवं अन्य, 1999 LLR पृष्ठ 433** और **एअर इंडिया सांविधिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन, 1997 Lab. I.C. पृष्ठ 365,** मामलों सहित अनेक मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिया गया था, मुख्य नियोक्ता के किसी रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र अथवा ठेकेदार के लाइसेंस की अनुपस्थिति में ठेकेदार के मजदूरों को मुख्य नियोक्ता के कर्मचारियों के रूप में समझा जाएगा। तद्नुसार, वह कोटि सं॰ 1 सामान्य मजदूर में मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की मधुबन वाशरी परियोजना के स्थायी कर्मचारियों के रूप में इन कर्मकारों के नियमितिकरण के लिए अधिनिर्णय देने के लिए अग्रसर हुए।

11. याची के विद्वान अधिवक्ता पूर्वोक्त तथ्यों और विद्वान अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत सामग्री की दृष्टि में इसके द्वारा दिए गए निष्कर्षों और अधिनिर्णय का विरोध निम्नलिखित आधारों पर करते हैं कि (क) यह कर्मकारों का निर्विवादित मामला है कि वे छोटे ठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स के अधीन कार्यरत थे और छोटे ठेकेदार द्वारा मजदूरी का भुगतान किया जाता था जो उप ठेकेदार मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ का छोटा ठेकेदार था। अत:, किसी सूरत में मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ का प्रबंधन कर्मकार का मुख्य नियोक्ता नहीं था। (ख) यह भी निर्विवादित तथ्य है कि याची मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ ने मधुबन कोल वाशरी के निर्माण के लिए भारत सरकार के उपक्रम मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰, दुर्गापुर को टर्न की संविदा अधिनिर्णीत किया था जिसने बदले में छोटे ठेकेदार अर्थात् मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स लि॰ को काम पर लगाया था। (ग) पूर्वोक्त संविदा 1970 के अधिनियम की धारा 10 (1) के अधीन किसी अधिसूचना के अधीन प्रतिषिद्ध नहीं थी। (घ) मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ एवं हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ के पास 1970 के अधिनियम के अधीन समुचित लाइसेंस और रजिस्ट्रेशन था क्योंकि इन कर्मकारों ने स्वयं स्वीकार किया था कि उन्हें छोटे ठेकेदार द्वारा काम पर लगाया गया था जिसे उप ठेकेदार हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ द्वारा काम पर लगाया था जिसको टर्न की ठेकेदार मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ द्वारा ठेका दिया गया था। अत: बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन को किसी सूरत में प्रश्नगत कर्मकारों का मुख्य नियोक्ता अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता था। वह आगे निवेदन करते हैं कि विद्वान अधिकरण का निष्कर्ष कि याची के पास 1970 के अधिनियम की धारा 7 के अधीन रजिस्ट्रेशन नहीं था और छोटे ठेकेदारों के पास भी इसी अधिनियम की धारा 12 के अधीन लाइसेंस नहीं था, स्वमेव इस सरल निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाता है कि याची कर्मकारों का मुख्य नियोक्ता है और उन्हें इसके नियोजन में नियमित किया जाना चाहिए। वर्ष 1970 के अधिनियम की धाराओं 7 अथवा 12 के प्रावधानों के अननुपालन के लिए यह सुनिश्चित है कि दांडिक परिणाम हो सकते हैं किंतु यह स्वत: कर्मकारों के नियमितिकरण की ओर नहीं ले जा सकता है। वह पूर्वोक्त निवेदन के समर्थन में **दीनानाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय खाद लिमिटेड, (1992)1 SCC 695** मामले में और **वृहत्तर मुंबई नगर निगम बनाम के॰ वी॰ श्रमिक संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 609,** मामले में भी दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हैं।

12. याची ने यह निवेदन भी किया है कि विद्वान अधिकरण ने **एयर इंडिया सांविधिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन, 1997 Lab. I.C. पृष्ठ 365,** में निर्णय पर भी विश्वास किया है जिसे **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटर फ्रंट वर्क्स, (2001)7 SCC 1,** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ के निर्णय द्वारा विनिर्दिष्टत: उलट दिया गया था।

13. ऐसी परिस्थितियों में, आक्षेपित निर्णय विधि में पूर्णत: दोषपूर्ण है। भले ही 1970 के अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन संविदा प्रतिषिद्ध थी, विद्वान अधिकरण को **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटर फ्रंट वर्क्स, (2001)7 SCC 1, (उपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अधीन अधिकथित आज्ञा का अनुसरण विनिर्दिष्ट निष्कर्ष देकर करना था कि क्या ठेकेदार को कार्यपालन के लिए काम पर लगाया जाना चाल अथवा छद्मावरण की प्रकृति का था जिसका अनुसरण वर्तमान मामले में विद्वान अधिकरण द्वारा बिल्कुल नहीं किया गया है। अत:, आक्षेपित अधिनिर्णय विधि में दोषपूर्ण है।

14. कर्मकारों के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मधुबन कोल वाशरी नि:संदेह मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन के अधीन है। वह आगे निवेदन करते हैं कि कर्मकारों द्वारा किया गया काम मधुबन कोल वाशरी के संबंध में था जिसके संबंध में मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन ने मेसर्स माइनिंग एण्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को टर्न–की संविदा अधिनिर्णीत किया था जिसने मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ को उप संविदा दिया था और ये कर्मकार मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स कंस्ट्रक्शन लि॰ के उपठेकेदार द्वारा काम पर लगाए गए छोटे ठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स के अधीन कार्यरत थे। अत: यदि कर्मकारों द्वारा किए गए काम की प्रकृति मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ की मधुबन वाशरी परियोजना के अधीन है कर्मकारों द्वारा किए जा रहे काम के समरुप थी, वे मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ प्रबंधन के अधीन कर्मकारों के रूप में नियमित किए जाने के हकदार थे।

15. उन्होंने हु**सैनभाई, कालिगट बनाम अलथ फैक्ट्री तेजहिला यूनियन एवं अन्य, AIR 1978 SC 1410** Para 5, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है जो कर्मकार को विनिश्चित किए जाने की परीक्षा अधिकथित करता है। इस प्रश्न कि व्यक्ति कर्मकार है या नहीं, विनिश्चित किए जाने के लिए अधिकथित परीक्षा के मुताबिक, वर्तमान निर्देश में प्रश्नगत कर्मकार स्पष्टत: मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के मुख्य नियोक्ता के अधीन काम पर लगाए जा रहे कर्मकार की परिभाषा के अंतर्गत आते थे। ठेकेदारों के माध्यम से की गयी संपूर्ण व्यवस्था केवल कागज थी जिसे इन कर्मकारों को नियमितिकरण का लाभ और एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के अधीन मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के कर्मचारियों को उपलब्ध समरुप मजदूरी से इनकार करने के लिए मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा किया गया था।

16. ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान अधिकरण ने सही प्रकार से पाया है कि मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ को इन कर्मकारों का मुख्य नियोक्ता समझा जाना चाहिए और उन्हें उनके नियोजन में नियमित किया जाना चाहिए।

17. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परिशीलन किया है। तथ्यों, जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है और जिनको निर्णय के शुरुआती भाग में कुछ विस्तारपूर्वक निर्दिष्ट किया गया है, दर्शाते हैं कि मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ ने 72,50,00,000/- (बहत्तर करोड़ पचास लाख) रुपयों की राशि के लिए मधुबन वाशरी परियोजना के निर्माण कार्य के लिए मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को टर्न–की काम अधिनिर्णीत किया था। मेसर्स माइनिंग एण्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ के पास 1970 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन ठेकेदार के रूप में दिनांक 18 नवंबर, 1986 का अनुज्ञप्ति था जिसे प्रदर्श M2 के रूप में संलग्न किया गया है।

18. मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ ने काम के कुछ भाग को अपने उप ठेकेदार मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स लि॰ को अधिनिर्णीत किया जिसके पास भी 1970 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन दिनांक 18 नवंबर, 1988 का लाइसेंस था। प्रबंधन ने प्रदर्शों M-1 और M-1/1 के रुप में करार दाखिल किया था जिसके अधीन मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को टर्न के आधार पर संविदा अधिनिर्णीत की गयी थी। यह भी विवादित नहीं है और स्वयं कर्मकारों द्वारा स्वीकार किया गया है कि वे छोटे ठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स के अधीन कार्यरत थे जिसे कतिपय कार्य करने के लिए उप ठेकेदार मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स लि॰ द्वारा काम पर लगाया गया था। मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ और मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स लि॰ दोनों भारत सरकार के उपक्रम थे। दो कर्मकार गवाहों अर्थात् डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ 1 और डब्ल्यू॰ डब्ल्यू 2 अर्थात

खेदम महतो और अर्जुन महतो का साक्ष्य दर्शाता है कि वे मई, 1987 से जून, 1991 तक मधुबन वाशरी परियोजना में छोटे ठेकेदार के अधीन कार्यरत थे। लिखित कथन के मुताबिक प्रबंधक का मामला यह था कि इन कर्मकारों को काम पूरा होने के बाद छोटे ठेकेदार द्वारा मजदूरी का भुगतान किया गया था और उन्हें नोटिस अवधि के लिए मुआवजा मजदूरी भी दी गयी थी और अपने काम की समाप्ति पर उन्होंने पूर्ण और अंतिम भुगतान प्राप्त किया था।

19. अभिलेख पर लाए गए ऐसे साक्ष्य की दृष्टि में विद्वान अधिकरण यह निष्कर्ष देने के लिए अग्रसर हुआ कि चूँकि मेसर्स मधुबन वाशरी परियोजना लि॰ को मुख्य नियोक्ता के रूप में 1970 के अधिनियम की धारा 7 के अधीन रजिस्टर्ड नहीं किया गया था और छोटा ठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स भी इसी अधिनियम के अधीन लाइसेंस नहीं रखता था, अत: संबंधित कर्मकारों को छोटे ठेकेदार का मजदूर होने के नाते मुख्य नियोक्ता का कर्मचारी समझा जाना चाहिए। निष्कर्षों को दर्ज करते हुए विद्वान अधिकरण ने **सचिव, हरियाणा राज्य विद्युत बोर्ड बनाम सुरेश एवं अन्य (उपर)** और **एयर इंडिया सांविधिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन (उपर)** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया। किंतु **एयर इंडिया सांविधिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन (उपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटर फ्रंट वर्क्स, (2001)7 SCC 1 (उपर)** में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ के निर्णय द्वारा उलट दिया गया था। वर्ष 1970 के अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन प्रतिषेध अधिसूचना जारी करने पर **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्क्स, (2001)7 SCC 1 (ऊपर)** मामले में निर्णय के पैराओं 125 और 126 के अधीन विहित विधि की आज्ञा के अधीन अपने समक्ष किए गए निर्देश पर औद्योगिक न्याय निर्णयनकर्ता को अपने समक्ष दिए गए साक्ष्य के आधार पर निष्कर्ष पर आने की आवश्यकता है, कि क्या मुख्य नियोक्ता द्वारा ठेकेदार को काम पर लगाया जाना चाल अथवा छद्मावरण की प्रकृति का है। ऐसा निष्कर्ष देने पर और कारकों जिन्हें निर्णय के उक्त पैराग्राफों में संगणित किया गया है, को ध्यान में लेने के बाद विद्वान औद्योगिक अधिकरण को इस निष्कर्ष पर आना होगा कि क्या ठेकेदार के माध्यम से काम पर लगाए गए प्रश्नगत कर्मकारों को मुख्य नियोक्ता की सेवा में आमेलित किए जाने का निर्देश देने की आवश्यकता है। वर्तमान मामले में दिए गए आक्षेपित अधिनिर्णय को प्रभाव नहीं दिया गया था क्योंकि इसे दिनांक 31 जुलाई, 2001 के अंतरिम आदेश द्वारा स्थगित कर दिया गया था। अत: **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटर फ्रंट वर्क्स, (2001)7 SCC 1 (ऊपर)** में संवैधानिक पीठ का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों के प्रति प्रयोज्य होगा। वर्ष 1970 के अधिनियम की धारा 12 के अधीन लाइसेंस नहीं रखने वाले मुख्य नियोक्ता अथवा ठेकेदार/छोटे ठेकेदार के 1970 के अधिनियम की धारा 7 के अधीन गैर रजिस्ट्रेशन से प्रवाहित परिणाम यह नहीं है कि कर्मकारों को स्वत: मुख्य नियोक्ता के कर्मचारियों के रूप में समझा जा सकता था। ऐसी परिस्थितियों में विद्वान अधिकरण ने **दीनानाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय खाद लि॰, (1992)1 SCC 695,** मामले में और **वृहत्तर मुंबई नगर निगम बनाम के॰ वी॰ श्रमिक संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 609,** मामले में भी अधिकथित विधि के विपरीत कृत्य किया है।

20. वर्तमान मामले में प्रतिषेध अधिसूचना भी जारी नहीं की गयी थी। ऐसे मामले में भी विद्वान अधिकरण अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर स्वतंत्र निष्कर्ष पर आया था कि क्या याची प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था याची मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के नियोजन में कर्मकारों के नियमितिकरण का निर्देश दिए जा सकने के पहले छद्मावरण अथवा चाल की प्रकृति की थी।

21. वर्तमान मामले के तथ्य, जैसी चर्चा यहाँ उपर की गयी है, इस अर्थ में बिल्कुल विपरीत चित्र अंकित करते हैं कि उप ठेकेदार मेसर्स हिन्दुस्तान स्टील वर्क्स लि॰ और छोटे ठेकेदार मेसर्स रतन इंजीनियरिंग वर्क्स लि॰ के माध्यम से निष्पादित मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को अधिनिर्णीत टर्न की संविदा का काम किसी रूप में याची मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा किए जा रहे खनन संकार्य से सरोकार नहीं रखता था। मेसर्स माइनिंग एन्ड एलायड मशीनरी कॉरपोरेशन लि॰ को अधिनिर्णीत टर्न की संविदा स्वयं मधुबन वाशरी परियोजना के निर्माण के लिए थी जो 72,50,00,000/- (बहतर करोड़ पचास लाख) रुपयों के व्यय पर 2.5 एम॰ टी॰ ए॰ कोल वाशरी का डिजाइन, इंजीनियरिंग, सप्लाई, स्थल पर डिलीवरी, खड़ा और चालू किया जाना अंतर्ग्रस्त करता था।

22. ऐसी परिस्थिति में, जब कर्मकारों ने स्वयं स्वीकार किया कि वे छोटे ठेकेदार के अधीन कार्यरत थे, विद्वान अधिकरण ने मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के नियोजन में इन कर्मकारों के नियमितिकरण का निर्देश देते हुए विधि की गंभीर गलती की जो आक्षेपित अधिनिर्णय देकर मामले की जड़ तक जाता है।

23. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में और यहाँ उपर दर्ज कारणों से आक्षेपित अधिनिर्णय को विधि में और तथ्यों पर संपोषित नहीं किया जा सकता है और इसे तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है। रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

श्री बिनोद महतो

cuke

मोहित महतो एवं अन्य

F.A. No. 231 of 2010. Decided on 12th July, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 22 नियम 4 एवं 9 और धारा 151—प्रतिस्थापन–वाद का उपशमन–उपशमन को अपास्त करके प्रत्यर्थी के विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है–जहाँ तक प्रत्यर्थीगण 5, 9 एवं 15 का संबंध है, अपील मेमो से उनके नामों को विलोपित करने की आवश्यकता है–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Kumar, For the Appellants; Mr. M.P. Sinha, For the Respondents.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 2205 वर्ष 2013

वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन विलंब माफ करके उपशमन अपास्त करने के बाद प्रतिवादी सं॰ 5, 9 और 15 के विधिक उत्तराधिकारियों के प्रतिस्थापन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXII, नियम 4 और 9 और धारा 151 के अधीन दाखिल किया गया है।

2. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए। आवेदन का परिशीलन किया गया जो शपथ पत्र द्वारा समर्थित है।

3. यह निवेदन किया गया है कि बँटवारा वाद सं॰ 18 वर्ष 2003 की कार्यवाही के दौरान प्रत्यर्थी सं॰ 5 सुखी महतैन की मृत्यु अपने विधिक उत्तराधिकारियों को अपने पीछे छोड़ते हुए दिनांक 29.6.2004 को हो गयी जैसा आवेदन के पैरा 4 में कथन किया गया है। आगे यह कथन किया गया है कि यद्यपि

मृतका प्रत्यर्थी सं॰ 5 के विधिक उत्तराधिकारियों के नामों को विचारण न्यायालय के समक्ष सम्यक रूप से प्रतिस्थापित किया गया था किंतु अनवधानता और सद्भावपूर्ण गलती के कारण मृतका अर्थात् सुखी महतैन प्रत्यर्थी सं॰ 5 को भी वर्तमान अपील में अपने प्रतिस्थापित विधिक उत्तराधिकारियों के साथ पक्ष बनाया गया था।

4. आगे यह कथन किया गया है कि जहाँ तक प्रत्यर्थी सं॰ 9 लहरी महतो, पुत्री स्व॰ कालीचरण महतो का संबंध है उसकी मृत्यु अविवाहित रहते हुए दिनांक 3.9.2009 को हो गयी और उसके प्राकृतिक अभिभावक अर्थात् मदन महतो प्रत्यर्थी सं॰ 6, जो मृतका का बड़ा भाई है जो पहले ही प्रतिवादी सं॰ 9 (वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 6) के रूप में उपस्थित हुआ है, द्वारा उसका प्रतिनिधित्व किया जा रहा था।

5. आगे यह कथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 10 अर्थात् नेमिया महतैन की अपने विधिक उत्तराधिकारियों को अपने पीछे छोड़ते हुए दिनांक 24.2.2011 को मृत्यु हो गयी जैसा वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन के पैरा 7 में कथन किया गया है।

6. आगे यह कथन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 15 अर्थात् बिशु महतो, पति स्व॰ कमली महतैन, का संबंध है, उसकी बँटवारा वाद सं॰ 18 वर्ष 2003 के लंबित रहने के दौरान अपने पुत्र अर्थात् अरुण चंद्र महतो को अपने पीछे छोड़ते हुए दिनांक 11.8.2003 को मृत्यु हो गयी और यद्यपि विधिक उत्तराधिकारियों के नामों को विचारण न्यायालय के समक्ष सम्यक रूप से प्रतिस्थापित किया गया था। किंतु अनवधानता और गलती के कारण इसे प्रत्यर्थी सं॰ 15 अर्थात बिशु महतो के रूप में प्रतिस्थापित विधिक उत्तराधिकारियों के साथ वर्तमान अपील में उल्लिखित किया गया है।

7. उक्त अवस्था की दृष्टि में, उपशमन अपास्त करके प्रत्यर्थी सं॰ 10 के विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता है। जहाँ तक प्रत्यर्थी सं॰ 5, 9 और 15 का संबंध है, अपील मेमो से उनके नामों को विलोपित करने की जरूरत है।

8. तद्नुसार, वर्तमान आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 10 के विधिक उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित करने का आदेश दिया जाता है। जहाँ तक प्रत्यर्थी सं॰ 5, 9, 15 का संबंध है, उनके नामों को विलोपित किया जाए। अपील मेमो में आवश्यक शुद्धि की जाए।

9. प्रत्यर्थी सं॰ 10 के विधिक उत्तराधिकारियों को रजिस्टर्ड डाक और साधारण डाक द्वारा नया नोटिस भेजा जाए जिसके लिए एक सप्ताह के भीतर तलब दाखिल किया जाना होगा।

10. नोटिस चार सप्ताह बाद लौटायी जायेगी।

11. तद्नुसार, I.A. No. 2205 वर्ष 2013 निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

डॉ॰ (प्रो॰) अशोक कुमार झा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2906 of 2010. Decided on 7th August, 2013.

झारखंड राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम, 2000—धारा 70(A)—वेतनमान–विश्वविद्यालय प्रोफेसर के वेतनमान में वेतन का दावा–नियुक्त किए गए व्यक्ति की सेवा अवधि अभिनिश्चित करने के लिए विश्वविद्यालय के कर्मचारी/लेक्चरर की अस्थायी सेवा को विचार में लेना होगा

यदि वह नियमितिकरण तक सेवा में बना रहता है–राज्य को याची के वेतन को प्रोफेसर के वेतनमान में नियतिकरण करने के मामले में समुचित निर्णय लेने और उक्त वेतनमान में वेतनमान के बकाया को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 4 से 7)

निर्णयज विधि.–2012(2) JCR 153 (Jhr)—Applied; 2009 (1) JCR 166 (Jhr)—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Anoop Kr. Mehta, Altaf Hussain, For the Petitioner; M/s K.M. Verma, Ashok Kr. Sinha, For the State; Mr. J.P. Jha, Mithilesh Singh, For the University.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गये।

2. याची इस शिकायत के साथ इस न्यायालय के पास आया है कि झारखंड राज्य विश्वविद्यालय अधिनियम की धारा 70(A) के अनुरुप विश्वविद्यालय प्रोफेसर के वेतनमान में वेतन के उसके दावा और उक्त वेतनमान में वेतन के बकाया के अन्य दावों को अवैध रूप से अस्वीकार कर दिया गया है।

3. याची के अनुसार वह दिनांक 9 जनवरी, 2001 के प्रभाव से आज की तिथि तक पुनरीक्षित यू॰ जी॰ सी॰ वेतनमान के अधीन प्रोफेसर के वेतनमान में वेतन के अंतर का हकदार है क्योंकि उसको प्रत्यर्थी मानव संसाधन विकास विभाग द्वारा किए गए अवैध वेतन नियतकरण के कारण मई, 2003 से जूनियर रीडर के वेतनमान में उसके वेतन का भुगतान किया गया है। सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार द्वारा पारित दिनांक 2 सितंबर, 2009 के परिशिष्ट 8 पर अंतर्विष्ट आदेश द्वारा उक्त दावा केवल इस कारण अस्वीकार कर दिया गया था कि याची की नियुक्ति की अधिष्ठायी तिथि दिनांक 28 फरवरी 1982 थी और न कि दिनांक 17 अगस्त, 1979। प्रत्यर्थी राज्य के अनुसार, वेतन अथवा अन्य प्रोन्नति एवेन्यू का कोई लाभ उसकी नियुक्ति की अधिष्ठायी तिथि के रूप में दिनांक 28 फरवरी, 1982 के प्रभाव से विचार में लिया जाएगा।

4. तब से काफी समय बीत चुका है और **डॉ॰ (श्रीमती) रफात आरा बनाम राँची विश्वविद्यालय एवं अन्य, 2009 (1) JCR 166 (Jhr.),** में इस न्यायालय द्वारा इस विवाद्यक पर विचार किया गया है और विनिश्चित किया गया है जिसे **डॉ॰ अनन्त कुमार अखौरी बनाम कुलपति, राँची विश्वविद्यालय, राँची एवं अन्य, 2012 (2) JCR 153 (Jhr.)** में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा मान्य ठहराया गया है। **डॉ॰ अनन्त कुमार अखौरी (ऊपर)** मामले में इस न्यायालय की विद्वान खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया है कि नियुक्त व्यक्ति की सेवा अवधि अभिनिश्चित करने के लिए विश्वविद्यालय के ऐसे कर्मचारी/लेक्चरर की अस्थायी सेवा अवधि को विचार में लेना होगा यदि वह नियमितिकरण तक सेवा में बना रहता है। याची के विद्वान अधिवक्ता यह भी सूचित करते हैं कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी झारखंड राज्य द्वारा दाखिल विशेष अनुमति याचिका एस॰ एल॰ पी॰ (सिविल) सी॰ सी॰ सं॰ 11707/12 को भी खारिज कर दिया गया है। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी राज्य ने अपने दृष्टिकोण पर विचार किया है और **डॉ॰ अनन्त कुमार अखौरी (उपर)** मामले में दिए गए निर्णय, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक मान्य ठहराया गया था, के निबंधनानुसार कृत्य करने के लिए झारखंड राज्य के अंतर्गत समस्त विश्वविद्यालयों को दिनांक 2 अप्रिल, 2013 की संसूचना जारी किया है।

5. वर्तमान मामले में, याची का दावा यह था कि भागलपुर विश्वविद्यालय में अस्थायी व्याख्याता के रूप में उसकी नियुक्ति की मूल तिथि दिनांक 17 अगस्त, 1979 थी और तत्पश्चात दिनांक 28 फरवरी,

1982 के प्रभाव से उसे सेवा में संपुष्ट किया गया था। वस्तुतः प्रत्यर्थी विश्वविद्यालय ने उसकी नियुक्ति की तिथि को दिनांक 17 अगस्त, 1979 के रूप में विचार में लिया है और पुनरीक्षित यू॰ जी॰ सी॰ वेतनमान के मुताबिक प्रोफेसर के वेतनमान में याची के वेतन के बकाया के भुगतान के लिए पर्याप्त निधि निर्मुक्त करने के लिए राज्य को समस्त आवश्यक तलब भेजा है।

6. राज्य के अधिवक्ता ने दिनांक 2 अप्रिल, 2013 का पत्र प्रस्तुत किया है जिसे यहाँ उपर निर्दिष्ट किया गया है और इसे अभिलेख पर रखा जा रहा है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि **डॉ॰ अनन्त कुमार अखौरी (उपर)** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में अब प्रत्यर्थी विभाग भी उक्त निर्णय में अधिकथित निर्णयाधार को प्रभाव देने के लिए बाध्य है। अतः, संक्षिप्त समय के भीतर विभाग के स्तर पर समुचित निर्णय लिया जाएगा।

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्री के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि विवाद अब अनिर्णीत नहीं है। याची की नियुक्ति की आरंभिक तिथि को विश्वविद्यालय द्वारा दिनांक 17 अगस्त, 1979 के रूप में माना गया है और प्रोफेसर के वेतनमान में याची के वेतन के बकाया के भुगतान के लिए पर्याप्त निधि निर्मुक्त करने के लिए प्रत्यर्थी राज्य के पास आवश्यक तलब भेजा गया है। **डॉ॰ अनंत कुमार अखौरी** मामले में दिए गए निर्णय के साथ संगति में दिनांक 2 अप्रिल, 2013 के अपने पत्र के मुताबिक प्रत्यर्थी राज्य द्वारा लिए गए दृष्टिकोण के अनुसार अब प्रोफेसर के वेतनमान में याची के वेतन के नियतिकरण के मामले में समुचित निर्णय लेने के लिए और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से दस सप्ताह की अवधि के भीतर संवितरण के लिए उक्त वेतनमान में वेतन के बकाया को निर्मुक्त करने के लिए निर्देश देना समुचित है।

पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

तीरथ नाथ कश्यप एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 3657 of 2011. Decided on 26th June, 2013.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 71A—एस॰ ए॰ आर॰ अपील–एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पारित आदेश अपील में उपायुक्त द्वारा संपुष्ट किया गया–अपीलीय प्राधिकारी को प्रथम अपीलीय प्राधिकारी होने के नाते अपने निष्कर्षों को दर्ज करते हुए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य/सामग्री का अधिमूल्यन करने की आवश्यकता है–अपीलीय प्राधिकारी ने सब-डिविजनल अधिकारी द्वारा पारित आदेश के संपुष्टिकरण के लिए कोई कारण दिए बिना अपील अनुज्ञात किया–ऐसे आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और मामले को आरंभ से सुने जाने के लिए और मामले के तथ्यों और सामग्री/साक्ष्य के सावधानीपूर्ण परीक्षण के बाद विचार करने के लिए अपीलीय प्राधिकारी के पास वापस भेजने की आवश्यकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और नए सिरे से विचार करने के लिए मामला अपीलीय प्राधिकारी को वापस भेजा गया। (पैराएँ 3 से 6)

अधिवक्तागण.–Mrs. A.R. Choudhary, For the Petitioners; J.C. to S.C. (Mines), For the Respondents.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 69R 15/04-05- टी॰ आर॰ सं॰ 32R 15/08-09 में अपीलीय प्राधिकारी अर्थात् उपायुक्त, खूँटी द्वारा पारित दिनांक 22.8.2009 के आदेश (परिशिष्ट–5), जिसके द्वारा विद्वान सब–डिविजनल अधिकारी, खूँटी द्वारा पारित आदेश (परिशिष्ट–4) को अपीलीय प्राधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया है, को अभिखंडित और अपास्त करने के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याचीगण और प्रत्यर्थीगण–राज्य सरकार के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और आक्षेपित आदेश तथा अभिलेख पर प्रस्तुत अन्य सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. अपीलीय प्राधिकारी को प्रथम अपीलीय प्राधिकारी होने के नाते अपने निष्कर्षों को दर्ज करते हुए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य/सामग्री का अधिमूल्यन करने की आवश्यकता है। इसके परिशीलन पर यह पता चलता है कि अपीलीय प्राधिकारी ने विद्वान सब–डिविजनल अधिकारी, खूँटी द्वारा पारित आदेश के संपुष्टिकरण के लिए कोई भी कारण दिए बिना अपील अनुज्ञात किया। यह भी प्रतीत होता है कि निर्णयज विधि/निर्णय, जिसे आदेश में निर्दिष्ट किया गया है, कार्यवाही के विषय वस्तु से संबंधित नहीं है। अत: उक्त आदेश को अभिखंडित और अपास्त करने की आवश्यकता है और नए सिरे से विचार किए जाने तथा मामले के तथ्यों और सामग्री/साक्ष्य के सावधानीपूर्ण परीक्षण के बाद निर्णय के लिए मामले को अपीलीय प्राधिकारी के पास भेजने की आवश्यकता है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भूखंड संख्या और पक्ष के नाम के संबंध में अस्पष्टता है और इसलिए, अपील की सुनवाई के समय पर अपीलीय प्राधिकारी को इस पहलू का परीक्षण करने का निर्देश भी दिया गया है।

5. पुनरीक्षण दाखिल करने के वैकल्पिक प्रभावकारी उपाय के संबंध में प्रत्यर्थीगण–राज्य सरकार की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के निवेदन को स्वीकार नहीं किया जा सकता है चूँकि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश कारणरहित आदेश है और संबंधित पक्षों को युक्तियुक्त अवसर दिए बिना पारित किया गया प्रतीत होता है।

6. इन परिस्थितियों के अधीन, दिनांक 22.8.2009 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और नए सिरे से विचार किए जाने के लिए मामले को अपीलीय प्राधिकारी के पास वापस भेजा जाता है। अपीलीय प्राधिकारी इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो सप्ताह के भीतर संबंधित पक्षों पर नया नोटिस जारी करेंगे और तत्पश्चात कार्यवाही के पक्षगण नोटिस प्राप्त करने पर उपस्थित होंगे और इसके शीघ्रातिशीघ्र निपटान के लिए कार्यवाही में सहयोग करेंगे। अपीलीय प्राधिकारी पक्षों को युक्तियुक्त अवसर देने के बाद पक्षों की उपस्थिति की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर अपील को शीघ्रातिशीघ्र निपटाने का प्रयास करेंगे।

7. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

धरमदास मंडल एवं एक अन्य

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं अन्य

CWJC No. 6077 of 1998 (P). Decided on 11th July, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में

संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949—धारा 35—जलाशयों एवं चैनलों का उपयोग–भूमि, जिस पर जलाशय अथवा जल चैनल अवस्थित है, के उपर हक का विवादित प्रश्न केवल वाद दाखिल करके विनिश्चित किया जा सकता है–उपायुक्त के आदेश को अभिपुष्ट करते हुए आयुक्त द्वारा पारित आदेश को छेड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि ये तथ्यों के समवर्ती निष्कर्ष हैं–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.–1996 (2) PLJR 656—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. S. N. Das, For the Petitioners; M/s. Durgacharan Mishra, Atanu Banerjee, For the Resp. Nos. 6 and 7.

न्यायालय द्वारा.–याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके राजस्व विविध पुनरीक्षण सं॰ 15 वर्ष 1989-90 में प्रत्यर्थी उपायुक्त, दुमका द्वारा पारित दिनांक 2.9.89 के आदेश (इस याचिका का परिशिष्ट-2) को अभिपुष्ट करते हुए राजस्व विविध अपील सं॰ 157/89-90 में, प्रत्यर्थी आयुक्त, दुमका, संथाल परगना द्वारा पारित दिनांक 18.3.1991 के आदेश (इस याचिका का परिशिष्ट-1) को अभिखंडित एवं अपास्त करवाने के लिए प्रार्थना किया है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों तथा आक्षेपित आदेशों का परिशीलन किया गया।

3. याची का मामला यह है कि याची के पिता अर्थात् द्वारिका नाथ मंडल ने हक वाद सं॰ 72/1991 उप न्यायाधीश, जामतारा, दुमका के न्यायालय में संस्थित किया जो संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 63 के अधीन वर्जित है। अधिकारिता के आधार पर उक्त वाद के निपटान के बाद याचीगण ने सब-डिविजनल अधिकारी, जामतारा, जिला दुमका के समक्ष आवेदन दिया और दिनांक 23.12.1987 के इसके आदेश के तहत आवेदन निपटाया गया था।

4. दिनांक 23.12.1987 के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर प्रत्यर्थी-16 आना रैयत ने उपायुक्त, दुमका के समक्ष राजस्व विविध पुनरीक्षण सं॰ 15 वर्ष 1988-89 दाखिल किया और दिनांक 2.9.1989 के उनके आदेश के तहत उक्त पुनरीक्षण आवेदन को अनुज्ञात किए जाने का आदेश दिया गया था और एस॰ डी॰ ओ॰ द्वारा पारित दिनांक 12.12.1987 का आदेश अपास्त कर दिया गया है।

5. दिनांक 2.9.1989 के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर याचीगण ने आयुक्त, दुमका के समक्ष राजस्व विविध अपील सं॰ 157/1989-90 दाखिल किया और विद्वान आयुक्त, दुमका ने पक्षों को

सुनवाई का अवसर देने के बाद दिनांक 18.3.1991 के आदेश के तहत उक्त अपील को अस्वीकार कर दिया और उपायुक्त द्वारा पारित आदेश अभिपुष्ट किया।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 35 में अंतर्विष्ट प्रावधान को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि उपायुक्त और आयुक्त, दुमका अपीलीय प्राधिकारीगण होने के नाते उक्त अधिनियम की धारा 35 में अंतर्विष्ट प्रावधान को विचार में लेने में विफल रहे। यह निवेदन भी किया गया है कि उपायुक्त और आयुक्त द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण उक्त अधिनियम की धारा 35 में अंतर्विष्ट प्रावधान के विपरीत है।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में परिशिष्ट–4 और परिशिष्ट–5 श्रृंखला, क्रमश: पट्टा एवं किराया रसीद, को निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने मामले के समर्थन में **अनवर अली एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 1996 (2) PLJR 656, में दिए गए निर्णय को भी निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है।

8. राज्य सरकार के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अपीलीय प्राधिकारी और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों को निर्दिष्ट करते हुए और उनको न्यायोचित ठहरा कर निवेदन किया कि उक्त आदेश सुतार्किक आदेश हैं और इन दो प्राधिकारियों द्वारा दर्ज निष्कर्ष विधि के प्रावधानों के अनुकूल हैं। सोलह आना रैयत की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने उपायुक्त और आयुक्त द्वारा पारित आदेशों को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि तथ्यों और विधि की अवस्था को विचार में लेने के बाद उक्त आदेशों को पारित किया गया है और तद्द्वारा एस० डी० ओ० द्वारा पारित आदेश अपास्त किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि उपायुक्त द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 35 में अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुकूल है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान आयुक्त ने भी उस दृष्टिकोण को पृष्ठांकित किया जिसे राजस्व पुनरीक्षण सं० 15/1989-90 में विद्वान उपायुक्त द्वारा अपनाया गया है। सोलह आना रैयत के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलीय तथा पुनरीक्षण प्राधिकारियों द्वारा गुणागुण पर तथ्यों के समवर्ती निष्कर्षों को दर्ज किया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय याची के मामले की मदद नहीं करता है बल्कि यह 16 आना रैयत के मामले की मदद करता है। अंत में, यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान रिट याचिका में गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जा सकता है।

9. पक्षों के परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करने से और आक्षेपित आदेशों तथा अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्रियों के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि एस० डी० ओ० द्वारा पारित आदेश तथ्यों एवं संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 35 के अधीन अंतर्विष्ट विधि की अवस्था पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद उपायुक्त, दुमका द्वारा उलट और अपास्त कर दिया गया है। आगे यह प्रतीत होता है कि राजस्व अपील में निर्णय लेते हुए विद्वान आयुक्त द्वारा उक्त दृष्टिकोण को पृष्ठांकित किया गया है। दोनों प्राधिकारियों द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण एस० पी० टी० अधिनियम की धारा 35 के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुकूल है। संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 35 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"35.* ***flpkb] vkfn d fy, tyk'k;k rFkk puyk dk vU; ç;ktuk l lèkkj vFkok lifjofrr ugh fd;k tkuk-*** *&(1) ckèkk] vkgjk] Vdk vkj vU; tyk'k;k vFkok puyk] ftudk mi;kx ck< l lj{k.k d ç;ktu l vFkok flpkb]*

Luku] èkykb vFkok ihu d fy, fd;k tkrk g] dk j;rk vkj xko d ef[k;k vFkok ey j;r] vFkok [kkl xko e HkLokeh dh lgefr vkj mik;Dr d vueknu d fcuk fdlh vU; ç;ktu d fy, cnkcLr vFkok lifjofrr ugh fd;k tk,xkA dkb Hkh ,l fdlh tyk'k; vFkok puy dk [krh d vèkhu ugh yk,xkA

*(2) dkb Hkh LoRoèkkjh vFkok HkLokeh flpkb] Luku] èkykb vFkok i;ç;ktu l mièkkjk (1) e mfYyf[kr tyk'k;k vkj puyk d mi;kx d fy, dkb çHkkj mnxfgr dju dk gdnkj ugh gkxkA***

10. अनवर अली एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 1996 (2) PLJR 656, मामले में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट और विश्वास किया गया निर्णय याचीगण के मामले का समर्थन नहीं करता है। उक्त निर्णय के पैराग्राफों 14, 15, 16, 17 और 18 का पठन निम्नलिखित है:–

"14. çR;Fkh l0 2u viu vk{kfir vkn'k e xkj fd;k fd Hk[kM l0 1789 dk ijkru ijhr d :i e nt fd;k x;k gA mUgku lçf{kr fd;k%&

*^^;g bl rF; dk Lohdkj djrk g fd Hk[kM l0 1445 dk mi;kx vHkh Hkh xko d 16 vkuk j;rk }kjk flpkb ç;ktu l fd;k tk jgk g vkj e Hk[kM l0 1445 dk çR;Fkx.k d uke e foØ; foy[k d ekè;e l vrj.k dk i.kr% ,l0 ih0 Vh0 vfèkfu;e dh èkkjk 35 d çkoèkkuk dk mYy?ku djrk ikrk gA Hk[kM l0 1789 ijkru ifrr d :i e nt dh x;h FkhA foØ;&foy[k d fu"iknd d ikl fookfnr Hkfe dk cpu dk fofèkd vfèkdkj ugh FkkA** rRi'pkr mUgku vfHkfuèkkfjr fd;k%*

*^^e ikrk g fd bu nk fookfnr Hk[kMk dk vrj.k lkyg vkuk j;rk dk flpkb rFkk i;ç;ktuk l Vd d ikuh d mi;kx l vioftr djr g, ,l0 ih0 Vh0 vfèkfu;e dh èkkjk 35 d vèkhu vfèkdfFkr çkoèkkuk d fo#) fd;k x;k gA bu foØ; foy[kk d jídj.k d lcèk e vihykFkhx.k çklfxd U;k;ky; e lefpr okn nkf[ky dj ldr g fdr bl lç{k.k d lkFk fd çR;Fkhx.k d uke e vrj.k ,l0 ih0 Vh0 vfèkfu;e d ?kkj mYy?ku e fd;k x;k g vkj ;g voèk vkj 'kU; vrj.k gA***

14A.- çR;Fkh l0 2 d ikl Li"Vr% mDr vfèkfu;e dh èkkjk 35 d vèkhu viuh vfèkdkfjrk dk ç;kx djr g, gd d tfVy ç'u dk fofuf'pr dju dh vfèkdkfjrk ugh FkhA çR;Fkhx.k u çfrokn fd;k g fd j;r }kjk Vd dk foØ; ugh fd;k tk ldrk gA tlk ;gk igy xkj fd;k x;k g] vU; ckrk d lkFk mDr çkoèkku d vèkhu cnkcLr çfrf'k) g vFkkr fdlh d i{k e HkLokeh }kjk cnkcLr ugh fd;k tk,xkA fdr] tlk ;gk igy xkj fd;k x;k g] ç'uxr Vd dk igy gh cnkcLr fd;k tk pdk Fkk vkj y[kjkt Hkfe d :i e nt fd;k x;k g tlk Lohdkj fd;k x;k gA fjV vkonu d ifjf'k"V&24 d ifj'khyu l Hkh ;g Li"V g fd jktLo foHkkx d vfèkdkjh u Lohdkj fd;k fd ç'uxr Hkfe foØ; ;kX; gA

15. çR;Fkhx.k 2 vkj 3u vfHkfuèkkfjr ugh fd;k g fd mDr fjikV xyr Fkk vFkok foØ; foy[k mDr vfèkfu;e dh èkkjk 20 d çkoèkkuk d ?kkj mYy?ku e fu"ikfnr fd;k x;k FkkA çR;Fkhx.k 2 vkj 3 d le{k mDr ç'u dHkh ugh mBk;k x;k Fkk vkj bl çdkj U;k;ky; e igyh ckj bldk mBku dh vuefr ugh nh tk ldrh gA

16. çR;Fkh l0 2u ;g vfHkfuèkkfjr dju e vkx voèkrk fd;k g fd mDr vfèkfu;e dh èkkjk 35 }kjk ckfèkr gku d ukr foØ;&foy[k 'kU; Fkk ;|fi mUgku

Lo; vfHkfuèkkfjr fd;k fd bl iokfYyf[kr çkoèkkuk d fucèkukuk lkj fu"çHkkoh ugh fd;k tk ldrk g vkj Lo; ;g vfHkfuèkkfjr dju ij fd gd dk ç'u fofuf'pr dju d fy, ;kphx.k }kjk okn nkf[ky fd;k tk ldrk g] çR;Fkh l0 2 vk{kfir vkn'k ikfjr dju e viuh vfèkdkfjrk d ij x;kA çR;Fkh l0 2 u rkRif;r :i l ;g vfHkfuèkkfjr dju e vkx voèkrk fd;k fd mDr foØ; foy[k d dkj.k mDr Vd l ihu] ugku] flpkb d fy, ikuh yu d lkyg vkuk j;r d vfèkdkj e gLr{ki fd;k x;k Fkk ;|fi ;kphx.k u mDr çkfèkdkjh d le{k Li"Vr% dFku fd;k fd mud }kjk xkeh.kk d ,l vfèkdkjk e gLr{ki ugh fd;k x;k gA bl çdkj] ;g Li"V g fd çR;Fkh l0 2 u vk{kfir vkn'k }kjk vçR;{kr% ç'uxr Hkfe d mij jkT; d gd dk LFkkfir dju dk ç;kl fd;k tlk og mDr vfèkfu;e dh èkkjk 35 d vèkhu viuh rkRif;r vfèkdkfjrk dk ç;kx djr g, ugh çR;{kr% ugh dj ldrk FkkA

17. iokfYyf[kr dkj.kk l fjV vkonu ifjf'k"Vk 12 vkj 13 e vrfo"V vk{kfir vkn'kk dk likf"kr ugh fd;k tk ldrk gA

*18. bl ekey l vyx gku d igy e lçf{kr d:xk fd ;fn fdlh vU; ç;ktu l mi;kx d fy, Vd dk lifjofrr fd;k tkrk g vFkok [krh d vèkhu yk;k tkrk g] ;kphx.k d fo#) lefpr fofèkd dkjokb vkjHk dju dh NV çHkkfor j;rk vFkok jkT; dk gkxhA vkx ;g Li"V fd;k tkrk g fd iokfYyf[kr Vd d lcèk e ;kphx.k d gd d fookfnr ç'u dk lefpr dk;okgh e fofuf'pr fd;k tk ldrk gA***

उक्त निर्दिष्ट निर्णय से यह प्रतीत होता है कि संथाल परगना अभिधृति (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 की धारा 35 में अंतर्विष्ट प्रावधान के मुताबिक 16 आना रैयत की पूर्व सहमति के बिना किसी अन्य प्रयोजन से प्रश्नगत भूमि का उपयोग नहीं किया जा सकता है। विधि के उक्त निर्दिष्ट प्रावधान और उक्त निर्दिष्ट निर्णय में विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना की दृष्टि में विद्वान उपायुक्त के आदेश को अभिपुष्ट करते हुए विद्वान आयुक्त द्वारा पारित आदेश में छेड़छाड़ करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि तथ्यों के समवर्ती निष्कर्ष हैं। जैसा उक्त निर्दिष्ट निर्णयज विधि में अभिनिर्धारित किया गया है, भूमि, जिस पर जलाशय अथवा चैनल अवस्थित है, के उपर हक का विवादित प्रश्न केवल वाद दाखिल करके विनिश्चित किया जा सकता है।

11. वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में यह प्रतीत होता है कि विद्वान आयुक्त ने मामले के तथ्यों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद और विधि के प्रावधान को ध्यान में रखते हुए आदेश पारित किया और इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है। तद्नुसार, इस रिट याचिका को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,p- lh- feJk] U;k;efr

मनोज दास उर्फ मनोज कुमार श्रीवास्तव

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 552 of 2012. Decided on 8th August, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण–अभित्यक्त पत्नी और अवयस्क पुत्री को 1500/- रुपयों का कुल भरण-पोषण प्रदान किया गया–आक्षेपित आदेश याची के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही में पारित किया गया है क्योंकि याची नोटिस के बावजूद अवर न्यायालय में उपस्थित होने में विफल रहा–यदि याची के पास एकपक्षीय आदेश को अपास्त करवाने के लिए अच्छा आधार है, याची को स्वयं अवर न्यायालय में आवेदन दाखिल करना चाहिए था–आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं है–किंतु याची को एकपक्षीय आदेश अपास्त करवाने के लिए अवर न्यायालय के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी।

(पैराएँ 2 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Devesh Krishna, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Rajesh Kumar Singh, For the O.P. No. 2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची विविध केस सं॰ 37 वर्ष 2010 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 28.8.2010 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन एक-पक्षीय कार्यवाही में याची को विरोधी पक्षकार सं॰ 2 जो उसकी अभित्यक्त पत्नी है को 1000/- रुपया प्रतिमाह और अवयस्क पुत्री जो अपनी माता के साथ रह रही है को 500/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान उनके भरण-पोषण के लिए करने का निर्देश दिया गया है।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को नोटिस दिए जाने पर इस न्यायालय ने पक्षों के बीच सुलह के लिए कदम उठाया क्योंकि याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया था कि याची पूर्ण मर्यादा और सम्मान के साथ अपनी पत्नी को रखने के लिए तैयार है। अभिलेख दर्शाते हैं कि पक्षों के बीच वैवाहिक विवाद के समाधान के लिए पर्याप्त कदम उठाए गए हैं किंतु अंततः समस्त प्रयास विफल रहा। याची का दृष्टिकोण यह है कि उसकी पत्नी किसी पर्याप्त कारण के बिना स्वयं दांपत्य गृह से चली गयी थी जबकि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 पत्नी का दृष्टिकोण यह है कि उस पर निर्ममतापूर्वक प्रहार किया गया था और दहेज की मांग के लिए क्रूरता के अध्यधीन किया गया था।

4. चाहे जो भी हो, आक्षेपित आदेश से यह प्रकट है कि इसे याची के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही में पारित किया गया था क्योंकि याची नोटिस के बावजूद अवर न्यायालय में उपस्थित होने में विफल रहा था। यदि याची के पास एकपक्षीय आदेश को अपास्त करवाने के लिए अच्छा आधार है, याची को स्वयं अवर न्यायालय में अपना आवेदन दाखिल करना चाहिए था किंतु याची इस न्यायालय के पास आया है। आक्षेपित आदेश उसको जारी नोटिस का उत्तर देने में याची के विफल रहने के बाद और अभित्यक्त पत्नी द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य के आधार पर अवर न्यायालय द्वारा पारित किया गया है और इस न्यायालय द्वारा उक्त आदेश में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं है।

5. किंतु इस मामले के तथ्यों में, याची को एकपक्षीय आदेश को अपास्त करवाने के लिए अवर न्यायालय के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी है यदि उसके पास एकपक्षीय आदेश को अपास्त करवाने का अच्छा कारण है। यदि याची द्वारा ऐसा कोई आवेदन दाखिल किया जाता है, अवर न्यायालय द्वारा विधि के अनुरुप इस पर विचार किया जाएगा और निपटाया जाएगा।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों/निर्देशों के साथ इस दांडिक पुनरीक्षण आवेदन को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जीवन नंद पाणी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1993 of 2013. Decided on 12th August, 2013.

विद्यालय विधियाँ–नियमितिकरण–नियमितिकरण के लिए याची जैसे व्यक्तियों के मामले पर विचार करने से प्रत्यर्थीगण द्वारा इस आधार पर इनकार कि उनके पास प्रासंगिक समय पर परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में उनकी नियुक्ति के समय पर अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता नहीं थी–समस्थित व्यक्तियों के मामले में उसी विद्यालय में शिक्षक की सेवा की मान्यता/नियमितिकरण के लिए निर्देश जारी किए गए हैं–याची जो उसी परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में सहायक शिक्षक है के मामले में भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कारण नहीं है–परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में सहायक शिक्षक के रूप में याची की सेवाओं को मान्यता देते हुए समुचित आदेश जारी करने और वेतन बकाया सहित समस्त पारिणामिक लाभों का भुगतान करने का निर्देश प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार को दिया गया। (पैराएँ 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–2000 (1) PLJR 287—Referred.

अधिवक्तागण.–Mrs. Shubha Jha, For the Petitioner; JC to GP-V., For the State.

आदेश

<u>आई॰ ए॰ संख्या 4188/2013 एवं 51802013</u>

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने इस न्यायालय द्वारा पारित अनेक आदेशों, उदाहरणस्वरूप, डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 2048/10 में पारित दिनांक 4 फरवरी, 2013 का निर्णय, डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 5161/09 में पारित दिनांक 22 फरवरी, 2012 का निर्णय; डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 5658/09 में पारित दिनांक 15 सितंबर, 2011 का निर्णय; डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 2010/13 में पारित दिनांक 2 जुलाई, 2013 का निर्णय और डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 1249/13 में पारित दिनांक 3 जुलाई, 2013 के निर्णय की दृष्टि में परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, खरसावाँ में सहायक शिक्षक के रूप में याची की सेवाओं के अनुमोदन/नियमितिकरण/मान्यता के संबंध में अंतिम निर्णय लेने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2, प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार और प्रत्यर्थी सं॰ 3 निदेशक (माध्यमिक शिक्षा), मानव संसाधन विभाग, झाररखंड सरकार को परमादेश रिट जारी किया जाना इप्सित किया है।

3. याची के अनुसार, नियमितिकरण के लिए याची जैसे व्यक्तियों के मामले में इस आधार पर विचार करने से प्रत्यर्थीगण के इनकार के कारण इन निर्णयों को दिया गया है कि पटना उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ के निर्णय, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया था, की दृष्टि में प्रस्तुत

दिनांक 30 सितंबर, 2007 की स्क्रीनिंग कमिटि की रिपोर्ट परिशिष्ट–3 के आधार पर वर्ष 1984-85 में प्रासंगिक अवधि पर परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में उनकी नियुक्ति के समय पर उनके पास शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता नहीं थी।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यहाँ उपर निर्दिष्ट इन समस्त मामलों में इस न्यायालय ने दृष्टिकोण अपनाया था कि उक्त शिक्षक, जिन्होंने स्क्रीनिंग कमिटि की रिपोर्ट की प्रस्तुति के पहले शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त किया था, उक्त परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में नियमित होने के हकदार हैं। याची का मामला यह है कि उसे परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, खरसावाँ की प्रबंधन कमिटी द्वारा सहायक शिक्षक के रूप में दिनांक 6 जनवरी, 1984 को नियुक्त किया गया था। याची ने परिशिष्ट 2/B के तहत वर्ष 1990 में संबलपुर विश्वविद्यालय से बी॰ एड॰ डिग्री प्राप्त किया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि विभिन्न वित्तीय वर्षों में समय–समय पर लिए गए निर्णय के अनुसरण में लगभग 650 परियोजना विद्यालयों को स्थापित किया गया था। तत्पश्चात दिनांक 27 फरवरी, 1985 के पत्र के तहत सरकार द्वारा 75 विद्यालयों को स्थापित विद्यालयों के रूप में चयनित और अधिसूचित किया गया था। तत्पश्चात् शेष 225 विद्यालयों के चयन की प्रक्रिया पूरी करने के लिए तीन सदस्य कमिटी गठित की गयी थी। मामले पर वाद हो गया और इसे **परियोजना उच्च विद्यालय शिक्षक संघ बनाम राज्य एवं अन्य,** 2000 (1) PLJR 287, में दिनांक 7 दिसंबर, 1999 के निर्णय के तहत पटना उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ द्वारा विनिश्चित किया गया था। उक्त निर्णय के पैरा 33 को याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है जिसमें, उसके अनुसार, न्यूनतम अर्हता रखने की कट–ऑफ तिथि को उस तिथि के रूप में विहित किया गया था जिस पर स्क्रीनिंग कमिटी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था। मामला माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक गया जहाँ पूर्ण पीठ के निर्णय को दिनांक 3 जनवरी, 2006 के निर्णय के तहत मान्य ठहराया गया था। तत्पश्चात् झारखंड राज्य ने अपने प्रतिपक्ष बिहार सरकार की तरह सईद मोबिन आलम की अध्यक्षता के अधीन उनके नियमितिकरण और वेतन के भुगतान के लिए परियोजना बालिका उच्च विद्यालय के शिक्षक और गैर–शिक्षक स्टाफ की स्क्रीनिंग प्रक्रिया को पूरा करने के लिए कमिटी गठित किया है। उक्त कमिटी ने दिनांक 30 सितंबर, 2007 के अपने रिपोर्ट के तहत (परिशिष्ट 3) ऐसी सेवा के अनुमोदन के लिए याची का दावा अस्वीकार कर दिया।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता परिशिष्ट–3 श्रृंखला को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन करते हैं कि याची जैसे अन्य व्यथित व्यक्ति अर्थात् युधिष्ठिर मंडल, जिसका नाम उक्त सूची के क्रमांक ऊपर उपदर्शित किया गया है, डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 2010/13 में इस न्यायालय के पास आया जिसे दिनांक 2 जुलाई, 2013 के निर्णय के तहत अंतिम रूप से निपटाया गया था। **युधिष्ठिर मंडल मामले (ऊपर)** में जिसे याची की तरह समस्थित व्यक्ति बताया जाता है, यह कथन किया गया है कि उक्त व्यक्ति ने जुलाई 1995 के प्रभाव से एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रभाव में आने के पहले वर्ष 1994 में सिस्टर निवेदिता महाविद्यालय से शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त किया था। ऐसी परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी के प्रतिवाद को नकारते हुए इस न्यायालय ने मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार के अधीन संबंधित प्रत्यर्थीगण अर्थात् सक्षम प्राधिकारी को अनुबंधित अवधि के भीतर परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, खरसावाँ में सहायक शिक्षक के रूप में उक्त याची की सेवाओं को मान्यता देने और उसके वेतन बकाया सहित समस्त पारिणामिक लाभों का भुगतान करने के लिए समुचित आदेश जारी करने का निर्देश दिया था। बाद में, नागेश्वरी देवी परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, कस्बा मेहरामा, गोड्डा के एक सहायक शिक्षक के मामले में इस न्यायालय ने **डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 1249/13 (गौतम कुमार ठाकुर बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य)** में पूर्विक निर्णयों का अनुसरण करते हुए पारित दिनांक 3 जुलाई, 2013 के आदेश के तहत

अनुबंधित अवधि के भीतर वेतन बकाया सहित पारिणामिक लाभों का भुगतान करने और याची की सेवा के नियमितिकरण के संबंध में समुचित आदेश पारित करने के लिए संबंधित मानव संसाधन विकास विभाग के सचिव को पुनः निर्देश दिया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची का मामला **युधिष्ठिर मंडल (उपर)** के सदृश है क्योंकि याची ने युधिष्ठिर मंडल के पहले वर्ष 1990 में ही संबलपुर विश्वविद्यालय से शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त किया है। अतः, स्क्रीनिंग कमिटी की रिपोर्ट (परिशिष्ट 3) की दृष्टि में इस याची, जो कथित व्यक्तियों में से एक है, के साथ समतुल्य व्यवहार किया जाना चाहिए।

7. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में याची द्वारा विश्वास किए गए निर्णय, विशेषतः **युधिष्ठिर मंडल (उपर)** के निर्णय, को सुभिन्न करने में सक्षम नहीं हुए हैं।

8. अतः मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में यह प्रतीत होता है कि समस्थित व्यक्तियों के मामले में उसी विद्यालय अर्थात् परियोजना बालिका उच्च विद्यालय, खरसावाँ में उक्त शिक्षक की सेवा की मान्यता/नियमितिकरण के लिए इस न्यायालय द्वारा पहले भी निर्देश जारी किए गए हैं। वर्ष 1995 के प्रभाव से एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम के प्रभाव में आने के पहले उक्त याची द्वारा शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता के अर्जन के संबंध में प्रत्यर्थीगण के प्रतिवाद पर भी विचार किया गया था और पाया गया था कि शिक्षक ने एन॰ सी॰ टी॰ ई॰ अधिनियम, 1993 के प्रभाव में आने से पहले सिस्टर निवेदिता महाविद्यालय, कोलकाता से शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता प्राप्त किया था और उन दोनों ने त्रि-सदस्य कमिटी की अनुशंसा (परिशिष्ट 3) की प्रस्तुति के पहले अर्हता प्राप्त किया था। ऐसी परिस्थितियों में याची, जो उसी परियोजना बालिका उच्च विद्यालय में सहायक शिक्षक है और जिसका नाम दिनांक 30 सितंबर 2007 की रिपोर्ट परिशिष्ट 3 में सामने आया है, के मामले से इनकार करते हुए उसके मामले में भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कारण नहीं है।

9. इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से छह सप्ताह के भीतर परियोजना बालिका उच्च विद्यालय खरसावाँ में सहायक शिक्षक के रूप में याची की सेवा को मान्यता देने और वेतन बकाया सहित समस्त पारिणामिक लाभों का भुगतान करने के लिए समुचित आदेश जारी करने का प्रत्यर्थी सं॰ 2, प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार को निर्देश देते हुए वर्तमान रिट आवेदन को निपटाया जाता है। यदि उक्त अवधि के भीतर स्वीकृत राशि/बकाया का भुगतान नहीं किया जाता है, याची राशि भुगतेय पाये जाने की तिथि से अंतिम भुगतान की तिथि तक 10% की दर पर वार्षिक ब्याज का हकदार होगा।

तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका और दोनों अंतर्वर्ती आवेदनों को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

मि॰ एम॰ फसीउद्दीन (31 में)

श्री एन॰ एस॰ मल्लिवाल एवं अन्य (1066 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य (दोनों में)

Cr.M.P. Nos. 31 with 1066 of 2003. Decided on 8th August, 2013.

भारतीय वन अधिनियम, 1980—धाराएँ 29, 30 एवं 33—वन संरक्षण अधिनियम, 1980—धारा 2—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—वन अपराध–संज्ञान–संरक्षित वन के भीतर पेड़ों की अवैध कटाई–राज्य सरकार को भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन वन भूमि अथवा बंजर भूमि को आधिकारिक गजट में जारी किए जाने वाले अधिसूचना के अधीन संरक्षित वन के रूप में अधिसूचित करने की आवश्यकता है–राज्य सरकार को अधिसूचना के अधीन नियत तिथि से संरक्षित वन में किसी वृक्ष अथवा वृक्षों के वर्ग को आरक्षित घोषित करते हुए आधिकारिक गजट में अधिसूचना जारी करने की आवश्यकता भी है–जब तक भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन और धारा 30 के अधीन भी अधिसूचना जारी नहीं किया जाता है, किसी को शायद ही पेड़ काटने के अभिकथन पर अभियोजित किया जा सकता है–राज्य सरकार इस अभिवचन के साथ आगे आयी है कि वर्ष 1905 में भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन अधिसूचना जारी की गयी है किंतु ऐसा कोई प्रकथन नहीं है कि सरकार ने कभी आरक्षित वन में किसी वृक्ष अथवा वृक्षों के वर्ग को आरक्षित घोषित करते हुए भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 के अधीन कोई अधिसूचना जारी किया–वृक्ष काटने के अभिकथन पर भी किसी को अभियोजित नहीं किया जा सकता है–संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 12 से 19)

निर्णयज विधि.–AIR 1960 Pat 213; 2003(2) J.C.R. 525(Jhr.)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s I. Sinha, G.M. Misra, For the Petitioners; Mr. T.N. Verma, For the State.

आदेश

चूँकि दोनों मामले एक ही मामला से उद्‌भूत हो रहे हैं, उन्हें एक साथ सुना गया था और इसे एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. यह आवेदन C-3 केस सं॰ 87 वर्ष 1996 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 30.7.1996 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया गया है।

4. अभियोजन का मामला जैसा अभियोजन रिपोर्ट से प्रतीत होता है यह है कि याचीगण ने इसके लिए किसी अनुमति के बिना संरक्षित वन के 784 वृक्षों को काटा था और तद्‌द्वारा अभियुक्तगण ने भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन और वन संरक्षण अधिनियम की धारा 2 के अधीन भी अपराध किया था।

5. ऐसी रिपोर्ट पर दिनांक 30.7.1996 को भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

6. आक्षेपित आदेश का आधार जिसे पूरक शपथ पत्र में लिया गया है सहित अनेक आधारों पर चुनौती दी गयी है जिसमें अभिवचन किया गया है कि धारा 30 के अधीन किसी अधिसूचना की अनुपस्थिति में किसी को भारतीय वन अधिनियम के अधीन अपराध के लिए अभियोजित नहीं किया जा सकता है।

7. आगे यह निवेदन किया गया था कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन किसी को

अभियोजित करने के लिए सरकार को पहले संरक्षित वन के रूप में वन भूमि को घोषित करते हुए भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन अधिसूचना जारी करनी चाहिए।

8. आगे सरकार को भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 के अधीन संरक्षित वन में वृक्षों अथवा वृक्षों के संवर्ग को आरक्षित करते हुए अधिसूचना जारी करना चाहिए किंतु पूरक शपथ पत्र के प्रत्युत्तर में दिए गए बयान के मुताबिक राज्य सरकार इस अभिवचन के साथ आगे आयी है कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन अधिसूचना जारी की गयी है जबकि भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 के अधीन किसी अधिसूचना को जारी करने के संबंध में कोई प्रकथन नहीं है और इसलिए, यह उपधारित किया जाएगा कि राज्य सरकार ने संरक्षित वन में किसी वृक्ष अथवा वृक्षों के संवर्ग को आरक्षित होने की घोषणा करते हुए भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 के अधीन कोई अधिसूचना कभी नहीं जारी किया है और यदि ऐसा है, भारतीय वन अधिनियम की धारा 33 के अधीन किसी को अभियोजित नहीं किया जा सकता है।

9. आगे यह निवेदन किया गया था कि किए गए अभिकथन की दृष्टि में वन संरक्षण अधिनियम का अपराध करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और इसके अतिरिक्त वन संरक्षण अधिनियम के अधीन अपराध का संज्ञान नहीं लिया गया है।

10. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री टी॰ एन॰ वर्मा ने पूरक शपथ पत्र के उत्तर में दिए गए बयान को निर्दिष्ट करके निवेदन करते हैं कि नोआमुंडी और मुहंडी संरक्षित वन को दिनांक 23.5.1905 की अधिसूचना सं॰ 904 के तहत संरक्षित वन घोषित किया गया है और उस प्रावधान, जैसा धारा 30 में अंतर्विष्ट है, का संरक्षित वन से संबंधित किसी अधिसूचना के साथ कुछ लेना-देना नहीं है।

11. प्रावधानों, जैसा ये भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन और धारा 30 के अधीन भी हैं, की दृष्टि में राज्य की ओर से किया गया निवेदन सारहीन है। प्रासंगिक प्रावधानों का पठन निम्नलिखित है:-

*"29. **ljf{kr ou-**&(1) jkT; ljdkj [vkfèkdkfjd xtV] e vfèklpuk }kjk bl vè;k; d çkoèkkuk dk fdlh ou Hkfe vFkok ctj Hkfe ftl vkjf{kr ou e lfEefyr ugh fd;k x;k g fdr tk ljdkj dh lifÙk g vFkok ftld Åij ljdkj d ikl lkifÙkd vfèkdkj g] d çfr ç;kT; ?kkf"kr djrh gA*

*2. , lh fdlh vfèklpuk l xfBr ou Hkfe vkj ctj Hkfe dk ^^ljf{kr ou** dgk tk,xkA*

3. , lh dkb vfèklpuk tkjh ugh dh tk,xh tc rd mle xfBr ou Hkfe vFkok ctj Hkfe e vFkok d mij ljdkj d vFkok futh 0;fDr;k d vfèkdkjk dh çÑfr vkj lhek dh tkp ugh dh x;h g vkj lo{k.k vFkok 0;oLFkkiu vFkok , l fdlh vU; rjhd tlk [jkT; ljdkj] i;kIr le>rh g e nt ugh fd;k x;k gA , l çR;d vfHky[k dk lgh mièkkfjr fd;k tk,xk tc rd foijhr fl) ugh fd;k tkrk gA

ijUr ;g fd ;fn fdlh ou Hkfe vFkok ctj Hkfe d ekey e] [jkT; ljdkj] le>rh g fd , lh tkp vkj vfHky[k vko';d g fdr ; bruk yck le; yx tk bl chp ljdkj d vfèkdkjk dk [krj e Mky ldrh g] [jkT; ljdkj] , lh tkp vkj vfHky[k d yfcr jgr g, , lh Hkfe dk ljf{kr ou ?kkf"kr dj ldrh g fdr tk 0;fDr;k vFkok lenk;k d fdlh fo|eku vfèkdkjk dk lf{kIr vFkok çHkkfor ugh djxhA

*30. **o{kk] vkfn dk vkjf{kr djr g, vfèkIpuk tkjh dju dh 'kfDr-**&[jkT; ljdkj][vkfèkdkfjd xtV]e lpuk }kjk*

(a) vfèkIpuk }kjk fu;r frFk l vkjf{kr fd, tku d fy, ljf{kr ou e fdlh o{k vFkok o{kk d ox dk ?kkf"kr dj ldrh g(

(b) ?kk"k.kk dj ldrh g fd vfèkIpuk e fofufn"V ,l ou d fdlh Hkkx dk ,lh vofèk d fy,] tk rhl o"k l vfèkd dh ugh gk] tk [jkT; ljdkj] lefpr le>rh g] cn dj fn;k tk,xk vkj ,l Hkkx d mij futh 0;fDr;k d vfèkdkj] ;fn dkb gk] dk ,lh vofèk d nkjku fuyfcr dj fn;k tk,xk ijUr ;g fd bl çdkj cn fd, x, Hkkx e fuyfcr vfèkdkjk d lE;d ç;kx d fy, ,l ou dk 'k"k i;kIr gk vkj {k= e ;fDr;Dr :i l lfoèkk tud gk(vFkok

*(c) iokDrkulkj fu;r frFk l ,l fdlh ou e fdlh Hkfe e iRFkj d [kuu] vFkok puk ;k dk;yk tyk, tku] vFkok fdlh fuek.k çfØ;k pyku vFkok vè;èkhu fd, tku vFkok ,l fdlh ou e ou mRikn gVk, tku vkj fuek.k d fy, [krh d fy,] i'kèku j[ku d fy, vFkok fdlh vU; ç;ktu d fy, rkM tku vFkok lkQ fd, tku dk çfrf"k) dj ldrh gA***

12. इसके परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन राज्य सरकार को आधिकारिक गजट में जारी किए जाने वाले अधिसूचना के अधीन वन भूमि अथवा बंजर भूमि को संरक्षित वन के रूप में अधिसूचित करने की आवश्यकता है।

13. राज्य सरकार को अधिसूचना के अधीन नियत तिथि से आरक्षित किए जाने के लिए संरक्षित वन में किसी वृक्ष अथवा वृक्षों के वर्ग को घोषित करते हुए आधिकारिक गजट में अधिसूचना जारी करने की भी आवश्यकता है।

14. इस प्रकार, यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि जब तक भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन और धारा 30 के अधीन भी अधिसूचनाएँ जारी नहीं की जाती हैं, किसी को शायद ही वृक्ष काटने के अभिकथन पर अभियोजित किया जा सकता है।

15. जानू खान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य, AIR 1960 Pat 213, में पटना उच्च न्यायालय के समक्ष समरुप प्रश्न विचारार्थ आया था जिसमें माननीय न्यायाधीश ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

*^^Hkyh gh e mDr fufn"V vfèkIpuk tk fnukd 29 fnlcj] 1952 dh g dk fopkj e yrk g] Hkkjrh; ou vfèkfu;e dh èkkjk 30 d vèkhu ml vfèkIpuk e fu;r frFk l vkjf{kr fd, tku oky ljf{kr ou dh ,d vU; vfèkIpuk tkjh djuk gh FkkA***

16. जगदीश मेहता बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2003 (2) JCR 525 (Jhr.) मामले में इस न्यायालय द्वारा समरुप दृष्टिकोण अपनाया गया प्रतीत होता है।

17. वर्तमान मामले में, राज्य सरकार इस अभिवचन के साथ आगे आयी है कि वर्ष 1905 में भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के अधीन अधिसूचना जारी की गयी है किंतु ऐसा कोई प्रकथन नहीं है कि सरकार ने कभी संरक्षित वन में आरक्षित किए जाने वाले किसी वृक्ष अथवा वृक्षों के वर्ग को घोषित करते हुए भारतीय वन अधिनियम की धारा 30 के अधीन कोई अधिसूचना जारी किया (जिससे वर्तमान मामले में हमारा सरोकार है।)

18. मामले के उस दृष्टिकोण में, वृक्ष काटने के अभिकथन पर किसी को अभियोजित नहीं किया जा सकता है।

19. तद्नुसार, संज्ञान लेने वाले आदेश सहित C-3 केस सं॰ 87 वर्ष 1996 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

20. परिणामस्वरुप, इन आवेदनों को अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

परमेश्वर महथा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 170 of 2013. Decided on 19th July, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—जब्त वस्तु की निर्मुक्ति–मोटर साइकिल, मोबाइल फोन और ए॰ टी॰ एम॰ कार्ड की निर्मुक्ति के लिए आवेदन अस्वीकार किया जाना–जब्त वस्तुओं के उपर याची का स्वामित्व स्पष्ट नहीं है–प्रश्नगत वस्तुओं के उपर याची का स्वामित्व अभिनिश्चित करने के लिए अवर न्यायालय को निर्देश दिया गया–यदि इन्हें याची का पाया जाता है, इन्हें बंध पत्र/प्रतिभूति पर याची के पक्ष में निर्मुक्त किया जा सकता है।

(पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s K.P. Deo, M.L.K. Chitra, For the Petitioner; Mr. V.S. Sahay, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची चरही पी॰ एस॰ केस सं॰ 7 वर्ष 2012 में श्री संजय कुमार सिंह, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 21.1.2013 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा मामले के संबंध में जब्त कतिपय वस्तुओं की निर्मुक्ति के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. याची को चरही पी॰ एस॰ केस सं॰ 7 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 391 वर्ष 2012 के तत्सम, में आयुध अधिनियम की धाराओं 25 (1-B) (a)/26/35 के अधीन अपराधों के लिए अभियुक्त बनाया गया है। याची को अन्य सह–अभियुक्तगण के साथ दिनांक 9.2.2012 को गिरफ्तार किया गया था और याची के कब्जा से कुछ पहचान पत्रों जिन्हें अभिकथित रूप से कूट रचित किया गया था सहित आग्नेयास्त्र तथा अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त एस॰ बी॰ आई॰ एवं बैंक ऑफ इंडिया के ए॰ टी॰ एम॰ कार्डों, JH-O 1-AQ-1333 संख्या वाले एक बजाज पल्सर मोटर साइकिल और एक मोबाइल फोन बरामद किया गया था।

4. याची ने उससे जब्त की गयी मोटर साइकिल, मोबाइल फोन और दो ए॰ टी॰ एम॰ कार्डों की निर्मुक्ति के लिए आवेदन दाखिल किया और याची का आवेदन अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 21.1.2013 के आदेश द्वारा यह कथन करते हुए कि पुलिस रिपोर्ट दर्शाता है कि दांडिक मामले के संबंध में उनका उपयोग किया गया था, अस्वीकार कर दिया गया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है क्योंकि याची मोटर साइकिल का रजिस्टर्ड स्वामी है और ए॰ टी॰ एम॰ कार्ड्स याची के खाता के हैं और मोबाइल फोन भी याची का है और तद्नुसार याची से पर्याप्त बंधपत्र एवं प्रतिभूतियों को लेकर अवर न्यायालय द्वारा उन्हें निर्मुक्त कर दिया जाना चाहिए था।

6. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

7. आक्षेपित आदेश से यह प्रकट नहीं है कि क्या याची पूर्वोल्लिखित जब्त वस्तुओं का स्वामी है या नहीं। मामले के उस दृष्टिकोण में अवर न्यायालय को रिपोर्ट प्राप्त करने का निर्देश दिया जाता है कि क्या ए॰ टी॰ एम॰ कार्ड्स याची के खाता के हैं, क्या याची प्रश्नगत वाहन का रजिस्टर्ड स्वामी है और

क्या मोबाइल फोन याची का है और यदि उन्हें याची का पाया जाता है, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची से ऐसे बंधपत्र/प्रतिभूति वचन पत्र लेने पर जैसा अवर न्यायालय मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में उचित और समुचित समझता है, सहित इस वचन कि इन वस्तुओं की निर्मुक्ति किसी तरीके से अभियोजन के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी और उन वस्तुओं को अवर न्यायालय में प्रस्तुत किया जाएगा जब और जैसे न्यायालय द्वारा ऐसा करने का निर्देश दिया जाता है, को लेकर इन वस्तुओं को याची के पक्ष में निर्मुक्त किया जा सकता है।

8. तद्नुसार, चरही पी॰ एस॰ केस सं॰ 7 वर्ष 2012 में श्री संजय कुमार सिंह, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 21.1.2013 के आक्षेपित आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को आवश्यक रिपोर्ट प्राप्त करने पर पूर्वोक्त निर्देशों की दृष्टि में विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

रविन्द्र कुमार पाठक

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 904 of 2012. Decided on 7th August, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 403, 406, 409, 467, 468, 471, 109 एवं 120B सह-पठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 7/13 (2) एवं 13 (1) (d) (c)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—लोक धन का दुर्विनियोग–उन्मोचन के लिए याचिका अस्वीकार किया जाना–नकली अभियंता के साथ मौनानुकूलता का अभिकथन सिद्ध नहीं किया गया–लिया गया आधिक धन बरामद किया गया था और खजाने में जमा किया गया था–याची की ओर से षडयंत्र के मामला की कल्पना नहीं की जा सकती है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया और याची को मामले से उन्मोचित किया गया। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Rakesh Ranjan, For the Petitioner; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

यह पुनरीक्षण आवेदन निगरानी (सदर) पी॰ एस॰ केस सं॰ 68 वर्ष 2010 (विशेष केस सं॰ 85 वर्ष 2010) में पारित दिनांक 5.9.2012 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची की उन्मोचन की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी।

2. अभियोजन का मामला यह है कि बोकारो अवस्थित आठ नव उत्क्रमित उच्च विद्यालयों के भवनों की आधारभूत संरचना खड़ी करने के लिए निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, राँची, झारखंड द्वारा निर्णय लिया गया था जिसके लिए राज्य सरकार को वित्त देना था और जिला अभियंता, जिला परिषद्, बोकारो के माध्यम से विभागीय रूप से काम किया जाना था।

3. आगे मामला यह है कि जिला अभियन्ता ने किसी अशोक कुमार भारती को पाँच उच्च विद्यालयों के भवनों का निर्माण कार्य न्यस्त किया। उसने काम किया और डी॰ डी॰ सी॰-सह-सी॰ ई॰ ओ॰, जिला परिषद्, बोकारो द्वारा जारी चेक के माध्यम से 99,41,652/- रुपयों की राशि का भुगतान लिया और उक्त

चेक इस याची द्वारा तैयार किया गया था। बाद में, भौतिक सत्यापन पर जब यह पाया गया था कि 62,79,970/- रुपयों के मूल्य का काम किया गया है, 40,19,677/- रुपयों की शेष राशि बरामद की गयी थी और बोकारो कोषागार में जमा की गयी थी। बाद में यह पता चला कि किसी अशोक कुमार भारती को अन्य शिक्षकों के साथ सिविल इंजीनियरिंग का काम करने के लिए प्रशिक्षण दिया गया था। प्रशिक्षण प्राप्त करने पर अशोक कुमार भारती को बोकारो जिला के विभिन्न प्रखंडों में अवस्थित अनेक उच्च विद्यालयों के भवनों का निर्माण कार्य करने का काम न्यस्त किया गया था और तद्द्वारा उसने विपुल धन का दुर्विनियोग किया और इसलिए निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 68 वर्ष 2010 (विशेष केस सं॰ 85 वर्ष 2010) दर्ज किया गया था।

4. अन्वेषण पूरा होने पर आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 403, 406, 409, 467, 468, 471, 109 और 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7/13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (d) (c) के अधीन भी दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया था। इस पर, अभियोजन से अपने उन्मोचन के लिए याची की ओर से आवेदन उसमें यह कथन करते हुए दाखिल किया गया था कि अभिकथित अपराध में उसकी सह-अपराधिता दर्शाने वाली सामग्री बिल्कुल नहीं है। दिनांक 5.9.2012 के आदेश के तहत उस आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राकेश रंजन निवेदन करते हैं कि जाँच के दौरान और अन्वेषण के दौरान भी यह सामने आया है कि याची, जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर जिला परिषद्, बोकारो में लेखाकार के रूप में पदस्थापित था, ने चेक तैयार किया था और उस चेक को तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰, जिला परिषद्, बोकारो द्वारा जारी किया गया था किंतु ज्योंही याची को पता चला कि अशोक कुमार भारती अभियंता नहीं बल्कि सहायक शिक्षक था, उसे भवन निर्माण का काम करने से रोक दिया गया था और राशि, जिसे आधिक्य में लिया गया था, बरामद की गयी थी और खजाने में जमा की गयी थी और तद्द्वारा उसने कोई अपराध नहीं किया था। अत:, न्यायालय ने निश्चय ही उन्मोचन के लिए याचिका अस्वीकार करने में गलती किया था।

6. इसके विरुद्ध, निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री शैलेश निवेदन करते हैं कि काम विभागीय रूप से किया जाना था किंतु इसे अशोक कुमार भारती के माध्यम से निष्पादित किया गया था जो अभियन्ता कभी नहीं था बल्कि सहायक शिक्षक था और कि याची वह व्यक्ति था जिसने चेक तैयार किया था यद्यपि चेक तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰ द्वारा जारी किया गया था किंतु यदि संपूर्ण मामले को विचार में लिया जाता है, यह प्रतीत होगा कि याची सहित समस्त व्यक्ति एक-दूसरे के साथ दुरभिसंधि में थे और तद्द्वारा न्यायालय ने निश्चय ही अभियोग से याची को उन्मोचित करने से इनकार करने में कोई अवैधता नहीं किया था।

7. मामला जिसे अभियोजन की ओर से प्रक्षेपित किया गया है, जाँच रिपोर्ट के साथ अथवा निगरानी द्वारा किए गए अन्वेषण के साथ संगत प्रतीत नहीं होता है। जाँच रिपोर्ट, जो प्राथमिकी का भाग है, से यह स्पष्ट है कि जब उत्क्रमित उच्च विद्यालयों के भवनों को जिला बोर्ड के जिला अभियंता द्वारा निर्मित कराने का निर्णय लिया गया था, जिला बोर्ड के तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰-सह-सी॰ ई॰ ओ॰ ने जिला अभियन्ता को काम न्यस्त किया था किंतु जिला अभियन्ता ने जिला बोर्ड के तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰-सह-सी॰ ई॰ ओ॰ से इसका अनुमोदन लिए बिना अशोक कुमार भारती को काम न्यस्त कर दिया।

8. आगे, जाँच रिपोर्ट से यह प्रतीत होता है कि चूँकि जिला अभियन्ता का पृथक खाता नहीं था, निधि जिला बोर्ड के पास उपलब्ध थी जिसका खाता जिला परिषद् के तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰ द्वारा चलाया

जा रहा था। उस स्थिति में, अशोक कुमार भारती को भुगतान किया गया था। जाँच के दौरान और अन्वेषण के दौरान भी यह सामने आया है कि इस याची, जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर जिला परिषद्, बोकारो के लेखाकार के रूप में पदस्थापित था, ने चेक तैयार किया था और वह चेक तत्कालीन डी॰ डी॰ सी॰, जिला परिषद्, बोकारो द्वारा जारी किया गया था किंतु ज्योंही याची को पता चला कि अशोक कुमार भारती अभियन्ता कभी नहीं था बल्कि सहायक शिक्षक है, उसे काम करने से रोक दिया गया था और राशि जिसे आधिक्य में लिया गया था, बरामद की गयी थी और खजाने में जमा की गयी थी। इसी समय पर जाँच रिपोर्ट में यह भी है कि यह याची अशोक कुमार भारती को पहले से कभी नहीं जानता था। इन परिस्थितियों के अधीन, याची की ओर से षडयंत्र के मामले की कल्पना नहीं की जा सकती है और, इसलिए, बनाया गया मामला कि याची ने अन्य अभियुक्तगण के साथ दुरभिसंधि किया है, पूर्णतः भ्रामक प्रतीत होता है।

9. इन परिस्थितियों के अधीन, न तो भारतीय दंड संहिता के अधीन और न ही भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध बनता है किंतु न्यायालय ने सही परिप्रेक्ष्य में मामले पर विचार नहीं किया था और इसलिए, आक्षेपित आदेश, जिसके अधीन उन्मोचन के लिए प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी है। एतद् द्वारा अपास्त की जाती है। परिणामस्वरुप याची को मामले से उन्मोचित किया जाता है।

10. परिणामस्वरुप, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh;k t ;k jk;] U;k;efr

पुरुषोत्तम राम टिबरेवाल एवं एक अन्य

cuke

बिहार राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 14358 of 1997 (R). Decided on 5th August, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 323/452 एवं 427 सह-पठित एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 13(1)(iv), (x) एवं (xi)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—गृह अतिचार, दुर्व्यवहार एवं अपमान–संज्ञान–अधिनियम के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष सीधे तौर पर परिवाद अथवा आरोप-पत्र अधिकथित नहीं किया जा सकता है–ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि दंडाधिकारी द्वारा इसको मामला सुपुर्द किए बिना विनिर्दिष्ट सत्र न्यायालय मूल अधिकारिता के न्यायालय के रूप में संज्ञान ले सकता है–दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी। (पैराएँ 7 से 13)

निर्णयज विधि.–2004 Cri. LJ 1770—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Mahesh Tewari, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. Manoj Kumar Sah, For the O.P. No. 2.

निर्णय

जया रॉय, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने दिनांक 9.10.96 के आदेश, जिसके द्वारा याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323/452 तथा 427 के अधीन और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण)

अधिनियम, 1989 की धारा 13 (1) (iv), (x) और (xi) के अधीन भी संज्ञान लिया गया है, और प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, गोड्डा के समक्ष लंबित विशेष केस सं० 17/96 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए इस आवेदन को दाखिल किया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री तिवारी ने निवेदन किया है कि विरोधी पक्षकार सं० 2 ने विशेष न्यायाधीश, गोड्डा के न्यायालय के समक्ष परिवाद याचिका दाखिल किया है जिसे पी० सी० आर० केस सं० 9 वर्ष 1996 के रूप में दर्ज किया गया था।

4. अभियोजन मामला, जैसा उक्त परिवाद मामले में प्रकट किया गया है, यह है कि दिनांक 20 अगस्त, 1996 को सायं लगभग 5 बजे याचीगण दो अज्ञात व्यक्तियों के साथ परिवादी के घर आए और उसे घर खाली करने के लिए कहा क्योंकि उन्होंने उसको पर्चा प्रदान करने वाले आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल किया है और इनकार करने पर अभियुक्तगण ने परिवादी के साथ दुर्व्यवहार किया और उस पर तथा उसकी पत्नी पर मुक्कों-लातों से प्रहार भी किया। आगे यह कथन किया गया है कि तब अभियुक्तगण ने विरोधी पक्षकार सं० 2 को घर से बाहर निकालने का प्रयास किया किंतु कुछ गाँववालों ने मामले को शांत किया किंतु इस बीच अभियुक्तगण ने विरोधी पक्षकार सं० 2 की पत्नी की साड़ी फाड़ दिया जो घर में रखी हुई थी और जिसका मूल्य केवल 80/- रुपया था। याची के अधिवक्ता ने इस आवेदन के परिशिष्ट-4 के रूप में परिवाद याचिका को संलग्न किया है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने निवेदन किया है कि माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान याची सं० 1 अर्थात् पुरुषोत्तम राम टिबरेवाल की मृत्यु हो गयी। याची के अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि पूर्वोक्त मामला बाद में विशेष केस सं० 17 वर्ष 1996 के रूप में संख्यांकित किया गया था और विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, गोड्डा ने स्वयं दिनांक 21.8.96 को सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर विरोधी पक्षकार सं० 2 का परीक्षण किया और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के अधीन जाँच के साथ अग्रसर हुए। जाँच के बाद विद्वान विशेष न्यायाधीश ने दिनांक 9.10.96 के अपने आदेश के तहत इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 452 और 427 के अधीन और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (1) (iv), (x) (xi) के अधीन संज्ञान लिया।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने निवेदन किया है कि वर्ष 1987 में विरोधी पक्षकार सं० 2 ने अनेक अन्य सहयोगियों के साथ मौजा महागामा अवस्थित याचीगण की भूमि को हड़पने का प्रयास किया जिस कारण याची सं० 1 परिवार का मुखिया और कर्ता होने के नाते वर्तमान विरोधी पक्षकार सं० 2 के विरुद्ध सब डिविजनल अधिकारी, गोड्डा के समक्ष एस० पी० टी० अधिनियम के प्रावधान के अधीन मामला आर० ई० आर० केस सं० 29 वर्ष 1987-88 दाखिल किया और अन्य बातों के साथ उसमें उनको अनुसूची A में उल्लिखित भूमि से बेदखल करने का प्रार्थना किया जिसमें पहले ही दोनों पक्षों से साक्ष्य बंद किया जा चुका है और मामले में अंतिम निर्णय की प्रतीक्षा है। पूर्वोक्त मामले के लंबित रहने के बावजूद अंचलाधिकारी, महागामा ने विरोधी पक्षकार सं० 2 के साथ दुरभिसंधि में उसके पक्ष में याची के पीठ पीछे कार्यवाही सं० 37/94-95 के तहत बिहार राज्य विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति वासभूमि अभिधृति अधिनियम के अधीन अवैध रूप से और मनमाने ढंग से पर्ची जारी किया। किंतु, याची सं० 1 ने विरोधी पक्षकार सं० 2 को पर्चा प्रदान करने वाले आदेश के विरुद्ध गलत अनुदेश पर समाहर्ता-सह-उपायुक्त, गोड्डा के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया जिन्होंने दिनांक 13.2.97 के अपने आदेश के तहत याची सं० 1 को सक्षम न्यायालय अर्थात् आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल करने का निर्देश दिया और बाद में

आर॰ एम॰ आर॰ सं॰ 19 वर्ष 1997-98 के तहत आयुक्त, संथाल परगना के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया गया था। विद्वान आयुक्त, संथाल परगना ने मामले की संपूर्ण जाँच के बाद तत्कालीन अंचलाधिकारी द्वारा विरोधी पक्षकार सं॰ 2 और अन्य को पर्चा का प्रदान अवैध और मनमाना पाया और तद्नुसार दिनांक 10.6.97 के अपने पत्र सं॰ 285 के तहत विरोधी पक्षकार सं॰ 2 और कई अन्य को पर्चा प्रदान करने वाला तत्कालीन अंचलाधिकारी, महागामा का आदेश रद्द कर दिया। इस प्रकार, दोनों पक्षों के बीच पुरानी दुश्मनी है और इस दुश्मनी के कारण दोनों याचीगण जो पिता-पुत्र हैं को केवल परेशान और अपमानित करने के लिए झूठा आलिप्त किया गया है।

7. याची के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि स्वीकृत रूप से परिवादी ने विशेष न्यायाधीश, गोड्डा के समक्ष वर्तमान परिवाद मामला दाखिल किया है किंतु अधिनियम के अनुसार विशेष न्यायालय आवश्यकत: सत्र न्यायालय है और यह अपराध का संज्ञान ले सकता है जब संहिता के प्रावधान के अनुरुप दंडाधिकारी द्वारा इसको मामला सुपुर्द किया जाता है। अधिनियम के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष सीधे तौर पर परिवाद अथवा आरोप पत्र दाखिल नहीं किया जा सकता है। न तो संहिता में और न ही अधिनियम में विवक्षा द्वारा भी कोई प्रावधान है कि दंडाधिकारी द्वारा इसको मामला सुपुर्द किए बिना विनिर्दिष्ट सत्र न्यायालय मूल अधिकारिता के न्यायालय के रूप में अधिनियम के अधीन संज्ञान ले सकता है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में श्री तिवारी ने **एम॰ ए॰ कुटप्पन बनाम ई॰ कृष्णन नयनार एवं एक अन्य, 2004 Cri LJ 1770,** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:-

*^^fo'k"k U;k;kèkh'k d ikl ifjokn dk çR;{kr% xg.k dju dh vkj l{ke nMkfèkdkjh }kjk bldk ekeyk lin fd, fcuk lKku yu d ckn vknf'kdk tkjh dju dh vfèkdkfjrk ugh gA ;g ç'u vc vfu.khr ugh g vkj blfy, ;g vfHkfuèkkfjr djuk gkxk fd fo'k"k U;k;kèkh'k u oreku ekey e l{ke nMkfèkdkjh }kjk fopkj.k d fy, bldk ekeyk lin fd, fcuk vfèkfu;e d vèkhu vijkèk vfHkdfFkr djr g, bld le{k nkf[ky ifjokn dk xg.k dju e vkj lKku yu d ckn vknf'kdk tkjh dju e xyrh fd;kA***

8. पूर्वोक्त मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी संप्रेक्षित किया है:-

*^^fdr ifjokndh dk] ;fn ,l lykg nh tkrh g] l{ke nMkfèkdkjh d le{k ifjokn nkf[ky dju dh NV gkxh tk bld x.kkx.k ij ifjokn ij fopkj djx vkj rc fofèk d vu:i vxlj gkxA***

9. श्री तिवारी ने प्रतिवाद किया है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय की दृष्टि में और इन तथ्यों की दृष्टि में कि विशेष न्यायालय के समक्ष दाखिल परिवाद याचिका, जैसा पहले कथन किया गया है, की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित किए जाने योग्य है।''

10. परिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज साह ने निवेदन किया है कि जब विद्वान प्रथम अपर न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, गोड्डा को अपनी गलती का अहसास हुआ कि विशेष न्यायाधीश के पास संज्ञान लेने की अधिकारिता नहीं है, तब विशेष न्यायाधीश, गोड्डा ने दिनांक 14.2.97 को मामला विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, गोड्डा की फाइल को अंतरित किया और तत्पश्चात विद्वान सी॰ जे॰ एम॰, गोड्डा ने दिनांक 20.3.97 के आदेश के तहत इस मामले में नये सिरे से संज्ञान लिया और तत्पश्चात् विद्वान सी॰ जे॰ एम॰, गोड्डा ने मामले को विशेष न्यायाधीश के फाइल को अंतरित किया। अत:, दिनांक 9.10.1996 का संज्ञान लेने वाला आक्षेपित आदेश अब प्रभावकारी नहीं है और यह आवेदन खारिज किए जाने योग्य है। किंतु उन्होंने इस तथ्य से इनकार नहीं किया है कि परिवाद याचिका विशेष न्यायाधीश, गोड्डा के समक्ष दाखिल की गयी थी।

11. पक्षों को विस्तारपूर्वक सुनने के बाद मैं पाती हूँ कि पक्षों में से किसी ने सी॰ जे॰ एम॰, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 20.3.1997 के पूर्वोक्त आदेश को संलग्न नहीं किया है जिन्होंने इस मामले में नये सिरे से संज्ञान लिया और मामले को विशेष न्यायाधीश, गोड्डा को अंतरित किया; उन्होंने केवल इस तथ्य को प्रस्तुत किया है। अत: यह न्यायालय उक्त आदेश को इस आवेदन में संलग्न नहीं किए जाने पर अथवा इस न्यायालय के समक्ष किसी पक्ष द्वारा प्रस्तुत नहीं किए जाने पर, आवेदन पर तर्क के समय पर भी, पक्षों के उक्त निवेदनों को ध्यान में नहीं ले सकता है।

12. एम॰ ए॰ कुटप्पन बनाम ई॰ कृष्णन नयनार एवं एक अन्य मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विचार करते हुए और चूँकि वर्तमान मामले में परिवाद याचिका विशेष न्यायाधीश के समक्ष दाखिल की गयी थी और स्वीकृत रूप से विशेष न्यायाधीश ने दिनांक 9.10.1996 के आदेश के तहत संज्ञान लिया जो बिल्कुल अवैध है, विशेष न्यायाधीश ने अपने समक्ष दाखिल परिवाद ग्रहण करने में और सक्षम दंडाधिकारी द्वारा विचारण के लिए मामला इसको सुपुर्द किए बिना संज्ञान लेने के बाद आदेशिका जारी करने में पूर्णत: गलती किया, मैं विशेष केस सं॰ 17 वर्ष 1996 में सत्र न्यायाधीश, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 9.10.1996 के संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित करती हूँ और याची सं॰ 2 के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही, जिसके लिए पूर्वोक्त परिवाद याचिका के आधार पर अग्रसर हुआ है, को भी अभिखंडित करती हूँ। चूँकि यह निवेदन किया गया है कि आवेदन के लंबित रहने के दौरान याची सं॰ 1 की मृत्यु हो गयी और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने इस तथ्य का खंडन नहीं किया है, याची सं॰ 1 अर्थात् पुरुषोत्तम राम टिबरेवाल के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है।

13. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। किंतु, परिवादी/विरोधी पक्षकार सं॰ 2, यदि उसे ऐसा परामर्श दिया जाता है, को सक्षम दंडाधिकारी के समक्ष परिवाद दाखिल करने की छूट होगी जो इसके गुणागुण पर परिवाद पर विचार करेंगे और विशेष न्यायाधीश द्वारा अथवा इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश से प्रभावित हुए बिना विधि के अनुरुप अग्रसर होंगे।

14. कार्यालय को इस आदेश को तुरन्त फैक्स के माध्यम से संबंधित न्यायालय को भेजने का निर्देश दिया जाता है क्योंकि मामला वर्ष 1997 का है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अंगद कुमार सिंह उर्फ अंगद सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 577 of 2013. Decided on 8th August, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 366A/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 397 एवं 401—अवयस्क लड़की का अपहरण–आरोप विरचित किया जाना–याची द्वारा दाखिल आवेदन अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा न्यायनिर्णीत किया गया था और यह पाया गया था कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन अपराध नहीं बनाता था बल्कि केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन अपराध बनता था और विधि के अनुरुप विचारण के लिए मामला मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय को अंतरित किया गया था–जब एक बार अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा यह आदेश पारित किया गया था, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा किसी न्यायिक आदेश के बिना कि मामला वस्तुत: भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन

बनता था, मामले को सत्र न्यायाधीश के न्यायालय को अंतरित नहीं किया जा सकता था–ऐसा नहीं किए जाने पर और विचारण न्यायालय द्वारा पारित ऐसा कोई आदेश नहीं होने पर मामले को वापस लेने के लिए और याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन आरोप विरचित करने के लिए आदेश देने हेतु सत्र न्यायाधीश के पास अधिकारिता नहीं थी–सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश पूर्णतः अधिकारिताविहीन है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 8 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Kailash Prasad Deo, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची एस॰ टी॰ केस सं॰ 44 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 24.5.2013 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने पाया है कि याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A/34 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री है और आरोप विरचित करने के लिए याची को न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया गया है।

3. याची को जामतारा पी॰ एस॰ केस सं॰ 207 वर्ष 2008, जी॰ आर॰ सं॰ 474 वर्ष 2008, में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A/34 के अधीन आरोप के लिए अभियुक्त बनाया गया है जिसे यह अभिकथित करते हुए कि उन्होंने सूचक की अवयस्क पुत्री का अपहरण किया, याची और दो अज्ञात महिला अभियुक्तगण के विरुद्ध संस्थापित किया गया है। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने इसी अपराध के लिए याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और तद्नुसार, संज्ञान लेने के बाद मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था।

4. सत्र न्यायालय में याची ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 228 के अधीन अपना आवेदन यह कथन करते हुए दाखिल किया कि प्राथमिकी और पुलिस द्वारा दर्ज गवाहों के बयानों से यह प्रतीत हुआ कि मामला केवल अवयस्क लड़की के अपहरण के अपराध के लिए था क्योंकि प्राथमिकी में अथवा पुलिस द्वारा परीक्षित गवाहों के साक्ष्य में कोई इरादा अभ्यारोपित नहीं किया गया था। याची ने अभिवचन किया कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन अपराध उसके विरुद्ध बिल्कुल नहीं बनता था बल्कि यह केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन अपराध का मामला था। सत्र न्यायालय ने याची का निवेदन सही पाया था और तद्नुसार, एस॰ टी॰ सं॰ 127 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 15.1.2009 के आदेश द्वारा विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ जामतारा ने पाया कि मामला अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य नहीं था और विधि के अनुरुप विचारण के लिए मामले को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जामतारा के न्यायालय को अंतरित कर दिया। एस॰ टी॰ केस सं॰ 127 वर्ष 2008 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश आवेदन के परिशिष्ट-4 के रूप में अभिलेख पर लाया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अंतरिती न्यायालय में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था और साक्ष्य दिया जा रहा था।

5. इस बीच, उक्त जामतारा पी॰ एस॰ केस सं॰ 207 वर्ष 2008 में किसी मनोज कुमार वर्मा के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A/34 के अधीन अपराध के लिए पुनः पूरक आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। उक्त पूरक आरोप-पत्र में भी संज्ञान लिया गया था और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और सह-अभियुक्त मनोज कुमार वर्मा के विरुद्ध सत्र विचारण सं॰ 28 वर्ष 2012 संस्थापित किया गया था और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A/34 के अधीन उसके विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था।

यह प्रतीत होता है कि सत्र विचारण सं॰ 28 वर्ष 2012 जो सह-अभियुक्त मनोज कुमार वर्मा के विरुद्ध लंबित था, में सत्र न्यायालय के समक्ष अभियोजन द्वारा यह उल्लेख करते हुए आवेदन दाखिल किया गया था कि उक्त जी॰ आर॰ सं॰ 474 वर्ष 2008 के मूल अभिलेख विचारण के लिए एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, जामतारा के न्यायालय में लंबित थे और इसे मंगाया जा सकता है और इस मामले के साथ मिलाया जा सकता है जिस पर विद्वान सत्र न्यायाधीश ने जी॰ आर॰ सं॰ 474 वर्ष 2008 के मूल अभिलेखों को अपने न्यायालय में वापस लाने का आदेश पारित किया। बाद में, यह प्रतीत होता है कि सत्र न्यायाधीश, जामतारा के न्यायालय में याची के विरुद्ध एक अन्य सत्र विचारण संस्थापित किया गया था जो सत्र विचारण सं॰ 44 वर्ष 2013 है जिसमें अवर न्यायालय ने दिनांक 24.5.2013 के आदेश द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन इस याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने का निर्देश दिया जिसे वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन में चुनौती दिया गया है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 24.5.2013 का आक्षेपित आदेश बिल्कुल अवैध है क्योंकि समन्वय अधिकारिता के न्यायालय ने यह पाते हुए कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन अपराध नहीं बनता था बल्कि केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन अपराध बनता था, याची के आवेदन पर पहले ही आदेश पारित किया था और विधि के अनुरुप विचारण के लिए मामला अवर न्यायालय को अंतरित किया गया था। जहाँ वस्तुतः विचारण किया जा रहा था। यह निवेदन किया गया है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 24.5.2013 का आदेश समन्वय अधिकारिता के न्यायालय द्वारा पारित आदेश को वापस लेने/अपास्त करने के तुल्य है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विचारण न्यायालय में अब तक परीक्षण किए गए गवाहों ने पीड़िता के अपहरण के पीछे के इरादे के बारे में किसी चीज का कथन नहीं किया था और तद्नुसार, सत्र न्यायालय को मामला सुपुर्द करने का विचारण न्यायालय का आदेश नहीं है और ऐसे किसी आदेश के बिना विद्वान सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

7. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने, प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि सत्र न्यायालय के समक्ष सह-अभियुक्त का विचारण किया जा रहा था और तद्नुसार अवर न्यायालय से मूल अभिलेखों को वापस मंगाने के आक्षेपित आदेश में और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन भी याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने का आदेश देने में अवैधता नहीं है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि पीड़िता अभी भी लापता है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और आक्षेपित आदेश तथा अवर न्यायालय के ऑर्डर शीट जिसे अभिलेख पर लाया गया है का परिशीलन करने पर मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। एस॰ टी॰ सं॰ 127 वर्ष 2008 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 15.1.2009 का आदेश स्पष्टतः दर्शाता है कि याची द्वारा दाखिल आवेदन उनके द्वारा न्याय निर्णीत किया गया था और यह पाया गया था कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन अपराध नहीं बनता था बल्कि केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन अपराध बनता था और तद्नुसार, मामला विधि के अनुरुप विचारण के लिए विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय को अंतरित किया गया था। जब एक बार विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा यह आदेश पारित किया गया था, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा किसी न्यायिक के आदेश के हुए बिना कि वस्तुतः भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन मामला बनता था, मामले को सत्र न्यायाधीश के न्यायालय को अंतरित नहीं किया जा सकता था। ऐसा नहीं किए जाने पर और विचारण न्यायालय द्वारा पारित ऐसे किसी आदेश

के बिना विद्वान सत्र न्यायाधीश के पास मामले को वापस लेने और याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366A के अधीन आरोप विरचित करने का आदेश देने की अधिकारिता नहीं थी। मैं पाता हूँ कि एस॰ टी॰ सं॰ 44 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 24.5.2013 का आदेश पूर्णत: अधिकारिताहीन है और इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

9. तद्नुसार, एस॰ टी॰ सं॰ 44 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, जामतारा द्वारा पारित दिनांक 24.5.2013 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। तद्नुसार यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

10. यह कहना अनावश्यक है कि याची का विचारण विचारण न्यायालय के समक्ष जारी रहेगा जहाँ इसका विचारण विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰, जामतारा द्वारा एस॰ टी॰ सं॰ 127 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 15.1.2009 के आदेश द्वारा अंतरित किए जाने पर किया जा रहा था जब तक विधि के अनुरूप विचारण न्यायालय द्वारा विपरीत आदेश पारित नहीं किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

विनय कुमार पांडे

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M.P. No. 840 of 2013. Decided on 15th July, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 156 (3) एवं 202—मामले का अन्वेषण–दंडाधिकारी संज्ञान लेने के पहले धारा 156 (3) के निबंधनानुसार, आदेश पारित कर सकता है–किंतु, किसी भी सूरत में दंडाधिकारी को मिश्रित आदेश पारित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है अर्थात् धारा 156 (3) के अधीन पारित आदेश और धारा 202 के अधीन पारित आदेश–न्यायालय ने धारा 156 (3) के अधीन आदेश पारित करने के पहले अपराध का संज्ञान कभी नहीं लिया था–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 12 से 17)

निर्णयज विधि.–2011 Cri.LJ 3346—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. A. K. Pandey, For the Petitioner; A.P.P., For the State, Mr. Shailesh Kumar Singh, For the Vigilance; Mr. S. N. Prasad, For the Ayush.

आदेश

यह आवेदन निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 15 वर्ष 2009 में विशेष न्यायाधीश, निगरानी, राँची द्वारा पारित दिनांक 20.3.2013 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विरोधी पक्षकार सं॰ 3 द्वारा दर्ज परिवाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन मामले के संस्थापन और इसके अन्वेषण के लिए निगरानी ब्यूरो के समक्ष भेजा गया था।

2. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर आने से पहले, मामला जिसे परिवाद में बनाया गया है यह है कि वर्ष 2007-08 में दैनिक समाचार-पत्र 'हिन्दुस्तान' में आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी के पद पर नियुक्ति के लिए पात्र उम्मीदवारों से आवेदन मांगते हुए विज्ञापन प्रकाशित किया गया था। बाद में, चयन बोर्ड का गठन किया गया था जिसका अध्यक्ष परिवादी था। प्राप्त किए गए आवेदनों की संवीक्षा की गयी थी और तब चयन बोर्ड के समक्ष साक्षात्कार के लिए उम्मीदवारों को प्रवेश पत्र जारी किया गया

था। जब प्रक्रिया चल रही थी, याची जो समय के प्रासंगिक बिन्दु पर आरक्षी अधीक्षक, निगरानी था ने परिवादी को अपने कॉंस्टेबल के माध्यम से अपने भाई अर्थात् धीरेन्द्र कुमार पांडे को आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी नियुक्त करने के लिए कहा जिससे परिवादी ने यह कहते हुए इनकार किया कि जो कुछ भी किया जाएगा, वह नियुक्ति की प्रक्रिया के माध्यम से किया जाएगा। इसके बावजूद याची ने उसको नियुक्त करने पर जोर दिया जिससे परिवादी ने साफ इनकार कर दिया। अंत में उसने धमकी दी। इस पर दिनांक 15.8.2008 को पुलिस महानिदेशक के समक्ष परिवाद किया गया था। जब सफल उम्मीदवारों का परिणाम प्रकाशित किया गया था यह याची और उसका भाई कार्यालय में आया और यह अभिवचन करते हुए कि घूस लेकर नियुक्ति की गयी थी, अभियुक्त सं॰ 2 को नियुक्त करने के लिए 2,00,000/- रुपया देने का प्रस्ताव दिया। इसे इनकार किया गया था और उसको कहा गया था कि कुछ भी नहीं किया जा सकता था और उसके द्वारा कुछ भी गलत नहीं किया गया है। इस पर दोनों व्यक्तियों ने उसको सही समय पर सबक सिखाने की धमकी दी और कार्यालय से चले गए।

3. आगे मामला यह है कि पुलिस महानिदेशक, निगरानी के समक्ष किए गए परिवाद को आवश्यक अनुदेश इप्सित करने के लिए कैबिनेट निगरानी विभाग को निर्दिष्ट किया गया था ताकि आरंभिक जाँच शुरू की जा सके। जब याची को पता चला कि उसके विरुद्ध परिवाद दाखिल किया गया है, उसने परिवादी को बताया कि इस प्रकार के परिवाद से उसको कोई नुकसान नहीं होगा। तब याची ने दिनांक 25.7.2008 को परिवादी को बुलाया और जब परिवादी उसके कार्यालय गया, परिवादी को यह कहा गया था कि आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी की नियुक्ति के मामले में भ्रष्टाचार में उसके लिप्त होने के बारे में प्राथमिकी प्राप्त की गयी है। और यदि वह मामले को दबाना चाहता है, उसे 2,00,000/- रुपयों का भुगतान करना होगा। इस पर, परिवादी ने उसको कहा कि उसने कुछ गलत नहीं किया है और इसलिए, वह धन नहीं देगा। कुछ दिन बाद, याची ने परिवादी को पुन: धन देने के लिए कहा। ऐसी स्थिति में, परिवादी ने तत्कालीन राज्यपाल को पत्र लिखा।

4. परिवादी का आगे मामला यह है कि जब ऐसा मामला अन्वेषण के अधीन था, याची के उत्तराधिकारी निर्देश इप्सित करते हुए दिनांक 2.7.2011 को निगरानी आयुक्त, कैबिनेट निगरानी विभाग को पत्र लिखा ताकि दिनांक 12.8.2008 के परिवाद में किए गए अभिकथन की आरंभिक जाँच की जा सके। जब याची के विरुद्ध कुछ नहीं किया गया था, याची ने प्राथमिकी संस्थित करने के लिए कैबिनेट, निगरानी विभाग को निर्देश दिए जाने के लिए रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 341 वर्ष 2012 दाखिल किया जिसे याची को सक्षम न्यायालय के समक्ष परिवाद दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए खारिज कर दिया गया था। परिणामस्वरुप, उसमें यह अभिकथन करते हुए परिवाद दाखिल किया गया था कि याची ने लोक सेवक होने के नाते अपने भाई को आयुर्वेदिक चिकित्सा अधिकारी के रूप में नियुक्त करने के लिए परिवादी को प्रभावित और मजबूर किया और तद्द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7, 8, 9, 10, 12, 13 के अधीन अपराध किया।

5. उक्त परिवाद को परिवाद केस सं॰ 1 वर्ष 2013 के रूप में दर्ज किया गया था। मामला संस्थित किए जाने पर दिनांक 18.2.2013 को आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन से संबंधित मामले पर अपर पुलिस महानिदेशक, निगरानी विभाग से रिपोर्ट मंगाया गया था। जब ऐसी रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की गयी थी, दिनांक 2.3.2013 को रिमांइडर जारी किया गया था। उसके बावजूद, जब कुछ भी प्राप्त नहीं किया गया था, न्यायालय ने दिनांक 20.3.2013 को आदेश पारित किया

जिसके द्वारा परिवाद को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार इसके संस्थापन और अन्वेषण के लिए निगरानी विभाग के समक्ष भेजा गया था।

6. उस आदेश से व्यथित होकर, इस आवेदन को दाखिल किया गया है।

7. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ पांडे ने उक्त आदेश का विरोध करने के लिए निवेदन किया कि जब एक बार रिपोर्ट मंगायी गयी थी, दंडाधिकारी ने जाँच शुरू किया और तद्द्वारा परिवाद को इसके संस्थापन एवं अन्वेषण के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन भेजने के लिए आदेश पारित नहीं किया जा सकता था किंतु अवर न्यायालय ने इसे किया है और तद्द्वारा आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **बहादुर सिंह बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, (2011) Cri LJ 3346,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

9. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 3 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता में निवेदन किया कि कल्पना की किसी सीमा से यह नहीं कहा जा सकता है कि दंडाधिकारी ने अपर पुलिस महानिदेशक से रिपोर्ट मंगाकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के निबंधनानुसार जाँच शुरू किया और तद्द्वारा मामले को संस्थित करने के लिए निगरानी पुलिस थाना के समक्ष परिवाद भेजने के लिए न्यायालय द्वारा पारित किसी आदेश को अवैध आदेश नहीं कहा जा सकता है बल्कि न्यायालय ऐसा आदेश पारित करने के लिए अपनी शक्ति के अंतर्गत है और तद्द्वारा यह आवेदन गुणागुण रहित है और इसलिए, खारिज किए जाने योग्य है।

10. निवेदनों की दृष्टि में, दंड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 200, 202 और 203 में अंतर्विष्ट प्रावधानों को ध्यान में लेने की आवश्यकता है। जिनका पठन निम्नलिखित है:–

*"200. **ifjoknh dh ijh{kk-**&ifjokn ij fdlh vijkèk dk lKku dju okyk eftLVV] ifjoknh dh vkj ;fn dkb lk{kh mifLFkr g rk mudh 'kiFk ij ijh{kk djxk vkj ,lh ijh{kk dk lkjk'k y[kc) fd;k tk,xk vkj ifjoknh vkj lkf{k;k }kjk rFkk eftLVV }kjk Hkh gLrk{kfjr fd;k tk,xk*

ijUrq tc ifjokn fy[k dj fd;k tkrk g rc eftLVV d fy, ifjoknh ;k lkf{k;k dh ijh{kk djuk vko';d u gkxk&

(a) ;fn ifjokn viu inh; dr0;k d fuogu e dk; dju oky ;k dk; dju dk rkRi; j[ku oky ykd lod }kjk ;k U;k;ky; }kjk fd;k x;k g] vFkok

(b) ;fn eftLVV tkp ;k fopkj.k d fy, ekey dk èkkjk 192 d vèkhu fdlh vU; eftLVV d goky dj nrk gk

ijUrq ;g vkj fd ;fn eftLVV ifjoknh ;k lkf{k;k dh ijh{kk dju d i'pkr ekey dk èkkjk 192 d vèkhu fdlh vU; eftLVV d goky djrk g rk ckn oky eftLVV d fy, mudh fQj l ijh{kk djuk vko';d u gkxkA

*202. **vknf'kdk d tkjh fd, tku dh eYroh djuk-**&(1) ;fn dkb eftLVV ,l vijkèk dk ifjokn çkIr dju ij] ftldk lKku dju d fy, og çkfèkÑr g ;k tk èkkjk 192 d vèkhu mld goky fd;k x;k g] Bhd le>rk g [vkj ,l ekey e tgk vfHk;Dr ,l LFkku ij jg jgk g tk mld U;k; {k= e ugh vkrkq rk vfHk;Dr d fo#) vknf'kdk dk tkjh fd;k tkuk eYroh dj ldrk g vkj ;g fofuf'pr dju d ç;ktu l fd dk;okgh dju d fy, i;kIr*

vkèkkj g vFkok ugh] ;k rk Lo;a gh ekey dh tkp dj ldrk g ;k fdlh ifyl vfèkdkjh }kjk ;k vU; ,l 0;fDr }kjk] ft ldk og Bhd le> vUo"k.k fd, tku d fy, fun'k n ldrk gA

ijUrq vUo"k.k d fy, ,lk dkb fun'k ugh nxkA

(a) tgk eftLVV dk ;g çrhr gkrk g fd og vijkèk ft ldk ifjokn fd;k x;k g vuU; rhu l'ku U;k;ky; }kjk fopkj.kh; g(vU;Fkk

(b) tgk ifjokn fdlh U;k;ky; }kjk ugh fd;k x;k g tc rd fd ifjoknh dh ;k mifLFkr lkf{k;k dh (;fn dkb gk) èkkjk 200 d vèkhu 'kiFk ij ijh{kk ugh dj yh tkrh gA

(2) mièkkjk (1) d vèkhu fdlh tkp e ;fn eftLVV Bhd le>rk g rk lkf{k;k dk 'kiFk ij lk{; y ldrk g(

ijUrq ;fn eftLVV dk ;g çrhr gkrk g fd og vijkèk ft ldk ifjokn fd;k x;k g vuU; rhu l'ku U;k;ky; }kjk fopkj.kh; g rk ;g ifjoknh l viu lc lkf{k;k dk i'k dju dh vi{kk djxk vkj mudh 'kiFk ij ijh{kk djxkA

(3) ;fn mièkkjk (1) d vèkhu vUo"k.k fdlh ,l 0;fDr }kjk fd;k tkrk g tk ifyl vfèkdkjh ugh g rk ml vUo"k.k d fy, ml okj.V d fcuk fxj¶rkj dju dh 'kfDr d flok; ifyl Fkku d Hkkjlkèkd vfèkdkjh dk bl lfgrk }kjk çnÙk lHkh 'kfDr;k gkxhA

203. **ifjokn dk [kkfjt fd;k tkuk**–&;fn ifjoknh d vkj lkf{k;k d 'kiFk ij fd, x, dFku ij (;fn dkb gk)] vkj èkkjk 202 d vèkhu tkp ;k vUo"k.k d (;fn dkb gk) ifj.kke ij fopkj dju d i'pkr] eftLVV dh ;g jk; g fd dk;okgh dju d fy, i;kIr vkèkkj ugh g rk og ifjokn dk [kkfjt dj nxk vkj ,l çR;d ekey e og ,lk dju d viu dkj.kk dk l{ki e vfHkfyf[kr djxkA**

11. इस प्रकार, प्रक्रिया जिसे पूर्वोक्त प्रावधानों में अधिकथित किया गया है यह है कि (1) परिवाद पर संज्ञान लेने वाले दंडाधिकारी पर परिवाद की सत्यता के प्रति और किसी बिंदु के प्रति जिस पर वह मौन है अथवा जिस पर संदेह हो सकता है, स्वयं को संतुष्ट करने के लिए परिवादी और उसके उपस्थित गवाहों, यदि हो, का शपथ पर परीक्षण करना बाध्यकारी है। उद्देश्य यह परीक्षा लेना है कि क्या अभिकथन आदेशिका जारी करने के लिए उसको सक्षम बनाने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनाते हैं।

(2) यदि वह अविश्वास करने का प्रथम दृष्टया कारण नहीं पाता है और तथ्य विधि के अधीन अपराध गठित करते हैं, तुरन्त आदेशिका जारी करना बाध्यकारी है।

(3) यदि वह परिवादी पर बिल्कुल अविश्वास करता है अथवा यदि अपराध नहीं बनाया गया है, धारा 203 के अधीन परिवाद खारिज करना समान रूप से उसका कर्तव्य है।

(4) केवल तब जब उसका अविश्वास इस पर कार्रवाई करने के लिए पर्याप्त रूप से मजबूत नहीं है, उसे धारा 202 के अधीन आगे जाँच लंबित रहते हुए आदेशिका जारी करने को स्थगित रखने की छूट है। तब वह स्वयं जांच कर सकता है अथवा पुलिस अधिकारी द्वारा अथवा किसी निजी व्यक्ति द्वारा जिसे वह सुयोग्य समझता है अन्वेषण किए जाने का निर्देश दे सकता है।

12. इस प्रकार, यह पता चलता है कि यदि संज्ञान लिया जाता है, दंडाधिकारी पहले परिवादी और उसके उपस्थित गवाहों, यदि हो, का शपथ पर परीक्षण करने के लिए बाध्य है और तत्पश्चात वह

आदेशिका जारी कर सकता है यदि वह समझता है कि प्रथम दृष्टया मामला बनता है। इसी समय पर, यदि दंडाधिकारी समझता है कि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है, धारा 203 के अधीन परिवाद खारिज किया जा सकता है। तीसरा रास्ता धारा 202 के निबंधनानुसार स्वयं द्वारा जाँच अथवा पुलिस द्वारा अथवा किसी अन्य सुयोग्य व्यक्ति द्वारा अन्वेषण के लंबित रहते हुए आदेशिका जारी किए जाने को स्थगित करना है। किंतु किसी दिए गए मामले में, यदि दंडाधिकारी संज्ञान लिए बिना समझता है कि संहिता के अधीन विहित अन्य कार्रवाई करना समुचित होगा, उदाहरणस्वरुप पुलिस द्वारा अन्वेषण, वह धारा 156 (3) के निबंधनानुसार आदेश पारित कर सकता है किंतु किसी भी सूरत में दंडाधिकारी को संकर आदेश, अर्थात धारा 156 (3) के अधीन पारित आदेश और धारा 202 के अधीन पारित आदेश, पारित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

13. अत: निर्णायक बिंदु जिस पर इस मामले में विचार किया जाना है यह है कि क्या दंडाधिकारी ने धारा 156 (3) के निबंधनानुसार निगरानी पुलिस थाना के समक्ष परिवाद भेजने के लिए आदेश पारित करने के पहले अपराध का संज्ञान लिया था या नहीं?

14. इसे अभिनिश्चित करने के लिए मैं दिनांक 18.2.2013 और दिनांक 2.3.2013 के आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि विद्वान विशेष न्यायाधीश, निगरानी ने निगरानी विभाग द्वारा की गयी जाँच से संबंधित परिवाद में उल्लिखित तथ्य को ध्यान में लेकर मामले में आगे अग्रसर होने के पहले इस संबंध में रिपोर्ट प्राप्त करना समुचित समझा होगा और इसलिए, अपर पुलिस महानिदेशक, निगरानी से रिपोर्ट मंगाया होगा। जब रिपोर्ट उपलब्ध नहीं करायी गयी थी, रिमांइडर जारी किया गया था और उस रिमाइंडर के बावजूद जब कोई रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की गयी थी, विद्वान दंडाधिकारी ने दिनांक 20.3.2013 को आदेश पारित किया जिसे इस आवेदन में आक्षेपित किया गया है जिसके द्वारा परिवाद को इसके संस्थापन और अन्वेषण के लिए संबंधित पुलिस थाना भेजा गया था।

15. इस प्रकार, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि न्यायालय ने दिनांक 20.3.2013 का आदेश पारित करने के पहले अपराध का कोई संज्ञान कभी नहीं लिया था।

16. जहाँ तक याची की ओर से निर्दिष्ट मामले का संबंध है, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में वह प्रयोज्य नहीं है। उस मामले में, दंडाधिकारी को निर्देश इप्सित करते हुए आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन दाखिल किया गया था कि उन्हें आवेदन को राज्य के मामले के रूप में मानना होगा जिस प्रार्थना को यह संप्रेक्षण करने के बाद अस्वीकार कर दिया गया था कि उस संबंध के अधीन दंडाधिकारी में निहित शक्ति को यदि महत्तम सीमा तक खींचा जाता है, बाहरी परिधि यह हो सकती है कि दंडाधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के अधीन आवेदन को परिवाद मामले के रूप में मान सकता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 200 और 202 के अधीन साक्ष्य दर्ज करके परिवाद मामले की प्रक्रिया अपना सकता है और तब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 के अधीन अग्रसर हो सकता है और परिवाद खारिज कर सकता है यदि कोई अपराध नहीं बनता है अथवा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अधीन अभियुक्त को समन जारी कर सकता है जिसकी सह अपराधिता दंड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 200 और 202 के अधीन संचालित जाँच में सामने आती है।

17. इस प्रकार, मैं आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ और इसलिए, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

विजय कुमार जायसवाल

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP(S) No. 7355 of 2012. Decided on 6th August, 2013.

सेवा विधि–सेवानिवृत्ति लाभ–सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों और बकाया कतिपय सेवा लाभों का भी दावा–प्रत्यर्थी झारखंड राज्य पथ परिवहन विभाग का दृष्टिकोण है कि याची को केवल प्रथम कालबद्ध प्रोन्नति देय है जिसे तुरन्त अनुमोदित किया जाएगा–जहाँ तक द्वितीय कालबद्ध प्रोन्नति का संबंध है, इसका भुगतान वर्ष 1995 तक उन कर्मचारियों को किया गया है जिन्होंने 25 वर्ष की निरंतर सेवा को पूरा किया है किंतु याची का द्वितीय कालबद्ध प्रोन्नति वर्ष 2006 में देय हुई है–प्रत्यर्थीगण का दृष्टिकोण है कि पाँचवाँ और छठा केंद्रीय वेतन झारखंड राज्य पथ परिवहन विभाग पर प्रयोज्य नहीं है–याची के सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों के भुगतान से संबंधित अधिकतर शिकायतों को दूर कर दिया गया है–किंतु, वेतन अंतर के भुगतान और प्रथम कालबद्ध प्रोन्नति के क्रियान्वयन से उद्भूत होने वाले लाभ से संबंधित दो शिकायतों को यदि युक्तियुक्त समय के भीतर याची को प्रदान नहीं किया जाता है, उसे राज्य परिवहन विभाग, झारखंड सरकार और/अथवा प्रशासक, बिहार राज्य पथ परिवहन निगम, पटना के संबंधित प्राधिकारी के समक्ष मामला ले जाने की छूट होगी। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. D.C. Mishra, For the Petitioner; JC to GP-IV, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची को राज्य परिवहन विभाग, झारखंड सरकार के दुमका डिपो के अधीन कंडक्टर के पद से दिनांक 31 मार्च, 2012 को सेवानिवृत होता बताया जाता है। उसने अपने सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों और कतिपय सेवा लाभ के बकायों का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिए जाने के लिए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

3. प्रत्यर्थीगण ने अपने प्रतिशपथ पत्र में कथन किया है कि याची को अंशदायी भविष्य निधि के लिए दिनांक 15.12.2012 के चेक के माध्यम से 4,56,519/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया है जो प्रतिशपथ पत्र का परिशिष्ट A है। उपदान के लिए दिनांक 12.12.2012 के चेक के तहत, परिशिष्ट B, 1,39,965/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया है। दिनांक 31.8.2010 के चेक द्वारा 31, 266/- रुपयों के अनुपयोगित अर्जित अवकाश का भुगतान किया गया है और आगे दिनांक 12.12.2012 और दिनांक 22.12.2012 के चेक के तहत 76,812/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया है। जहाँ तक चतुर्थ वेतन पुनरीक्षण के अधीन मार्च, 1989 से जून, 1990 तक वेतन के बकाया के भुगतान का संबंध है, 4007/- रुपयों की राशि अर्थात् 16 माह के बकाया का भुगतान भी दिनांक 27.8.2009 के चेक परिशिष्ट–D द्वारा याची के खाते में किया गया है। दिनांक 30.8.2010 के चेक द्वारा बी॰ एस॰ आर॰ टी॰ सी॰ द्वारा वर्ष 1991-92 के लिए 640/- रुपयों के क्षेत्रीय तथा मेडिकल भत्ता का भुगतान किया गया है।

उन्होंने यह कथन भी किया है कि जुलाई, 1991 से दिसंबर, 1997 तक 10,384/- रुपयों के महंगाई भत्ता और दिनांक 1.1.1988 से दिनांक 30.4.2006 तक 1,07,045/- रुपयों एवं आगे 1.1.2006 से सितम्बर, 2007 तक 3371/- रु॰ का भुगतान प्रतिशपथ पत्र के पैरा 11 में उपदर्शित विभिन्न चेकों के माध्यम से किया गया है। अंतरिम अनुतोष के संबंध में, यह कथन किया गया है कि दिनांक 1.4.1994 से दिनांक 31.3.1998 की अवधि के लिए इसे याची के सी॰ पी॰ एफ॰ खाते में जमा किया गया है और आगे दिनांक 1.4.1998 से दिनांक 30.9.2007 की पश्चातवर्ती अवधि के लिए 41,376/- रुपयों का भुगतान भी दिनांक 13.3.2010 के चेक के माध्यम से किया गया है। उन्होंने यह कथन भी किया है कि दिनांक 1.7.2004 से उसकी सेवानिवृत्ति तक 6,309/- रुपयों की वार्षिक वेतन वृद्धि का भुगतान किया गया है और उक्त तिथि 1.7.2004 के पहले 2,752/- रुपयों की वार्षिक वेतन वृद्धि का भुगतान प्रक्रिया के अधीन है जिसका भुगतान बी॰ एस॰ आर॰ टी॰ सी॰ द्वारा किया जाना है। मार्च, 1988 से मार्च, 2001 तक की अवधि के लिए 38,154/- रुपयों के वेतन अंतर का भुगतान बी॰ एस॰ आर॰ टी॰ सी॰, पटना द्वारा किया जाना है और यह प्रक्रिया के अधीन है, जिसके लिए दिनांक 13.1.2011 के पत्र द्वारा उप मुख्य लेखा अधिकारी, बी॰ एस॰ आर॰ टी॰ सी॰, पटना को सूचित किया गया है और दिनांक 18.12.2012 को रिमाइंडर भी भेजा गया है। कालबद्ध प्रोन्नति के दावा के संबंध में प्रत्यर्थी झारखंड राज्य पथ परिवहन विभाग का दृष्टिकोण है कि याची को केवल प्रथम कालबद्ध प्रोन्नति देय है जिसे तुरन्त अनुमोदित किया जाएगा। जहाँ तक द्वितीय कालबद्ध प्रोन्नति का संबंध है, वर्ष 1995 तक इसका भुगतान उन कर्मचारियों को किया जा चुका है जिन्होंने 25 वर्षों की निरन्तर सेवा पूरा कर लिया है किंतु याची की द्वितीय कालबद्ध प्रोन्नति वर्ष 2006 में देय हुई। प्रत्यर्थीगण का दृष्टिकोण है कि पाँचवां और छठा केंद्रीय वेतन झारखंड राज्य पथ परिवहन विभाग पर प्रयोज्य नहीं है।

4. किसी प्रत्युत्तर को दाखिल करके याची द्वारा बयानों को विवादित नहीं किया जा रहा है। किंतु याची के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रथम कालबद्ध प्रोन्नति के प्रदान से उद्भूत भुगतान से संबंधित शिकायतों को और मार्च, 1988 से मार्च, 2001 तक की अवधि के लिए वेतन अंतर के भुगतान, जिसका भुगतान बी॰ एस॰ आर॰ टी॰ सी॰, पटना द्वारा किया जाना है, से संबंधित शिकायतों को प्रत्यर्थीगण द्वारा जल्द दूर किया जा सकता है।

5. इन तथ्यों और परिस्थितियों में, जिन्हें यहाँ उपर अपने प्रति शपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण की ओर से दिए गए बयानों के आधार पर दर्ज किया गया है, इस रिट याचिका को निपटाया जाता है क्योंकि याची के सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों से संबंधित अधिकतर शिकायतों को दूर कर दिया गया है। किंतु, मार्च, 1988 से मार्च, 2001 तक की अवधि के लिए वेतन अंतर के भुगतान से संबंधित दो शेष शिकायतों के लिए होने वाले प्रथम कालबद्ध प्रोन्नति के क्रियान्वयन से उद्भूत होने वाले लाभ के लिए यदि युक्तियुक्त समय के भीतर याची को प्रदान नहीं किया जाता है, उसे राज्य परिवहन विभाग, झारखंड सरकार और/अथवा प्रत्यर्थी सं॰ 3, प्रशासक, बिहार राज्य पथ परिवहन निगम, पटना के संबंधित प्राधिकारी के समक्ष मामले को ले जाने की छूट होगी। संबंधित सक्षम प्राधिकारी इस आदेश की प्रति के साथ ऐसे अभ्यावेदन की तिथि से प्राथमिकत: आठ सप्ताह के भीतर युक्तियुक्त समय के भीतर विधि के अनुरूप निर्णय लेंगे।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षण और निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

मुकेश डी॰ अंबानी उर्फ मुकेश अंबानी, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, रिलायंस इंडस्ट्रीज लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1215 of 2013. Decided on 19th June, 2013.

झारखंड कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 2000—धारा 48 सह-पठित नियम 98—लाइसेंस के बिना खुदरा बिक्री–संज्ञान–परिवाद में अभिकथन नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार था अथवा इसका प्रभारी था–कंपनी के निदेशक को केवल तब अभियोजित किया जा सकता है जब अभिकथन हो कि वह कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार है अथवा प्रभारी है–जहाँ तक याची का संबंध है, दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की गयी। (पैराएँ 8 से 12)

निर्णयज विधि.–(2010) 3 SCC 331—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Anil Kumar Sinha, Sanjay Kumar Dwivedi, Rakesh Kr. Singh, Mohan Kr. Dubey, For the Petitioner; Mr. H.P. Singh, For the State; M/s V.P. Singh, Mrinal Kanti Roy, For the A.P.M.C.

आदेश

यह आवेदन परिवाद केस सं॰ C-III-57 वर्ष 2013 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 22.2.2013 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, राँची ने याची एवं अन्य के विरुद्ध झारखंड कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम, 2000 की धारा 48 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है।

2. संक्षेप में अभियोजन का मामला यह है कि रिलायंस फ्रेश लिमिटेड जिसका राँची के बाजार क्षेत्र में अनेक आउटलेट है और जो झारखंड कृषि उत्पाद बाजार नियमावली के नियम 98 के अधीन प्रदान किए गए किसी लाइसेंस के बिना अपने प्रत्येक आउटलेट में व्यवसाय कर रहे हैं, यद्यपि नियमावली के मुताबिक कंपनी को अपना व्यवसाय चलाने के लिए प्रत्येक आउटलेट के लिए लाइसेंस की आवश्यकता है।

3. विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा के अनुसार कंपनी को अपने प्रत्येक आउटलेट के लिए लाइसेंस की आवश्यकता नहीं है किंतु वर्तमान में वह इस मामले पर जोर नहीं देंगे बल्कि संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि याची, जिसे प्रबंध निदेशक के रूप में वर्णित किया गया है, को कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार अथवा इसका प्रभारी होने के अभिकथन के बिना अभियोजित किया जा रहा है।

4. इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि यह याची रिलायंस फ्रेश लिमिटेड की कंपनी का प्रबंध निदेशक कभी नहीं हुआ करता था, बल्कि याची रिलायंस इंडस्ट्रीज लिमिटेड का अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक हुआ करता है, किंतु चूँकि अन्य पक्ष के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा इस तथ्य को विवादित किया जा रहा है, वर्तमान में वह इस बिंदु पर जोर नहीं देंगे कि याची रिलायंस फ्रेश लिमिटेड का निदेशक कभी नहीं हुआ करता है किंतु यह उपधारित करते हुए कि याची कंपनी का निदेशक है, फिर भी वह किसी अभिकथन की अनुपस्थिति में अभियोजित किए जाने का दायी नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक कार्यकलापों के प्रति जिम्मेदार था अथवा इसका प्रभारी था और केवल कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के

प्रति जिम्मेदार अथवा इसके प्रभारी व्यक्ति को प्रावधान, जैसा झारखंड कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम के स्पष्टीकरण 48 में अंतर्विष्ट है, के निबंधनानुसार, जो प्रावधान परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 में अंतर्विष्ट प्रावधान के समरुप है, अभियोजित किया जा सकता है।

5. उस प्रावधान को ध्यान में लेकर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि कंपनी के निदेशक को केवल तब परक्राम्य लिखत अधिनियम के अधीन अपराध के लिए अभियोजित किया जा सकता है जब अभिकथन हो कि निदेशक कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार है अथवा इसका प्रभारी है।

6. निवेदन के संदर्भ में, **राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम लिमिटेड बनाम हरमीत सिंह पेंटल एवं एक अन्य, (2010)3 SCC 331,** में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया गया है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है कि जब तक ऐसा अभिकथन नहीं हो कि निदेशक कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार था, उसे अभियोजित नहीं किया जा सकता है। इन परिस्थितियों के अधीन यह निवेदन किया गया था कि दिनांक 22.2.2013 का संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

7. इसके विरुद्ध, कृषि उत्पाद बाजार कमिटी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ पी॰ सिंह ने झारखंड कृषि उत्पाद बाजार अधिनियम की धारा 48 में अंतर्विष्ट प्रावधान को, विशेषत**:** इसके स्पष्टीकरण को, निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि प्रत्येक व्यक्ति अर्थात् कंपनी के निदेशक, कंपनी अथवा फर्म के प्रबंधक अथवा सचिव, अथवा फर्म अथवा कंपनी के प्रभारी को इस अधिनियम के अधीन अपराध की कारिता के लिए जिम्मेदार अभिनिर्धारित किया जा सकता है। उक्त प्रावधान कभी नहीं उपदर्शित करता है कि केवल उस व्यक्ति, जो कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार है अथवा इसका प्रभारी है, को अभियोजित किया जा सकता है।

8. पक्षों की ओर से किए गए निवेदन के संदर्भ में प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जैसा उक्त अधिनियम की धारा 48 में अंतर्विष्ट है जिसके हिंदी पाठ्य का पठन निम्नलिखित है:–

> *"48.* ***iukYVh-&,*** *lk dkb Hkh 0;fDr tk bl vf/kfu;e ;k bld v/khu tkjh fd, x, fu;ek] mi&fof/k;k ;k vkn'kk d fdlh mica/k dk mYy?ku djxk] og ,d o"k rd d dkjkokl ;k 1000 #i; rd d tekuk l ;k nkuk l nMuh; gkxk(*
>
> *ijUr U;k;ky; d Qly e vfHkfyf[kr fd, tk ldu oky i;klr çfrdy dkj.k ugh jgu ij ,lk dkjkokl ,d eghu l de ;k tekuk 500 #i; l de ugh gkxkA*
>
> *(2) ;fn dkb 0;fDr bl èkkjk d v/khu nk"kh fl) Bgjk, tku d ckn iu% bl vf/kfu;e] fu;ek vkj mifof/k;k d v/khu nk"kh fl) Bgjk;k tk, rk og nlj k vkj gjd vuorh vijk/k d fy, nk o"k rd d dkjkokl vkj 2000 #i, rd d tekuk l nMuh; gkxk%*
>
> *ijUr U;k;ky; d Qly e vfHkfyf[kr fd, tku ldu oky fojk/k vkj i;klr çfrdy dkj.k ugh jgu ij ,lk dkjkokl rhu eghu l de dk vkj tekuk 1000 #i, l de dk ugh gkxkA*
>
> ***Li"Vhdj.k-&(1)*** *;fn bl vf/kfu;e ;k bld v/khu cuk, x, fu;ek ;k mifu;ek dk mYy?ku djuokyk 0;fDr dkb diuh gk rk diuh d fun'kd] çcèkd ;k lfpo lfgr diuh ;k Qe dk çHkkjh ;k diuh ;k Qe d lpkyu d fy, mÙkjnk;h gjd 0;fDr bl mYy?ku dk nk"kh gkxk vkj rnulkj mld fo#) dkjokb fd, tku vkj nfMr fd, tku dk Hkkxh gkxkA*

*(2) ^^diuh** l vfHkçr g dkb fuxfer fudk; vkj ble dkb Qe ;k 0;fDr;k dk vU; lxe Hkh 'kkfey g] vkj*

*(3) Qe d lcèk e ^^fun'kd** l vfHkçr g (vkj ble 'kkfey gA Qe dk Hkkxhnkj A*

अंग्रेजी टेक्सट में उक्त प्रावधान का पठन निम्नलिखित है :–

"48. Any person who contravenes any provision of the Act or any rule or bye-laws or order issued thereunder shall be punishable with imprisonment for a term which may extend to one year and with a fine which may extend to Rs.1,000 or both.

Provided that in absence of adequate reason to the contrary to be rerecorded in the judgment of the court such imprisonment shall not be for a term of less than one month and a fine not less than a sum of Rs.500. Sub-section (2).- If any person is convicted under this section and is again convicted under the Act, Rules or Bye-laws then he shall be punishable for the second and every subsequent offence with an imprisonment for a term which may extend to two years and with fine of Rs.2000.

Provided that in absence of adequate reason to the contrary to be recorded in the judgment of the court such imprisonment shall be for a term less than three months and a fine of Rs.1000.

***Explanation.**—(1) If a person contravening any provision of the Act, Rules or Bye-laws thereunder, is a company, every person incharge of, and responsible to the company or firm for conduct of the business of the company or the firm including the Director, Manager or Secretary of the Company or firm shall be guilty for the contravention and shall be liable to be proceeded against and punished accordingly.*

(2) 'Company' means any body, corporate and includes a firm or other association of individuals; and

(3) 'Director' in relation to a firm, means and includes a partner of the firm.

9. विरोधी पक्षकार के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता के अनुसार, धारा 48, के स्पष्टीकरण का हिंदी पाठ अनुबंधित करता है कि कंपनी का प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह निदेशक, प्रबंधक अथवा सचिव हो, उत्तरदायी बन जाता है यदि अधिनियम अथवा नियमावली का उल्लंघन किया जाता है। किंतु उक्त प्रावधान के पठन पर, हिंदी और अंग्रेजी पाठ दोनों, कोई शायद ही उक्त प्रावधान के तात्पर्य में कोई भिन्नता पाएगा बल्कि प्रावधान का अर्थ एक ही है अर्थात् कंपनी का निदेशक, प्रबंधक अथवा सचिव, जो कोई भी दैनिक कार्यकलाप के लिए जिम्मेदार है, अपराध की कारिता के लिए जिम्मेदार होगा। अतः विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ पी॰ सिंह की ओर से दी गयी प्रतिपादना स्वीकार्य नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति अर्थात् कंपनी का निदेशक, प्रबंधक और सचिव जिम्मेदार होगा यदि अधिनियम अथवा नियमावली के किसी प्रावधान का उल्लंघन किया जाता है बल्कि इसके पठन से जो सामने आता है, वह यह है कि केवल वह व्यक्ति, चाहे वह निदेशक, प्रबंधक अथवा सचिव हो, जो कोई भी कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार है, अभियोजित किए जाने का दायी होगा।

10. यहाँ वर्तमान मामले में, परिवाद में ऐसा कोई भी अभिकथन नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक कार्यकलाप के प्रति जिम्मेदार था अथवा इसके प्रभार में था।

11. मामले के उस दृष्टिकोण में, याची के विरुद्ध कोई अभियोजन दोषपूर्ण होगा।

12. तद्नुसार, परिवाद केस सं॰ C-III-57 वर्ष 2013 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 22.2.2013 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है जहाँ तक इस याची का संबंध है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

रेव॰ बसन्त कुमार बरला

cuke

सिया शरण प्रसाद एवं अन्य

Civil Review No. 67 of 2012. Decided on 19th June, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 47 नियम 1—निर्णय का पुनर्विलोकन–पुनर्विलोकन आवेदन की पुरोभाव्य शर्त सम्यक तत्परता है जिसकी कमी है–कपट के संबंध में अभिकथन नया वाद हेतुक है और इसे प्रत्यर्थी को संसूचित किए जाने की आवश्यकता है–यह नहीं कहा जा सकता है कि वि॰ प॰ ने न्यायालय के साथ कपट किया और तात्विक तथ्य का दमन करके आदेश प्राप्त किया–ऐसे विलंबित चरण पर पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण नहीं किया जा सकता है क्योंकि पुनर्विलोकन के लिए मूल अवयव विद्यमान नहीं हैं–पुनर्विलोकन आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 14 एवं 15)

निर्णयज विधि.–AIR 1996 SC 689; (2004)2 SCC 105; (2006) 7 SCC 416—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Santosh Kumar Soni, A.K. Mahto, For the Petitioner; M/s A. Allam, Rajan Raj, Sunita Kumari, For the Opp. Parties.

आदेश

वर्तमान आवेदन ए॰ सी॰ (एस॰ बी॰) सं॰ 12 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 12.1.2012 के आदेश के पुनर्विलोकन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 47 नियम 1 के अधीन मुख्यत: इस आधार पर दाखिल किया गया है कि अपील की सुनवाई के समय पर न्यायालय के समक्ष अभिलेख पर कतिपय तात्विक तथ्यों को नहीं लाया जा सका था जिसका परिणाम घोर अन्याय में हुआ और, इसलिए, याची वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करके इस न्यायालय के समक्ष आने के लिए मजबूर हुआ है।

2. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची ने विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण के समक्ष दिनांक 7.2.2006 के अपने आदेश के तहत जिला शिक्षा अधीक्षक, राँची द्वारा पारित सेवा समाप्ति आदेश को चुनौती दिया और विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण द्वारा दिनांक 23.11.2006 के अपने आदेश द्वारा उक्त आदेश अभिखंडित और अपास्त कर दिया गया था।

3. उक्त आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर वर्तमान आवेदक अर्थात् विद्यालय प्रबंधन दिनांक 27.4.2007 को ए॰ सी॰ (एस॰ बी॰) सं॰ 12 वर्ष 2007 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया।

4. यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 26.6.2007 को राँची विश्वविद्यालय से प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर याची की सेवा को समाप्त करने का आदेश दिया गया था क्योंकि विश्वविद्यालय प्राधिकारियों ने पाया कि नियुक्ति प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत कपटपूर्ण दस्तावेजों के आधार पर की गयी थी और तद्नुसार प्रत्यर्थी को विद्यालय के प्रबंधन द्वारा दिनांक 6.10.2007 के अपने आदेश द्वारा सेवा से हटा दिया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्ष 1983 में नियोजन के समय पर प्रत्यर्थी द्वारा किए गए कपट के उक्त अभिकथन को सत्यापित करने की उक्त दृष्टि से मामले का पुनर्परीक्षण किया गया था और परीक्षा नियंत्रक, राँची विश्वविद्यालय ने दिनांक 9.7.2012 के पत्र सं॰ Ex/8092 द्वारा याची को सूचित किया कि प्रत्यर्थी के दस्तावेज को कूटरचित और नकली पाया गया है। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मामले में वास्तविक विवाद्यक के विनिश्चयकरण के लिए उक्त तथ्य अत्यंत महत्वपूर्ण था। किंतु अधिकरण के समक्ष कार्यवाही और इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान दुर्भाग्यवश संपूर्ण ध्यान सेवा समाप्ति के आदेश अर्थात् दिनांक 7.2.2006 के आदेश जो चुनौती के अधीन था पर केंद्रित था जिसके द्वारा जिला शिक्षा अधीक्षक, राँची द्वारा प्रत्यर्थी की सेवा की समाप्ति का आदेश मुख्यतः इस आधार पर दिया गया था कि स्थापन में कोई मंजूर पद नहीं है। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पुनर्विलोकन के संबंध में सिविल प्रक्रिया संहिता में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण किया जा सकता है यदि न्यायालय पाता है कि सम्यक तत्परता के प्रयोग के बाद साक्ष्य के लिए कतिपय महत्वपूर्ण मामले को आवेदक द्वारा उस समय पर प्रस्तुत नहीं किया जा सका था जब डिक्री पारित की गयी थी। इसके अतिरिक्त कुछ गलती अथवा अभिलेख पर प्रकट गलती के कारण अथवा किसी अन्य पर्याप्त कारण से मामले में पारित पूर्व आदेश का पुनर्विलोकन किया जा सकता है।

5. आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में पर्याप्त कारण है जिन पर अपने आदेश का पुनर्विलोकन करने के लिए न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है क्योंकि प्रत्यर्थी की आरंभिक नियुक्ति विपक्षी पक्षकार द्वारा कपट करके की गयी थी और, इसलिए, पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण किया जा सकता है यद्यपि पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करने में अयुक्तियुक्त विलंब हुआ है।

6. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने अपने आवेदन के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों को निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है:–

1. AIR 1996 SC 686;

2. (2004)2 SCC 105;

3. (2006)7 SCC 416.

7. उसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकारों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विरोधी पक्षकार की सेवा को दिनांक 7.2.2006 के आदेश द्वारा समाप्त करने का आदेश दिया गया था और उक्त आदेश को विरोधी पक्षकार द्वारा विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण के समक्ष चुनौती दी गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण के समक्ष कार्यवाही की विषय वस्तु चुनौती के अधीन दिनांक 7.2.2006 का आदेश था जिसके द्वारा विरोधी पक्षकार की सेवा स्थापन पर मंजूर पद की अनुपलब्धता के आधार पर समाप्त की गयी थी और उक्त आदेश में अभिकथन, जैसा वर्तमान आवेदन में अभिकथित किया गया है, कभी नहीं किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण ने दिनांक 23.11.2006 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा विरोधी पक्षकार द्वारा दाखिल

आवेदन अनुज्ञात किया और तद्द्वारा दिनांक 7.2.2006 का सेवा समाप्ति आदेश अभिखंडित और अपास्त कर दिया और तद्द्वारा पिछली मजदूरी के साथ सेवा में पुनर्बहाली का आदेश पारित किया।

8. उक्त निर्णय एवं आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर वर्तमान आवेदक ने इस न्यायालय के समक्ष ए॰ सी॰ (एस॰ बी॰) सं॰ 12 वर्ष 2007 दाखिल किया और इस न्यायालय ने दिनांक 12.1.2012 के अपने आदेश द्वारा उक्त अपील अस्वीकार कर दिया था।

9. यह निवेदन किया गया है कि विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण द्वारा पारित आदेश इस न्यायालय द्वारा संपुष्ट किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि विद्यालय प्रबंधन ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को क्रियान्वित नहीं किया है, प्रत्यर्थी अवमान कार्यवाही दाखिल करके इस न्यायालय के पास आने के लिए मजबूर हुआ है और अवमान कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान पुनर्विलोकन आवेदन विलंबित चरण पर दाखिल किया गया था, जिसमें पहली बार इस न्यायालय के समक्ष कतिपय नए तथ्यों को इंगित किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी पर कोई सेवा समाप्ति आदेश कभी नहीं तामील किया गया है जैसा वर्तमान आवेदन में आवेदक द्वारा अभिकथित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण और इस न्यायालय के समक्ष इसे इंगित करने के लिए आवेदक को पर्याप्त अवसर उपलब्ध था क्योंकि इस न्यायालय के समक्ष उनके द्वारा दाखिल अपील जनवरी, 2012 तक लंबित थी। यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 6.10.2007 का अभिकथित सेवा समाप्ति आदेश दिनांक 26.6.2007 को राँची विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर आधारित है और यह आवेदक की पूरी जानकारी में था। किंतु इस तथ्य को अपील कार्यवाही में माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं लाया जा सका था। आगे यह निवेदन किया गया है कि पुनर्विलोकन की गुंजाइश अत्यन्त सीमित है और पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण करने और अनुज्ञात करने के लिए आवश्यक अवयव वर्तमान आवेदन में विद्यमान नहीं है। प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने पुनर्विलोकन की गुंजाइश इंगित करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 47 नियम 1 में अंतर्विष्ट प्रावधान को भी निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि आवश्यक अवयवों में से कोई भी वर्तमान मामले में विद्यमान नहीं हैं।

10. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि मामला जिस पर वर्तमान आवेदक द्वारा विश्वास किया गया था, वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है क्योंकि वर्तमान मामले में विरोधी पक्षकार ने न्यायालय के साथ कपट नहीं किया है। सेवा समाप्ति आदेश, जिसे विरोधी पक्षकार पर तामील किया गया था, चुनौती के अधीन था। पश्चातवर्ती अभिकथित आदेश को विरोधी पक्षकार पर कभी नहीं तामील किया गया था और, इसलिए, विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण से आदेश प्राप्त करने में न्यायालय के साथ विरोधी पक्षकार द्वारा कपट करने का प्रश्न नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 23.11.2006 के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर वर्तमान आवेदक ने इस न्यायालय के समक्ष अपील दाखिल किया और, इसलिए, अपील करने के समय पर और अपील के लंबित रहने के दौरान इस तथ्य को इंगित करने के लिए आवेदक के पास पर्याप्त अवसर उपलब्ध था यदि यह तथ्य मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों के विनिश्चयकरण के लिए इतना प्रासंगिक था।

11. आगे यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के निष्पादन/क्रियान्वयन को विलंबित करने की दृष्टि से पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल किया गया है और, इसलिए, अवमान कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान आवेदक द्वारा दाखिल पुनर्विलोकन आवेदन को अस्वीकार किया जाय और इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को प्रभाव दिया जाय।

12. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन इस न्यायालय द्वारा दिनांक 12.1.2012

को पारित आदेश के पुनर्विलोकन के लिए दाखिल किया गया है। दिनांक 12.1.2012 के आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण द्वारा पारित दिनांक 23.11.2006 के आदेश से व्यथित होकर उस अपील को दाखिल किया गया था जिसके द्वारा जिला शिक्षा अधीक्षक द्वारा पारित दिनांक 7.2.2006 के सेवा समाप्ति आदेश को अभिखंडित और अपास्त कर दिया गया था और तद्द्वारा विरोधी पक्षकार की पुनर्बहाली का आदेश दिया गया था और समस्त पिछली मजदूरी को भी अनुज्ञात किया गया था। अत:, ए॰ सी॰ (एस॰ बी॰) 12 वर्ष 2007 में कार्यवाही में जाँच एवं न्याय निर्णयन की गुंजाइश विद्वान झारखंड शिक्षा अधिकरण द्वारा पारित दिनांक 23.11.2006 की विधिकता एवं वैधता के अधिमूल्यन तक सीमित थी। पुनर्विलोकन आवेदन में पहली बार आवेदकगण इस मामले के साथ आ रहे हैं कि वर्ष 1983 में विरोधी पक्षकार की आरंभिक नियुक्ति कपटपूर्ण दस्तावेज प्रस्तुत करके की गयी थी और यह तथ्य तब प्रकाश में आता प्रतीत होता है जब दिनांक 26.6.2007 को राँची विश्वविद्यालय द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था। यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही लंबित थी जब इस आदेश को पारित किया गया था और इसलिए, ऐसे प्रासंगिक एवं तात्विक तथ्य को उच्च न्यायालय के समक्ष इंगित करना आवेदक/अपीलार्थी का कर्तव्य था यदि ऐसा तथ्य मामले के लिए इतना महत्वपूर्ण और प्रासंगिक था।

13. पुनर्विलोकन आवेदन के परिशीलन पर और पुनर्विलोकन आवेदन सुने जाने के समय पर विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि ऐसे विलंबित चरण पर पुनर्विलोकन दाखिल करने में हुए विलंब को स्पष्ट करने के लिए कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण/औचित्य नहीं दिया गया है। आदेश 47 नियम 1 में अंतर्विष्ट प्रावधान पुनर्विलोकन आवेदन विनिश्चित करने के प्रयोजन से प्रासंगिक है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *1. **fu.k; d iufoykdu d fy, vkonu-**&(1) tk dkb 0;fDr&*
>
> *(a) fdlh ,lh fMØh ;k vkn'k l ftldh vihy vuKkr g fdUr ftldh dkb vihy ugh dh xb g]*
>
> *(b) fdlh ,lh fMØh ;k vkn'k l ftldh vihy vuKkr ugh g] vFkok*
>
> *(c) y?kokn U;k;ky; }kjk fd, x, fun'k ij fofu'p; l]*
>
> *viu dk 0;fFkr le>rk g vkj tk ,lh ub vkj egRoi.k ckr ;k lk{; d irk pyu l tk lE;d rRijrk d ç;kx d i'pkr ml le; tc fMØh ikfjr dh xb Fkh ;k vkn'k fd;k x;k Fkk] mld Kku e ugh Fkk ;k mld }kjk i'k ugh fd;k tk ldrk Fkk] ;k fdlh Hky ;k xyrh d dkj.k tk vfHky[k d n[ku l gh çdV gkrh gk ;k fdlh vU; i;klr dkj.k l og pkgrk g fd mld fo#) ikfjr fMØh ;k fd, x, vkn'k dk iufoykdu fd;k tk,] og ml U;k;ky; l fu.k; d iufoykdu d fy, vkonu dj ldxk ftlu og fMØh ikfjr dh Fkh ;k og vkn'k fd;k FkkA*

14. उक्त प्रावधान की दृष्टि में, यह प्रतीत होता है कि पुनर्विलोकन आवेदन के लिए महत्वपूर्ण अवयव/पुरोभाव्य शर्त सम्यक तत्परता है जो उक्त तथ्यों के आलोक में अभावग्रस्त प्रतीत होती है, क्योंकि आवेदक द्वारा संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। इसके अतिरिक्त, पुनर्विलोकन से संबंधित प्रावधान में अंतर्विष्ट अन्य आवश्यकता/अवयव के अनुसार वर्तमान आवेदक को पुनर्विलोकन का मामला बनाने की आवश्यकता है, किंतु दुर्भाग्यवश आवेदक पुनर्विलोकन के लिए ऐसा मामला बनाने में विफल रहा। मुख्य आधार, जिसे पुनर्विलोकन आवेदन के समय पर विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रचारित किया गया

है, नियोजन पाने के लिए विरोधी पक्षकार द्वारा किया गया कपट है जिसकी पुनर्विलोकन आवेदन ग्रहण करते हुए प्रासंगिकता नहीं है क्योंकि आवेदक के अनुसार उक्त आदेश दिनांक 6.10.2007 को पारित किया गया है जो राँची विश्वविद्यालय से प्राप्त रिपोर्ट पर आधारित है। किंतु कार्यवाही, जो इस न्यायालय के समक्ष लंबित थी, में आवेदक को उपलब्ध पर्याप्त अवसर के बावजूद उक्त आदेश को आज की तिथि तक अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, कपट के संबंध में अभिकथन नया वाद हेतुक है और उक्त आदेश को प्रत्यर्थी को संसूचित करने की आवश्यकता भी थी। प्रत्यर्थी को उक्त आदेश को उन आधारों जो विरोधी पक्षकार को उपलब्ध हैं, पर चुनौती देने का अवसर दिए जाने की आवश्यकता है। इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 12.1.2012 का आदेश जिला शिक्षा अधीक्षक द्वारा पारित दिनांक 7.2.2006 के सेवा समाप्ति आदेश तक सीमित था और, इसलिए, इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का पुनर्विलोकन करने का प्रश्न नहीं है। यह भी प्रतीत होता है कि वर्तमान पुनर्विलोकन आवेदन किया गया है जब प्रत्यर्थी (वर्तमान आवेदक) ने अवमान कार्यवाही में नोटिस प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त, राँची विश्वविद्यालय से प्राप्त रिपोर्ट और राँची विश्वविद्यालय द्वारा किए गए सत्यापन के बाद पारित आदेश के आधार पर पारित सेवा समाप्ति का अभिकथित आदेश विरोधी पक्षकार पर कभी नहीं तामील किया गया था। अत:, यह नहीं कहा जा सकता है कि विरोधी पक्षकार ने न्यायालय के साथ कपट किया और तात्विक तथ्य का दमन करके आदेश प्राप्त किया। वस्तुत:, विरोधी पक्षकार पर अभिकथित आदेश तामील करने के बाद समय के प्रासंगिक बिन्दु पर अभिलेख पर ऐसे तथ्य को लाने का भार आवेदक पर है। यह प्रतीत होता है कि आवेदक ऐसा करने में विफल रहा और इसलिए, अब ऐसे विलंबित चरण पर पुनर्विलोकन, याचिका ग्रहण नहीं की जा सकती है क्योंकि पुनर्विलोकन के लिए मूल/आवश्यक अवयव इस मामले में विद्यमान नहीं है।

15. उक्त चर्चा की दृष्टि में, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान मामले में पुनर्विलोकन के लिए अवयवों, जैसा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 47 नियम 1 के अधीन आवश्यक है, को संतुष्ट नहीं किया गया है। पुनर्विलोकन आवेदन में गुणागुण नहीं है। अत:, इसे खारिज करने का आदेश दिया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

cuke

देवाशीष गोस्वामी एवं अन्य

S.A. No. 192 of 2009. Decided on 27th August, 2013.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 22—बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950—धारा 6—खास कब्जा–वादीगण के हित पूर्वाधिकारी द्वारा कृषि प्रयोजन से उपयोगित और निहित किए जाने की तिथि पर प्रत्यक्ष कब्जा में धारण की गयी वाद भूमि को राज्य द्वारा उनके पक्ष में बंदोबस्त किया गया समझा जाता है और उनका दर्जा अधिभोग अधिकार के साथ रैयत का दर्जा बन जाता है–सिवाय धारा 22 के निबंधनानुसार पारित डिक्री के निष्पादन अधिभोगी रैयत को उसकी धृति से बेदखली से संरक्षित किया गया है–राज्य द्वारा सैरात के रूप में रैयती भूमि की एकपक्षीय घोषणा विधि के अधीन संरक्षित अधिभोगी रैयत के सांविधिक अधिकार को वापस नहीं ले सकती है/संक्षिप्त नहीं कर सकती है अथवा राज्य के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं कर सकती है–अपील खारिज की गयी। (पैराएँ 24 से 30)

अधिवक्तागण.–Mr. V.K. Prasad, For the Appellants; M/s Amar Kumar Sinha, K.K. Mishra, For the Respondents.

आदेश

यह अपील अपीलार्थी राज्य द्वारा दाखिल अभिधान अपील सं॰ 23 वर्ष 2005 में अपर जिला न्यायाधीश–III, हजारीबाग द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध है, जिसके द्वारा विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल अपील खारिज कर दिया है।

2. प्रत्यर्थीगण विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष वादीगण थे।

3. उन्होंने वाद भूमि के ऊपर अपने अधिकार, हक, हित और कब्जा में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादीगण को अवरुद्ध करने वाले स्थायी व्यादेश की डिक्री इप्सित करते हुए विद्वान मुंसिफ के न्यायालय, हजारीबाग में वाद दाखिल किया था।

4. वाद पत्र की अनुसूची A में वर्णित वाद भूमि गाँव रामगढ़, पी॰ एस॰ एवं जिला रामगढ़ की 2.30 एकड़ क्षेत्र वाली खाता सं॰ 309, भूखंड सं॰ 3272 से संबंधित भूमि थी।

5. वादीगण के अनुसार, वाद भूमि वादीगण के पूर्वजों के नाम में अभिलेख अधिकार सर्वेक्षण में बकस्त के रूप में दर्ज की गयी थी और यह उनके खास कब्जा में थी। बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 (इसमें इसके बाद 'उक्त अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) के प्रावधानों के अधीन जमीन्दारी के उन्मूलन पर वाद भूमि उनके खास कब्जा में बनी रही। वादीगण के पूर्वज उक्त अधिनियम की धारा 6 के प्रावधान के अधीन उक्त भूमि के रैयत बन गए। उक्त भूमि को बकस्त के रूप में दर्शाते हुए वादीगण के पूर्वजों द्वारा रिटर्न दाखिल किया गया था। तत्पश्चात् बुजारत बुलायी गयी थी और वादीगण के पूर्वजों को वाद भूमि के संबंध में रैयत के रूप में मान्यता दी गयी थी। जब रामगढ़–बोकारो–गोला पथ के चौड़ीकरण के प्रयोजन से अन्य भूमि के साथ वाद भूखंड की भूमि को अर्जित किया गया था, उन्हें हितबद्ध व्यक्ति पाया गया था और वाद भूमि के संबंध में मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया था और भूमि अर्जन केस सं॰ 27 वर्ष 1957-58 में उनको भुगतान किया गया था। चूँकि अधिनिर्णीत मुआवजा अपर्याप्त था, वादीगण के पूर्वज ने सक्षम न्यायालय में निर्देश दाखिल किया। इसे भूमि अर्जन निर्देश केस सं॰ 88/292 वर्ष 1964/64 के रूप में दर्ज किया गया था। राज्य द्वारा उक्त भूमि अर्जन निर्देश केस का प्रतिवाद किया गया था। निर्देश मामला वादीगण के पूर्वज के पक्ष में विनिश्चित किया गया था और मुआवजा राशि बढ़ायी गयी थी। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि अंचलाधिकारी–सह–प्रखंड विकास अधिकारी ने भूमि सुधार अधिनियम, 1950 के प्रावधानों के अधीन बुझारत लिया था जो केस सं॰ 118 वर्ष 1964-65 था। गाँव रामगढ़ के अन्य पारिवारिक भूमि के साथ वादीगण के पूर्वज अर्थात् बिमला नंद गोस्वामी के नाम में उक्त भूमि के लगान के निर्धारण के लिए संबंधित पक्षों को नोटिस जारी किया गया था। आवश्यक दस्तावेजों को दाखिल किया गया था और उनके द्वारा दाखिल रिटर्न के आलोक में तथ्यों को सत्यापित किया गया था। तत्पश्चात, अंचलाधिकारी एवं उच्चतर प्राधिकारियों से बार–बार किए गए अनुरोधों और उनको दिए गए अभ्यावेदनों के बावजूद उक्त मामले में कोई प्रगति नहीं हुई थी। वादीगण की भूमि के अंश को अन्य व्यक्तियों को बेचा गया था और अंचल कार्यालय में खरीददारों के नामों को सम्यक रूप से नामांतरित किया गया था।

भूमि के अंश के अर्जन के बाद वादीगण ने मार्च, 1987 में भूखंड सं॰ 3272 के शेष अंश को सुरक्षित करने के लिए चारदीवारी खड़ा करने का आशय रखा। किंतु अंचलाधिकारी और राज्य के अन्य पदधारियों ने वादीगण को रोका और जबरन वाद भूमि में घुसने का प्रयास किया। उक्त शत्रुता से व्यथित

होकर वादीगण ने रिट याचिका सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 290 वर्ष 1987 (R) दाखिल किया। प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए और कथन किया कि वे वादीगण की भूमि, जिसे अर्जित नहीं किया गया था, में प्रवेश नहीं करेंगे। उक्त वचन की दृष्टि में, रिट याचिका निपटायी गयी थी।

तत्पश्चात, वादीगण ने पश्चिमी हिस्से पर चार दीवारी खड़ा किया। जब वे आगे का निर्माण कार्य कर रहे थे, अंचलाधिकारी ने मजदूरों के साथ हलका कर्मचारी को भेजा और बलपूर्वक निर्मित चारदीवारी को भंजित कर दिया। तत्पश्चात, वादीगण ने सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 80 के अधीन प्रतिवादीगण को कब्जा सौंपने और प्रदान किए गए अन्य अनुतोष को देने के लिए कहते हुए उन पर नोटिस तामील किया। वादीगण ने वर्तमान वाद दाखिल किया।

6. प्रतिवादीगण ने लिखित कथन दाखिल करके वाद का प्रतिवाद किया। अन्य बातों के साथ यह प्रकथन किया गया था कि वाद पोषणीय नहीं था। यह परिसीमा की विधि, विबंध, अधित्यजन और उपमति द्वारा वर्जित है। यह विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम के प्रावधानों के अधीन भी वर्जित है और आवश्यक पक्ष के कुसंयोजन और असंयोजन के कारण दोषपूर्ण है। यह अभिकथित किया गया था कि वादीगण गाँव रामगढ़ के बंदोबस्त रैयत नहीं है जैसा दावा किया गया है। यद्यपि वाद भूमि वादीगण के पूर्वज अर्थात् भगवती चरण गोस्वामी के नाम में बकस्त भूमि के रूप में दर्ज की गयी थी, वादीगण के पूर्वज वाद भूमि के अपने खास कब्जा में बने नहीं रहे थे और उक्त अधिनियम के प्रावधान के अधीन उक्त भूमि को निहित किए जाने के बाद रैयती अधिकार अर्जित नहीं किया था। सनीचरा बाजार और वार्षिक मेला के लिए दशकों से और जमीन्दारी निहित किए जाने के पहले से वाद भूमि का उपयोग किया जा रहा है और इस प्रकार उक्त भूमि अधिनियम की धाराओं 7 (A) और 7 (B) के प्रावधानों के अधीन बिहार राज्य में निहित थी। समस्त अधिकार, हक और कब्जा राज्य में निहित था। किंतु, यह स्वीकार किया गया था कि वादीगण के पूर्वज ने वाद भूखंड सं॰ 3272 सहित अपनी भूमि के संबंध में रिटर्न दाखिल किया था और रामगढ़–बोकारो–गोला पथ चौड़ा करने के लिए सरकार द्वारा वाद भूखंड सं॰ 3272 के अंश के अर्जन के लिए उन्हें मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया था। किंतु, भूमि अर्जन उक्त अधिनियम के प्रावधान के अधीन वाद भूमि निहित किए जाने का दावा करने के लिए राज्य के विरुद्ध कोई विवंध सृजित नहीं करता है। वाद भूमि जो राज्य में निहित थी के संबंध में लगान के निर्धारण के लिए कार्यवाही मान्य नहीं थी। वादीगण किसी अनुतोष को पाने के हकदार नहीं हैं।

7. उक्त अभिवचनों के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने आठ विवाद्यकों को विरचित किया जो निम्नलिखित है:–

1. D;k okn ik"k.kh; g

2. D;k oknh d ikl okn d fy, okn grd g

3. D;k okn fcgkj Hkfe vfèkØe.k vfèkfu;e dh èkkjk 16 d vèkhu oftr g

4. D;k okn ifjlhek dh fofèk] fooèk miefr vkj vfèkR;tu }kjk oftr g

5. D;k okn lifÙk eY;kfdr dh x;h g vkj Hkxrku fd;k x;k U;k;ky; Qhl i;kIr g

6. D;k okn Hkfe fcgkj Hkfe lèkkj vfèkfu;e dh èkkjk 7A vkj 7B d çoru d QyLo#i fcgkj jkT; e fufgr dh x;h Fkh

7. D;k okn Hkfe d Hkkx dk vtu jkT; e okn Hkfe dk fufgr fd;k tkuk vfHkopfur dju d fy, fcgkj jkT; d fo#) fooèk lftr djrk g

8. oknhx.k fdl vurk"k vFkok vurk"kk] ;fn gk] d gdnkj g

8. दोनों पक्षों ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य दिया।

9. विद्वान विचारण न्यायालय ने पूरी चर्चा और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार और अधिनियम के प्रावधानों तथा अन्य विधिक प्रावधानों के अधिमूल्यन के बाद संप्रेक्षित किया कि वादीगण साक्ष्य देकर अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुए हैं। प्रतिवादीगण स्थापित नहीं कर सके थे कि निहित किए जाने के समय पर वाद भूमि पर कोई हाट, बाजार या वार्षिक मेला लगाया जाता था। प्रतिवादीगण ने अपने दावा के समर्थन में सैरात रजिस्टर लाया और इस पर भारी विश्वास किया। सैरात रजिस्टर, प्रदर्श A में प्रथम प्रविष्टि वर्ष 1963-64 की है। यह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है कि निहित किए जाने के समय पर वाद भूमि का उपयोग उक्त अभिकथित प्रयोजन से किया जाता था। विद्वान विचारण न्यायालय ने आगे संप्रेक्षित किया कि सैरात रजिस्टर प्रदर्श A भी संदेहों से घिरी है। इसे सक्षम गवाहों द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है। वाद भूखंड सं॰ 3272 अन्य वाद भूखंडों के साथ बाद में अंत: स्थापित किया गया प्रतीत होता है और कॉलम सं॰ 5 में लिप्त लेखन है जिसमें वर्ष 1963-64 उल्लिखित किया गया है।

10. विद्वान विचारण न्यायालय ने अन्य तथ्यों और साक्ष्यों पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया और अभिनिर्धारित किया कि वादीगण अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुए हैं जबकि प्रतिवादीगण यह स्थापित करने में विफल रहे कि वाद भूमि राज्य में निहित की गयी थी।

11. इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय ने निष्कर्षित किया कि वादीगण वाद भूमि के उपर अपना अधिकार, हक और कब्जा स्थापित करने में सफल हुए हैं और तद्नुसार, विवाद्यक सं॰ 6 और 7 तथा अन्य विवाद्यकों को वादीगण के पक्ष में विनिश्चित किया और वाद डिक्री किया।

12. प्रत्यर्थीगण ने विद्वान विचारण न्यायालय के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध जिला न्यायाधीश, हजारीबाग के न्यायालय में अपील टी॰ ए॰ सं॰ 23 वर्ष 2005 दाखिल किया।

13. अंतत: अपर जिला न्यायाधीश III, हजारीबाग द्वारा उक्त अपील सुनी और विनिश्चित की गयी थी।

14. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने पक्षों को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों एवं साक्ष्यों का संवीक्षण किया। उन्होंने समस्त विवाद्यकों पर विस्तारपूर्वक स्वतंत्र रूप से चर्चा और विचार किया और इस निष्कर्ष पर आए कि समय के किसी बिन्दु पर वाद भूमि पर कोई हाट, बाजार या मेला कभी नहीं लगाया जाता था। वाद भूमि कृषि भूमि बनी रही। भूमि अधिनियम की धारा 6 के अधीन ब्यावृत्त थी। वादीगण को मुआवजा के भुगतान पर राज्य द्वारा भूमि का भाग अर्जित किया गया था।

15. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्षों के साथ सहमत हुआ और अभिनिर्धारित किया कि वादीगण/प्रत्यर्थीगण के पास वैध अधिकार हक है और वे वाद भूमि के ऊपर वादीगण के अधिकार, हक और कब्जा में हस्तक्षेप करने से प्रतिवादीगण को अवरुद्ध करने के लिए उनके विरुद्ध स्थायी व्यादेश की डिक्री के हकदार हैं।

16. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील खारिज कर दिया।

17. इस द्वितीय अपील में प्रतिवादी-राज्य-अपीलार्थी ने मुख्यत: यह आधार लेते हुए उक्त निर्णय और डिक्री का विरोध इप्सित किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने और विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अधिनियम की धारा 4 और धाराओं 7 (A) और 7 (B) के भावार्थ तथा निहितार्थ का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया है और गलत रूप से तथा विधि की गलत धारणा पर अपने निर्णयों और डिक्रियों को पारित किया है। अत: अवर न्यायालयों के निर्णय और डिक्री असंपोषणीय हैं।

18. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता (एल॰ एन्ड सी॰) ने निवेदन किया कि अधिनियम की धारा 4 विनिर्दिष्टत: राज्य में संपदा और धृति निहित किए जाने के परिणामों के बारे में कहती है। ऐसी संपदा अथवा धृति के लगान के संग्रहण के लिए कार्यालय अथवा कचहरी के रूप में मुख्यत: उपयोगित किसी भवन में स्वत्वधारी अथवा भूधृतिधारक का हित और वृक्षों, वनों, मत्स्य, उद्योगों, जलकरों, हाटों, बाजारों (मेला) और फेरियों में हित और खानों एवं खनिजों के पट्टाधारी के ऐसे अधिकारों के साथ ज्ञात अथवा अज्ञात खानों और खनिजों में किसी अधिकार सहित समस्त अवमृदा में भूधृति धारक का हित सहित समस्त अन्य सैराती हित सहित निहित किए जाने के बाद धृति अथवा संपदा निहित किए जाने की तिथि के प्रभाव से समस्त विल्लंगमों से मुक्त पूर्णत: राज्य में निहित थी। ऐसे स्वत्वधारी अथवा भूधृति धारक के पास इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन अथवा अभिव्यक्त रूप से व्यावृत्त हितों के सिवाए ऐसी संपदा में कोई हित नहीं होगा।

19. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि सैरात रजिस्टर प्रदर्श A प्रस्तुत करके राज्य यह सिद्ध करने में सक्षम रहा है कि प्रश्नगत भूमि सैरात है और हाट तथा मेला लगाने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। उक्त साक्ष्य उक्त तथ्य को स्थापित करने के लिए पर्याप्त है और आगे किसी साक्ष्य की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि धाराओं 7, 7 (A) और 7 (B) के प्रावधान स्पष्टत: प्रावधानित करते हैं कि किसी भूमि, जिसका उपयोग राज्य में निहित करने की तिथि से एक वर्ष के भीतर किसी समय पर हाट अथवा बाजार लगाने के लिए किया जाता था, अधिनियम की धाराओं 5, 6 और 7 में किसी चीज को ऐसी भूमि के संबंध में मध्यवर्ती पर किसी अधिकार को प्रदत्त करता हुआ नहीं समझा जाएगा। उसकी दृष्टि में, भूतपूर्व भूस्वामी की बकस्त भूमि भी व्यावृत्त नहीं की जाती है और वह अधिनियम की धारा 6 के प्रावधानों के अधीन रैयत नहीं बन जाता है। उन्होंने प्रतिवाद किया कि विद्वान अवर न्यायालयों के विपरीत निष्कर्ष और निर्णय तथा डिक्रियाँ प्रदर्श A और उक्त अधिनियम के उक्त प्रावधानों पर विचार नहीं किए जाने के कारण दूषित हो गए हैं।

20. विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और प्रासंगिक प्रावधानों का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि उक्त प्रतिवाद सारहीन हैं।

21. यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वाद भूमि राज्य में निहित नहीं की गयी है और कि अपीलार्थीगण वादीगण अथवा उनके पूर्वजों की संपदा को निहित करने के समय पर अथवा इसके पहले हाट, बाजार अथवा मेला लगाने के लिए वाद भूमि के उपयोग के संबंध में अपना दावा स्थापित करने में पूरी तरह विफल रहे, दोनों अवर न्यायालयों के तथ्यों की समवर्ती निष्कर्ष की दृष्टि में वाद भूमि को राज्य द्वारा सैरात के रूप में माना नहीं जा सकता है।

22. विद्वान विचारण न्यायालय ने और विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने भी तथ्यों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर पूरी चर्चा के बाद समवर्ती रूप से पाया है कि निहित तिथि पर अथवा निहित किए जाने की तिथि के पूर्व वाद भूमि का उपयोग किसी हाट, बाजार अथवा मेला लगाने के लिए नहीं किया जाता था। उक्त भूमि वादीगण की 'बकस्त' भूमि थी और इसका उपयोग सदैव कृषि प्रयोजन से किया जाता था और यह निहित किए जाने की तिथि पर उनके खास कब्जा में बनी रही और इसे राज्य द्वारा उनको बंदोबस्त किया गया समझा जाए और वे उसका कब्जा अपने पास रखने और अधिनियम की धारा 6 (1) (b) के प्रावधान के अधीन रैयत के रूप में धारण करने के हकदार हैं।

23. उक्त अधिनियम की धारा 6 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"6.* ***eè;ofr;k d [kkl dCtk e dfri; vU; Hkfe dk vfèkHkkxh vfèkdkj j[ku oky j;rk d :i e yxku d Hkxrku ij mud }kjk viu ikl j[kk tkuk-*** *&(1) fufgr fd, tku dh frfFk ij vFkok bl frfFk l Ñf"k vFkok ckxokuh ç;ktu l mi;kfxr leLr Hkfe] tk ,l fufgr fd, tku dh frfFk ij eè;orh d [kkl dCtk e Fkh] lfgr*

(a) (i) fcgkj vfHkèkfr vfèkfu;e] 1885 (1885 dk 8) dh èkkjk 116 e fufn"V lky&nj&lky iVVk d vèkhu vFkok o"kk dh vofèk d fy, iVVk d vèkhu iVVk ij nh x;h LoRoèkkjh dh futh Hkfe]

(ii) NkVkukxij vfHkèkfr vfèkfu;e] 1908 (1908 dk cxky vfèkfu;e 6) e fufn"V ,d o"k d ij dh vofèk d fy, jftLVM iVVk d vèkhu vFkok ,d o"k vFkok de dh vofèk d fy, fyf[kr vFkok ekf[kd iVVk d vèkhu iVVk ij nh x;h HkLokeh dh fo'k"kkfèkdkj Hkfe(

(b) Ñf"k vFkok ckxokuh d fy, mi;kfxr vkj link vFkok Hkèkfr d vLFkk;h iVVkèkkjh d çR;{k dCtk e èkkj.k dh x;h vkj Lo; viu i'k }kjk vFkok Lo; viu lodk }kjk vFkok HkkM ij fy, x, Je vFkok HkkM ij fy, x, i'k }kjk Lo; }kjk [krh dh x;h Hkfe] vkj

(c) vfLrRo;Dr cèkd dk fo"k;oLr ftld ekpu ij eè;orh mldk [kkl dCtk iu% iku dk gdnkj g] fufer djr g, Ñf"k vFkok ckxokuh ç;ktu l mi;kfxr Hkfe

èkkjk 7A vkj 7B d çkoèkkuk d vè;èkhu jkT; }kjk ,l eè;orh dk cnkcLr dh x;h le>h tk,xh vkj og mldk dCtk viu ikl j[ku vkj ,l mfpr rFkk lkE;ki.k yxku ftl fofgr rjhd l dyDVj }kjk fofuf'pr fd;k tk ldrk g d Hkxrku d vè;èkhu ,lh Hkfe d lcèk e vfèkHkkxh vfèkdkj j[ku oky jkT; d vèkhu j;r d :i e mud }kjk èkkj.k dju dk gdnkj gkxkA

*ijUr ;g fd bl miènkjk e vrfo"V dN Hkh eè;orh dk fdlh ukdjkuk Hkfe vFkok pkdhnkjh pØ.k vFkok xkjrh tkxhj vFkok ekQh xkjrh tk vfèkdkj vfHky[k e igy gh fufgr fd, tku dh frfFk d io j;r dk çknHkr gb g dk dCtk viu ikl j[ku dk gdnkj ugh cuk,xkA**

24. धारा 6 के स्पष्ट प्रावधान, विशेषत: उपधारा (1) (b) की दृष्टि में वादीगण के हित पूर्वाधिकारी द्वारा कृषि प्रयोजन से उपयोगित और निहित किए जाने की तिथि पर प्रत्यक्ष कब्जा में धारण की गयी वादभूमि को राज्य द्वारा उनके पक्ष में बंदोबस्त किया गया समझा जाता है और उनका दर्जा अधिभोगी अधिकार वाले रैयत को दर्जा बन जाता है।

25. छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 22 के निबंधनानुसार पारित डिक्री के संपादन के सिवाए अधिभोगी रैयत को उसकी धृति से बेदखल करने से संरक्षित किया जाता है। राज्य के पास हाट अथवा मेला लगाने के लिए उक्त भूमि को बंदोबस्त करने का अधिकार नहीं है।

26. सैरात रजिस्टर प्रदर्श A, जिसे विद्वान अवर न्यायालयों द्वारा संदेहपूर्ण अभिनिर्धारित किया गया है यदि इसे वैध दस्तावेज के रूप में स्वीकार भी किया जाता है, का वादीगण के बहुमूल्य सांविधिक अधिकार को विफल करने का अध्यारोही प्रभाव बिल्कुल नहीं है।

27. राज्य द्वारा सैरात के रूप में रैयती भूमि की एक पक्षीय घोषणा विधि के अधीन संरक्षित अधिभोगी रैयत के सांविधिक अधिकार को वापस नहीं ले सकती है अथवा संक्षिप्त नहीं कर सकती है अथवा राज्य के पक्ष में अधिकार सृजित नहीं करती है।

28. चूँकि यह तथ्यों के दो विद्वान न्यायालय द्वारा समवर्ती रूप से पाया और अभिनिर्धारित किया गया है कि वाद भूमि के उपर हाट अथवा मेला नहीं लगाया जाता था, उक्त अधिनियम की धारा 7A अथवा 7B प्रयोज्य नहीं है।

29. उक्त चर्चा की दृष्टि में मैं इस द्वितीय अपील में इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित और विरचित किए जाने वाले विधि के किसी सारवान प्रश्न को उद्भूत करने वाले किसी आधार को बनाया गया नहीं पाता हूँ।

30. तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

चन्द्रवती देवी एवं अन्य

cuke

आनंद प्रकाश होन्डा एवं अन्य

M.A. No. 142 of 2013. Decided on 5th September, 2013.

मोटर यान अधिनियम, 1988–धारा 168–अधिनिर्णय–राशि का प्रभाजन अधिनिर्णित–केवल अधिनिर्णित राशि के वितरण की सीमा तक अधिकरण द्वारा अधिनिर्णय का पुनर्विलोकन किया गया है–उन सारे मुद्दों, जिन्हें पक्षकारों द्वारा उठाया गया है, का निर्णय करने के लिए मामला प्रतिप्रेषित। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajan Raj, For the Appellants; Mr. Yogesh Modi, For the Respondents.

आदेश

दावा केस सं॰ 1/2008 के संबंध में पारित दिनांक 29.5.2013 के आदेश के विरूद्ध वर्तमान विविध अपील दाखिल की गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन विद्वान अधिकरण ने एम॰ वी॰ दावा केस सं॰ 1/2008 के संबंध में अपने निष्कर्षों तथा उसके द्वारा पारित दिनांक 20 अक्टूबर, 2012 के अधिनिर्णय का पुनर्विलोकन किया है तथा मध्यक्षेपी एवं स्वर्गीय इंद्र लाल शर्मा की एक अन्य विवाहित पुत्री सोनी शर्मा, जो दावा मामले में पक्षकार नहीं थी, समेत सभी दावेदारों में समान हिस्सों में अधिनिर्णित राशि का वितरण करने का आदेश दिया है।

2. अपीलार्थीगण द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अधिकरण के पास दावा केस सं॰ 1/2008 दिनांक 20 अक्टूबर, 2012 के संबंध में उसके द्वारा पारित निर्णय तथा अधिनिर्णय की स्व:प्रेरणा पर पुनर्विलोकन की अधिकारिता नहीं है। चूँकि सोनी शर्मा विवाहित थी तथा वह अपने पति तथा ससुराल वालों के साथ पृथक रूप से जीवन यापन कर रही थीं, दावा मामले में उसे पक्षकार बनाना आवश्यक नहीं था क्योंकि वह अपने मृतक पिता पर आश्रित नहीं थी। इसी प्रकार द्रौपदी देवी स्वीकार्यत: मृतका की सौतेली माता है तथा वह हिन्दु उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार द्वितीय श्रेणी की वारिस मानी जायेगी। जब प्रथम श्रेणी के कानूनी वारिस मौजूद हैं, दूसरी श्रेणी के वारीस को पक्षकार बनाना आवश्यक नहीं था तथा वह मृतक इन्द्र लाल शर्मा की सम्पत्ति में किसी हिस्से की हकदार नहीं होगी, जो उसका सौतेला पुत्र था।

3. यह भी तर्क दिया गया है कि आदेश 1, नियम 10 के अधीन दाखिल याचिका पर विचार नहीं किया गया था तथा इसे अस्वीकार कर दिया गया था, जो आक्षेपित आदेश में ही प्रकट है और इसी प्रकार से अधिनिर्णित राशि में उसे हिस्सा आवंटित किया गया था।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दावेदारों ने बेदाग रहते हुए मामले का प्रतिवाद नहीं किया था एवं उन्होंने कुछ दस्तावेजों को पेश करके जालसाजी किया था जिनपर नाम दावेदार सीमा कुमारी का लिखा हुआ था परन्तु सोनी शर्मा का चित्र चिपका दिया गया था। मृतक की मृत्यु के समय उसकी दोनों पुत्रियाँ सोनी शर्मा एवं सीमा कुमारी विवाहित थीं तथा अतएव, दोनों पुत्रियों का दर्जा एक ही है। दावेदारों ने अपने पक्ष में अधिनिर्णय किये जाने के लिए उक्त तथ्य को भी छिपाया है।

5. विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया तथा इसे मेरी जानकारी में लाने का प्रयास किया कि मृतक इन्द्र लाल शर्मा स्वर्गीय महावीर शर्मा का पुत्र था एवं स्वर्गीय महावीर शर्मा सी॰ सी॰ एल॰ का एक कर्मचारी था जिसकी उसकी सेवा काल के दौरान मृत्यु हो गयी थी। अनुकम्पा के आधार पर मृतक इन्द्र लाल शर्मा को नौकरी मिली थी और वह भी अनुकम्पा के आधार पर नौकरी प्राप्त करते समय मध्यक्षेपी द्रौपदी देवी द्वारा प्रस्तुत ''अनापत्ति'' के आधार पर। मृतक ने द्रौपदी देवी समेत समूचे परिवार का भरण पोषण करने की जिम्मेदारी ली थी।

6. दोनों पक्षकारों की सुनवाई करके, मैं इसे वांछनीय समझता हूँ कि मामले को इन सारे मुद्दों, जिन्हें पक्षकारों द्वारा उठाया गया है, का निर्णय करने के लिए प्रतिप्रेषित किए जाने की आवश्यकता है। चूँकि न्यायालय ने इस निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए कार्य किया है कि मृतक इन्द्र लाल शर्मा, जिसकी एक सड़क दुर्घटना में मृत्यु हुई थी, के कानूनी प्रतिनिधि को कितनी राशि अधिनिर्णित की जानी है, मैं इसका कार्य को पुन: करने की आवश्यकता नहीं समझता हूँ। अतएव, आक्षेपित आदेश के कारण जो मुद्दे उत्पन्न हुए हैं उन्हें निपटाये जाने की आवश्यकता है। अब मेरे समक्ष स्वीकृत तथ्य यह है कि द्रौपदी देवी सौतेली माता है तथा सोनी शर्मा स्वर्गीय इन्द्र लाल शर्मा की विवाहित पुत्री है। उपरोक्त स्वीकृत तथ्य पर विचार करके, जिन मुद्दों से अधिकरण द्वारा निपटे जाने की आवश्यकता है, वो निम्नवत् हैं:–

(i) D;k iR;Fkh nkinh noh ,o lkuh 'kekf ftud i{k e fu.k; dk iufoykdu fd;k x;k gA mDr nkok dl l0 01@2008 e dkuuh ifrfufèk@vko';d i{kdkj g

(ii) vxj iR;Fkh l0 4 nkinh noh ,o lkuh 'kek dk mDr nkok ekey e Lo0 bUn yky 'kek dk dkuuh ifrfufèk ekuk tkrk g] rc vfèkfuf.kr jkf'k dk fdruk fgLlk mUg vkofVr fd;k tkuk g

7. दिनांक 29.5.2013 का आक्षेपित आदेश, जिसका स्वीकार्यत: 20 अक्टूबर, 2012 को एम॰ वी॰ दावा केस सं॰ 01/2008 में 20 अक्टूबर, 2012 को अधिकरण द्वारा पारित निर्णय तथा अधिनिर्णय के विरूद्ध पुनर्विलोकन किया गया था, एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है तथा अधिकरण को उपरोक्त निर्दिष्ट मामला निर्णित करने का निर्देश दिया जाता है।

8. यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अन्य निष्कर्ष, जो अधिकरण ने अधिनिर्णित राशि के निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए दिनांक 20.10.2012 के निर्णय तथा अधिनिर्णय में दिये हैं, उसी स्थिति में बने रहेंगे क्योंकि दिनांक 29.5.2013 का आक्षेपित आदेश केवल अधिनिर्णित राशि के वितरण की सीमा तक पारित किया गया है।

9. पक्षकारों को इस आदेश की तिथि से एक महीने के भीतर अधिकरण के समक्ष हाजिर होने का निर्देश दिया जाता है। वह उपरोक्त इंगित मुद्दों पर अपने अपने दावे के समर्थन में अपने दस्तावेज तथा साक्ष्य भी प्रस्तुत करेंगे जिसके लिए उन्हें तीन महीनों का समय दिया जाता है तथा अनुबद्ध समय के भीतर दोनों पक्षकारों की ओर से साक्ष्य के समापन पर, अधिकरण इसके बाद एक महीने के भीतर विधि के अनुसार मामले का निस्तारण करेगा।

10. यह अपील निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सत्येन्द्र नारायण कुँवर

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2851 of 2013. Decided on 31st August, 2013.

विद्यालय विधियाँ–नियुक्ति–सहायक शिक्षकगण–मूल्यांकन की प्रक्रिया में, अंक केवल शैक्षणिक अर्हताओं एवं साक्षात्कार के लिए कर्णांकित किए गए थे तथा शैक्षणिक अनुभव के लिए कोई अंक कर्णांकित नहीं किए गये थे–प्रत्यर्थीगण ने विज्ञापन के अधीन उपबंधित मापदंड का एकरूपता से अनुसरण किया है तथा अंकों के मूल्यांकन पर, मेधा सूची तैयार की गयी है–चयन कार्य में भाग लेकर तथा विफल होकर, याची अधिकथित मापदंड पर एकरूप तथा निष्पक्ष ढंग से संचालित चयन प्रक्रिया पर चुनौती नहीं दे सकता–रिट याचिका खारिज।

(पैरा 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Bhanu Kumar, For the Petitioners; Mr. Altaf Hussain, For the Respondent-State; Mr. Mukesh Kumar, For the Respondent Nos. 4 & 5.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची ने विज्ञापन संख्या 01/12 के अनुसरण में प्रत्यर्थीगण–नेतरहाट आवासीय विद्यालय के अधीन किये गये सहायक शिक्षकों के अंतिम चयन तथा नियुक्ति, जहाँ तक यह प्रत्यर्थी सं॰ 6 एवं 7 से संबंधित है, के अभिखंडन की ईप्सा किया है इस आधार पर कि याची का सेवाकाल प्रत्यर्थी सं॰ 6 से अधिक है तथा प्रत्यर्थी सं॰ 7, वस्तुतः, एक नव नियुक्त शिक्षक था।

3. उसका दावा इस आख्यापन पर भी आधारित है कि वह विज्ञापन में विहित सभी शैक्षणिक एवं प्रशिक्षण संबंधी अर्हताओं को पूरा करता है तथा उसका उत्कृष्ट शैक्षणिक अर्हताएँ हैं, जिनकी अन्य उम्मीदवारों के मुकाबिल उसकी उम्मीदवारी का आकलन करते हुए पूर्ण रूप से उपेक्षा की गयी है। याची का यह तर्क है कि वह प्रत्यर्थी विद्यालय में शुद्ध रूप से दैनिक वेतन के आधार पर 17.9.1990 से भौतिक विभाग में सहायक शिक्षक के हैसियत से कार्य करता रहा है तथा नेतरहाट आवासीय विद्यालय के प्राचार्य द्वारा निर्गत दिनांक 17.7.2012 के प्रमाण पत्र से भी यह स्पष्ट होगा, जिसे रिट याचिका के परिशिष्ट 14 श्रृंखला के तौर पर संलग्न किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि वह पूर्व में अन्य के साथ वर्ष 1997 में पटना उच्च न्यायालय के समक्ष गया था। उक्त अवसर पर, उसने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 261 वर्ष 1999 (आर॰) दाखिल किया था जहाँ मामला इस सम्परीक्षण के साथ निस्तारित किया गया था कि अगर अपीलार्थी, अर्थात, वर्तमान याची विज्ञापन, जिन्हें बी॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा प्रकाशित किया जाना था, के अधीन स्थायी नियुक्ति के लिए आवेदन करता है, प्रत्यर्थीगण स्थायी पद पर चयन के उद्देश्य के लिए उक्त विद्यालय में अपीलार्थी द्वारा दावा किए गए अनुभव पर विचार करेंगे। वह यह भी निवेदन करते हैं कि विज्ञापन, जिसे वर्ष 2012 में निर्गत किया गया है जो कि विज्ञापन 01/12, परिशिष्ट 12 है, में याची जैसे पदधारी, जो 15.12.2009 को या इसके पहले नेतरहाट आवासीय विद्यालय में संविदा/दैनिक वेतन के आधार पर शिक्षकों/अनुदेशकों/कर्मचारियों के पद पर बने रहे थे, विज्ञापित पदों के लिए आवेदन करने के पात्र होंगे तथा उन्हें अधिकतम आयु की सीमा से एक बार शिथिलीकरण प्रदान किया जायेगा, बशर्ते कि उन्हें अन्य सारे आधारों पर उपयुक्त पाया जाता है। याची का यह तर्क है कि याची के शैक्षणिक बिन्दुओं का मूल्यांकन करते समय उसकी उम्मीदवारी का दोषपूर्ण ढंग से उल्लंघन किया गया है। उसे बी॰ एड॰ अर्हता के परिणाम को त्यक्त करते हुए 54 अंक प्रदान किए गए हैं, जो उसने अन्नामलाई विश्वविद्यालय से प्राप्त किया है। याची के अनुसार, उक्त बी॰ एड॰ परीक्षा में, उसे लिखित परीक्षा में प्रथम श्रेणी तथा प्रायोगिक परीक्षा में द्वितीय श्रेणी प्रदान की गयी थी, परन्तु प्रत्यर्थीगण ने उसके शैक्षणिक अंकों का मूल्यांकन करते समय द्वितीय श्रेणी की अंकों के लिए बिन्दु प्रदान किए हैं। याची के विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि दैनिक वेतन भोगी शिक्षक के तौर पर आवासीय विद्यालय

में सेवाकाल के लम्बे अनुभव को प्रत्यर्थीगण द्वारा मेधा सूची तैयार करते समय ध्यान में लेना चाहिए था। उसे सतीश झा नामक व्यक्ति के नीचे मेधा सूची में क्रम सं॰ 3 पर रखा गया है, यह भी उक्त आवासीय विद्यालय में शिक्षक था और उसका सेवा काल कम था। इन परिस्थितियों में, आधिकारिक प्रत्यर्थीगण ने याची की उम्मीदवारी के मूल्यांकन में भेद भाव किया है। अतएव, प्रत्यर्थी सं॰ 6 की नियुक्ति अभिखंडित की जानी चाहिए तथा सूची में याची के अगला उम्मीदवार होने के नाते उसे उसके स्थान पर विद्यालय में नियुक्त किया जाना चाहिए क्योंकि उसका सेवा इतिहास अधिक लंबा है तथा शैक्षणिक अर्हताएँ उत्कृष्ट हैं।

4. प्रत्यर्थीगण ने अपनी ओर से निवेदन किया है कि याची ने विज्ञापन सं॰ 01/12 में सहायक शिक्षक के चयन में सजग रूप से भाग लिया है, जिसने आवासीय विद्यालय में शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए सुसंगत मापदंड विहित किया था। चयन सूची में भाग लेकर तथा विफल होने के उपरांत उसके लिए भर्त्ती प्रक्रिया में दुर्बलता अभिकथित करने का विकल्प नहीं खुला है क्योंकि उसने पूरी जानकारी तथा सजगता के साथ भाग लिया था। उक्त प्रतिशपथ-पत्र के पैरा 7 में किए गए कथन के आधार पर प्रत्यर्थीगण के विद्यान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि शैक्षणिक अर्हता के लिए 60 बिन्दु कर्णांकित किए गए थे, अर्थात, प्रवेशिका 12वीं, स्नातक, स्नाकोत्तर एवं बी॰ एड॰ से प्रारंभ करते हुए क्रमशः प्रथम श्रेणी के लिए 12 बिन्दु, द्वितीय श्रेणी के लिए 6 बिन्दु तथा तृतीय श्रेणी के शून्य बिन्दु कर्णांकित किए गए थे। वह निवेदन करते हैं कि याची की शैक्षणिक अर्हता को ध्यान में रखा गया है तथा बी॰ एड॰ परीक्षा में समग्र अंकों में, निर्विवाद रूप से वह द्वितीय श्रेणी में आया था जिसके लिए उसे केवल 6 बिन्दु प्रदान किए गए हैं। बी॰ एड॰ परीक्षा के उसके अंकों का उसकी लिखित तथा प्रायोगिक परीक्षा को अलग करके मूल्यांकन नहीं किया जा सकता था और अतएव, मूल्यांकन प्रक्रिया किसी दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है। वह यह भी निवेदन करते हैं कि विज्ञापन सं॰ 01/12 उक्त विद्यालय में अनुभव की गणना करना अनुबद्ध करता है, और यह भी उक्त विज्ञापन के अनुसार वांछित पात्रता मापदंड था। उक्त विद्यालय में याची तथा अन्य अनुभवी शिक्षकों के शैक्षणिक अनुभव को उक्त चयन परीक्षा में उनकी उम्मीदवारी पर विचार करते हुए ध्यान में रखा गया था, परन्तु अनुभव के लिए कोई पृथक अंक कर्णांकित नहीं किए गए थे, जैसा कि याची द्वारा दावा किया गया है। वह निवेदन करते हैं कि इन परिस्थितियों में भौतिकी के शिक्षकों की दो रिक्तियों के विरूद्ध उक्त विद्यालय में सहायक शिक्षक के पद के उम्मीदवारों की मेधा सूची तैयार की गयी थी जिसमें याची का नाम क्रम सं॰ तीन पर प्रतीत होता है तथा प्रत्यर्थीगण सं॰ 6 का नाम क्रम सं॰ 2 पर है क्योंकि उसे वर्तमान याची, जिसे 34 अंक मिले थे, की तुलना में साक्षात्कार में अधिक अंक, अर्थात, 35 अंक प्राप्त हुए थे। अतएव, कुल अंकों में, प्रत्यर्थी सं॰ 6 को 89 अंक प्राप्त हुए थे जबकि याची को 88 अंक प्राप्त हुए थे। वह यह भी निवेदन करते हैं कि उक्त कार्य में हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं बनता है क्योंकि उक्त चयन प्रक्रिया में याची द्वारा दुर्भावना का कोई मामला नहीं बनाया गया है। याची को वर्तमान रिट याचिका में कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि चयनित शिक्षकगण पहले ही योगदान दे चुके हैं तथा प्रत्यर्थीगण-विद्यालय में सेवा कर रहे हैं।

5. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का अवलोकन किया है। निर्विवाद रूप से याची प्रत्यर्थी नेतरहाट आवासीय विद्यालय में 17.9.1990 से शुद्धतः दैनिक वेतन के आधार पर सहायक शिक्षक के तौर पर कार्य कर रहा था। उक्त विज्ञापन सं॰ 01/12 में, ऐसे व्यक्तियों, जो उक्त विद्यालय में संविदा/दैनिक वेतन पर कार्य कर रहे थे, को उपरी आयुसीमा से एक बार का शिथिलिकरण प्रदान करके विज्ञापित पद के लिए आवेदन करने की अनुमति दी गयी थी, बशर्ते कि उन्हें अन्य सारे आधारों पर पात्र पाया जाता है। विज्ञापन के निबंधनों ने

यह भी इंगित किया था कि नेतरहाट आवासीय विद्यालय में उनके शैक्षणिक अनुभव/अन्य अनुभव की भी गणना की जायेगी क्योंकि उक्त विद्यालय में शिक्षकों/अनुदेशकों के तौर पर नियुक्ति के लिए अर्हताओं के निबंधनों में अपेक्षित शैक्षणिक अनुभव/अन्य अनुभव अधिकथित किया गया था। शैक्षणिक अर्हताएं उक्त विज्ञापन में ही दर्शायी गयी हैं तथा इसके अलावे स्तम्भ के दायीं ओर, अपेक्षित पात्रता अनुभव उच्च माध्यमिक/+2 आवासीय विद्यालय में शैक्षणिक अनुभव के तौर पर दर्शाया गया है। तथापि, यह स्पष्ट है कि मूल्यांकन की प्रक्रिया में, केवल शैक्षणिक अर्हताओं तथा साक्षात्कार के लिए अंक कर्णांकित किए गए थे एवं शैक्षणिक अनुभव के लिए कोई अंक कर्णांकित नहीं किए गये थे। प्रत्यर्थीगण ने एकरूपता के साथ विज्ञापन के अधीन उपबंधित माप-दंड का अनुसरण किया है तथा इसके उपरांत अंकों के मूल्यांकन पर, मेधा सूची तैयार की गयी है जिसमें याची भी क्रम सं॰ 3 पर आया है। जहाँ तक विद्यालय में याची द्वारा अर्जित अनुभव का सवाल है, एल॰ पी॰ सं॰ 261/99 (आर॰) दिनांक 3.11.1999 में किए गए सम्परीक्षण में इसे वर्तमान याची समेत ऐसे व्यक्तियों, जो संविदा/दैनिक वेतन के आधार पर विद्यालय में अध्यापन का कार्य कर रहे थे, के मामले पर विचार करते समय विज्ञापन सं॰ 01/12 में अन्तर्विष्ट अनुबद्धता की दृष्टि में विचार में रखा गया प्रतीत होता है। याची ने भी उन निबंधनों एवं शर्त्तों की पूरी जानकारी के साथ भर्ती प्रक्रिया में सजग रूप से भाग लिया है जिनके अधीन उक्त कार्य पूरा किया गया था। अतएव, चयन प्रक्रिया में भाग लेने तथा विफल होने के उपरांत, अधिकथित मापदंड पर एकरूप तथा निष्पक्ष ढंग से संचालित चयन प्रक्रिया को चुनौती देने का विकल्प उसके लिए अन्यथा खुला हुआ नहीं है। अतएव, याची वर्तमान रिट याचिका में हस्तक्षेप के लिए कोई मामला तैयार करने में विफल रहा है। तद्नुसार यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

कदन मांझी (67 में)

उदगा मांझी (68 में)

बुधेश्वर मांझी (69 में)

नागेन मांझी (70 में)

टुल्लु मांझी एवं एक अन्य (71 में)

पटल मांझी (72 में)

कुनाराम मांझी (73 में)

श्याम मांझी (74 में)

खुदीराम मांझी (75 में)

श्यामल मंझीयान (76 में)

सुकु मांझी (77 में)

मोहन मांझी (78 में)

गोपाल मांझी (79 में)

टोटी मंझीयान (80 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (सभी में)

F.A. Nos. 67 to 80 of 2009. Decided on 16th August, 2013.

भू-अर्जन अधिनियम, 1894–धारा 18–भूमि का अर्जन–अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल भू-अर्जन के मामले खारिज कर दिये गये थे तथा गवाहों के प्रस्तुत न किये जाने के कारण उनके पक्ष में प्रदत्त अधिनिर्णय सम्पुष्ट हो गये थे–निष्पक्ष विचारण भारत में न्यायिक प्रणाली का मूल तत्व है–न्याय के हित में, अपीलार्थीगण को विधि के न्यायालय के समक्ष अपनी व्यथाओं को रखने का अवसर दिया जाना चाहिए–आक्षेपित आदेश अपास्त–अपील अनुज्ञात।

(पैराएँ 3 से 7)

अधिवक्तागण.–M/s H.K. Mahto, Ahalya Mahto, For the Appellants; Mr. Shamim Akhtar, For the State.

आदेश

यह सारी अपीलें विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-II, सरायकेला-खरसांवा द्वारा भू-अर्जन केस॰ सं॰ 04/2005 से 17/2005 के संबंध में पारित दिनांक 25.2.2009 के सम्मिलित आदेश के विरूद्ध दाखिल की गयी हैं।

2. आक्षेपित आदेश इंगित करता है कि अपीलार्थीगण पर्याप्त अवसर मिलने के बाद भी साक्ष्य प्रस्तुत करने में विफल रहे थे और अतएव, अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल पूर्वोक्त भू-अर्जन मामले खारिज कर दिये गये थे तथा उनके पक्ष में प्रदत्त अधिनिर्णय सम्पुष्ट कर दिये गये थे।

3. यह निवेदन किया गया है कि केवल गवाहों को प्रस्तुत न किये जाने के कारण, आक्षेपित आदेश पारित किया गया था जो अत्यधिक त्रुटिपूर्ण, अवैधानिक तथा अपास्त किये जाने योग्य है। जिन अन्य पहलुओं को अपीलार्थीगण ने अवर न्यायालय के समक्ष उठाया था, उनपर ध्यान नहीं दिया गया है। विद्वान अवर न्यायालय ने दोषपूर्ण रूप से अभिलिखित किया है कि अपीलार्थीगण ने किसी अभ्यापत्ति के बिना अधिनिर्णय की राशि प्राप्त कर लिया था। उनके द्वारा दाखिल दस्तावेज स्पष्टत: इंगित कर रहे थे कि उन्होंने अभ्यापत्ति के साथ राशि प्राप्त की थी। न्याय के हितों के लिए यह वांछनीय है कि अपीलार्थीगण को अपना साक्ष्य प्रस्तुत करने तथा विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश, जो एक विचारण न्यायालय है, के समक्ष दस्तावेजों को प्रस्तुत करने तथा व्यथाओं को रखने का कम से कम सीमित अवसर दिया जा सकता है तथा अपीलीय न्यायालय के समान निर्णय करते हुए आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए था।

4. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अभ्यापत्ति किया है तथा तर्क दिया है कि विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-II ने उचित रूप से आक्षेपित आदेश पारित किया है जब कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था एवं अपीलार्थीगण विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-II के समक्ष अपनी व्यथाओं को सिद्ध करने में विफल रहे थे। वस्तुत:, अधिनिर्णय उनके द्वारा वगैर अभ्यापत्ति स्वीकार किया गया था तथा संदर्भ परिसीमा की अवधि के बाहर था। अतएव, कोई संदर्भ नहीं किया जा सकता था।

5. स्थिति चाहे जो भी हो, न्याय के हित में अपीलार्थीगण को उठायी गयी उनकी व्यथाओं को सिद्ध करने का अवसर दिया जाना चाहिए था। यह सही है कि उन्हें कुछ स्थगन प्रदान किए गये थे जिनका वे उन कारणों से इस्तेमाल नहीं कर सके थे जो उन्होंने चिन्हित किए थे। यह प्रकट है कि विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश-II ने इन आधारों को तर्कपूर्ण नहीं माना था और अतएव, आक्षेपित आदेश पारित कर दिया गया था। निष्पक्ष विचारण भारत में न्यायिक प्रणाली का मूल तत्व है तथा अतएव, व्यथित को विधि के न्यायालय के समक्ष अपनी व्यथा प्रस्तुत करने का उपयुक्त अवसर दिया जाना चाहिए।

6. इन पहलुओं पर विचार करके तथा न्याय के हित में भी, मैं दिनांक 25.2.2009 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करने के लिए उन्मुख अनुभव करता हूँ जिसके द्वारा एल॰ ए॰ केस सं॰ 04/2005 से 17/2005 खारिज कर दिये गये हैं, इस शर्त्त के साथ कि अपीलार्थीगण अगर न्यायालय के समक्ष इस आदेश की तिथि से तीन महीनों के भीतर साक्ष्य प्रस्तुत करेंगे तथा अपनी व्यथाओं एवं दस्तावेजों को प्रस्तुत

करेंगे जिसमें विफल होने पर अवर न्यायालय अपने समक्ष उपलब्ध सामग्री पर मामले का निस्तारण कर देने के लिए स्वतंत्र होगा तथा उपरोक्त यथा इंगित तीन महीनों से आगे कोई और समय अपीलार्थीगण को नहीं दिया जाएगा।

7. इन सम्परीक्षणों के साथ, ये सारी अपीलें अनुज्ञात की जाती हैं।

8. दोनों पक्षकारों के लिए अधिवक्ताओं की उपस्थिति में खुले न्यायालय में यह आदेश सुनाया गया है।

---

ekuuh; vkjî vkjî ilkn] U;k;efr

मयंक पी॰ त्रिवेदी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 701 of 2013. Decided on 12th September, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860–धारा 498A–दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961–धाराएँ 3/4–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 177, 178 एवं 482–दहेज अपराध–संज्ञान–न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता–अभियुक्त व्यक्तियों के झरिया आने, घर में प्रवेश करने तथा धमकाने के प्रभाव वाले बयान सुसंगत हैं– जो कुछ भी प्रकट कार्य कथित रूप से झरिया में कारित किया गया है, उसे अभियुक्त व्यक्तियों के हाथों परिवादी के साथ किये गये दुर्व्यवहार या अपमान से जोड़ा जा सकता है–वाद-हेतुक धनबाद में उद्भूत हुआ था–आक्षेपित आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं–आवेदन खारिज। (पैराएँ 23 से 29)

निर्णयज विधि.–AIR 1960 SC 113; (1973) 3 SCC 753; (2013) 2 SCC 435—Relied; (2004)8 SCC 100; (2006) 8 SCC 372; 2008 (3) JLJR (SC) 287; (2010) 4 JLJR 340; 2011 (2) JLJR 527; (2010) 1 JLJR 217—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioners; Mr. M.S. Mittal, For the O.P. No.2.

आदेश

दिनांक 12.9.2012 के आदेश समेत, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी याचीगण के विरूद्ध न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा अपराधों का संज्ञान लिया गया है, परिवाद केस सं॰ 1623 वर्ष 2012 की समूची दांडिक कार्यवाही इस आधार पर अभिखंडित करने की ईप्सा की गयी है कि इस न्यायालय ने संज्ञान लिया है उसके पास क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है।

2. पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत निवेदनों को निर्दिष्ट करने के पहले, परिवादी के मामले पर ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

3. परिवादी का मामला यह है कि परिवादी ने वर्ष 2002 में हितेष पी॰ त्रिवेदी (याची सं॰ 3) से विवाह करने के उपरांत बंगलोर में अपने ससुराल वालों के साथ रहना प्रारंभ कर दिया था। विवाह के कुछ दिनों के उपरांत, अभियुक्त व्यक्तियों ने उसे शारीरिक एवं मानसिक रूप से भी प्रताड़ित करना प्रारंभ कर दिया था तथा उसे प्राय: मारा पीटा भी जाता था। मांग पूरी न किये जाने के कारण क्रूरता बरते जाने के बावजूद, वह अपने ससुराल में इस आशा के साथ रह रही थी कि बुरे दिन समाप्त हो जायेंगे। कुछ

दिनों पहले जब उसके परिवार के सदस्य उसकी सास के श्राद्ध संस्कार के समय उसकी ससुराल आये थे, न केवल उसके पति बल्कि ससुर एवं सास ने भी उसे बुरी तरह मारा पीटा था। अभियुक्त व्यक्ति यह धमकी दिया करते थे कि जबतक मांग पूरी नहीं की जायगी वे उसे मारते पीटते रहेंगे। 30.3.2012 को न केवल उसे बुरी तरह मारा पीटा गया था बल्कि घर से बाहर भी निकाल दिया गया था। वह अपने माता–पिता के घर आ गयी थी। 12.7.2012 को सभी अभियुक्त व्यक्ति परिवादी को उपहति कारित करने की तैयारी करके परिवार के सदस्यों को घायल करने की धमकी देने के लिए घर आ गये थे। तथापि, जब संत्रास किया गया था, वे भाग गये थे। तद्द्वारा यह अभिकथित किया गया था कि अभियुक्त व्यक्तियों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498A, 452 के अधीन तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी अपराध कारित किया था।

4. ऐसे अभिकथन पर, एक परिवाद दर्ज किया गया था जिसे परिवाद केस सं॰ 1623 वर्ष 2012 के तौर पर पंजीकृत किया गया था जिसमें जांच आयोजित करने के उपरांत, अपराध का संज्ञान लिया गया था, दिनांक 12.9.2012 के आदेश से इसे चुनौती दी गयी थी।

5. संज्ञान लेने वाले आदेश को दी गयी चुनौती कई आधारों पर प्रतीत होती है, परन्तु वह आधार, जिसे संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित करने के लिए प्रस्तुत किया गया था, यह है कि सभी प्रकट कार्य अभिकथित रूप से अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा बंगलोर में कारित बताये गये हैं परन्तु मामला धनबाद में दर्ज किया गया था। अतएव, **वाई॰ अब्राहम अजीत बनाम आरक्षी निरीक्षक [(2004) 8 SCC 100], मनीष रतन एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं एक अन्य [(2006) 8 SCC 372]** के एक मामले में एवं **भूरा राम एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं एक अन्य** [2008 (3) JLJR (SC) 297] के मामले में भी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में संज्ञान लेने वाला आदेश दोषपूर्ण है।

6. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री पांडे नीरज राय ने यह भी निवेदन किया कि धनबाद के न्यायालय में अधिकारिता उत्पन्न करने के लिए परिवाद याचिका में झूठा कथन किया गया है कि सभी अभियुक्त व्यक्ति परिवादी को घायल करने की तैयारी करके धनबाद में परिवादी के माता–पिता के घर आये थे तथा गृह अतिचार किया था। यह बयान न तो परिवादी द्वारा सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर किये गये बयान से और न ही जांच के दौरान गवाहों द्वारा किये गये बयान से सम्पोषण पाता है क्योंकि परिवादी ने अपने बयान में इस संबंध में कथित किया है कि अभियुक्त व्यक्ति घर आये थे तथा यह धमकी दिया था कि अगर वह अपने पति के विरूद्ध मामला आगे जारी रखेगी, वे उसके बच्चे का अपहरण कर लेंगे, गवाह सं॰ 1 ने केवल धमकी देने के बारे में कथन किया है, जबकि गवाह सं॰ 2 ने कथित किया है कि उसे परिणाम भुगतना होगा अगर वह बच्चा अपने पति के हवाले नहीं करती है। अतएव, धनबाद में वाद हेतुक उत्पन्न होने के संबंध में परिवादी द्वारा किया गया बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के अधीन जांच के दौरान गवाहों द्वारा किये गये बयान से सम्पोषण नहीं पाता है, तब न्यायालय को धारा 202 में हाल ही में किये गये संशोधन की दृष्टि में अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिए अधिकारिता उपधारित नहीं करना चाहिए था, जो न्यायालय की अधिकारिता के बाहर निवास कर रहे हैं तथा परिणामतः, उन्हें अपराध का संज्ञान नहीं लेना चाहिए था।

7. यह भी निवेदन किया गया है कि धनबाद में वाद हेतुक उत्पन्न होने से संबंधित कोई भी बयान काल्पनिक प्रतीत होता है क्योंकि बंगलोर में निवास कर रहे अभियुक्त व्यक्तियों से धनबाद आना तथा अपराध कारित करना अपेक्षित नहीं है जैसा कि अभिकथित किया गया है। अतएव, न्यायालय को इसपर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए था कि वाद हेतुक उत्पन्न होने के संबंध में कोई बयान सत्य है या

असत्य है। चूँकि यह प्रकटत: झूठा प्रतीत होता है, न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करके संज्ञान नहीं लेना चाहिए था कि इसके पास अपराध का संज्ञान लेने की क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है, क्योंकि जो कोई भी वाद हेतुक उद्भूत हुआ था, यह बंगलोर में उद्भूत हुआ था।

8. विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **श्रीमती कमला देवी बनाम झारखंड राज्य** [2010(4) JLJR 340] के एक मामले में तथा **मो॰ नौशाद आलम बनाम झारखंड राज्य** [2011(2) JLJR 527] के एक मामले में तथा **संतोष सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य** [2010(1) JLJR 217] के एक मामले में भी दिये गये निर्णयों को निर्दिष्ट किया है।

9. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि न्यायालय ने उपरोक्त कथित कारण से स्वयं अधिकारिता धारण करके अपराध का संज्ञान लेने में अवैधानिकता कारित की थी एवं तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किये जाने योग्य हैं।

10. इसके विरूद्ध, विपक्षी सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री एम॰ एस॰ मित्तल निवेदन करते हैं कि याचीगण की ओर ये यह कहना बिल्कुल गलत है कि धनबाद में कभी भी कोई वाद हेतुक उद्भूत नहीं हुआ था क्योंकि धनबाद में अतिचार के अपराध से संबंधित सुस्पष्ट बयान दिया गया है। अतिचार का अपराध कारित होने से संबंधित बयान जांच के दौरान परीक्षित गवाहों के बयान से समर्थन पाता है। ये संभव है कि गवाहों में कुछ बिन्दुओं पर भिन्नता हो, परन्तु गवाहों के बयान से, यह प्रतीत होगा कि अभियुक्त व्यक्तियों ने धनबाद में गृह अतिचार का अपराध/दांडिक अतिचार कारित किया था और तद्द्वारा न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लेने में कोई अवैधानिकता कारित नहीं किया था क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन एवं दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3/4 के अधीन भी अपराध आकर्षित करने वाले सभी आवश्यक घटक वहाँ उपस्थित हैं।

11. मामले में आगे कार्यवाही करने के पहले यह कथित किया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 190 के अधीन, एक दंडाधिकारी एक परिवाद प्राप्त करने पर या एक पुलिस रिपोर्ट पर या अन्यथा सूचना प्राप्त होने पर अपराध का संज्ञान ले सकता है। जहाँ उसके समक्ष एक परिवाद प्रस्तुत किया जाता है, उसके लिए परिवादी एवं उसके गवाह की परीक्षा करना आवश्यक होता है तथा वह एक आदेशिका निर्गत कर सकता है। तथापि, दंडाधिकारी अभिलिखित किये जाने वाले कारणों से मामला स्थगित करता है तथा मामले में स्वयं जांच कर सकता है या पुलिस पदाधिकारी द्वारा या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जिसे वह उपयुक्त समझता हो, अन्वेषण किये जाने का निर्देश दे सकता है यह निर्णित करने के उद्देश्य के लिए कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। उक्त जाँच परिवाद के सत्य या असत्य होने को अभिनिश्चित करने के उद्देश्य के लिए होती है, अर्थात्, यह अभिनिश्चित करने के लिए कि परिवाद के समर्थन में साक्ष्य है या नहीं जिससे कि संबद्ध व्यक्ति के विरूद्ध आदेशिका के निर्गत किये जाने तथा कार्यवाही के प्रारंभ किये जाने को न्यायसंगत ठहराया जा सके।

12. धारा 203 यह भी विहित करती है कि अगर कार्यवाही के लिए कोई पर्याप्त आधार नहीं है, न्यायालय धारा 203 के अधीन परिवाद खारिज कर सकता है।

13. यह धाराओं 200, 202 एवं 203 में यथा अंतर्विष्ट प्रावधानों का संचयी उद्देश्य है जो **बाडीलाल पांचाल बनाम दत्ता दूलाजी घाडीगाओंकार एवं एक अन्य [AIR 1960 SC 113]** के एक मामले में अधिकथित किया गया है।

14. बाद में, **निर्मलजीत सिंह हूण बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य [(1973) 3 SCC 753]** के एक मामले में समरूप दृष्टिकोण दोहराया गया था।

15. इसके काफी बाद संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा वर्ष 2005 में धारा 202 में एक संशोधन किया गया था, धारा 202 का संशोधित प्रावधान निम्नवत् पठित है:–

> *^^202- **vknf'kdk d fuxeu dk LFkxu-**&(1) dkb nMkfèkdkjh] ml vijkèk] ftldk lKku yu e og ikfèkÑr g] dh ,d f'kdk;r ikIr gku ij ;k tk èkkjk 192 d vèkhu bl lkik x;k g] vxj og mi;Dr le>rk g] vfHk;Dr d fo:) vknf'kdk dk fuxeu LFkfxr dj ldrk g] [vkj] ml n'kk e tgk vfHk;Dr ml {k= l ckgj fdlh {k= e fuokl djrk g tgk og viu vfèkdkfjrk dk bLreky djrk g] vknf'kdk dk fuxeu LFkfxr djxk] vkj ;k rk Lo; ekey dh tkp djxk ;k fdlh ifyl inkfèkdkjh }kjk ;k fdlh ,l 0;fDr] ftl og mi;Dr le>rk gk] }kjk vUo"k.k fd; tku dk fun'k nxk] bldk fu.k; dju d mí'; d fy, fd dk;okgh dju d fy, i;kIr vkèkkj g ;k ughA --------------------------------***

16. जो संशोधित प्रावधान विहित करता है वह यह है कि अभियुक्त दंडाधिकारी की क्षेत्रीय अधिकारिता के बाहर किसी क्षेत्र में निवास करता है, तब मामला स्थगित कर देना दंडाधिकारी के लिए बाध्यकर होगा ताकि वह मामले की स्वयं जांच कर सके या किसी पुलिस पदाधिकारी द्वारा अन्वेषण किये जाने का निर्देश दे सके केवल यह पता लगाने के उद्देश्य के लिए कि ऐसे मामलों में सम्मन निर्गत करने के पहले अभियुक्त के विरूद्ध कार्यवाही करने हेतु पर्याप्त आधार है या नहीं।

17. उदय शंकर अवस्थी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं एक अन्य [(2013) 2 SCC 435] के एक मामले में न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया है कि वर्ष 2005 में किए गए संशोधन के उपरांत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202(1) के कारण दंडाधिकारी के लिए उस दशा में आदेशिका का निर्गमन स्थगित करना आज्ञापक बन गया है जहाँ अभियुक्त संबद्ध दंडाधिकारी की क्षेत्रीय अधिकारिता के बाहर किसी क्षेत्र में निवास करता है।

18. यहाँ प्रस्तुत मामले में, मुद्दा यह नहीं है कि दंडाधिकारी ने जाँच आयोजित करने के लिए आदेशिका का निर्गमन स्थगित किये बिना अपराध का संज्ञान लिया है, बल्कि अवर न्यायालय के आदेश पत्रकों, जिन्हें संलग्न किया गया है, के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर परिवादी का बयान अभिलिखित करने के उपरांत मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 के अधीन जांच के लिए निर्धारित किया गया था जहाँ परिवादी की ओर से दो गवाह परीक्षित किये गये थे और तद्द्वारा इस मामले में आज्ञापक प्रावधानों का अनुपालन किया गया प्रतीत होता है।

19. तथापि, जो मुद्दा उठाया गया है वह यह है कि जबतक कि परिवाद में कथन या सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर किया गया कथन धारा 202 के अधीन परीक्षित गवाहों द्वारा किये गये कथन से सम्पोषित नहीं हो जाता है न्यायालय के लिए आदेशिका निर्गत करना न्यायसंगत नहीं होगा, विशेषकर तब जब अभियुक्त व्यक्ति अधिकारिता के बाहर निवास करते हैं।

20. इस संदर्भ में, धनबाद में वाद हेतुक उत्पन्न होने के संबंध में किये गये बयान पर पुन: ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। परिवादी ने पैरा 10 में अपनी परिवाद याचिका में कथन किया है कि 12.7.2007 को 8.30 बजे अपराह्न में सभी अभियुक्त व्यक्तियों ने परिवादी को चोट पहुँचाने के लिए तथा उसे दोषपूर्ण रूप से रोकने की भी तैयारी करके गृह अतिचार कारित किया था। तथापि, उसने सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर किये गये अपने बयान में कथित किया है कि अभियुक्त व्यक्ति उसके घर आये थे तथा परिवादी का बच्चा छीन कर ले जाने की धमकी दी थी, अगर वह मामले में कार्यवाही जारी रखेगी।

इसी समय, सी॰ डब्ल्यू॰ 1, जिसे धारा 202 के अधीन जाँच के दौरान परीक्षित किया गया था, ने कथित किया है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने झरिया में धमकी दी थी जबकि सी॰ डब्ल्यू॰ 2 ने कथित किया है कि अभियुक्त व्यक्ति आये थे तथा बच्चा उसके पति के हवाले कर देने के लिए धमकी दी थी, अन्यथा उसे गंभीर परिणाम भुगतने होंगे। नि:संदेह ये सारे बयान एक दूसरे के साथ सुसंगत प्रतीत नहीं होते हैं परन्तु असंगतता धमकी दिये जाने के तथ्य पर प्रतीत होती है परन्तु इस बिन्दु पर कोई असंगतता प्रतीत नहीं होती है कि अभियुक्त व्यक्ति आये थे, घर में प्रवेश किया था तथा धमकी दिया था। अतएव, अधिकारिता से संबंधित मुद्दे का निर्णय करने के उद्देश्य के लिए, कोई इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता है यद्यपि आरोप को खंडित करने के लिए विचारण के दौरान यह अभियुक्त व्यक्तियों को उपलब्ध हो सकता है।

21. यहाँ यह उल्लिखित करना समुचित होगा कि न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 452 के अधीन अपराध का संज्ञान नहीं लिया है, परन्तु यह क्षेत्रीय अधिकारिता से संबंधित मुद्दे को कदाचित ही प्रभावित करेगा क्योंकि मुद्दे का निर्णय करने के लिए इस संबंध में देखा जाना है कि क्या उस स्थान पर कोई वाद हेतुक उत्पन्न हुआ था जहाँ परिवाद दाखिल किया गया था।

22. याचीगण की ओर से जो और निवेदन प्रस्तुत किया गया है वह यह है कि धनबाद में वाद हेतुक उत्पन्न होने के संबंध में जो कुछ भी कथन किया गया है, वह काल्पनिक है और जब कभी भी इसे काल्पनिक पाया जाएगा ऐसा बयान उस स्थान पर वाद हेतुक उत्पन्न नहीं कर सकता है और यही उपरोक्त निर्दिष्ट मामलों, **संतोष सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य (ऊपर), श्रीमती कमला देवी बनाम झारखंड राज्य (ऊपर)** में तथा **मो॰ नौशाद आलम बनाम झारखंड राज्य के मामले (ऊपर)** में भी अभिनिर्धारित किया गया है।

23. नि:संदेह यह सही है कि न्यायाधीशों ने ऐसा अभिनिर्धारित किया है परन्तु यह मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में अभिनिर्धारित किया गया है। **संतोष सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य के मामले (ऊपर)** में, न्यायालय ने परिवादी को दूरभाष पर धमकी दिये जाने के कारण वाद हेतुक उद्भूत होने के संबंध में इस कारणवश बयान पर अविश्वास किया था कि परिवाद में किया गया कथन कभी भी न तो परिवादी द्वारा अपने सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान में और न ही गवाह द्वारा समर्थित किया गया है। इसके अतिरिक्त न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया था कि परिवादी ने वर्ष 2000 में घर छोड़ दिया था जबकि धमकी कथित रूप से वर्ष 2004 में दी गयी है। ऐसी स्थिति में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इसका कोई कारण प्रतीत नहीं होता है कि अभियुक्त ने दूरभाष पर धमकी दी होगी।

24. इसी प्रकार न्यायालय ने **श्रीमती कमला देवी बनाम झारखंड राज्य के मामले (ऊपर)** में, वाद हेतुक के उद्भूत होने से संबंधित बयान पर इस कारण अविश्वास किया था कि पति-पत्नी के बीच संबंधों के खराब हो जाने के दस महीनों के उपरान्त अभियुक्तों की ओर से धमकी दिये जाने का कोई वैध कारण प्रतीत नहीं होता है। इसके अलावा, वाद हेतुक से संबंधित उन बयानों को बिल्कुल अस्पष्ट पाया गया था।

25. इसी प्रकार, न्यायालय ने **मोहम्मद नौशाद आलम बनाम झारखंड राज्य (ऊपर)** के एक मामले में उस स्थान, जहाँ परिवाद दाखिल किया गया था, पर वाद हेतुक के उद्भूत होने से संबंधित बयान पर अविश्वास किया था इस कारणवश कि परिवाद में किया गया बयान कभी भी अपने सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर परिवादी द्वारा सिद्ध नहीं किया गया था।

26. पूर्वोक्त मामलों के तथ्यों के विपरीत, अभियुक्त व्यक्तियों के झरिया आने, घर में प्रवेश करने, धमकी देने के प्रभाव वाले बयान सुसंगत हैं। इसके अतिरिक्त इसे ध्यान में रखा जाये कि अलग होने के केवल चार महीनों के उपरांत, अभियुक्त व्यक्ति कथित रूप से परिवादी के घर आये थे तथा अभिकथित रूप से घर में प्रवेश करके धमकी दिया था उस कारणवश जिसे भिन्न रूप से प्रस्तुत किया गया था जिसे कम से कम इस चरण में त्यक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि तथ्यों तथा परिस्थितियों में, यह अंतर्निहित रूप से अनधिसम्भाव्य प्रतीत नहीं होता है, यद्यपि विचारण के दौरान इसे खंडित किया जा सकता है। एक अन्य दृष्टिकोण से देखने पर, यह कथित किया जाता है कि जो कुछ भी प्रकट कार्य झरिया में कारित किया गया है, उसे उस दुर्व्यवहार या अपमान से जोड़ा जा सकता है जो आसानी से अभियुक्त व्यक्ति के हाथों परिवादी के साथ बरती गयी क्रूरता मानी जा सकती है और तद्द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 178(c) में यथा अंतर्विष्ट प्रावधान के कारण वाद हेतुक धनबाद में उद्भूत होता है।

27. तद्नुसार, मैं याचीगण की ओर से प्रस्तुत निवेदनों में कोई गुण नहीं पाता हूँ।

28. परिणामतः, मैं संज्ञान लेने वाले आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं पाता हूँ।

29. इस प्रकार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राजू तूरी

cuke

सेन्ट्रल कोलफिल्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 1309 of 2012. Decided on 5th August, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकम्पा पर नियुक्ति–दावा इस आधार पर अस्वीकृत कि सेवा के अभिलेख मृतक कर्मचारी के आश्रित पुत्र के तौर पर याची का नाम नहीं दर्शाते हैं–प्रत्यर्थीगण याची की अनुकम्पा पर नियुक्ति के उद्देश्य के लिए याची की माता द्वारा संलग्न दस्तावेजों एवं सामग्रियों की अनदेखी करने में औचित्य पर नहीं है–प्रत्यर्थी को याची के आवेदन पर यथोचित निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Petitioner; Mr. A.K. Das, For the Respondents.

आदेश

पक्षकारों के अधिवक्ताओं को सुना।

2. याची के पिता की कथित रूप से सेन्ट्रल कोलफिल्ड्स लिमिटेड की गिड्डी–'सी०' खान में डम्पर परिचालक कोटि–1 के तौर पर सेवारत रहते 27.1.2011 को मृत्यु हो गयी थी। उसकी माता ने सेवा में रहते हुए याची के पिता की मृत्यु के कारण उसकी अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए 27.7.2011 को परिशिष्ट 2 के माध्यम से एक आवेदन किया था। परिशिष्ट 3, दिनांक 5.8.2011 के माध्यम से कार्मिक प्रबंधक, गिड्डी–'सी०' खान ने याची की माता को सूचित किया था कि प्रत्यर्थीगण द्वारा तैयार किये गये तथा उनके कार्यालय में रखे गये सेवा इतिहास 8.6.1986 की स्थितिनुसार मृतक कर्मचारी के आश्रित

पुत्र के तौर पर याची का नाम नहीं दशाते हैं। तथापि, याची की माता द्वारा परिशिष्ट 5 के माध्यम से इसका जवाब दिया गया था जिसने उसकी जन्म तिथि 3.5.1992 तथा मृतक कर्मचारी बलदेव तूरी का नाम उसके पिता के तौर पर दर्शाते हुए झारखंड शैक्षणिक परिषद् द्वारा निर्गत याची का अंक पत्र विवरण संलग्न किया था। उसने यह भी कथित किया कि 1986 के उपरांत मृतक कर्मचारी बलदेव तूरी के साथ विवाह बंधन से चार संतान उत्पन्न हुई थीं तथा याची सबसे बड़ा पुत्र होने तथा 19 वर्ष का होने के कारण ऐसी नियुक्ति के लिए विचार किये जाने हेतु उपयुक्त है। उक्त आवेदन के साथ संलग्न अन्य परिशिष्ट भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा निर्गत मतदाता पहचान पत्र हैं जो उसकी आयु 19 वर्ष तथा पिता का नाम बलदेव तूरी दर्शाते हैं, अनुज्ञप्ति प्राधिकार के कार्यालय द्वारा निर्गत राशन कार्ड, चूरचू प्रखण्ड के बी॰ डी॰ ओ॰ द्वारा निर्गत जाति प्रमाण पत्र, चूरचू प्रखण्ड के ही बी॰ डी॰ ओ॰ द्वारा निर्गत दिनांक 28.5.2007 का आय प्रमाण पत्र, मतदाता सूची तथा उसकी माता के परिवार के सदस्यों के संबंध में निर्गत दिनांक 23.8.2011 के प्रमाण पत्र हैं। तथापि, याची की अनुकम्पा पर नियुक्ति के दावे के मामले में प्रत्यर्थीगण द्वारा इन दस्तावेजों को विचार में नहीं लिया गया है।

3. प्रत्यर्थीगण ने अपने प्रतिशपथ पत्र में प्रबंधक, कार्मिक, गिड्डी–'सी' खान द्वारा परिशिष्ट 3 में लिये गये ही पक्ष पर बल दिया है जो प्रतिशपथ पत्र से परिशिष्ट C के तौर पर भी संलग्न है। उन्होंने यह मुद्दा भी उठाया है कि मामला औद्योगिक विवाद से संबंधित है जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन सृजित मंच के अध्यधीन है। इन आधारों पर याची के मामले पर विचार नहीं किया गया है।

4. अतएव, पक्षकारों के अधिवक्ताओं की सुनवाई करके, यह प्रतीत होता है कि सेन्ट्रल कोलफिल्ड्स लिमिटेड की गिड्डी–'सी' खान में याची के पिता बलदेव तूरी, डम्पर परिचालक कोटि–1 की मृत्यु के कारण अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए उसके मामले पर मात्र इस आधार पर विचार नहीं किया गया है कि 8.6.1986 को तैयार किये गये सेवा अभिलेखों में याची का नाम नहीं है यद्यपि तीनों पुत्रियों समेत परिवार के सदस्यों के नाम वहाँ दर्शाये गये हैं। दिनांक 5.8.2011 की संसूचना के उपरान्त याची की माता ने ऐसी सारी सुसंगत सामग्रियों एवं प्रमाण पत्रों को संलग्न करके जवाब दिया था जो दर्शाते हैं कि 1986 के बाद उसने चार संतानों को जन्म दिया था तथा याची उनमें से एक है जिसकी आयु 19 वर्ष है। अन्य प्रमाण पत्र भी संलग्न किये गये हैं जिनका बलदेव तूरी की मृत्यु पर याची की नियुक्ति से संबंधित निर्णय पर तात्विक प्रभाव पड़ता है। अतएव, याची की अनुकंपा पर नियुक्ति के उद्देश्य के लिए याची की माता द्वारा संलग्न दस्तावेजों एवं सामग्रियों की अनदेखी करने में प्रत्यर्थीगण औचित्य पर नहीं हैं।

5. ऐसी परिस्थितियों में, स्वर्गीय बलदेव तूरी, जिसकी सेन्ट्रल कोलफिल्ड्स लिमिटेड की गिड्डी–'सी' खान में डम्पर परिचालक, कोटि–1 के तौर पर कार्य करते हुए 27.1.2011 को सेवारत रहते हुए मृत्यु हो गयी थी, की मृत्यु के कारण अनुकम्पा पर नियुक्ति के लिए याची/याची की माता के आवेदन पर उन सारी सामग्रियों, जिन्हें याची की ओर से मृतक कर्मचारी के साथ पुत्र का संबंध दर्शाते हुए पेश किया गया है, को ध्यान में रखकर यथोचित निर्णय लेने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 3 महाप्रबंधक (कार्मिक एवं औद्योगिक संबंध), सेन्ट्रल कोलफिल्ड्स लिमिटेड, दरभंगा हाऊस, राँची को निर्देश देकर रिट याचिका का निस्तारण किया जाता है। इस आदेश की प्रतिलिपि की प्राप्ति की तिथि से बारह सप्ताहों की अवधि के भीतर उक्त निर्णय लिया जाए।

6. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका निस्तारित की जाती है। आई॰ ए॰ सं॰ 4776 वर्ष 2013 भी निस्तारित किया जाता है।

ekuuh; vkjî vkjî ilkn] U;k;efr

संजय सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 105 of 2013. Decided on 9th September, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226–दांडिक अभियोजन–रोका जाना–जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ में वित्तीय अनियमितताएँ–जहाँ नियंत्रक एवं महालेखाकार द्वारा उठायी गयी अभ्यापत्ति से संबंधित मामला किसी अपराधिता का चरित्र रखने वाली किसी वित्तीय अनियमितता से संबंधित है, यह लोक लेखा समिति के अनन्य अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं आएगा–यह दं॰ प्र॰ सं॰ की योजना के अधीन सामान्य विधि द्वारा संचालित होगा–निगरानी ने अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा कारित कई वित्तीय अनियमितताएँ पायी है–प्राथमिकी अभिखंडित नहीं की जा सकती है–दांडिक रिट आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–2011 (4) PLJR 887—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajeev Sinha, For the Petitioner; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

जो आग्रह इस आवेदन में प्रारंभ में किया गया था, वह झारखंड विधान सभा की लोक लेखा समिति के विचाराधीन जाँच रिपोर्ट आने तक याची को दांडिक रूप से अभियोजित करने से प्राधिकार को रोकने वाले परमादेश का एक रिट निर्गत करने के लिए है। बाद में, याची में अन्य के विरूद्ध दर्ज प्राथमिकी को भी अभिखंडित करने की ईप्सा की गयी थी।

2. याची के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव सिन्हा ने दिनांक 31.3.2009 की अपनी रिपोर्ट में झारखंड नवीकरणीय उर्जा विकास (जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰) के कार्यकलाप के संबंध में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सी॰ ए॰ जी॰) ने कतिपय अभ्यापत्तियाँ उठायी थी। मामला लोक लेखा समिति के समक्ष आया था, जिसमें सी॰ ए॰ जी॰ द्वारा एवं वित्त विभाग की अंकेक्षण रिपोर्ट में भी उठायी गयी अभ्यापत्तियों से संबंधित मामले पर विचार किया था। जब लोक लेखा समिति के समक्ष मामला विचाराधीन था, सरकार ने लोक लेखा समिति को संसूचित किया था कि सी॰ ए॰ जी॰ एवं वित्त विभाग द्वारा उठायी गयी अभ्यापत्ति की भी निगरानी द्वारा जाँच किए जाने की आवश्यकता है, जिसके रिपोर्ट लोक लेखा समिति के समक्ष प्रस्तुत की जाएगी। तद्नुसार, निगरानी आयुक्त ने जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ द्वारा कारित अवैधानिकता, वित्तीय अनियमितता में जाँच संचालित करने के लिए तथा सरकार को रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए महानिदेशक, निगरानी को लिखा था। लोक लेखा समिति ने मामले में अपनी आगे की कार्यवाही रोक दी थी जब उसे निगरानी विभाग द्वारा आश्वस्त किया गया था कि सी॰ ए॰ जी॰ द्वारा उठायी गयी अभ्यापत्तियों से संबंधित जाँच तीन महीनों के भीतर पूरी कर ली जाएगी। वर्षों तक, निगरानी ने मामले में कुछ नहीं किया था। इस दौरान, एक लोक हित याचिका दाखिल की गयी थी, जिसमें इस न्यायालय ने 10.2.2012 को एक आदेश पारित किया था जिसके आधार पर निगरानी ने यथा पूर्वोक्त जाँच से

संबंधित मामले में अपनी गति बढ़ायी थी। तदुपरांत, याची ने नवम्बर, 2005 से 10 अप्रील, 2006 तक एवं दिसंबर, 2008 से सितम्बर, 2009 तक निदेशक, जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ के तौर पर अपने कार्यकलाप से संबंधित कतिपय पहलूओं का स्पष्टीकरण देने हेतु उसे अवसर प्रदान करने के लिए आरक्षी अधीक्षक, मंत्रिमंडल निगरानी विभाग को लिखा था। परन्तु, याची को हतप्रभ करते हुए, निगरानी ने जाँच रिपोर्ट सौंप दी थी, जिसे उक्त लोक हित याचिका में दाखित प्रतिशपथ पत्र का हिस्सा बनाया गया था, जिसके द्वारा याची को मालूम हुआ था कि निगरानी याची के विरूद्ध एक प्राथमिकी दर्ज करने का इरादा कर रहा है। बाद में, एक प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जब यह आवेदन विचारण के लिए लंबित था और, अतएव, अंतर्वर्ती आवेदन के माध्यम से, प्राथमिकी को भी अभिखंडित करने की ईप्सा की गयी है, क्योंकि निगरानी केस दर्ज नहीं कर सकता है जब मामला लोक लेखा समिति के समक्ष विचाराधीन था विशेषकर तब जब सरकार ने वादा किया था कि निगरानी की रिपोर्ट लोक लेखा समिति के समक्ष रखी जाएगी।

इस संबंध में, यह भी निवेदन किया गया था कि सी॰ ए॰ जी॰ ने झारखंड नवीकरणीय उर्जा विकास (जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰) के कार्यकलाप पर कतिपय अभ्यापत्तियाँ उठायी थी। यह रिपोर्ट झारखंड विधान सभा के समक्ष रखी गयी थी तथा फिर इसे लोक लेखा समिति को निर्दिष्ट कर दिया गया था। जब मामला लोक लेखा समिति के समक्ष विचाराधीन था, सरकार ने लोक लेखा समिति को सूचना दिया था कि वित्तीय अनियमितताओं के संबंध में उठायी गयी अभ्यापत्तियों से संबंधित मामले की जाँच निगरानी विभाग द्वारा कराये जाने का सरकार का इरादा है। निगरानी ने जाँच संचालित करने के उपरांत सरकार को रिपोर्ट देने और फिर सरकार द्वारा पी॰ ए॰ सी॰ को भेजने के स्थान पर स्वयं प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कर दिया था, जो संवैधानिक प्रावधान का अतिलंघन है। इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि चूँकि सी॰ ए॰ जी॰ रिपोर्ट विधायिका की अनन्य संपत्ति होती है, विधायिका के अधीन इसके विचाराधीन रहने तक न्यायपालिका समेत प्राधिकारों में से किसी के भी द्वारा कोई हस्तक्षेप विधायिका के प्राधिकार के उल्लंघन के तुल्य होगा और, इस प्रकार, यह कभी भी अनुज्ञेय नहीं होगा विशेष कर तब जब यह संविधान के अधीन यथा अभिकल्पित शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन कर रहा होगा।

इस संबंध में, श्री सिन्हा कथित करते हैं कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 208 के अधीन राज्य का एक विधान मंडल अपनी प्रक्रिया को विनियमित करने तथा अपने कार्य कलाप को संचालित करने के लिए नियमों को बनाने में सशक्त होता है। इस शक्ति के इस्तेमाल में, झारखंड राज्य विधान सभा ने नियमावली बनायी है जिसे झारखंड विधान सभा में प्रक्रिया एवं कार्यकलाप संचालन नियमावली के तौर पर जाना जाता है। सरकारी खर्च पर वित्तीय नियंत्रण रखने के लिए, विधान सभा ने पी॰ ए॰ सी॰ का गठन किया है तथा सूची–II की प्रविष्टि 39 में निर्दिष्ट सारी शक्तियाँ लोक लेखा समिति को प्रदान कर दी गयी हैं। नियम 238 राज्य के विनियोग लेखों तथा वित्तीय लेखों एवं ऐसे लेखों से संबंधित नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के रिपोर्ट की संविक्षा से संबंधित मामले में लोक लेखा समिति के दायित्वों को अनुबद्ध करती हैं। और अधिक विनिर्दिष्ट होते हुए समिति को निम्नांकित मामलों पर अपने आप को समाधान कराने की आवश्यकता होती है:–

(i) fd foèkku lHkk }kjk vuekfnr èku foèkku lHkk }kjk inÙk vunkuk dh ifjfèk d Hkhrj [kp fd;k x;k g rFkk ;g ,l iR;d ekey dk foèkku lHkk d è;ku e yk;xh ft ldk ydj bl bl idkj lekèkku ugh gA

(ii) fd y[kk e fn[kk;k x;k èku mlh idkj forfjr fd;k x;k g ft l idkj ;g ml lok ;k mí'; d fy, oèkkfud :i l i;kT; Fkk ft ld fy, bUg bLreky fd;k x;k g ;k iHkkfjr fd;k x;k gA

(iii) fd [kp ikfèkdkj d vulkj g tk bl lpkfyr djrk g] vkj

(iv) fd jkT; iky }kjk] ;k foÙk foHkkx }kjk] tk Hkh fLFkfr gk bl fufeÙk cuk; x; fu;ek d vulkj iR;d iufofu;kx fd;k x;k gA

3. इस प्रकार, पूर्वोक्त प्रावधान निर्दिष्ट करके, यह निवेदन किया गया था कि जबतक लोक लेखा समिति मामले पर विचार कर रही है, नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा या किसी अन्य स्रोत द्वारा उठायी गयी वित्तिय अनियमितता के मामले में न्यायालय समेत अन्य की कोई भी कोई भूमिका नहीं होगी, परन्तु प्रस्तुत मामले में जब लोक लेखा समिति निगरानी द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने की प्रतीक्षा कर रही थी निगरानी ने संवैधानिक प्रावधान की उपेक्षा करते हुए तथा पी॰ ए॰ सी॰ के प्राधिकार को अल्पीकृत करके प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज किया है, जिसे केवल इसी आधार पर अभिखंडित कर दिया जाना है। विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदनों के समर्थन में ''**अरविन्द कुमार शर्मा बनाम बिहार राज्य मुख्य सचिव, बिहार सरकार, पटना के माध्यम से एवं अन्य** [2011 (4) PLJR 887]" के एक मामले में दिये गये एक निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

4. एक प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है, जो काफी विस्तारित है जिसमें यह कथित किया गया है कि झारखंड सरकार ने मंत्रिमंडल (निगरानी) विभाग के माध्यम से निगरानी ब्यूरो, झारखंड को सूचित किया था कि महालेखाकार, झारखंड द्वारा प्रतिनियुक्त एक दल एवं वित्त विभाग, झारखंड सरकार द्वारा प्रतिनियुक्त अंकेक्षकों के एक दल ने भी झारखंड नवीकरणीय उर्जा विकास (जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰) में गबन, प्राधिकार के दुरूपयोग एवं वित्तीय अनियमितताओं के साक्ष्य पाये हैं और, इस प्रकार, इस कारण, इसे मामले में एक प्रारंभिक जांच संचालित करना चाहिए। पूर्वोक्त निर्देशों के अनुपालन में, निगरानी ब्यूरो ने प्रारंभिक जाँच के लिए मामला हाथ में लिया था जिसकी आरक्षी अधीक्षक दर्जे के एक पदाधिकारी द्वारा जाँच की गयी थी। जाँच के अनुक्रम में, कई दांडिक अपराधों के कारित किए जाने को दर्शाने वाली कई सामग्रियाँ प्रकाश में आयी थीं और, अतएव, निगरानी अपने आप को केवल महालेखाकार के दलों एवं वित्त विभाग के अंकेक्षकों द्वारा भी उठाये गये अभ्यापत्तियों से संबंधित जाँच तक ही सीमित नहीं रख सका था, बल्कि इसके आगे चला गया था। जाँच के अनुक्रम में, यह पाया गया था कि झारखंड सरकार ने दूरस्थ ग्राम वैद्युतीकरण कार्यक्रम (आर॰ वी॰ ई॰ पी॰) के अधीन 82 गाँवों के सौर वैद्युतिकरण से संबंधित संकर्म राजस्थान इलेक्ट्रॉनिक्स एवं इन्स्ट्रूमेंन्टस लिमिटेड (आर॰ ई॰ आई॰ एल॰) को सौंपने का निर्णय लिया था, परन्तु याची, जो निदेशक, जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ के तौर पर कार्य कर रहा था, ने एक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम आर॰ ई॰ आई॰ एल॰ को कार्य आवंटित नहीं किया था बल्कि सरकार से अनुमति लिये बिना पी॰ पी॰ एस॰ इन्वाईरो पावर लिमिटेड के नाम से ज्ञात एक निजी कम्पनी को कार्य आवंटित कर दिया था। कार्य के मूल्य की सीमा इतनी थी कि निदेशक, जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ सरकार की अनुमति के बिना कोई निर्णय नहीं ले सकता था। इसके अलावा, गबन, जालसाजी, दूर्विनियोग के समतुल्य अन्य प्रकार की अनियमितताएँ पायी गयी थी और, तद्द्वारा, जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ को 48,28,131/– रुपये के बराबर हानि हुई थी। यह भी कथित किया गया है कि जब कि मामला जाँच के अधीन था, एक लोक हित याचिका दाखिल किया गया था, जिसके द्वारा इस न्यायालय ने तीन महीनों के भीतर जाँच पूरी करने का निगरानी ब्यूरो को निर्देश देते हुए एक आदेश पारित किया था। माननीय उच्च न्यायालय ने यह आदेश भी पारित किया था कि अगर कोई अपराधिकता पाई जाती है, राज्य सरकार तथा संबद्ध विभाग मुद्दों में से किसी के भी संबंध में निष्कर्ष के आधार पर यथोचित कार्रवाई करने के लिए स्वतंत्र होंगे तथा राज्य सरकार या कोई भी विभाग लोक हित याचिका के लंबित रहने के कारण कार्रवाई न करने का एक बहाना नहीं

बनाएगा। इस स्थिति के अधीन, जब जाँच के अनुक्रम में अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से कारित अपराधिकता पायी गयी थी, निगरानी ने रिपोर्ट प्रस्तुत किया था तथा एक प्राथमिकी भी दर्ज किया था और ऐसे परिस्थिति में, प्रथम सूचना रिपोर्ट को कभी भी अभिखंडित किया जाना उचित नहीं है।

5. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं की सुनवाई करके तथा अभिलेखों के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि याची द्वारा जो पक्ष लिया गया है, वह यह है कि अगर वित्तीय अनियमितता के संबंध में कोई अभ्यापत्ति नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सी॰ ए॰ जी॰) द्वारा उठायी जाती है, तब संवैधानिक योजना के अनुसार उसकी जांच लोक लेखा समिति द्वारा की जानी है और जबतक उक्त मामला पी॰ ए॰ सी॰ के विचाराधीन रहता है, न्यायालय समेत अन्य कृत्यकारीगण को मामले में हस्तक्षेप करने का कोई प्राधिकार नहीं है। प्रस्तुत निवेदनों को इस कारण कठिनाई से ही स्वीकार किया जा सकता है कि झारखंड विधान सभा में कार्यकलाप के संचालन की प्रक्रिया की नियमावली के नियम 238 में यथा अन्तर्विष्ट प्रावधान के अनुसार लोक लेखा समिति का दायित्व यह देखना है कि सभा द्वारा अनुमोदित धन सभा द्वारा प्रदत्त अनुदानों की परिधि के भीतर खर्च किया गया है और यह कि खर्च उस प्राधिकार के सुंसगत हैं जो इसे संचालित करता है और यह कि राज्यपाल द्वारा या वित्त विभाग द्वारा, जो भी स्थिति हो, इस निमित्त बनाये गये नियमों के अनुसार प्रत्येक पुनर्विनियोग किया गया है। परन्तु जहाँ सी॰ ए॰ जी॰ द्वारा उठायी गयी अभ्यापत्ति से संबंधित मामला किसी अपराधिकता का लक्षण रखने वाली किसी वित्तीय अनियमितता से संबंधित है, तब यह पी॰ ए॰ सी॰ के अनन्य अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं आयेगा बल्कि दण्ड प्रक्रिया संहिता के योजना के अधीन सामान्य विधि द्वारा संचालित होना है जहाँ कोई मामले को गत्यावस्था में ला सकता है अगर यह संज्ञेय अपराध प्रकट करता है। अतएव, इस संबंध में याची की ओर से किये गये निवेदन महत्वहीन हैं। इसके अतिरिक्त, यह भी प्रतीत होता है कि निगरानी का यह मामला है कि महालेखाकार के दलों द्वारा तथा वित्त विभाग के अंकेक्षकों द्वारा उठाये गये अभ्यापत्ति पर जाँच करने के अनुक्रम में, निगरानी ने जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ द्वारा किये गये ग्रामीण वैद्युतिकरण के मामले में तथा अन्य परियोजनाओं में भी अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा कारित कई वित्तीय अनियमितता पायी थी जो कभी भी महालेखाकार के दल एवं वित्त विभाग के अंकेक्षकों द्वारा उठायी गयी अभ्यापत्ति की विषय वस्तु नहीं थी। यह इस तथ्य का स्पष्ट रूप से सूचक है कि निगरानी द्वारा दर्ज प्राथमिकी कभी भी जे॰ आर॰ ई॰ डी॰ ए॰ के कार्यकलाप में कारित अनियमितताओं पर अनन्य रूप से आधारित नहीं हैं, जिन्हें महालेखाकार के दल तथा वित्त विभाग के अंकेक्षकों द्वारा निर्दिष्ट किया गया था। उस दशा में, मामला दर्ज किये जाने में कोई अवैधानिकता नहीं मिलती है, और, अतएव, दर्ज की गयी प्रथम सूचना रिपोर्ट को कभी भी अभिखंडित किया जाना उचित नहीं है।

6. इसके अतिरिक्त यह भी कथित किया जाता है कि उपरोक्त निर्दिष्ट मामले में, न्यायालय ने याची की ओर से प्रस्तुत निवेदनों के समान निवेदनों को तभी स्वीकार किया था जब यह पाया गया था कि लोक प्रशासन में भ्रष्टाचार, नौकरशाही द्वारा कदाचार, आधिकारिक अभिलेखों की कूटरचना, सार्वजनिक निधियों का दुर्विनियोग, इनकी कपटपूर्ण निकासी का तथ्य कभी भी मुद्दे के अंतर्गत नहीं था। अप्रत्यक्ष रूप से, न्यायाधीश यह अभिनिर्धारित करते हुए प्रतीत होते हैं कि अगर पी॰ ए॰ सी॰ के समक्ष लंबित कोई रिपोर्ट ऊपर यथा उल्लिखित ऐसे दांडिक कृत्यों के बारे में प्रकट करती है, यह किसी प्राधिकार को एक मामला दर्ज करने से नहीं रोकेगा।

तद्नुसार यह दांडिक रिट आवेदन खारिज किया जाता है।

ekuuh; ujUn ukFk frokjh ,o Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efrx.k

महादेव गोप एवं अन्य (1088 में)

धुंधा गोप एवं एक अन्य (1243 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (D.B.) Nos. 1088 of 2012 with 1243 of 2003. Decided on 17th September, 2013.

पिंडरजोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 76 वर्ष 1999 से उद्‌भूत होने वाले सत्र विचारण सं॰ 105 वर्ष 2000 के संबंध में विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 16.4.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 17.4.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149 एवं 148—हत्या-सामान्य उद्देश्य–दोषसिद्धि–ऐसे मामले में जिसमें गोत्रज विवादग्रस्त भूमि, जिसे उन्होंने अपने पूर्वजों से विरासत में पाया था, के उपर अपने अधिकार, हक, हित और कब्जा के लिए लड़ रहे हैं, संबंधियों की उपस्थिति बिल्कुल स्वाभाविक है और उनके साक्ष्य को इस आधार पर त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वे व्यथित के संबंधी हैं–अपीलार्थीगण की आक्रामकता को दर्शाता अ॰ सा॰ का साक्ष्य कि किस प्रकार उन्होंने मृतक पर अंधाधुंध वार किया और निर्ममता पूर्वक उनकी हत्या कर दी–इस प्रकार के हमला में चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य में कुछ लोप और अंतर होना ही है–चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा अभियोजन मामला संपुष्ट किया गया–अपीलें खारिज की गयी। (पैरा 9 से 10)

निर्णयज विधि.–(2008) 12 SCC 173; (2008)5 SCC 368; (2013) 4 SCC 607—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s A.K. Sahani, Amrita Banerjee, For the Appellants; Mr. T.N. Verma, For the State.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–ये दांडिक अपीलें सत्र विचारण सं॰ 105 वर्ष 2000 के संबंध में विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 16.4.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 17.4.2003 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी हैं जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 और 302 सह-पठित 149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया है और उनको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित 149 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कठोर कारावास तथा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 148 के अधीन तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया है और इस प्रकार पारित दंडादेशों को साथ चलने का निर्देश दिया है।

2. अभियोजन मामला, जैसा यह बिशु गोप के फर्दबयान से यह प्रतीत होता है, यह है कि दिनांक 27.11.1999 की सुबह लगभग 6 बजे सूचक जान सका था कि मृतक भीम गोप के गोत्रज काटे गए धान को ले जाने के लिए धोवा टांड अवस्थित विवादित खेत में एकत्रित हुए थे। ऐसी सूचना प्राप्त करने के बाद सूचक भीम गोप और आशु गोप के साथ धान हटाए जाने के विरुद्ध आपत्ति करने के लिए घटनास्थल पर गया। जब वे खेत में पहुँचे, उन्होंने समस्त अपीलार्थीगण को अपने हाथों में फरसा और टांगी लिए देखा और उनके कुछ सहयोगी जिन्हें सूचक नहीं जानता था तीर-धनुष से लैस थे। ज्योंही आपत्ति

की गयी, अपीलार्थी महादेव गोप ने उनकी हत्या करने का हुक्म दिया। तत्पश्चात कालीपद गोप, महेन्द्र गोप, महादेव गोप, जगदीश गोप, धुंधा गोप और सुका गोप ने अपने हाथों में लिए हथियारों से अंधाधुंध वार किया और खेत में ही आशु गोप की हत्या कर दी। भीम गोप ने भागने का प्रयास किया किंतु सफल नहीं हो सका था और उसे तालाब के निकट रोका गया था और अभियुक्तगण द्वारा उस पर बुरी तरह प्रहार किया गया था और वह अपना जीवन गवाँ बैठा। सूचक जो दूरी से घटना देख रहा था शोर करते हुए भाग गया। दिनांक 27.11.1999 को प्रात: लगभग 8 बजे गाँव में बिशु गोप का फर्दबयान दर्ज किया गया था। फर्दबयान के आधार पर अपीलार्थीगण सहित सात नामित व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149 और 302 के अधीन पिंडराजोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 76 वर्ष 1999 दर्ज की गयी थी। पुलिस ने सम्यक अन्वेषण के बाद अभियुक्तगण में से एक सुका गोप को बाहर करते हुए समस्त छह अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ ने संज्ञान लिया और अपीलार्थीगण का मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और एस॰ टी॰ केस सं॰ 105 वर्ष 2000 के रूप में दर्ज किया गया था। दिनांक 28 जुलाई, 2000 को धाराओं 147, 148 और 302/149 के अधीन आरोपों को विरचित किया गया था। चूँकि अपीलार्थीगण ने आरोपों से इनकार किया, अभियोजन प्रारंभ हुआ।

3. अभियोजन ने अपीलार्थीगण के विरुद्ध विरचित आरोपों को सिद्ध करने के लिए कुल मिलाकर 12 गवाहों का परीक्षण किया है जबकि अपीलार्थीगण ने अपने बचाव में दो गवाहों का परीक्षण किया है।

4. विद्वान सत्र न्यायाधीश ने विचारण के समापन पर अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 और 302/149 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी अभिनिर्धारित किया और उनको पूर्वोक्तानुसार दण्डित किया।

5. अपीलार्थीगण ने दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश का विरोध मुख्यत: इस आधार पर किया है कि सूचक चश्मदीद गवाह नहीं है और उसने पूरी घटना को नहीं देखा है। उसके अनुसार, वह घटना के बाद पुलिस थाना गया और सूचना दर्ज किया किंतु ऐसी कोई सूचना अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है बल्कि पुलिस द्वारा प्रात: लगभग 8 बजे गाँव में दर्ज किया गया फर्दबयान आधार है जिस पर मामला दर्ज किया गया था। तथाकथित चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 7 के बयानों में महत्वपूर्ण विरोधाभास हैं। अ॰ सा॰ 2 दुर्गा गोप के अनुसार समय के प्रासंगिक बिंदु पर घटनास्थल पर कोई अन्य चश्मदीद गवाह उपस्थित नहीं था। यदि अ॰ सा॰ 2 दुर्गा गोप के बयान को सत्य माना जाता है, अ॰ सा॰ 1 सुभाष गोप और अ॰ सा॰ 7 बिशु गोप ने घटना नहीं देखा था। सूचक ने अपने फर्दबयान में किसी चश्मदीद गवाह को नामित नहीं किया है। फर्दबयान के अनुसार, मधुसूदन गोप और साधु गोप ने घटना देखा था किंतु मधुसूदन गोप का परीक्षण नहीं किया गया है जबकि साधु गोप को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है। गवाहों में से अधिकतर मृतक के साथ निकट रूप से संबंधित हैं और वे अत्यन्त हितबद्ध गवाह हैं। तथाकथित चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 7 के अभिसाक्ष्य में महत्वपूर्ण विरोधाभास हैं। पक्षों के बीच भूमि विवाद अभियोजन का स्वीकृत मामला है। सूचक ने इन अपीलार्थीगण और किसी सुका गोप को नामित किया है किंतु पुलिस ने सुका गोप की अंतर्ग्रस्तता नहीं पाया था और फाइनल फॉर्म दाखिल किया जो अंतर्ग्रस्त नहीं होने वाले व्यक्ति को झूठा आलिप्त करना उपदर्शित करता है और इसलिए प्राथमिकी साक्ष्य का विश्वसनीय टुकड़ा नहीं है। अन्वेषण अधिकारी ने यद्यपि अपीलार्थी महेन्द्र गोप का फर्दबयान दर्ज किया और चिकित्सीय परीक्षण के लिए तलब जारी किया क्योंकि महेन्द्र

गोप और कालीपद गोप के शरीरों पर उपहतियाँ थी, किंतु स्वयं उसको ज्ञात कारणों से मामले में अन्वेषण नहीं किया। जब्त किए गए हथियार को रासायनिक परीक्षण के लिए नहीं भेजा गया था। अ॰ सा॰ 10 हरिन गोप, अ॰ सा॰ 11 रोहिणी गोप और अ॰ सा॰ 12 हरधन गोप ने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। यह तर्क भी किया गया था कि अपीलार्थीगण ने दो बचाव गवाहों का परीक्षण किया था और उनमें से एक ब॰ सा॰ 2 गोविन्द गोप ने विक्रय विलेख उपदर्शित करता है कि भूमि जिससे धान काटा गया था अपीलार्थीगण की थी। अपने खेत में अपीलार्थीगण की उपस्थिति बिल्कुल स्वाभाविक है जबकि मृतक की उपस्थिति उपदर्शित करती है कि वे हिंसा करने घटनास्थल पर गए थे। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि समस्त अपीलार्थीगण का मृतकों बिशु गोप और आशु गोप की हत्या करने का सामान्य उद्देश्य था। जहाँ तक अपीलार्थीगण नेवा गोप और धुंधा गोप का संबंध है, उनके विरुद्ध किसी प्रत्यक्ष कृत्य को अभिकथित नहीं किया गया है और इसलिए उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 149 की मदद से धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने उपर उठाए गए समस्त बिंदुओं का अधिमूल्यन नहीं करके गंभीर गलती किया है और इसलिए, आक्षेपित निर्णय को अपास्त करने की आवश्यकता है और अपीलार्थीगण दोषमुक्त किए जाने के दायी हैं।

6. दूसरी ओर, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का विरोध किया है और निवेदन किया है कि अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य संगत हैं और उन्होंने उस तरीके को स्पष्ट किया है जिस तरीके से घटना हुई और मृतकों की हत्या कर दी गयी। इस प्रकार की घटना में लघु विरोधाभास सदैव हो सकते हैं और ऐसे विरोधाभासों के आधार पर संपूर्ण अभियोजन मामला ठुकरा नहीं देना चाहिए। अन्वेषण समुचित रूप से किया गया था और आई॰ ओ॰ अ॰ सा॰ 8 ने अपने द्वारा किए गए अन्वेषण के समस्त विवरणों को दिया है। अपराध करने में प्रयुक्त हथियार अपीलार्थी कालीपद गोप के संस्वीकृति के आधार पर अपीलार्थी महादेव के घर से जब्त किए गए थे। केवल इसलिए कि गवाह मृतकों से संबंधित हैं उन्हें हितबद्ध गवाह नहीं माना जा सकता है और उनके साक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जा सकता है यदि ये अन्यथा विश्वसनीय हैं। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य, विशेषत: अ॰ सा॰ 8 का साक्ष्य, उपदर्शित करता है कि विवादित भूमि पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी किंतु तब भी अपीलार्थीगण काटे गए धान को हटाने के लिए एकत्रित हुए थे और वे फरसा, टांगी, तीर–धनुष जैसे घातक हथियारों से लैस थे। ज्योंही मृतक सामने आए, उन पर अपीलार्थीगण द्वारा प्रहार किया गया था और उनकी हत्या कर दी गयी थी। अभियुक्तगण द्वारा की गयी तैयारी और उनके द्वारा किया गया प्रत्यक्ष कृत्य यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि वे विधि विरुद्ध जमाव के सदस्य थे और अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने के लिए हत्या का अपराध करने के लिए घटना स्थल पर आए थे। अभियोजन का मामला सुसिद्ध है और विद्वान सत्र न्यायाधीश ने सही प्रकार से दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश दर्ज किया है और निष्कर्षों में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। इन अपीलों में गुणागुण नहीं है और वे खारिज किए जाने के दायी हैं।

7. परस्पर विरोधी तर्कों को सुनने पर और निर्णय, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और दस्तावेजों जिन्हें प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया है, के परिशीलन के बाद हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण ने मुख्यत: निम्नलिखित आधारों पर आक्षेपित निर्णय को चुनौती दिया है:–

(i) fd p'enhn xokg lcfèkr g vkj vR;Ur fgrc) g]

(ii) lpd p'enhn xokg ugh g(

(iii) rFkkdfFkr nk p'enhn xokgk v0 lk0 1 vkj v0 lk0 2 d uke dk Qnc;ku e çdV ugh fd;k x;k g]

(iv) Qnc;ku (çn'k 2) lk{; dk fo'oluh; VdMk ugh g]

(v) p'enhn xokg vFkkr lkèk xki ft ldk uke Qnc;ku e LFkku ikrk g u vfHk;ktu ekey dk leFku ugh fd;k g]

(vi) vkb0 vk0 u Lohdkj fd;k g fd mlu egUn xki vkj dkyhin xki d 'kjhj ij migfr;k dk n[kk Fkk vkj egUn xki dk Qnc;ku nt fd;k Fkk fdr mlu ekey e vUo"k.k ugh fd;k g vkj vihykFkhx.k egUn xki vkj dkyhin xki d 'kjhj ij gb migfr;k dk lpd }kjk Li"V ugh fd;k x;k FkkA

8. हम अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा उठाए गए बिंदुओं पर क्रमवार तरीके से चर्चा शुरू कर रहे हैं। इस संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक बार न्यायालय द्वारा सावधानी बरते जाने के बारे में मार्गदर्शक सिद्धांत दिया है जब संबंधित/हितबद्ध गवाहों के साक्ष्य पर विचार किया जाता है। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि केवल इसलिए कि गवाह मृतक अथवा सूचक से संबंधित है, उसके परिसाक्ष्य को त्यक्त नहीं किया जाना चाहिए यदि यह अन्यथा विश्वसनीय, विश्वास योग्य और विश्वास उत्पन्न करने वाला है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **(2008)12 SCC 173,** में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"8. tgk rd ihfMr d lcfèk;k d lk{; dh fo'oluh; rk d ç'u dk lcèk g] ;g lfuf'pr g fd ;|fi U;k;ky; dk vR;Ur lkoèkkuh ,o lrdrk l ,l lk{; dk loh{k.k djuk gkxk fdr ,l lk{; dk doy vfHk;ktu e mud fgr d vkèkkj ij R;Dr ugh fd;k tk ldrk gA lcèk vfuok;r% xokg dh fo'oluh; rk dk çHkkfor ugh djr gA ek= blfy, fd xokg vijkèk d ihfMr dk lcèkh g] ml ^^fgrc)** xokg d :i e fpf=r ugh fd;k tk ldrk gA ;g io l çpfyr g fd 'kCn ^^fgrc)** çfrikfnr djrk g fd lcfèkr 0;fDr dk ;g n[ku e çR;{k vFkok vçR;{k fgr g fd vfHk;Dr dk fdlh çdkj l nk"kfl) fd;k tkrk g D;kfd mldk vfHk;Dr d lkFk cj Fkk vFkok dkb vU; ijk{k gr FkkA*

*12. fcYdy gky e] ukeno cuke egkjk"V jkT; e gee l ,d (lh0 d0 BDdj] U;k;efr) u dgk g fd fudV lcèkh dk ^^fgrc)** xokg d :i e fpf=r ugh fd;k tk ldrk gA og LokHkkfod xokg gA fdr mld lk{; dk lkoèkkuhiod loh{k.k fd;k tkuk pkfg,A ;fn ,l loh{k.k ij mld lk{; dk vrfufgr :i l fo'oluh;] vrfufgr :i l vfèklHkk0; vkj i.kr% fo'okl ;kX; ik;k tkrk g] ,l xokg d ^^,dek=** ifjlk{; ij nk"kflf) vkèkkfjr dh tk ldrh gA erd vFkok ihfMr d lkFk xokg dk fudV lcèk mld lk{; dk vLohdkj dju dk vkèkkj ugh gA bld foijhr erd dk fudV lcèkh lkekU; r% okLrfod nk"kh dk cpku vkj funk"k dk >Bk vkfylr dju e vfèkd ldkp djxkA***

9. उक्त परिप्रेक्ष्य में, हमने अ॰ सा॰ 7 जो सूचक है और मृतकों में से एक आशु गोप का भाई है। अभियोजन का यह स्वीकृत मामला है कि मृतक भीम गोप और दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1088 वर्ष 2012 में अपीलार्थी गोत्रज हैं और उनके बीच भूमि विवाद था और उनके बीच विवादित भूमि के संबंध में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 107 के अधीन कार्यवाही भी आरंभ की गयी थी। आई॰ ओ॰ अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्य के मुताबिक दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 144 के अधीन कार्यवाही चल रही थी। सूचक ने कथन किया है कि दिनांक 27.11.1999 की सुबह 6.15 बजे उसे सूचित किया गया था कि अपीलार्थीगण काटे गए

धान को हटाने के लिए विवादित खेत में एकत्रित हुए हैं। तत्पश्चात, सूचक मृतकों भीम गोप और आशु गोप के साथ घटनास्थल पर गया जहाँ भीम गोप और आशु गोप ने धान हटाए जाने के विरुद्ध आपत्ति किया। ज्योंही उन्होंने आपत्ति किया अपीलार्थी महादेव गोप ने उनकी हत्या करने का आदेश दिया। तत्पश्चात, महादेव गोप, महेन्द्र गोप, जगदीश गोप, कालीपद गोप ने फरसा से और धुंधा गोप ने टांगी से आशु गोप पर अंधाधुंध वार किया जिसके परिणामस्वरुप घटनास्थल पर उसकी मृत्यु हो गयी। भीम गोप ने भागने का प्रयास किया किंतु नेबू गोप और सुका गोप द्वारा उसका पीछा किया गया था जिन्होंने तीर धनुष से उसको रोका जिसके बाद अभियुक्तगण महादेव गोप, कालीपद गोप, जगदीश गोप और महेन्द्र गोप स्थान पर आए और फरसा से उपहति करके भीम गोप की हत्या कर दी। स्थिति देखते हुए सूचक शोर करते हुए घटनास्थल से भाग गया। यह कथन भी किया गया है कि हल्ला होने पर साधु गोप अ॰ सा॰ 3, दुर्गा गोप अ॰ सा॰ 2, सुभाष गोप अ॰ सा॰ 1 और कुछ अन्य व्यक्ति घटनास्थल पर आए। सूचक पुलिस थाना गया और मामला रिपोर्ट किया। एस॰ आई॰ श्री के॰ एन॰ राम द्वारा बयान दर्ज किया गया था जिस पर उसने अपना एल॰ टी॰ आई॰ दिया और फर्दबयान प्रदर्श 2 के रूप में सिद्ध किया गया है।

10. अब प्रश्न उद्भूत होता है कि केवल इसलिए कि सूचक मृतकों में से एक आशु गोप का भाई है और एक अन्य मृतक भीम गोप भी उसका कजिन है, क्या उसके परिसाक्ष्य को त्यक्त किया जा सकता है? साक्ष्य में आया है कि भीम गोप और अभियुक्त कालीपद गोप एवं अन्य गोत्रज हैं और वे विवादित भूमि पर अपने अधिकार, हक और कब्जा का दावा कर रहे हैं। ऐसे मामले में जिसमें गोत्रज विवादित भूमि, जिसे उन्होंने विरासत में अपने पूर्वजों से पाया था, के उपर अपने अधिकार, हक, हित और कब्जा के लिए लड़ रहे है और यदि प्रहार की कोई घटना होती है, संबंधियों की उपस्थिति बिल्कुल स्वाभाविक है और यदि वे घटना का समर्थन करने के लिए गवाह के रूप में उपस्थित होते हैं और घटना का सही चित्रण करते हैं जो किसी कोने से प्रभावित नहीं की गयी है, उस साक्ष्य को केवल इस आधार पर त्यक्त नहीं किया जा सकता है कि वे व्यथित के संबंधी हैं। साक्ष्य में आया है कि भीम गोप घटना के पहले से सूचक के परिवार के साथ गाँव में रह रहा था और विवादित भूमि पर उसका दावा था। अतः भीम गोप (मृतक) का अपने कजिन आशु गोप (मृतक) और सूचक बिशु गोप के साथ घटना स्थल पर आना बिल्कुल स्वाभाविक था। अ॰ सा॰ 7 के परिसाक्ष्य को भी इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि उसे पुलिस थाना में सूचना दर्ज करने वाला बताया जाता है किंतु अ॰ सा॰ 8 आई॰ ओ॰ कहता है कि सूचक का फर्दबयान स्वयं गाँव में दर्ज किया गया था। अ॰ सा॰ 8 ने कथन किया है कि वह हत्या की अफवाह सुनने के बाद गाँव गया था और सूचना एस॰ डी॰ ई॰ 503 दिनांक 27.11.1999 के रूप में दर्ज की गयी थी और सूचना सत्यापित करने वह वहाँ गया था। हम अ॰ सा॰ 7 का फर्दबयान दर्ज करने के संबंध में ऐसा विरोधाभास वस्तुतः पाते हैं जो यह प्रश्न सामने लाता है कि क्या फर्दबयान दर्ज किए जाने के स्थान के संबंध में ऐसा विरोधाभास चश्मदीद गवाह, जिसके भाइयों की हत्या घटना में कर दी गयी है, के अभिसाक्ष्य को झूठा ठहराने के लिए पर्याप्त है? कोई भी उस व्यक्ति की घबराहट और मनो अवस्था को आँक सकता है जिसने अपने दो भाईयों की हत्या अपनी उपस्थिति में किए जाते देखा हो। अ॰ सा॰ 7 ने कथन किया है कि वह हस्ताक्षर करना जानता है और थोड़ा साक्षर है किंतु वह घटना देखने के बाद इतना घबराया हुआ था कि वह अपना हस्ताक्षर करने की अवस्था में नहीं था और इसलिए उसने अपने फर्दबयान पर अपना एल॰ टी॰ आई॰ दिया था।

11. अगला बिंदु जो हमारे विचार में आया है यह है कि क्या इस विरोधाभास ने अपना बचाव करने में अपीलार्थी के उपर किसी प्रतिकूलता को कारित किया है अथवा सूचक के पास प्राथमिकी के संस्थापन

में छल साधन करने का अवसर था अथवा घटना के संबंध में कोई अतिशयोक्ति बयान में की गयी है। हम नहीं पाते हैं कि सूचक ने बयान में अतिशयोक्ति करने के लिए अथवा प्राथमिकी के संस्थापन में छल साधन करने के लिए किसी अवसर का लाभ उठाया था। अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के मुताबिक घटना प्रात: 6.30 से 7 बजे के बीच हुई। अ॰ सा॰ 8 के अनुसार उसने घटना के बारे में अफवाह 7.30 बजे सुबह सुना और घटना स्थल पर गया और वहाँ पहुँचने के बाद प्रात: 8 बजे फर्दबयान दर्ज किया। हम पाते हैं कि ये घटनाएँ तेजी से एक के बाद एक हुई और इसलिए हमें यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि ऐसी परिस्थितियों में प्राथमिकी के संस्थापन में किसी छल साधन का मौका नहीं था अथवा सूचक ने घटना की अतिशयोक्ति करने का अवसर पाया था। केवल यह निवेदन करके कि बयान जिसे सूचक ने पुलिस थाना में दिया था को दबाया गया था, यह न्यायोचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है कि अपीलार्थीगण पर प्रतिकूलता कारित की गयी है।

12. अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य चित्र देता है जो अपीलार्थीगण की आक्रामकता दर्शाता है कि किस प्रकार उन्होंने फरसा और टांगी से अंधाधुंध वार किया और आशु गोप की निर्मम हत्या कर दी जिसके शरीर पर शव परीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक सत्ताईस कटे और विदीर्ण जख्म थे। इसे अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से अच्छी तरह देखा जा सकता है। अपीलार्थीगण ने आशु गोप की हत्या करने के बाद भी निर्मम प्रहार नहीं रोका था और अपनी रक्त पिपासा बुझाने के लिए उन्होंने भीम गोप को लक्ष्य बनाया जिसने भागने का प्रयास किया किंतु सफल नहीं हो सका था और जिसे तीर-धनुष से लैस अन्य अभियुक्तगण द्वारा रोका गया था। अपीलार्थीगण अर्थात् महादेव, जगदीश, कालीपद और महेन्द्र तुरन्त वहाँ पहुँचे और फरसा से उपहतियों को कारित करके भीम गोप की भी हत्या कर दी। ऐसी भगदड़वाली स्थिति में यह उम्मीद नहीं की जाती है कि घटनास्थल पर उपस्थित गवाह अन्य गवाहों की उपस्थिति को ध्यान में लेगा जो भी घटना देख रहे थे। हमारा मत यह भी है कि प्राथमिकी में प्रत्येक गवाह का नाम प्रकट करने की आवश्यकता नहीं है। यदि प्राथमिकी में गवाहों के नाम नहीं आ रहे हैं, इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति जिसने घटना को देखा था, समय के प्रासंगिक बिंदु पर घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था। यह कहना अनावश्यक है कि प्राथमिकी घटना का वृहद ज्ञानकोष नहीं है बल्कि यह घटना का संक्षिप्त बयान है जिसे सूचक देख सका था और पुलिस के समक्ष इसे प्रस्तुत कर सका था। यह सुनिश्चित विधि है कि प्रत्येक लघु विवरण को प्राथमिकी में सम्मिलित करने की उम्मीद नहीं की जाती है और यदि ऐसा नहीं किया गया है, प्राथमिकी को संदेह की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **(2008)5 SCC 368** में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *^^çkFkfedh e leLr vfHk;Drx.k dk ukfer fd;k x;k Fkk vkj mudh vkj l çR;{k ÑR;k dk Hkh dN foLrkjiod dfFkr fd;k x;k FkkA ?kVuk d çR;d fooj.k dk dFku djuk vko';d ugh gA çkFkfedh dk vFk ogr Kkudk"k ugh gA lpd dh vkj l çkFkfedh e dN ykik d çHkko ij fopkj djr g, U;k;ky; çFke lpd d vfèkHkk0; 'kkjhfjd vkj ekufld n'kk dk fopkj e yu e foQy ugh gk ldrk gA egRoi.k dkjdk e l ,d tk U;k;ky; ij vfèkeku Mky ldrk g ;g g fd D;k vihykFkx.k dk >Bk vkfylr dju dh lHkkouk FkhA doy fjikV dh fo"k; oLr dh 'k) rk dh lR;rk dh ijh{kk dju dh nf"V l U;k;ky; lrdrk d dfri; lKkr fl)krk dk ykx djrk gA fdr tc ,d ckj çkFkfedh dk lR;i.k*

*ik;k tkrk g] doy bl fy, fd dN vfHk;Drx.k d ukek dk mfYyf[kr fd;k x;k g ftud fo#) vfHk;ktu viuk ekeyk LFkkfir dju e l{ke gvk Fkk] doy ml vkèkkj ij li.k vfHk;ktu ekeyk Bdjk;k ugh tk,xkA***

13. उपर की गयी चर्चा में हमने पहले ही संप्रेक्षित किया है कि घटना प्रात: 6.30 से 7 बजे के बीच हुई और अ॰ सा॰ 7 के अनुसार घटना के बाद वह दौड़ कर पुलिस थाना गया और मामला रिपोर्ट किया जिसे पुलिस द्वारा दर्ज किया गया था जिस पर उसने अपना एल॰ टी॰ आई॰ दिया था। किंतु, अ॰ सा॰ 8 के अनुसार वह घटना के बारे में अफवाह सुनने के बाद गाँव पहुँचा था और प्रात: लगभग 8 बजे स्वयं गाँव में अ॰ सा॰ 7 का फर्दबयान दर्ज किया था। अत: कुछ अंतर प्रतीत होता है कि वह स्थान कौन सा था जहाँ सूचक का फर्दबयान दर्ज किया गया था? परिस्थितियाँ जिनमें सुबह दो व्यक्तियों की हत्या हुई थी को गवाहों द्वारा स्पष्ट किया गया है जिस पर हमने उपर चर्चा किया है। सूचक ने यह अभिसाक्ष्य भी दिया है कि वह घटना देखने के बाद इतना घबराया हुआ था कि वह अपने बयान पर अपना हस्ताक्षर करने की अवस्था में नहीं था और उसने अपना एल॰ टी॰ आई॰ दिया था। पूर्वोक्त परिस्थितियों में, हम नहीं पाते हैं कि अपना बचाव करने में अपीलार्थीगण पर प्रतिकूलता कारित की गयी है। जब एक बार अ॰ सा॰ 7 के बयान को विश्वसनीय स्वीकार किया जाता है, अभियोजन मामले पर विश्वास करने के लिए यह विरोधाभास रास्ते में नहीं आएगा जो तात्विक बिंदु पर दो अन्य गवाहों द्वारा समर्थित किया गया था। इस प्रकार के हमले में, चीजों की प्रकृति में कुछ लोप एवं अंतरों को आना ही है। इस संदर्भ में, **(2013)4 SCC 607** (पैरा 27 से 39) में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया गया है।

14. अ॰ सा॰ 1 सुभाष गोप ने सूचक अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य को संपुष्ट किया है। उसने कथन किया है कि घटना के समय पर वह अपने खेत में उपस्थित था जो विवादित खेत के ठीक बगल में अवस्थित है। इस गवाह ने उन समस्त अपीलार्थीगण को नामित किया है जिन्होंने फरसा से उपहतियाँ कारित करके आशु गोप की हत्या की थी। एक अन्य मृतक जो भी उपस्थित था ने भागने का प्रयास किया किंतु उसका पीछा किया गया था और नेबू गोप और अन्य अभियुक्तगण द्वारा रोका गया था जो अपने हाथों में तीर-धनुष लिए थे। कुछ ही समय में अपीलार्थीगण महादेव गोप, महेन्द्र गोप, कालीपद गोप और जगदीश गोप वहाँ पहुँचे और भीम गोप की भी हत्या कर दी। अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने पुन: इस गवाह को सूचक और मृतक के साथ संबंधित करने का प्रयास किया और इस बिन्दु पर उसका प्रति परीक्षण भी किया गया था। बचाव पक्ष ने यह प्रश्न भी उठाया है कि इस गवाह के सिवाए किसी अन्य ने घटना नहीं देखा था और इसलिए, सूचक चश्मदीद गवाह नहीं है। इस संदर्भ में हमने पूर्ववर्ती पैराग्राफों में पहले ही चर्चा किया है कि घटना स्थल पर गवाहों की उपस्थिति को देखा जाना प्रत्येक गवाह द्वारा प्रकट किए जाने के लिए आवश्यक नहीं है। सूचक ने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 31 में अपने प्रति-परीक्षण में स्पष्टत: कथन किया है कि सुभाष गोप अ॰ सा॰ 1 समय के प्रासंगिक बिंदु पर 20 कदमों की दूरी पर खड़ा था। इस गवाह का प्रति परीक्षण किया गया था और अभियोजन मामले में सुराख करने के लिए उसके प्रति परीक्षण में कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं आया है। दुर्गा गोप अ॰ सा॰ 2 गवाह है जो तालाब के निकट उपस्थित था और दैनिक कर्म से निपटने के लिए समय के प्रासंगिक बिंदु पर वहाँ गया था। उसने अपीलार्थीगण महादेव गोप, जगदीश गोप, कालीपद गोप, महेन्द्र गोप और धुंधा गोप को अन्य के साथ देखा है और उसने उन हथियारों को भी वर्णित किया है जो वे अपने हाथों में लिए थे। इस गवाह के साक्ष्य से भी घटना की उत्पत्ति समर्थन पाती है। उसने संपुष्ट किया है कि आशु गोप की हत्या खेत में ही कर दी गयी थी जबकि भीम गोप अपने को बचाने के लिए तालाब की ओर भागा था किंतु अपीलार्थी नेबू गोप और अन्य

द्वारा उसका पीछा किया गया था जो अपने हाथों में तीर–धनुष लिए थे। उसे अभियुक्तगण द्वारा रोका गया था जिसके बाद पूर्व अभियुक्तगण जगदीश गोप, महादेव गोप, कालीपद गोप, महेन्द्र गोप और धुंधा गोप घटना स्थल पर आए और भीम गोप की भी हत्या कर दी। इस गवाह ने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 2 में साधु गोप (अ॰ सा॰ 3) और सुभाष गोप (अ॰ सा॰ 1) को नामित किया है जिन्होंने घटना देखा था। इस मोड़ पर हम यह उपदर्शित करना वांछनीय महसूस करते हैं कि इस गवाह ने अ॰ सा॰ 1 सुभाष गोप की उपस्थिति को संपुष्ट किया है। गवाह साधु गोप (अ॰ सा॰ 3) का नाम भी सूचक द्वारा स्वयं फर्दबयान में प्रकट किया गया था किंतु साधु गोप जिसका परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है अपीलार्थीगण के विरुद्ध किए गए अभिकथन के बिंदु पर पक्षद्रोही बन गया है किंतु उसने कथन किया है कि प्रात: लगभग 6 बजे वह दैनिक कर्म से निबटने तालाब की ओर गया था। उसने धोवाटांड की तरफ से हल्ला सुना। वह वहाँ गया और वहाँ अनेक व्यक्तियों को उपस्थित देखा। उसने भीम गोप और आशु गोप के मृत शरीरों को देखा था और उसने आगे भीम गोप और आशु गोप के मृत शरीरों की अवस्था को उपदर्शित किया है। उसने इस तथ्य को संपुष्ट किया है कि आशु गोप का मृत शरीर विवादित खेत के भीतर पड़ा था जबकि भीम गोप का मृत शरीर तालाब के निकट पड़ा था। यह अनुभव किया गया है कि ऐसी घटना में कुछ गवाह न्यायालय में अभिसाक्ष्य देते हुए सामान्यत: तटस्थ बनने का प्रयास करते हैं और वे अभियुक्तगण की दुश्मनी मोल लेना नहीं चाहते है।

15. अब अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्य पर आते हुए हम पाते हैं कि उसने फर्दबयान दर्ज करने के तुरन्त बाद दोनों घटनास्थलों का परीक्षण किया है। घटना स्थलों जहाँ मृत शरीर पड़े हुए थे का विवरण अ॰ सा॰ 7 द्वारा प्रकट किए गए चाक्षुक साक्ष्य का समर्थन करता है। विवादित खेत के भीतर और तालाब के निकट भी हाथापाई और पद चिन्हों के निशानों को आई॰ ओ॰ द्वारा घटनास्थल निरीक्षण (पैरा 4 और 5) के क्रम में ध्यान में लिया गया था। तुरन्त मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी जिसे आई॰ ओ॰ द्वारा न्यायालय में सम्यक रूप से सिद्ध किया गया है। अ॰ सा॰ 8 का साक्ष्य (पैरा 7) अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह अभिसाक्ष्य दिया गया था कि गुप्त सूचना प्राप्त करने के बाद कि अपीलार्थीगण महेन्द्र गोप और कालीपद गोप ने मृतक एवं अन्य के विरुद्ध मामला दर्ज करने के लिए स्वयं पर उपहति सृजित किया है और वे बस अड्डा के निकट उपस्थित हैं, वह भागकर वहाँ गया और उनको गिरफ्तार किया। अपीलार्थी कालीपद गोप की संस्वीकृति (प्रदर्श 7) दिनांक 27.11.1999 को प्रात: लगभग 11.30 बजे दर्ज की गयी थी। उस संस्वीकृति के आधार पर हत्या की कारिता में प्रयुक्त कुछ हथियारों को भी बरामद किया गया था जिसके लिए अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 6/1) तैयार की गयी थी। पैरा 10 में आई॰ ओ॰ ने पक्षों के बीच विवाद के बारे में विवरण दिया है। आइ॰ ओ॰ पर्याप्त रूप से निष्पक्ष था और उसने आरोप पत्र दाखिल किया है जिसमें अभियुक्त सुका गोप को विचारण के लिए नहीं भेजे गए के रूप में दर्शाया गया है क्योंकि उसके विरुद्ध उसने साक्ष्य नहीं पाया था। अपने प्रति–परीक्षण के पैरा 27 में आई॰ ओ॰ ने इस तथ्य को संपुष्ट किया है कि स्वयं घटना की तिथि पर उसने सुभाष गोप अ॰ सा॰ 1 जो घटनास्थल पर उपस्थित था के बयान को दर्ज किया था। आई॰ ओ॰ ने यह स्पष्ट किया है कि महेन्द्र गोप और कालीपद गोप के शरीर पर उपहतियाँ स्वकारित की गयी थी और इसलिए यदि इन उपहतियों को सूचक द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया था, उसकी उपस्थिति अथवा साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि उन दोनों अपीलार्थीगण ने घटना में उपहतियों को प्राप्त नहीं किया था। इसके अतिरिक्त, इन दोनों अपीलार्थीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज अपने बयान में भी इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया है और न ही इस पहलू पर साक्ष्य दिया था। हम आई॰ ओ॰ के बयान में कोई तात्विक विरोधाभास नहीं पाते हैं। उसने अन्वेषण में कोई कमी नहीं छोड़ा था जो अभियोजन मामले के प्रति घातक होगा। ऐसे मामले में जहाँ चश्मदीद गवाह उपस्थित हैं, अपराध की कारिता में अभिकथित रूप से प्रयुक्त जब्त हथियारों को

इनके रासायनिक परीक्षण के लिए एफ॰ एस॰ एल॰ नहीं भेजा जाना अभियोजन मामले पर अविश्वास करने के लिए पर्याप्त नहीं है। डॉक्टर, जिन्होंने आशु गोप और भीम गोप के मृत शरीरों का शव परीक्षण किया था, का परीक्षण अ॰ सा॰ 9 के रूप में किया गया है और उन्होंने प्रदर्शों 10 और 10/A के रूप में शव परीक्षण रिपोर्टों को सिद्ध किया है। मृतक आशु गोप के शरीर पर किए गए 27 शवपूर्व कटे और विदीर्ण जख्म न केवल अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 7 द्वारा अभिलेख पर लाए गए चाक्षुक साक्ष्य को संपुष्ट करते हैं बल्कि यह भी सुझाते हैं कि कितनी निर्ममतापूर्वक आशु गोप की हत्या की गयी थी। एक अन्य मृतक भीम गोप के मस्तक पर कारित उपहति घातक थी।

16. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में हम पाते हैं कि सूचक अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य दो अन्य चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य द्वारा संपुष्ट किया गया है। पूर्वोक्त चश्मदीद गवाहों द्वारा वर्णित घटना का तरीका और प्राप्त की गयी उपहतियाँ शव परीक्षण रिपोर्टों प्रदर्शों 10 और 10A तथा अ॰ सा॰ 9 के साक्ष्य से समर्थन पाते हैं। आई॰ ओ॰ द्वारा घटनास्थल सुसिद्ध किया गया है और घटना के तुरन्त बाद अपराध की कारिता में प्रयुक्त हथियारों की बरामदगी भी इन अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपराध में फँसाने वाली परिस्थितियाँ हैं। हम इन अपीलों में गुणागुण नहीं पाते हैं और तद्नुसार इन्हें खारिज किया जाता है।

नरेन्द्र नाथ तिवारी, न्यायमूर्ति.—मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy] dk;dkjh e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

मोख्तार सिंह

cuke

हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड

W.P. (PIL) No. 5382 of 2011. Decided on 5th August, 2013.

भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰—सेवानिवृत्ति लाभों एवं बकाया पर ब्याज पाने के लिए प्रत्यर्थी कंपनी के कर्मचारियों के संघ द्वारा रिट याचिका दाखिल की गयी—प्रत्यर्थी कंपनी को कर्मकारों के अभ्यावेदन को विनिश्चित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 1 एवं 3)

निर्णयज विधि.—(2011) 5 SCC 464—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s P.C. Tripathi, Ravindra Narain Sinha, For the Petitioner; Mr. Rajiv Ranjan, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, ए॰सी॰जे॰.—याची के लिए उपस्थित अधिवक्ता अनुदेश पर निवेदन करते हैं कि वस्तुत: इस रिट याचिका को सेवानिवृत्ति लाभों और बकाया मजदूरी पर ब्याज, अवकाश यात्रा मुआवजा दावा, अवकाश नगदकरण दावा, चिकित्सीय सुविधा राशि, आदि पाने के लिए प्रत्यर्थी कंपनी के कर्मचारियों के संघ द्वारा दाखिल किया गया है और वे व्यक्तिगत रूप से प्रत्यर्थी कंपनी को अभ्यावेदन देंगे और लगभग 283 कर्मचारियों के इन अभ्यावेदनों को प्रत्यर्थीगण पर प्रयोज्य विधि, नियमावली, विनियम, नीति, आदि के अनुरुप निपटाने के लिए प्रत्यर्थी कंपनी को उपयुक्त निर्देश दिया जाए।

2. प्रत्यर्थी कंपनी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि कोई व्यापक जनहित अंतर्ग्रस्त नहीं है, अत: **भोलानाथ मुखर्जी एवं अन्य बनाम रामाकृष्ण मिशन विवेकानंद सेंटेनेरी**

कॉलेज एवं अन्य, (2011)5 SCC 464 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के आलोक में विशेषत: उसके पैरा 31 को देखते हुए सेवानिवृत्ति लाभों और/अथवा सेवा मामले को पाने के लिए यह याचिका विधि में मान्य नहीं है।

3. याची के अधिवक्ता के इसी सीमित तर्क की दृष्टि में हम एतद् द्वारा प्रत्यर्थी कंपनी को कर्मकारों द्वारा मजदूरी के विलंबित भुगतान पर ब्याज, आदि पाने के लिए आवेदनों को यदि इसे कर्मकारों द्वारा इस न्यायालय की प्रति की प्राप्ति की तिथि से दो सप्ताह के भीतर दाखिल किया जाता है, विनिश्चित करने का निर्देश देते हैं। इस निर्णय को प्रत्यर्थी द्वारा उनके अभ्यावेदनों को पाने के बाद प्रत्यर्थी तथा उसके कर्मचारियों पर प्रयोज्य विधि, नियमावली, विनियमनों और नीति के अनुरुप यथासंभव शीघ्र और व्यवहार्यत: लिया जाएगा।

4. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों की दृष्टि में यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जगरानी केरकेत्ता

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2266 of 2013. Decided on 16th September, 2013.

विद्यालय विधियाँ–नियुक्ति–सहायक शिक्षक का पद–याची द्वारा झारखंड एकेडमिक परिषद् द्वारा जारी प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के साथ इंटरमीडियट की अध्यपेक्षित न्यूनतम अर्हता रखने के बावजूद याची की नियुक्ति को अनुमोदित नहीं किया गया–निदेशक, प्राथमिक शिक्षा को याची की नियुक्ति को अनुमोदन प्रदान करने के संबंध में सूचित निर्णय लेने का निर्देश दिया गया–याची पारिणामिक लाभों को पाएगी। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Sumeet Gadodia, For the Petitioner; Mr. B.N. Tiwary, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची आर॰ सी॰ प्राथमिक विद्यालय, चूरिया, थेथाई टंगार अंचल, जिला सिमडेगा, सरकारी सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालय की प्रबंधन कमिटी द्वारा दिनांक 24.2.2012 को सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने का दावा करती है। याची के अनुसार, उक्त विद्यालय में रिक्त पद पर सहायक शिक्षक की नियुक्ति के लिए दिनांक 2.2.2012 को प्रकाशित विज्ञापन के अनुसरण में राज्य सरकार के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में चयन कार्य पूरा किया गया था। याची उक्त चयन कार्य में उपस्थित हुई और झारखंड एकेडमिक परिषद् द्वारा जारी दो वर्षों के प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के न्यूनतम अध्यपेक्षित अर्हता रखती थी। तत्पश्चात उसकी नियुक्ति पर प्रबंधन कमिटि द्वारा अनुमोदन के लिए अभिलेखों को जिला शिक्षा अधीक्षक, सिमडेगा को भेजा गया था क्योंकि यह सरकारी सहायता प्राप्त

अल्पसंख्यक विद्यालय में नियुक्ति के संबंध में विधि में आवश्यक आवश्यकता है। किंतु, उक्त अनुशंसा पर अभी तक कोई निर्णय नहीं लिया गया है जो सक्षम प्राधिकारी के समक्ष लंबित है। याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 3, निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार, राँची के समक्ष दिनांक 3.2.2012 के परिशिष्ट-4 के तहत अभ्यावेदन भी दिया है। ऐसी परिस्थितियों में, यह प्रार्थना की गयी है कि प्रत्यर्थी सं॰ 3 को उक्त विद्यालय में याची की नियुक्ति को अनुमोदन प्रदान करने और वेतनमान आदि नियत करने के संबंध में विधि के अनुरुप सही निर्णय लेने का निर्देश दिया जा सकता है।

3. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यदि ऐसा निर्देश दिया जाता है, प्रत्यर्थी सं॰ 3 उक्त विद्यालय के संबंध में याची के समस्त प्रासंगिक सेवा अभिलेखों के सत्यापन के बाद विधि के अनुरूप सही निर्णय लेगा।

4. ऐसी परिस्थितियों में, याची के दावा के गुणागुण पर कोई टिप्पणी किए बिना प्रत्यर्थी सं॰ 3, निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार, राँची को उक्त आर॰ सी॰ विद्यालय, चूरिया सिमडेगा में याची की नियुक्ति को अनुमोदन प्रदान करने के संबंध में और याची के वेतनमान के नियतकरण और वेतन के भुगतान के प्रश्न पर विधि के अनुरुप सही निर्णय लेने का निर्देश देते हुए इस रिट याचिका को निपटाया जाता है। उक्त कार्य इस न्यायालय के आदेश की प्रति की प्राप्ति से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर पूरा किया जाए।

5. यह कहना अनावश्यक है कि उससे उद्भूत पारिणामिक लाभ तत्पश्चात याची के पक्ष में जाएँगे।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰

cuke

मोतीलाल प्रसाद एवं अन्य

Misc. Appeal No. 101 of 2005. Decided on 20th September, 2013.

मोटर यान अधिनियम, 1988—धारा 168—दुर्घटना–मुआवजा–इस आधार पर दायित्व से इनकार किया जा रहा है कि उल्लंघनकारी वाहन के चालक के पास घटना की तिथि पर वैध लाइसेंस नहीं था–अपीलार्थी यह सिद्ध करने के लिए कोई दस्तावेज लाने में विफल रहा कि जारी किया गया लाइसेंस कूटरचित और नकली था–अपीलार्थी को अद्यतन ब्याज के साथ अधिनिर्णीत मुआवजा जमा करने का निर्देश दिया गया–अपील खारिज की गयी। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Alok Lal, For the Petitioner; None, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान अपील मेसर्स न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लि॰ द्वारा मुआवजा केस सं॰ 21 वर्ष 2000 के संबंध में विद्वान प्रथम अपर जिला न्यायाधीश-सह-मोटर यान दुर्घटना दावा अधिकरण, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 17.3.2005 के निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल दावा आवेदन अनुज्ञात किया गया है और अपीलार्थी को ब्याज के साथ अधिनिर्णीत राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है जैसा आक्षेपित निर्णय में उपदर्शित किया गया है।

2. प्रत्यर्थीगण नोटिस तामील किए जाने के बाद भी उपस्थित नहीं हुए हैं और इसलिए, उनके विरुद्ध अपील एकपक्षीय रूप से सुनी जा रही है।

3. अपीलार्थी ने केवल एक विवाद्यक उठाया है कि उल्लंघनकारी वाहन के चालक के पास घटना की तिथि पर वैध लाइसेंस नहीं था और उल्लंघनकारी वाहन के स्वामी ने ऐसे व्यक्ति जिसके पास वैध लाइसेंस नहीं था को सड़क पर वाहन चलाने की अनुमति दी थी। चूँकि आर॰ 2 वाहन स्वामी ने पॉलिसी के निबंधनों का उल्लंघन किया था, उसको दावेदारों को मुआवजा का भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था और अपीलार्थी पर दायित्व नहीं डालना चाहिए था। इस संदर्भ में, विद्वान अधिवक्ता ने मेरा ध्यान ओ॰ पी॰ डब्ल्यू॰ 1 सोमेन कुमार बागची के साक्ष्य की ओर आकृष्ट किया है जिसने अन्वेषक के रिपोर्ट को सिद्ध किया है जो उपदर्शित करता है कि आर॰ 3 चालक के पास वैध लाइसेंस नहीं था और उक्त ओ॰ पी॰ डब्ल्यू॰ I ने दस्तावेजों प्रदर्श B श्रृंखला को सिद्ध किया है जो डी॰ टी॰ ओ॰, कानपुर के कार्यालय द्वारा जारी रिपोर्ट सम्मिलित करता है। डी॰ टी॰ ओ॰ कानपुर के रिपोर्ट के मुताबिक, लाइसेंस जिसे अभिलेख पर लाया गया था कूटरचित और नकली था और इसे डी॰ टी॰ ओ॰, कानपुर के कार्यालय से जारी नहीं किया गया था।

4. विद्वान अधिवक्ता ने मेरा ध्यान पैराग्राफ 9 की ओर भी आकृष्ट किया है जिसमें विवाद्यक सं॰ 3 पर चर्चा की गयी थी। यह प्रतिवाद किया गया है कि विद्वान अधिकरण ने दस्तावेजों प्रदर्श B श्रृंखला पर विश्वास नहीं करके गंभीर गलती किया है जो यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थे कि उल्लंघनकारी वाहन के चालक के पास वैध लाइसेंस नहीं था। अधिकरण ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी द्वारा नियुक्त अन्वेषकों को न्यायालय द्वारा डी॰ टी॰ ओ॰ के कार्यालय के उन दस्तावेजों अथवा अभिलेखों को सत्यापित करने के लिए प्राधिकृत नहीं किया गया था और इसलिए उन दस्तावेजों पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। संप्रेक्षण कि दस्तावेज प्रदर्श B श्रृंखला विश्वसनीय नहीं हैं और उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है, मान्य नहीं है और इसलिए, इस संबंध में विद्वान अधिकरण के निष्कर्ष अवैध हैं और अपास्त किए जाने के दायी हैं। अधिनिर्णीत राशि का भुगतान करने का दायित्व आर॰ 2 अर्थात् वाहन स्वामी पर डालने का निर्देश दिया जाना चाहिए था।

5. मैंने आक्षेपित निर्णय और केस रिकॉर्ड का परिशीलन किया है जो मेरे समक्ष उपलब्ध हैं। अभिलेख पर सामने आने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि दावेदार मोतीलाल प्रसाद अपनी पत्नी के साथ अपने टी॰ वी॰ एस॰ मोपेड पर बर्मा माइंस की ओर जा रहा था किंतु रास्ते में विजय प्रसाद के घर के निकट BR 16G-6611 रजिस्ट्रेशन संख्या वाला ट्रक लापरवाह और उपेक्षापूर्ण चालन के कारण दावेदार से टकराया जिसके परिणामस्वरुप दावेदार और उसकी पत्नी ने उपहतियाँ प्राप्त की और उन्हें इलाज के लिए टाटा मेन अस्पताल ले जाया गया था किंतु दावेदार की पत्नी सोमारी देवी ने उपहतियों के कारण दम तोड़ दिया। इस संबंध में, उल्लंघनकारी वाहन के चालक के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279, 304A और 427 के अधीन बर्मा माइंस (गोलमुड़ी) पी॰ एस॰ केस सं॰ 21/2000 दिनांक 1.2.2000 को दर्ज किया गया था। दावेदार ने उपहतियों तथा अपनी पत्नी की मृत्यु के विरूद्ध मुआवजा दिए जाने के लिए विद्वान अधिकरण के समक्ष मुआवजा केस सं॰ 21 वर्ष 2000 दाखिल किया है जिस पर विचारण करने और साक्ष्य दर्ज करने के बाद सम्यक रूप से विचार किया गया था। विचारण के दौरान लाइसेंस जो आर॰ 3 राम दयाल सिंह के नाम में था को अभिलेख पर लाया गया था। अपीलार्थी ने डी॰ टी॰ ओ॰, कानपुर के कार्यालय से लाइसेंस की वास्तविकता सत्यापित करने के लिए अन्वेषक नियुक्त किया था, जहाँ से इसे अभिकथित रूप से आर॰ 3 रामदयाल सिंह के नाम में जारी किया गया था।

6. अब ओ॰ पी॰ डब्ल्यू॰ 1 सोमन कुमार बागची के साक्ष्य पर आते हुए। यह प्रतीत होता है कि उसने बीमा पॉलिसी प्रदर्श A, अरुण कुमार तिवारी द्वारा प्रस्तुत अन्वेषण रिपोर्ट प्रदर्श B, अनिल कुमार

अनल द्वारा प्रस्तुत अन्वेषण रिपोर्ट प्रदर्श B/1 और अन्वेषक नरेन्द्र कुमार दुआ द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट प्रदर्श B/2 को सिद्ध किया है। मैं संप्रेक्षित करना चाहूँगा कि ये समस्त दस्तावेज प्रदर्श B श्रृंखला अपीलार्थी द्वारा नियुक्त विभिन्न अन्वेषकों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट हैं। इन दस्तावेजों में से किसी को डी० टी० ओ०, जमशेदपुर अथवा डी० टी० ओ० हजारीबाग अथवा डी० टी० ओ० कानपुर द्वारा जारी नहीं किया गया है। अपीलार्थी अनुज्ञापन प्राधिकारी, कानपुर के कार्यालय से जारी लाइसेंस की वास्तविकता के संबंध में रिपोर्ट को अभिलेख पर लाने में विफल रहा है। ओ० पी० डब्ल्यू० 1 के साक्ष्य और दस्तावेज प्रदर्श B श्रृंखला की दृष्टि में बीमा कंपनी अभिलेख पर इसे लाने में विफल रही कि आर० 3 रामदयाल सिंह के नाम में जारी ड्राइविंग लाइसेंस नकली और कूटरचित था। कुछ सीमा तक, मैं सहमत हूँ कि आक्षेपित निर्णय के पैरा 9 में विद्वान अधिकरण द्वारा दिए गए तर्क और उसमें किए गए संप्रेक्षण अवर न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा उठाए गए विवाद्यक को त्यक्त करने के लिए समुचित नहीं हैं।

7. चाहे जो भी हो, मैंने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी यह सिद्ध करने के लिए कि आर० 3 के नाम में जारी लाइसेंस कूटरचित और नकली था, अभिलेख पर किसी दस्तावेज को लाने में विफल रहा है।

8. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस अपील में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे खारिज किया जाता है। अपीलार्थी को इस आदेश की तिथि से 60 दिनों के भीतर अद्यतन ब्याज के साथ अधिनिर्णीत राशि को अधिकरण के समक्ष जमा करने का निर्देश देता हूँ और चेक जमा किए जाने पर उसे दावेदार को सौंपा जा सकता है। अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष जमा की गयी 25,000/- रुपयों की सांविधिक राशि भी अधिकरण को प्रेषित की जाएगी ताकि दावेदार द्वारा राशि निकाली जा सके।

9. निर्णय से अलग होने के पहले अपीलार्थी को यह सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर लाया गया आर० 3 राम दयाल सिंह के नाम में जारी ड्राइविंग लाइसेंस नकली और कूटरचित था, साक्ष्य देकर और अभिलेख पर समुचित दस्तावेज लाकर पृथक कार्यवाही आरंभ करने की स्वतंत्रता दी जाती है यदि वह ऐसा करने का आशय रखता है और यदि वे इस तथ्य को सिद्ध करने में सफल होते हैं, वे राशि की बरामदगी के लिए वाहन के स्वामी पर मुकदमा कर सकते हैं। आगे यह स्पष्ट किया जाता है कि दावेदार को परेशान नहीं किया जाएगा और उसे पक्ष नहीं बनाया जाना चाहिए यदि बीमाकर्ता और बीमाकृत के बीच विवाद जारी रहता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मनमोहन लाल शर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP(S) No. 5001 of 2012. Decided on 21st September, 2013.

बिहार उपभोक्ता संरक्षण नियमावली, 1987—नियम 3 (5) (e)—जिला फोरम की सदस्यता की समाप्ति–जाँच अधिकारी ने उसका काम संतोषजनक पाया–यह अभिकथित नहीं किया जा सकता है कि उसने अपनी हैसियत का दुरुपयोग किया है ताकि उसके पद में बने रहने को लोकहित के प्रति प्रतिकूल बनाया जा सके–आक्षेपित आदेश किसी नोटिस अथवा कारण बताओ के बिना नैसर्गिक न्याय के उल्लंघन में पारित किया गया है और विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha & R. Satendra, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची सचिव, खाद्य नागरिक आपूर्त्ति एवं उपभोक्ता कार्यकलाप विभाग, झारखंड सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी रिट याचिका के परिशिष्ट 8 पर अंतर्विष्ट दिनांक 21.8.2012 के मेमो सं॰ 2749 में अंतर्विष्ट अधिसूचना के अभिखंडन के लिए इस न्यायालय के पास आया है। याची की शिकायत यह है कि उक्त आदेश उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1996 की धारा 30 की उपधारा (2) के अधीन विरचित बिहार उपभोक्ता संरक्षण नियमावली, 1987 (अब झारखंड द्वारा अपनाया गया) के नियम 3 (5) (e) के अधीन शक्तियों के तात्पर्यित प्रयोग में दिनांक 8.12.2010 से दिनांक 30.6.2011 तक उसकी अनुपस्थिति के आधार पर पारित किया गया है।

3. याची के अनुसार दिनांक 8.12.2010 से दिनांक 30.6.2011 तक की अवधि के लिए उसकी अनुपस्थिति को यह अर्थ लगाने के लिए अभिकथित नहीं किया जा सकता है कि उसने अपने पद का दुरुपयोग किया है ताकि उसके पद पर बने रहने को लोकहित के लिए प्रतिकूल बनाया जा सके। याची की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि विज्ञापन के अधीन उपभोक्ता फोरम, बोकारो के सदस्य के पद के लिए सम्यक रूप से चयनित किए जाने के बाद उसे परिशिष्ट 1 के दिनांक 23.7.2010 के मेमो सं॰ 1643 में अंतर्विष्ट अधिसूचना के तहत सदस्य नियुक्त किया गया था। आक्षेपित अधिसूचना याची को किसी नोटिस अथवा कारण बताओ के बिना जारी किया गया है। याची की ओर से पुनः कथन किया गया है कि नियुक्ति के समय पर याची किसी निःशक्तता से पीड़ित नहीं था जिसे दिनांक 23.7.2010 के नियुक्ति आदेश में विहित किया गया है। याची को बाद में दांडिक मामले निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 68 वर्ष 2010 में लिप्त किया गया था। इसे उसकी नियुक्ति के काफी बाद दिनांक 6.12.2010 को संस्थित किया गया था। किसी भी स्थिति में, याची की ओर से आगे कथन किया गया है कि उक्त निगरानी मामले में भी याची को भा॰ दं॰ सं॰ की विभिन्न धाराओं के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन भी लगाए गए अभिकथित आरोपों से दिनांक 7.8.2013 के दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 893 वर्ष 2012 में इस न्यायालय की विद्वान एकल पीठ द्वारा पारित आदेश के तहत उन्मोचित किया गया है। याची की ओर से यह निवेदन भी किया गया है कि उसकी अभिकथित अप्राधिकृत अनुपस्थिति की उक्त अवधि में वस्तुतः याची के बड़े भाई की मृत्यु हो गयी थी और तत्पश्चात स्वयं अपनी बीमारी के कारण वह लंबे समय तक दिनांक 1 जुलाई, 2011 से आगे अपना कर्तव्य पुनः चालू करने तक वह स्वस्थ नहीं हो सका था। याची के विद्वान अधिवक्ता परिशिष्ट 7 श्रृंखला, दिनांक 21.2.2012 के पत्र सं॰ 211 के तहत जिला आपूर्ति अधिकारी, बोकारो द्वारा तैयार की गयी रिपोर्ट, पर विश्वास करते हैं जिसमें यह कथन किया गया है कि याची अप्राधिकृत अवकाश में नहीं था और उसका काम संतोषजनक पाया गया था। उक्त रिपोर्ट उपायुक्त बोकारो के निर्देश पर तैयार की गयी थी और दिनांक 13.3.2012 के पत्र, परिशिष्ट 7 के तहत प्रधान सचिव, खाद्य, नागरिक आपूर्त्ति एवं उपभोक्ता कार्यकलाप विभाग झारखंड सरकार को अग्रसारित की गयी थी।

4. इन परिस्थितियों में, याची की ओर से निवेदन किया गया है कि जिला फोरम, बोकारो से याची की सदस्यता की समाप्ति का आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध मनमाना और किसी कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में है और इसलिए, यह अपास्त किए जाने योग्य है।

5. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश को इस आधार पर न्यायोचित ठहराया है कि याची दिनांक 8.12.2010 से दिनांक 30.6.2011 तक लंबे समय के लिए अप्राधिकृत अवकाश पर बना रहा। प्रत्यर्थीगण द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि ऐसी परिस्थितियों में जब जिला उपभोक्ता फोरम के ऐसे सदस्य के अप्राधिकृत अवकाश को नियमित करने के लिए 1987 की नियमावली के नियम 3 (5) (e) के प्रावधानों का अवलंब लिया है। किंतु, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता इस प्रतिवाद को विवादित करने में सक्षम नहीं हुए है कि सदस्यता समाप्ति का उक्त आदेश याची को किसी कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना जारी किया गया है। प्रत्यर्थीगण यह भी विवादित नहीं करते हैं कि निगरानी मामले में जिसे कतिपय अभिकथित आरोपों पर याची के विरुद्ध संस्थित किया गया था, उसे दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 893 वर्ष 2012 में याची की ओर से दाखिल पूरक शपथपत्र का परिशिष्ट 10, इस न्यायालय की विद्वान एकल पीठ द्वारा उन्मोचित कर दिया गया है।

6. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का विश्लेषण किया है। याची को अन्य व्यक्तियों के अतिरिक्त, जिन्हें भी नियुक्त किया गया था, जिला फोरम, बोकारो के सदस्य के पद पर दिनांक 23.7.2010 की अधिसूचना, परिशिष्ट–1 के तहत सम्यक रूप से नियुक्त किया गया था। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 10 (1) के अधीन प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में दिनांक 23.7.2010 को नियुक्ति का उक्त आदेश पारित करने के समय पर याची के विरुद्ध कोई दांडिक मामला लंबित नहीं था यद्यपि ऐसी शर्त वहाँ थी कि पदधारी को किसी दांडिक मामले में नामित नहीं होना चाहिए और न ही उसे दोषसिद्ध होना चाहिए। बाद में, यह प्रतीत होता है कि याची को दिनांक 6.12.2010 को संस्थित निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 68 वर्ष 2010 में भा॰ दं॰ सं॰ के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन आरोपों के लिए आलिप्त किया गया था। किंतु, यह भी तथ्य है कि याची को दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 893 वर्ष 2012 में दिनांक 7.8.2013 के निर्णय के तहत, पूरक शपथपत्र का परिशिष्ट 10, में उसके द्वारा दाखिल दांडिक पुनरीक्षण में पारित आदेश द्वारा उक्त निगरानी मामले में उन्मोचित किया गया था। यह भी विवादित नहीं है कि याची की सदस्यता की समाप्ति का आदेश 1987 नियमावली के नियम 3 (5) (e) के प्रावधान का अवलंब लेकर किसी कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना पारित किया गया है। बेहतर अधिमूल्यन के लिए 1987 नियमावली के नियम 3 के प्रासंगिक प्रावधानों को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"3. **ftyk Qkje d vè;{k ,o lnL;k d oru vkj vU; HkÙk rFkk fucèku ,o 'kr-&**(1) ftyk Qkje dk vè;{k i.kdkfyd vkèkkj ij fu;Dr fd, tku ij ftyk U;k;kèkh'k dk oru çkIr djxk vFkok v'kdkfyd vkèkkj ij fu;Dr fd, tku ij vè;{krk d fy, 150/-#i;k çfrfnu dk ekun; çkIr djxkA vU; lnL; i.kdkfyd vkèkkj ij cBu ij 2000/-#i;k çfrekg dk lefdr ekun; çkIr djx vkj v'kdkfyd vkèkkj ij cBu ij 100/-#i;k çfr cBd dk lefdr ekun; ik,xA*

(2) ftyk Qkje] d vè;{k vkj lnL;x.k vkfèkdkfjd nkj ij ,l ;k=k HkÙk vkj nfud HkÙk d gdnkj gkx tk jkT; ljdkj d ox&I vfèkdkjh dk xkg; gA

(3) oru] ekun; vkj vU; HkÙkk dk jkT; ljdkj dh lefdr fufèk l pdk;k tk,xkA

(4) fu;fDr d igy ftyk Qkje d vè;{k vkj lnL;k dk opu nuk gkxk fd mudk ,l dkb foÙkh; vFkok vU; fgr ugh g vkj ugh gkxk ftldk lnL; d :i e mld dk; dk çfrdy :i l çHkkfor dju dh lHkkouk gA

(5) èkkjk 10(2) d çkoèkkuk d vfrfjDr jkT; ljdkj ftyk Qkje d vè;{k vkj lnL; dk in l gVk ldrh g tk

(a) fnokfy;k fu.khr fd;k x;k g] vFkok

(b) ,l vijkèk d fy, nk"kfl) fd;k x;k g tk jkT; ljdkj d er e ufrd vèkerk vrxLr djrk g] vFkok

(c) lnL; d :i e ÑR; dju d fy, 'kkjhfjd vFkok ekufld :i l v{ke cu x;k g] vFkok

(d) ,l foÙkh; vFkok vU; fgr vftr fd;k g ftldh lnL; d :i e mld dk;k dk çfrdy :i l çHkkfor dju dh lHkkouk g] vFkok

(e) viuh gfl;r dk ,l n#i;kx fd;k g tk in ij mld cu jgu dk ykdfgr d çfr çfrdy cuk nrk g%

ijUr ;g fd vè;{k vFkok lnL; dk ,l çfØ;k] ftl bl fufeÙk fofufn"V fd;k tk ldrk g] d vu#i vkj ,l vkèkkj ij lnL; dk nk"kh iku d flok, mifu;e (5) d [kMk (d) vkj (e) e fofufn"V vkèkkj ij viu in l ugh gVk;k tk,xk]

(6) ftyk Qkje d vè;{k vkj lnL;k dh lok d fucèkuk vkj 'krk dk mudh inkofèk d nkjku mud vykHk d çfr ifjofrr ugh fd;k tk,xkA

(7) tc ftyk Qkje d vè;{k d in e ,l fjfDr gkrh g] ftyk Qkje dk ojh;re lnL; (fu;fDr d Øekulkj) rRle; in èkkj.k djr g, vè;{k d dk;k dk rc rd fuogu djxk tc rd ,l fjDrrk dk Hkj tku d fy, fu;Dr 0;fDr ftyk Qkje d vè;{k dk in xg.k ugh djrk gA

(8) tc ftyk Qkje dk vè;{k vuifLFkfr] chekjh vFkok fdlh vU; dkj.k l dr0; dk fuogu dju e v{ke g] ftyk Qkje dk ojh;re lnL; (fu;fDr d Øekulkj) vè;{k d dk;k dk fuogu ml fnu rd djxk tc vè;{k viu dk;k dk çHkkj iuh% y yrk gA

*(9) vè;{k vFkok dkb lnL; in NkMu ij fdlh lxBu d çcèku vFkok ç'kklu e vFkok ml l lcfèkr fdlh fu;fDr dk] tk ,l in NkMu dh frfFk l ikp o"kk dh vofèk d viuh inkofèk d nkjku vfèkfu;e d vèkhu fdlh dk;okgh dk fo"k; jgk g] èkkj.k ugh djxkA***

7. दूसरी ओर, दिनांक 13.3.2012 और दिनांक 21.2.2012 की परिशिष्ट–7 श्रृंखला के तहत जाँच रिपोर्ट के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि जिला आपूर्ति अधिकारी ने याची की अनुपस्थिति को अप्राधिकृत नहीं पाया था। जाँच अधिकारी ने जिला उपभोक्ता फोरम के अध्यक्ष से पूछताछ करने

पर उसके काम को संतोषजनक पाया था। ऐसी परिस्थितियों में, यह अभिकथित नहीं किया जा सकता है कि उसने अपनी हैसियत का दुरुपयोग किया है जो उसके अपने पद पर बने रहने को लोकहित के प्रति प्रतिकूलकारी बना देगा। किंतु यदि नियम उपभोक्ता फोरम के सदस्य की ऐसी अनुपस्थिति के नियमितिकरण का प्रावधान अंतर्विष्ट नहीं करते हैं, वह यह अभिकथित करने के लिए कि प्रश्नगत व्यक्ति ने लोक हित के प्रति अपने पद पर बने रहने को प्रतिकूलकारी बनाने के लिए अपनी हैसियत का दुरुपयोग किया है, नियम 3 (5) (e) का अवलंब लेने का आधार नहीं हो सकता है। आक्षेपित आदेश किसी नोटिस अथवा कारण बताओ के बिना नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में पारित किया गया है, अत: इसे विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। नियम 3 (5) (e) के प्रावधान शक्ति का ऐसा प्रयोग किए जाने के पहले सदस्य का दोष स्थापित करने के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया के अनुरुप जाँच भी अनुबंधित करते हैं जिसे प्रकटत: वर्तमान मामले में नहीं किया गया है।

8. अत:, दिनांक 21.8.2012 की आक्षेपित अधिसूचना, परिशिष्ट 8 विधि में और तथ्यों पर संपोषित नहीं की जा सकती है और तद्नुसार, इसे अभिखंडित किया किया जाता है। याची को जिला उपभोक्ता फोरम में अपनी पदावधि की शेष अवधि पूरा करने की अनुमति दी जाएगी किंतु वह सेवा से बाहर रहने की अवधि के लिए किसी वेतन का हकदार नहीं होगा।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

राधेश्याम राम

cuke

मुनि तिवारी एवं अन्य

W.P. (C) No. 4892 of 2012. Decided on 11th July, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 21 नियम 22—प्रति आपत्ति दाखिल किया जाना—प्रति आपत्ति दाखिल करने के लिए प्रति आपत्तिकर्ता को डिक्री द्वारा विवाद्यक पर किसी निष्कर्ष से व्यथित होना चाहिए था—अवर न्यायालय ने दर्ज किया कि प्रति आपत्तिकर्ता अवर न्यायालय में पक्ष नहीं था और न ही वह अवर न्यायालय के किसी निर्णय से व्यथित था—अवर न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल प्रति-आपत्ति अस्वीकार करते हुए अधिकारिता और अपने में निहित शक्ति का प्रयोग करने में कोई गलती नहीं किया—आपत्ति में उठाए गए विवाद्यक को निष्पादन न्यायालय द्वारा और न कि पृथक वाद के रूप में विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है—रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 10 से 12)

अधिवक्तागण.—M/s. L.K. Lal, Kundan Kr. Ambastha, For the Petitioner; Mr. Shailendra Kr.Tiwari, For the Respondents.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल करके हक अपील सं॰ 1 वर्ष 2011 में विद्वान जिला न्यायाधीश, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 27.6.2012 के आदेश को अभिखंडित/अपास्त करने के लिए समुचित रिट/आदेश/निर्देश जारी करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा विद्वान जिला न्यायाधीश ने डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 28 मार्च, 2012 के अनुसरण में इसको पुन: सुनने के बाद याची की ओर से दाखिल प्रति आपत्ति को ग्रहण करने से इनकार कर दिया।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. आक्षेपित आदेश और अभिलेख पर उपलब्ध अन्य सामग्रियों का परिशीलन किया गया।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने वर्तमान याचिका को उद्भूत करने वाले तथ्यों का कथन करते हुए निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण/वादीगण ने याची के पिता अर्थात् सरजू राम (अब मृत), जिसे उक्त वाद में प्रतिवादी सं॰ 19 बनाया गया था, द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित दिनांक 5.8.1980 और दिनांक 21.5.1982 के दो विक्रय विलेखों के आधार पर अपने अधिकार, हक और हित की घोषणा के लिए और वाद भूमि का कब्जा पुनः पाने के लिए हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 दाखिल किया।

5. वादीगण/प्रत्यर्थीगण का मामला यह है कि वादी सं॰ 2 ने सरजू राम द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित दिनांक 5.8.1980 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख द्वारा वाद की अनुसूची-A भूमि खरीदा और साथ-साथ वादी सं॰ 2 ने इस प्रकार खरीदी गयी जमीन को दिनांक 5.8.1980 और दिनांक 5.8.1983 के बीच सरजू राम के पक्ष में भूमि के पुनर्हस्तांतरण का करार निष्पादित किया। इसी प्रकार से, वादी सं॰ 1 ने सरजू राम द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित दिनांक 21.5.1982 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख द्वारा वाद की अनुसूची B भूमि खरीदा और साथ-साथ वादी सं॰ 1 ने इस प्रकार खरीदी गयी भूमि को सरजू राम के पक्ष में पुनर्हस्तांतरित करने के लिए दिनांक 21.5.1981 और दिनांक 21.5.1984 के बीच करार भी निष्पादित किया। वादी सं॰ 1 और 2 पति-पत्नी है, उन्होंने अनुसूची A और B की भूमि को एक खंड में मिलाया जिसे वाद भूमि के रूप में अनुसूची C में वर्णित किया गया है। वादीगण का आगे मामला यह है कि बाद में सरजू राम वादी सं॰ 1 को पुनर्हस्तांतरण के समस्त बाध्यताओं और दायित्वों से उन्मोचित करते हुए प्रतिफल के लिए दिनांक 5.8.1983 को 'सादा' करार विलेख निष्पादित करके पुनर्हस्तांतरण के अपने अधिकार को त्यागने के लिए सहमत हुआ किंतु तत्पश्चात दिनांक 21.5.1982 के संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वादी सं॰ 1 के विरुद्ध हक वाद सं॰ 9 वर्ष 1984 संस्थित किया जिसे दिनांक 21.4.1984 को खारिज कर दिया गया था और तत्पश्चात, उक्त निर्णय के विरुद्ध सरजू राम द्वारा दाखिल हक अपील सं॰ 1 वर्ष 1989 जिला न्यायाधीश, पलामू के समक्ष लंबित है। किंतु, हक वाद सं॰ 9 वर्ष 1984 के संस्थापन के बाद प्रतिवादी सं॰ 1 से 18 ने सरजू राम द्वारा उनके पक्ष में बोगस विक्रय विलेखों को निष्पादित करवाया है और उक्त विक्रय विलेखों के बूते पर प्रतिवादी सं॰ 1 से 18 ने वादी सं॰ 1 और उसके परिवार के सदस्यों की अनुपस्थिति के दौरान वाद भूमि अर्जित करने का प्रयास किया, प्रतिवादी सं॰ 1 से 8 ने वाद भूमि के उपर भवन निर्माण के लिए नींव खोदने का प्रयास किया।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वाद के लंबित रहने के दौरान याची के पिता सरजू राम की मृत्यु हो गयी और चूँकि उसने अपनी मृत्यु के पहले अपना लिखित कथन दाखिल नहीं किया था, विद्वान विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा XXII नियम 4 (4) के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए दिनांक 21.2.2002 के अपने आदेश के तहत वादीगण को इस वाद में प्रतिवादी सं॰ 19 के स्थान पर मृतक सरजू राम के उत्तराधिकारी और विधिक प्रतिनिधि को प्रतिस्थापित करने से छूट दे दिया है और इस प्रकार, याची, जो स्व॰ सरजू राम का एकमात्र उत्तराधिकारी और विधिक प्रतिनिधि था, को अपने मृत पिता सरजू राम के स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया गया था। आगे निवेदन किया गया है कि याची अपने अधिवक्ता की सलाह पर मामले में उपस्थित हुआ और स्वयं को पक्ष के रूप में कतारबद्ध करने के लिए याचिका दाखिल किया और अपना लिखित कथन भी दाखिल किया किंतु इसे विचारण न्यायालय द्वारा लौटा दिया गया था और स्वीकार नहीं किया गया था और अंततोगत्वा वाद विद्वान उप-न्यायाधीश I, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 20 दिसंबर, 2010 के निर्णय और डिक्री के निबंधनानुसार डिक्री किया गया था और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXII नियम 4A की दृष्टि में उक्त निर्णय का वही बल और प्रभाव है मानो इसे सरजू राम की मृत्यु के पहले उद्घोषित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 की प्रतिवादी सं॰ 9 अर्थात् श्रीमती निर्मला देवी, जिसने सरजू राम से खरीददारों में से एक होने का दावा किया, ने दिनांक 20 दिसंबर, 2010

के पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध हक अपील सं॰ 1 वर्ष 2011 दाखिल किया और उक्त अपील में याची को प्रत्यर्थी सं॰ 20 बनाया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अपील की नोटिस की प्राप्ति पर याची उपस्थित हुआ और प्रति आपत्ति दाखिल करने के लिए विधि के अधीन विहित समय के भीतर पर्याप्त न्यायालय शुल्क के साथ अपना प्रति-आपत्ति दाखिल किया और प्रति आपत्ति के रूप में कोई त्रुटि नहीं थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने चुनौती के अधीन आक्षेपित निर्णय और डिक्री का विरोध करने के लिए मुख्यत: विधि के प्रश्नों पर अनेक आधारों को उठाया। आगे यह निवेदन किया गया है कि इसके प्रत्युत्तर में वादीगण-प्रत्यर्थीगण ने अपने लिखित कथन के रूप में पूर्वोक्त प्रति आपत्ति का उत्तर दाखिल किया और इस आधार पर प्रति-आपत्ति की खारिजी के लिए प्रार्थना किया कि सरजू राम ने अपना लिखित कथन दाखिल नहीं किया था और वाद उसके विरुद्ध एकपक्षीय रूप से चला और चूँकि वाद में सरजू राम के स्थान में प्रति आपत्तिकर्ता को प्रतिस्थापित नहीं किया गया था और चूँकि वह वाद में पक्ष नहीं था, उसे चुनौती के अधीन निर्णय द्वारा व्यथित नहीं कहा जा सकता था और प्रति-आपत्ति दाखिल करने के लिए उसके पास अधिकार नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 (2) सह-पठित आदेश XXII नियम 4 (4) के प्रावधान की दृष्टि में वादीगण-प्रत्यर्थीगण द्वारा अपने लिखित कथन में उठायी गयी आपत्ति विधि में मान्य नहीं है। किंतु, विद्वान अपीलीय न्यायालय ने दिनांक 20 दिसंबर, 2011 के अपने आदेश के तहत याची द्वारा दाखिल प्रति-आपत्ति ग्रहण करने से इस आधार पर इनकार कर दिया कि चूँकि याची अवर न्यायालय के निर्णय से व्यथित पक्ष नहीं है, उसे प्रति आपत्ति दाखिल करने का अधिकार नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने दिनांक 20 दिसंबर, 2011 का पूर्वोक्त आदेश अपास्त करवाने के लिए सिविल रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 दाखिल किया और इस न्यायालय ने दिनांक 28 मार्च, 2012 के अपने निर्णय और आदेश के तहत दिनांक 20 दिसंबर, 2011 का आदेश अपास्त कर दिया और कतिपय संप्रेक्षण करके रिट याचिका को निपटाया और मामला नए सिरे से विनिश्चित करने के लिए वापस अपीलीय न्यायालय के पास भेज दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि मामला वापस भेजे जाने पर पक्षों को प्रति आपत्ति की ग्राह्यता के बिंदु पर नए सिरे से सुना गया था। किंतु, विद्वान अवर न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 निपटाते हुए किए गए संप्रेक्षणों और निवेदनों का समुचित अधिमूल्यन किए बिना पुन: दिनांक 27.6.2012 के अपने आदेश के तहत समरुप आधारों पर, जिन पर इसने पहले इनकार किया था, प्रति आपत्ति ग्रहण करने से इनकार कर दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 27.6.2012 का आक्षेपित आदेश अवैध और विधि के विपरीत और अधिकारिताहीन है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय ने दूसरी बार समरुप आधारों पर प्रति आपत्ति ग्रहण करने से इनकार करने में गलती किया है यद्यपि उक्त आधारों को इस न्यायालय द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 में वैध अभिनिर्धारित नहीं किया गया था। यह निवेदन भी किया गया है कि आक्षेपित आदेश विधि में दोषपूर्ण है और घोर अन्याय के तुल्य है और यदि इसे बने रहने की अनुमति दी जाती है, यह वाद भूमि के उपर याची के अधिकार को असुधार्य, सारवान हानि और उपहति कारित करेगा और, इसलिए यह अभिखंडित किए जाने का दायी है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने विधि के बिंदु पर अपनी प्रति आपत्ति में अनेक वैध आधारों को उठाया है और उसकी सफलता की स्थिति में, उसकी पुश्तैनी भूमि के संबंध में दो अवैध विक्रय विलेखों के आधार पर वादीगण के पक्ष में हक अपील सं॰ 45 वर्ष 1994 में पारित चुनौती के अधीन निर्णय और डिक्री अपास्त किए जाने के लिए बाध्य है और याची को प्रति आपत्ति दाखिल करने का वैध अधिकार है और इसलिए याची अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए इस न्यायालय के पास आया है क्योंकि आक्षेपित आदेश के विरुद्ध भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इसकी रिट अधिकारिता में इस

न्यायालय के पास आने से भिन्न समान रूप से प्रभावकारी उपचार के लिए याची के पास कोई अन्य विकल्प नहीं है।

6. प्रत्यर्थीगण–वादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची के पिता सरजू राम ने वर्ष 1980 और 1982 में रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के तहत प्रत्यर्थी सं० 1 और 2 को वाद भूमि बेचा/अंतरित किया और वाद भूमि का अधिकार, हक और कब्जा सौंप दिया। उक्त अंतरण के बाद सरजू राम और इन प्रत्यर्थीगण के बीच वाद संपत्ति को पुनः हस्तांतरित करने के लिए दिनांक 21.5.1982 का करार हुआ था। सरजू राम ने दिनांक 5.8.1983 के करार के तहत एक अन्य प्रतिफल के लिए पुनः हस्तांतरण के अपने अधिकार को त्यागने के लिए सहमत हुआ, उक्त करार से स्वयं को पीछे हटा लिया और पुनः हस्तांतरण के उक्त करार के समस्त बाध्यताओं और दायित्वों से वर्तमान प्रत्यर्थीगण को उन्मोचित कर दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची के पिता सरजू राम ने तत्पश्चात कुछ व्यक्तियों के साथ मौनानुकूलता में द्वेषपूर्वक इन प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 दाखिल किया था और याची के पिता सरजू राम के पक्ष में इन प्रत्यर्थीगण द्वारा निष्पादित दिनांक 21.5.1982 के करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए प्रार्थना किया। इन प्रत्यर्थीगण द्वारा हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 का प्रतिवाद किया गया था जिसमें वे प्रतिवादीगण थे। आगे यह निवेदन किया गया है कि सरजू राम ने स्वीकार किया कि उसने वाद भूमि को मुनि तिवारी और सुचित्रा तिवारी को बेचा था और वाद भूमि का अधिकार, हक और कब्जा सौंपा था। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 को अंततः दिनांक 21.9.1988 और दिनांक 7.10.1988 के निबंधनानुसार खारिज कर दिया गया था। तत्पश्चात, उक्त सरजू राम ने हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 में पारित दिनांक 21.9.1988 के निर्णय और डिक्री को चुनौती देते हुए हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 दाखिल किया। उक्त हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 को दिनांक 30 जुलाई, 1998 के निर्णय के निबंधनानुसार खारिज कर दिया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 और हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 की खारिजी द्वारा वाद संपत्तियों के उपर इन प्रत्यर्थीगण का हक अभिपुष्ट और संपुष्ट किया गया। आगे यह निवेदन किया गया है कि उक्त तथ्य के बावजूद याची के पिता सरजू राम ने विभिन्न व्यक्तियों, जो वर्तमान रिट याचिका में प्रत्यर्थी सं० 3 से 21 हैं, के पक्ष में वाद भूमि का अनेक अंतरण विलेख अवैध रूप से निष्पादित किया यद्यपि वाद संपत्तियों के उपर उसका कोई हक नहीं था। आगे यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में, इन प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 5.8.1980 और दिनांक 21.5.1982 के रजिस्टर्ड विक्रय–विलेखों के बूते पर और हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 के निर्णय और डिक्री के आधार पर भी वाद संपत्तियों के संबंध में हक की घोषणा करने और कब्जा पुनः प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करते हुए और विद्वान मुंसिफ, गढ़वा के न्यायालय में हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 दाखिल किया और यह प्रार्थना भी किया कि हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 और हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 की खारिजी के बाद सरजू राम द्वारा निष्पादित पश्चातवर्ती विक्रय विलेखों के आधार पर प्रतिवादी सं० 1 से 18 और 20 से 23 (पश्चातवर्ती खरीददार) का कोई अधिकार, हक अथवा कब्जा नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में याची के पिता सरजू राम को प्रतिवादी सं० 19 के रूप में पक्षकार बनाया गया था और हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 के निर्णय के दौरान और बाद में सरजू राम से पश्चातवर्ती खरीददारों को पक्षकार प्रतिवादी सं० 1 से 18 और 20 से 23 के रूप में कतारबद्ध किया गया था और यहाँ वर्तमान रिट याचिका में उन्हें प्रत्यर्थी सं० 3 से 21 के रूप में पक्षकार बनाया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि इन प्रत्यर्थीगण द्वारा संस्थित हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 दिनांक 20 दिसंबर, 2010 के निर्णय के निबंधनों द्वारा डिक्री की गयी थी और विद्वान अवर न्यायालय ने हक, कब्जा पुनः पाने और स्थायी व्यादेश का डिक्री प्रदान किया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची के पिता सरजू राम ने वाद का प्रतिवाद नहीं किया था क्योंकि अंतिम तर्क के चरण के दौरान सरजू राम की मृत्यु हो गयी थी और इसलिए विद्वान अवर न्यायालय ने

सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXII नियम 4(4) के अधीन वादी को अपने उत्तराधिकारियों को प्रतिस्थापित करने से छूट दे दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में पक्ष नहीं था और न तो वह उपस्थित हुआ और न ही कोई याचिका अथवा लिखित कथन दाखिल किया, निर्णय और डिक्री उसके विरुद्ध नहीं था क्योंकि उसके पिता द्वारा अंतरण के बाद कोई भूमि नहीं बची थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान प्रत्यर्थी सं० 1 और 2, जो हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में वादी थे, ने हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में पारित निर्णय और डिक्री के आधार पर वाद भूमि से प्रत्यर्थी/प्रतिवादी के विरूद्ध गढवा के उप-न्यायाधीश-1 के न्यायालय में निष्पादन केस सं० 3 वर्ष 2011 दाखिला किए थे, जो लम्बित है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में पारित निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध केवल प्रतिवादी सं० 9 निर्मला देवी ने केवल भूमि के पाँच डिसमिल के संबंध में, जो 75 डिसमिल मापवाली वाद भूमि का छोटा भाग है, अपील दाखिल किया और गलत रूप से प्रत्यर्थी के रूप में वर्तमान याची को पक्षकार बनाया और इसलिए, वर्तमान याची उपस्थित हुआ और संपूर्ण वाद भूमि के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XLI नियम 22 के अधीन संपूर्ण वाद भूमि के लिए दावा करते हुए बिल्कुल नए तथ्यों के साथ प्रति-आपत्ति दाखिल किया जो अपील के विस्तार के परे है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा दिनांक 20 दिसंबर, 2011 के अपने आदेश के तहत प्रति आपत्ति अस्वीकार किए जाने के बाद याची-प्रति-आपत्तिकर्ता ने डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 69 वर्ष 2012 दाखिल किया। उक्त रिट याचिका में, नया आदेश पारित करने के निर्देश के साथ मामला अवर न्यायालय के पास भेजा गया था जिसके बाद विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 69 वर्ष 2012 में दिए गए निर्देश के मुताबिक मामले में अंतर्ग्रस्त समस्त पहलूओं पर सावधानीपूर्वक विचार करने और न्याय निर्णयन के बाद दिनांक 27.6.2012 का नया आदेश पारित किया और तद्द्वारा प्रति-आपत्ति अस्वीकार कर दिया। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची ने हक वाद सं० 51 वर्ष 2011 दाखिल किया और उसी और समरुप आधारों पर जिन्हें प्रति-आपत्ति में उठाया गया था, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अधीन निष्पादन केस सं० 3 वर्ष 2011 में आपत्ति दाखिल किया। यह निवेदन भी किया गया है कि वर्तमान याची ने बिल्कुल गलत तथ्यों का अभिवचन किया और हक वाद सं० 9 वर्ष 1984, हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 और हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 में पूर्व न्याय निर्णयनों के बारे में मौन बना रहा और इनको छुपाया। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि हक वाद सं० 9 वर्ष 1984, हक वाद सं० 45 वर्ष 1994 और हक वाद सं० 51 वर्ष 2011 की वाद भूमि एक ही है जिसे पहले ही न्याय निर्णीत किया जा चुका था। यह प्रतिवाद भी किया गया था कि याची द्वारा दाखिल प्रति आपत्ति सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 के प्रावधानों द्वारा और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश II नियम 2 के प्रावधानों द्वारा भी वर्जित है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रति-आपत्ति अपीलार्थी के विरुद्ध नहीं है। बल्कि यह प्रत्यर्थी और प्रत्यर्थी के बीच एक ही है जो विधि की दृष्टि में पोषणीय नहीं है। इसके अतिरिक्त, प्रति आपत्ति विवंध, त्यजन और उपमति की विधि द्वारा वर्जित है और न्याय निर्णीत की विधि द्वारा भी वर्जित है क्योंकि प्रति-आपत्तिकर्ता के पिता का दावा पहले ही सक्षम न्यायालय द्वारा हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 और हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 में अस्वीकार कर दिया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं० 9 वर्ष 1984 और हक अपील सं० 1 वर्ष 1989 में निर्णय और डिक्री संपूर्ण बन गया था जिसे वर्ष 2011 में सरजू राम के पुत्र द्वारा अवैध तरीके और ढंग से पुनः चुनौती नहीं दिया जाएगा। यह निवेदन भी किया गया है कि वस्तुतः याची ने प्रति-आपत्ति दाखिल किया, जो प्रति आपत्ति नहीं है, बल्कि यह प्रतिदावा है, जिसके द्वारा याची ने बिल्कुल नए आधारों पर वाद भूमि के उपर इसके बिल्कुल अपने होने के रूप में अपने अधिकार,

हक और कब्जा का दावा किया जो अपीलीय चरण पर पोषणीय नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 में प्रतिवादीगण में से किसी ने अपने अभिवचनों में कपट और सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम के प्रश्न का अभिवचन नहीं किया औरा इसलिए, अब याची को ऐसा बिन्दु उठाने की छूट नहीं है। अंत में यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान प्रत्यर्थीगण को याची द्वारा किए गए ऐसे आधारहीन प्रयासों के कारण हक वाद सं॰ 9 वर्ष 1984 और 45 वर्ष 1994 में उनके पक्ष में पारित निर्णय और डिक्री के लाभ/फल से वंचित किया गया है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने उनके द्वारा दाखिल पूरक प्रतिशपथ पत्र और उसके साथ संलग्न दस्तावेजों को निर्दिष्ट करके इंगित किया कि हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 में विद्वान अवर न्यायालय ने दिनांक 21.2.2002 के आदेश के तहत प्रतिवादी सं॰ 19 सरजू राम को प्रतिस्थापित करने से वादीगण को छूट दे दिया। यह निवेदन भी किया गया है कि वादीगण के पक्ष में डिक्री किए गए हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 में मृतक-प्रतिवादी सं॰ 19 का नाम गलत रूप से डिक्री में उल्लिखित किया गया था जिसे बाद में दिनांक 1 मार्च, 2011 के आदेश के तहत सही कर दिया गया है।

7. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्यों और परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद और प्रति-आपत्ति की सुनवाई करते समय अपने समक्ष किए गए निवेदनों पर विचार करते हुए विस्तृत और तार्किक आदेश पारित किया और याची द्वारा दाखिल प्रति आपत्ति ग्रहण करने से इनकार कर दिया। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 में इस न्यायालय द्वारा मामले को नए सिरे से सुने जाने के लिए भेजते हुए किए गए संप्रेक्षणों को ध्यान में नहीं लिया है, को स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने याची/प्रति-आपत्तिकर्ता द्वारा किए गए प्रत्येक आपत्ति के बारे में विस्तारपूर्वक चर्चा किया है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने नए सिरे से प्रति-आपत्ति पर विचार करते हुए डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 69 वर्ष 2012 में इस न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षणों की मामला नए सिरे से विनिश्चित किए जाने के लिए वापस भेजा गया था, को मुख्यत: दो आधारों पर ध्यान में लिया है। पहला आधार यह है कि प्रति-आपत्तिकर्ता अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ था और अपना लिखित कथन दाखिल किया था जिसे अवर न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था और दूसरा प्रतिवाद यह है कि दो विक्रय विलेख, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 को वाद भूमि के उपर हक प्राप्त करता बताया जाता है, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रतिकूल था और विस्तृत परीक्षण के प्रयोजन से विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अवर न्यायालय के संपूर्ण अभिलेखों का परिशीलन करने के बाद पाया कि प्रति आपत्तिकर्ता अवर न्यायालय के समक्ष कभी नहीं उपस्थित हुआ था और न ही अपना लिखित कथन दाखिल किया था। इस प्रकार यह कहना स्पष्ट रूप से गलत है कि प्रति-आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम अपने पिता की मृत्यु के बाद अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ और अपना लिखित कथन भी दाखिल किया जिसे स्वीकार नहीं किया गया था क्योंकि न तो राधेश्याम राम की ओर से कोई याचिका दाखिल की गयी प्रतीत होती है और न ही राधेश्याम राम द्वारा किसी हैसियत में दाखिल किसी लिखित कथन को अवर न्यायालय के अभिलेख में रखा गया है। इस संबंध में, विद्वान अवर न्यायालय ने शपथ पत्र द्वारा समर्थित दिनांक 16 मार्च, 2011 के प्रतिआपत्ति का परिशीलन किया जिसमें प्रति-आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम द्वारा अभिसाक्ष्य दिया गया है कि वह घोषित करता है और सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता है कि अपील के मेमो के प्रति प्रति-आपत्ति उसकी प्रेरणा पर तैयार की गयी है और इसे उसे हिन्दी में पढ़ कर सुनाया और समझाया गया है। इसके विषय वस्तु उसकी सर्वोत्तम जानकारी, सूचना और विश्वास में सत्य हैं। तत्पश्चात, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपने आदेश में प्रति-आपत्ति के पैरा 8 के विषय वस्तुओं को उद्धृत किया जिसका पठन निम्नलिखित है: ''कि प्रति

आपत्तिकर्ता उपस्थित हुआ और अपना लिखित कथन दाखिल किया और वाद का प्रतिवाद किया किंतु विद्वान उप-न्यायाधीश ने मामले पर समुचित रूप से विश्वास नहीं किया था और हक वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 को डिक्री किया।'' प्रति आपत्ति में किए गए इन प्रकथनों को ताथ्यिक रूप से ध्यान में लेने के बाद अवर न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया कि सिवाए इसके कि वाद डिक्री किया गया था, यह तथ्य स्पष्ट रूप से झूठा है। अवर न्यायालय ने इस तथ्य को आगे ध्यान में लिया है कि प्रति-आपत्तिकर्ता राधे श्याम राम ने दिनांक 19.6.2012 के एक अन्य शपथ पत्र पर शपथ लिया है। इस शपथ पत्र पर उन तथ्यों जो उसकी जानकारी और विश्वास में सत्य है के आधार पर उसके द्वारा शपथ लिया गया है। इस शपथ पत्र में, जो हिन्दी में है, यह अभिसाक्ष्य दिया गया है कि विद्वान अधिवक्ता श्री केदार नाथ शुक्ला, जिनका अब देहांत हो गया है, ने उसे सलाह दिया कि उसे क्या करना चाहिए। स्व॰ केदारनाथ शुक्ला ने उसको पक्ष के रूप में कतारबद्ध करने के लिए याचिका दिया और उसका लिखित कथन दाखिल किया जिसे उसने 'मकर संक्रांति' के तीन दिन बाद विद्वान मुंसिफ, गढ़वा को दिया जिन्होंने इसे उसको यह कहते हुए लौटा दिया कि अब इस संदर्भ में कुछ भी नहीं किया जा सकता था। उन्होंने स्व॰ केदार नाथ शुक्ला को सब कुछ कहा और उनको समस्त दस्तावेज लौटा दिया। यह तथ्य भी प्रति आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम के सर्वोत्तम जानकारी और विश्वास में सत्य होने के नाते सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर अभिसाक्ष्यित किया गया है। इन तथ्यों को ध्यान में लेते हुए अवर न्यायालय ने अपने आदेश में संप्रेक्षित किया कि अब यह तथ्य दर्शाता है कि वह अवर न्यायालय के समक्ष कभी नहीं उपस्थित हुआ और न तो अपना लिखित कथन दाखिल किया और न ही वाद का प्रतिवाद किया। इसके अतिरिक्त, यह प्रति-आपत्ति के पैरा 8 में दिए गए बयान के विरुद्ध है जो दर्शाता है कि उसने अपना लिखित कथन दाखिल किया और वाद का प्रतिवाद किया था। अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि याची राधे श्याम राम अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ था और न ही अपना लिखित कथन दाखिल किया था। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल प्रति-आपत्ति को अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय में प्रथा के प्रचलित नियम को ध्यान में लिया है कि जब किसी व्यक्ति की ओर से कोई याचिका दाखिल की जाती है, इसे अभिलेख पर रखा जाता है यद्यपि इसे अस्वीकार कर दिया गया है। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश I नियम 10 के अधीन उसको पक्ष बनाने के लिए ऐसी कोई याचिका, जिसे प्रति आपत्तिकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता द्वारा दाखिल किया गया था, अभिलेख पर मौजूद नहीं है और न ही कोई लिखित कथन अभिलेख पर मौजूद है। दिनांक 19.6.2012 का द्वितीय शपथपत्र यह दर्शाने के लिए दाखिल किया गया है कि उसने पक्ष बनने का प्रयास किया था। यहाँ यह उल्लिखित करना उपयुक्त है कि उसने वर्ष 2001 में याचिका दाखिल किया और इसे विद्वान मुंसिफ, गढ़वा द्वारा लौटा दिया गया था। उसे संबंधित जिला न्यायाधीश अथवा उच्च न्यायालय यथास्थिति के पास मामले का परिवाद करना चाहिए था किंतु वह लगभग 11 वर्षों तक मौन बना रहा। अतः, प्रति-आपत्तिकर्ता का प्रतिवाद कि वह अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ और अपना लिखित कथन दाखिल किया था और वाद का प्रतिवाद किया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है और अवर न्यायालय अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद और अवर न्यायालय के संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन करने के बाद सही प्रकार से और समुचित रूप से इस निष्कर्ष पर आया कि प्रति-आपत्तिकर्ता द्वारा उठाए गए प्रतिवाद में कोई सार नहीं है कि वह अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ और अपना लिखित कथन दाखिल किया था और वाद का प्रतिवाद किया था और इसलिए इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि उक्त निष्कर्ष जो अभिलेख पर आधारित है को अस्त-व्यस्त करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अवर न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का अधिमूल्यन करते हुए और इस निष्कर्ष पर आने में कोई गलती नहीं किया है कि इस विवाद्यक पर प्रति-आपत्तिकर्ता के प्रतिवादों में कोई सार नहीं है। एक अन्य आधार जिसे विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष उठाया गया है, प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के पक्ष में निष्पादित दो विक्रय विलेखों के संबंध में है कि वे सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रतिकूल होते हैं। विद्वान अवर

अपीलीय न्यायालय ने इस विवाद्यक पर विचार करते हुए सही प्रकार से और समुचित रूप से संप्रेक्षित किया कि यह प्रश्न अपील के गुणागुण को छूता है क्योंकि विद्वान अवर न्यायालय ने विवाद्यक सं॰ 1 और 3, विवाद्यक सं॰ 1 वाद की पोषणीयता पर होने के नाते, पर विचार करते हुए सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 (1-b) और 46 (iii) के प्रश्न पर चर्चा किया है और वादीगण के पक्ष में नकारात्मक में विवाद्यक विनिश्चित किया है। अत:, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम के अधीन यह मामला अवर अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील में विचाराधीन है और प्रति-आपत्ति की ग्राह्यता पर विचार करते हुए इसे विनिश्चित नहीं किया जा सकता है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने सही प्रकार से और समुचित रूप से संप्रेक्षित किया है कि एकमात्र बिंदु जिसे विनिश्चित किया जा सकता था यह है कि क्या प्रति आपत्तिकर्ता, विक्रय विलेख के सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम द्वारा वर्जित होने के प्रश्न को उठाने का हकदार हैं। इस संदर्भ में, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्क को ध्यान में लिया है। जिन्होंने कथन किया है कि प्रति आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम के पिता सरजू राम ने विक्रय विलेख प्रदर्श 1/A और 1/B के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के पक्ष में वाद भूमि को बेचा है और तत्पश्चात, उसने कब्जा सौंपा। प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 द्वारा पृथक रूप से भूमि के पुन: हस्तांतरण के करार विलेख थे जिसे उनके पक्ष में विक्रय विलेखों की तिथि पर जारी किया गया था जो प्रदर्श 1/A और 1/B हैं, स्व॰ सरजू राम ने मुनि देवी (प्रत्यर्थी सं॰ 1) को नोटिस (प्रदर्श 5) जारी किया था, यह नोटिस प्रति-आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम के पिता श्री सरजू राम, उसके मुवक्किल की ओर से अधिवक्ता बी॰ देव द्वारा जारी किया गया है। उक्त नोटिस में यह उल्लिखित किया गया है कि उसके मुवक्किल सरजू राम ने ग्राम-सहीजन, पी॰ एस॰ गढ़वा के खाता सं॰ 123 से संबंधित भूखंड सं॰ 653 में 0.44 तथा 1/2 एकड़ और 0.7 तथा 1/2 एकड़ के दो टुकड़ों में 0.52 एकड़ भूमि 3000/- रुपयों के प्रतिफल के लिए रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों द्वारा बेचा और इस प्रकार बेची गयी भूमि का कब्जा भी सौंपा गया था। इन तथ्यों से यह प्रकट होता है कि प्रति-आपत्तिकर्ता के पिता ने स्वीकार किया है कि उसने वाद भूमि को बेचा था और इसका कब्जा सौंपा था। अत:, प्रत्यर्थी सं॰ 1 इस प्रकार बेची गयी भूमि की स्वामिनी बन गयी और उसके पक्ष में हक संक्रांत हो गया है। यह भी प्रतीत होता है कि स्व॰ सरजू राम ने इस वाद में संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए हक वाद सं॰ 9 वर्ष 1984 दाखिल किया क्योंकि उसने स्वीकार किया था कि खाता सं॰ 123 और भूखंड सं॰ 653 की 52 डिसमिल भूमि के संबंध में, जो वाद भूखंड है, हक प्रत्यर्थी सं॰ 1 सुरेन्द्र नाथ तिवारी को संक्रांत हो गया था और उसको कब्जा दिया गया था। यह वाद विद्वान मुंसिफ, गढ़वा के न्यायालय द्वारा दिनांक 21.8.1988 के अपने निर्णय के तहत खारिज कर दिया गया था। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि वाद भूमि के उपर प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 का हक और उनका कब्जा प्रति आपत्तिकर्ता के स्वर्गीय पिता द्वारा स्वीकार किया गया है और इसलिए, अवर न्यायालय ने इस तात्विक तथ्य को दर्ज करने के बाद सही प्रकार से संप्रेक्षित किया कि प्रति-आपत्तिकर्ता राधे श्याम राम इस अपील में अब इस विवाद्यक को नहीं उठा सकता है, क्योंकि प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 का हक तथा कब्जा उसके पिता सरजू राम द्वारा स्वयं वर्ष 1984 में ही स्वीकार किया गया है।

8. पूर्वोक्त तथ्यों की दृष्टि में, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय सही प्रकार से और समुचित रूप से इस निष्कर्ष पर आया कि प्रति-आपत्तिकर्ता को यह कहने से रोका गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 ने विक्रय विलेख के माध्यम से वाद भूमि के उपर हक नहीं पाया था। यह भी प्रतीत होता है कि इन तथ्यों के आधार पर विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने सही प्रकार से और समुचित रूप से संप्रेक्षित किया कि किसी वाद अथवा अपील में प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के हक के बारे में उठाए गए प्रश्न अथवा किए गए अभिवचन न्याय निर्णीत के सिद्धांत द्वारा भी वर्जित है।

9. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने भी प्रति आपत्ति की ग्राह्यता के बिंदु पर विस्तारपूर्वक विचार किया है कि क्या प्रति–आपत्तिकर्ता इस अपील में प्रति–आपत्ति दाखिल कर सकता है और मामले के इस पहलू पर विचार करते हुए विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 अर्थात् मुनि तिवारी और सुचित्रा तिवारी द्वारा वाद भूमि के उपर अपने हक की घोषणा के लिए और इसका कब्जा पुनः पाने के लिए और इस घोषणा के लिए कि प्रतिवादी सं॰ 19 (सरजू राम) द्वारा प्रतिवादी सं॰ 1 से 18 और 20 से 22 के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख शून्य, अवैध और प्रतिफल रहित हैं और प्रतिवादीगण जिन्होंने किसी तरीके से कब्जा अर्जित नहीं किया था को बेदखल करके कब्जा पुनः पाने के लिए अनेक व्यक्तियों के विरुद्ध दाखिल मूल वाद सं॰ 45 वर्ष 1994 के तथ्यों पर विचार किया है। उक्त परिवाद में यह प्रकथन किया गया है कि जब वादी सं॰ 1 मुनि तिवारी हृदय रोग से पीड़ित था और नयी दिल्ली में रह रहा था, उसकी पत्नी सुचित्रा तिवारी नयी दिल्ली में उसकी देखभाल कर रही थी और उसके पुत्र विश्वविद्यालय और महाविद्यालय में अध्ययन कर रहे थे, अन्य प्रतिवादीगण ने प्रतिवादी सं॰ 1 सरजू राम से वाद भूमि खरीदा और इस पर काबिज हुए। इस वाद में, प्रतिवादी सं॰ 19 को केवल इस कारण पक्ष बनाया गया है क्योंकि उसने मुनि तिवारी और सुचित्रा तिवारी, क्रमशः वर्ष 1980 और 1982 में वादीगण, को वाद भूमि बेचा है और कि वाद भूमि उसके द्वारा वर्ष 1990 में प्रतिवादी सं॰ 1 से 18 के पक्ष में बेची गयी थी जब उक्त सरजू राम वर्ष 1988 में विद्वान मुंसिफ, गढ़वा के न्यायालय में पुनः हस्तांतरण का अपना मामला वाद सं॰ 9 वर्ष 1984 हार गया था और हक अपील सं॰ 1 वर्ष 1989 लंबित था। इस अभिवचन को ध्यान में लेकर विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि उक्त वाद में प्रतिवादी सं॰ 19 सरजू राम के विरुद्ध किसी अनुतोष का दावा नहीं किया गया है क्योंकि वह केवल परफॉर्मा प्रतिवादी था क्योंकि उसने उक्त वाद में वादीगण और अन्य प्रतिवादीगण दोनों को भूमि बेचा था और इसलिए, उसने अवर न्यायालय में कोई लिखित कथन दाखिल नहीं किया था और न ही विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ था। इस संदर्भ में, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि व्यक्ति, जिसने कोई लिखित कथन दाखिल नहीं किया था और जिसने अभिवचन नहीं किया था और कोई मामला नहीं बनाया था, को न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से व्यथित नहीं कहा जा सकता है। प्रतिवादी सं॰ 19 सरजू राम की मृत्यु वाद के विचारण के दौरान हो गयी और उसके पिता के स्थान में प्रति आपत्तिकर्ता के नाम को प्रतिस्थापित करने से वादीगण को छूट दी गयी थी। सामान्यतः, मृतक पक्ष का पुत्र अथवा विधिक उत्तराधिकारी अपने पिता के स्थान पर आता है किंतु यहाँ स्व॰ सरजू राम का कोई मामला नहीं था और यह पाया गया है कि प्रति आपत्तिकर्ता राधेश्याम राम अवर न्यायालय में उपस्थित नहीं हुआ था और न ही वाद का प्रतिवाद किया था, अतः उसे अवर न्यायालय के निर्णय द्वारा व्यथित नहीं कहा जा सकता है। प्रति–आपत्ति दाखिल करने से संबंधित विधि को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XLI नियम 22 के अधीन प्रावधानित किया गया है जो निम्नलिखित प्रावधानित करती है:–

> *"22. **luokbZ esa çR;FkhZ fMØh ds fo#) ,sls vk{ksi dj ldsxk ekuks mlus iFkd vihy dh gks-**&(1) dksbZ HkhZ çR;FkhZ] ;|fi mlus fMØh ds fdlh HkkXk ds fo#) vihy u dh gks] u doy fMØh dk leFku dj ldsxk cfYd ;g dFku Hkh dj ldsxk fd voj U;k;ky; esa mlds fo#) fdlh fook|d dh ckcr fu.kZ; mlds i{k esa gkuk pkfg, Fkk vkSj fMØh ds fo#) dksbZ ,slk çR;k{ksi Hkh dj ldsxk tks og vihy }kjk dj ldrk Fkk ijUrq ;g rc tc fd mlus ,slk vk{ksi vihy U;k;ky; esa mls rkjh[k ls ,d ekl ds Hkhrj ftldks mls ij ;k mlds lyhMj ij vihy dh luokbZ ds fy, fu;r fnu dh lwpuk dh rkehy gbZ Fkh] ;k ,sls vfrfjDr le; ds Hkhrj ftls vuKkr djuk vihy U;k;ky; BhD le>s] Qkby dj fn;k gksA*

vk{ki dk çk:i vkj mldk ykx gku oky micU/èk-&(2) ,lk çR;k{ki Kkiu d ç:i e gkxk vkj fu;e 1 d micU/èk ml ogk rd ykx gkx tgk rd o vihy d Kkiuk d ç:i vkj vUroLr l lEcfU/èkr gA

(3) tc rd iR;Fkh u vk{ki d lkFk ml i{kdkj dh ftlij ,l vk{ki l lEHkor% iHkko iM ldrk g ;k] ml lyhMj dh ;g fyf[kr vfHkLohÑfr fd ml mldh ifr iklr gk x;h g] Qkby u dj nh gk] vihy U;k;ky; vk{ki d Qkby fd; tku d i'pkr ;Fkk'kh?k ml ifr dh rkehy ,l i{kdkj ;k mld lyhMj ij iR;Fkh d 0;; ij djk,xkA

(4) tgk fdlh ,l ekey e ftle vk{ki d Kkiu dk çR;Fkh u bl fu;e d vèkhu Qkby dj fn;k g] ey vihy çR;kâr dj yh tkrh g ;k 0;frØe d fy, [kkfjt dj nh tkrh g ogk ,lk gku ij Hkh og vk{ki tk ,l Qkby fd;k x;k g] vU; i{kdkjk dk ,lh lpuk d i'pkr tk U;k;ky; Bhd le>] luk vkj voèkkfjr fd;k tk ldxkA

(5) fuèku 0;fDr;k }kjk vihyk l lEcfU/èkr micU/èk bl fu;e d vèkhu vk{ki dk Hkh ogk rd ykx gkx tgk rd o ykx fd, tk ldr gA**

10. इस प्रकार, प्रति आपत्ति दाखिल करने के लिए प्रति आपत्ति कर्ता का डिक्री में विवाद्यक पर किसी निष्कर्ष से व्यथित होना चाहिए था। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XLI नियम 22 में अंतर्विष्ट इस प्रावधान को ध्यान में लेकर विद्वान अवर न्यायालय तथ्यों के आधार पर, जो अभिलेख से सामने आए हैं, इस निष्कर्ष पर आया कि चूँकि अवर न्यायालय में प्रति-आपत्तिकर्ता अथवा उसके पिता सरजू राम की ओर से दाखिल कोई लिखित कथन नहीं था, उसे समय के किसी बिंदु पर अवर न्यायालय के निर्णय द्वारा व्यथित नहीं कहा जा सकता है और इसलिए, वह प्रति-आपत्ति दाखिल करने का हकदार नहीं है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि अवर अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील में अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी सं० 20 राधे श्याम राम (इसमें के याची) के साथ दुरभिसंधि में उसको अपील में प्रत्यर्थी सं० 20 बनाया है। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने इस तर्क को भी ध्यान में लिया है जब इसे इसके समक्ष दिया गया था और प्रत्यर्थी सं० 1 और 2 की ओर से इस तर्क को ध्यान में लेते हुए अवर अपीलीय न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि यह बिंदु भी यह विनिश्चित करने के लिए मुख्य बिन्दु है कि क्या प्रति-आपत्तिकर्ता की प्रति-आपत्ति ग्रहण की जानी चाहिए या नहीं। अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन पर यह भी प्रतीत होता है कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपने समक्ष उद्धृत अनेक निर्णयज विधियों/प्रामाणिक निर्णयों को ध्यान में लिया है और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आलोक में उक्त निर्णयज विधि पर भी विचार किया है। मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्यों और परिस्थितियों पर विस्तृत चर्चा के बाद और अवर अपीलीय न्यायालय में पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद और निर्णय लेने के लिए प्रासंगिक विधि के प्रावधान और निर्णयज विधि पर भी सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय पाता है कि प्रति-आपत्तिकर्ता अवर न्यायालय में पक्ष नहीं था और न ही वह अवर न्यायालय के निर्णय के किसी निष्कर्ष द्वारा व्यथित है और इसलिए, वह प्रति-आपत्ति दाखिल करने का हकदार नहीं है और प्रति आपत्तिकर्ता की ओर से दाखिल प्रति आपत्ति अपील में ग्रहण नहीं की जा सकती है और इसलिए, प्रति आपत्ति ग्रहण नहीं की गयी थी।

11. उक्त अवस्था की दृष्टि में, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन इस न्यायालय का हस्तक्षेप अनावश्यक है क्योंकि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल प्रति-आपत्ति अस्वीकार करते हुए अपने में निहित शक्ति और अधिकारिता का प्रयोग करने में कोई गलती नहीं किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने वैकल्पिक रूप से निवेदन किया कि चूँकि वाद संपत्ति में अधिकार, हक

और हित का दावा करते हुए उसके मुवक्किल ने पहले ही हक वाद सं॰ 51 वर्ष 2011 दाखिल किया है, उसकी प्रति आपत्ति को अस्वीकार करते हुए विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षण को अपास्त किया जा सकता है ताकि यह न्याय निर्णीत के रूप में प्रवर्तित नहीं हो। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया उक्त तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने संपूर्ण अभिलेख का सावधानीपूर्वक परीक्षण करने के बाद अपने निष्कर्षों को दर्ज किया है जो प्रति आपत्ति की पोषणीयता के संबंध में विधि और तथ्यों पर आधारित है। जहाँ तक याची द्वारा दाखिल हक वाद सं॰ 51 वर्ष 2011 का संबंध है, उक्त वाद संपत्ति में अधिकार, हक और हित का दावा करते हुए दाखिल किया गया है और उक्त वाद में वादी को वाद संपत्ति के संबंध में वादी के कब्जे में सामग्री/साक्ष्य के आधार पर स्वतंत्र रूप से अपना हक सिद्ध करने की आवश्यकता है। यह भी प्रतीत होता है कि वादी ने निष्पादन न्यायालय के समक्ष सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI नियम 97/98 सह-पठित धारा 101 के अधीन आपत्ति भी दाखिल किया है। उक्त प्रावधान स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि आपत्ति में उठाए गए विवाद्यक को निष्पादन न्यायालय द्वारा और न कि पृथक वाद के रूप में विनिश्चित करने की आवश्यकता है। मामले के इस पृष्ठभूमि में, क्या वादी द्वारा दाखिल वाद हक वाद सं॰ 51 वर्ष 2011 किस हद तक पोषणीय है, एक अन्य प्रश्न है जिस पर विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा और विद्वान न्यायालय जहाँ हक वाद सं॰ 51 वर्ष 2011 लंबित है, विचार किए जाने की आवश्यकता है।

12. उक्त तथ्य याची के आचरण का द्योतक है कि याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के पक्ष में पारित डिक्री के निष्पादन में रूकावट सृजित करने और तद्द्वारा उनको डिक्री के फल का आनन्द लेने से वंचित करने का प्रयास किया है। इस न्यायालय का दृष्टिकोण है कि विधि की प्रक्रिया का ऐसा दुरुपयोग विधि के अधीन अनुज्ञेय नहीं है और इसलिए, उक्त चर्चा की दृष्टि में वर्तमान याचिका खारिज किए जाने योग्य है। तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

उमेश प्रसाद गुप्ता

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

ABA No. 1051 of 2013. Decided on 8th August, 2013.

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989—धाराएँ 3(1) (x) एवं 18—भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 504/506—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 438—आशयपूर्ण अपमान—न्यायालय के दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते हुए कोई निष्कर्ष देने से परहेज करना चाहिए कि परिवाद के आधार पर संस्थित मामले में अथवा पुलिस मामले में जहाँ पहले ही एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराध आकृष्ट करते हुए संज्ञान लिया गया है, एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के अधीन अपराध आकृष्ट नहीं होते हैं—आवेदन खारिज किया गया। (पैरा 10)

निर्णयज विधि.—2012(8) SCC 795; 2009 (3) SCC 789—Relied on.

अधिवक्तागण.—M/s Anil Kumar Sinha, A.K. Sahani, For the Petitioners; Mr. Md. Hatim, For the State; Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Opp. Party No.2.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

याची भारतीय दंड संहिता की धाराओं 504/506 और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (1) (x) के अधीन दर्ज अपराधों के लिए सदर एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ पी॰ एस॰ केस सं॰ 21 वर्ष 2010 से संबंधित विरोध–सह–परिवाद केस सं॰ 704 वर्ष 2011 के संबंध में अपनी गिरफ्तारी से आशंकित होकर अग्रिम जमानत के लिए प्रार्थना करते हुए इस आवेदन को दाखिल किया है।

2. संक्षेप में, अभियोजन मामला यह है कि परिवादी सोनाहातु में पदस्थापित पी॰ एच॰ ई॰ डी॰ विभाग में कनीय अभियन्ता हुआ करता है। यह अभिकथित किया गया है कि याची जो संबंधित विभाग में कार्यपालक अभियन्ता हुआ करता है सूचक को अनुसूचित जनजाति का सदस्य मानकर अपमानित किया करता था। उसे आम लोगों और गवाहों की उपस्थिति में कार्यालय में तथा चैम्बर में खुले रूप से गाली दी जाती थी और उसे उसकी जाति के नाम से गाली दी जाती थी। उसे पत्र सं॰ शून्य दिनांक 19.5.2010 पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया था।

3. यह निवेदन किया गया है कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (इसमें इसके बाद एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) के प्रावधानों के अधीन मामला नहीं बनता है और एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 3 (1) (x) के अधीन अपराध के अवयवों की कमी है। वस्तुत:, सूचक अपने कर्तव्य के प्रति उपेक्षावान था और वह बिलों को पास करवाने के लिए ठेकेदारों के साथ साँठ–गाँठ करता था, किंतु याची द्वारा की गयी आपत्ति और कार्रवाई से सूचक चिढ़ गया और उसने याची को परेशान करने के लिए झूठे अभिकथनों के साथ यह मामला दर्ज किया है।

पुलिस ने सम्यक अन्वेषण के बाद फाइनल फॉर्म दाखिल किया जिसे दिनांक 25.4.2011 को स्वीकार किया गया था। सूचक द्वारा दाखिल विरोध–सह–परिवाद के आधार पर परिवाद केस सं॰ 704 वर्ष 2011 दर्ज किया गया था और न्यायालय जाँच करने के लिए अग्रसर हुआ। दिनांक 28.8.2012 को जाँच करने के बाद याची को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 504/506 और एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 3 (1) (x) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश देते हुए विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा आदेश पारित किया गया था। चूँकि याची वर्तमान मामले में अपनी गिरफ्तारी की आशंका कर रहा है, उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन जमानत प्रदान के लिए वर्तमान आवेदन दाखिल किया है। यह प्रतिवाद किया गया है कि व्यक्तियों जिनकी उपस्थिति में परिवादी के अभिकथनानुसार उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता था का परीक्षण जाँच के दौरान नहीं किया गया है। परिवाद में स्वीकार किया गया है कि इस मामले के संस्थापन के पीछे और कोई कारण नहीं बल्कि याची द्वारा परिवादी के विरुद्ध अपनी आधिकारिक हैसियत में की गयी कार्रवाई है।

4. परिवादी और राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 18 दंड प्रक्रिया संहिता (इसमें इसके बाद संहिता के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 438 के अधीन सत्र न्यायाधीश और उच्च न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग के विरुद्ध संपूर्ण वर्जना सृजित करती है। यह इंगित किया गया है कि अन्वेषण अधिकारी ने गवाहों के वास्तविक बयानों को दर्ज नहीं किया है और उसने याची के साथ मौनानुकूलता में फाइनल फॉर्म दाखिल किया है। यह निवेदन किया गया था कि विद्वान दंडाधिकारी ने सही प्रकार से उक्त निर्दिष्ट धाराओं के अधीन याची के विरुद्ध संज्ञान लिया है और याची को अग्रिम जमानत का लाभ नहीं दिया जाना चाहिए। उन्होंने **विलास पांडुरंग पवार बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2012 (8) SCC 795,** और (ii) **आशा बाई मचिन्द्रा अधागाले बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2009 (3) SCC 789,** मामलों में निर्णयों पर भी विश्वास किया है।

5. दिए गए तर्कों के उत्तर में याची के विद्वान अधिवक्ता ने पूरक शपथ पत्र दाखिल किया है और **गोरिगे पेंटय्या बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, 2009 (Cr. L.J.) पृष्ठ 350,** (पैरा 9 से 13), (ii) **दिल्ली उच्च न्यायालय (मंजीत सिंह एवं अन्य बनाम दिल्ली राज्य) और** (iii) **2002 (Cr. L.J.)3311 कर्नाटक उच्च न्यायालय (एन॰ बी॰ गंगारकोप्पा एवं अन्य बनाम कर्नाटक राज्य** मामलों में निर्णय पर विश्वास किया है।

6. उक्त निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए यह तर्क किया गया था कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन व्यक्ति को प्रदान किए गए विशेषाधिकार को केवल इसलिए कम नहीं किया जा सकता है क्योंकि एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराध की कारिता का अभिकथन किया गया है। न्यायालय को देखना होगा कि क्या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराध के अवयव आकृष्ट होते हैं या नहीं। यह इंगित किया गया था कि परिवादी को परिवाद में अभियुक्त की पहचान एवं जाति को प्रकट करना होगा और उसे अभिकथन सिद्ध करना होगा कि उसे अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति का सदस्य मान कर सार्वजनिक रूप से अभियुक्त जो एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ जाति से भिन्न अन्य जाति से आता है, द्वारा अपमानित किया गया है। घटना की उत्पत्ति जिसे सूचक/परिवादी ने स्वीकार किया है यह है कि आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में उनके बीच विवाद उद्भूत हुआ है। यदि किसी उच्चतर अधिकारी ने अपने अधीनस्थ के विरुद्ध कार्रवाई किया है और अधीनस्थ अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति का सदस्य है और वह परिवाद दाखिल करता है, एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत के प्रदान के विरुद्ध वर्जना सृजित नहीं करेंगे।

7. चूँकि पक्षों ने प्रश्न उठाया है कि क्या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के अधीन दंडनीय अपराध को आकृष्ट करने वाले संस्थापित मामले में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधानों का प्रयोग किया जा सकता है या नहीं, मैं अधिनियम की धारा 18 को निर्दिष्ट करना चाहूँगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"èkkjk 18.* ***vfèkfu;e d vèkhu vijkèk dju oky 0;fDr;k dk lfgrk dh èkkjk 438 dk ykx u gkuk-****&* *lfgrk dh èkkjk 438 dh dkb ckr bl vfèkfu;e d vèkhu dkb vijkèk dju d vfHk;kx ij fdlh 0;fDr dh fxj¶rkjh d fdlh ekey d lEcUèk e ykx ugh gkxhA***

इस संबंध में, उपर उद्धृत निर्णयों का परिशीलन करने के बाद मेरे मस्तिष्क में दो विचार है। प्रथमत:, एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधान को आकृष्ट करने वाले पुलिस मामले में जहाँ अन्वेषण आरंभ किया गया है किंतु आरोप–पत्र दाखिल नहीं किया गया है, न्यायालय यह जाँचने के लिए कि क्या उक्त अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों के अवयव प्रथम दृष्टया आकृष्ट होते है या नहीं, प्राथमिकी की ओर केस डायरी में संग्रहित साक्ष्य का परिशीलन कर सकता है। यदि न्यायालय विचार करता है कि एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों के अवयव आकृष्ट नहीं होते हैं, अभियुक्त को अनुतोष देने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के प्रावधान का अवलंब लिया जा सकता है। अत:, मेरे कहने का अर्थ यह है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत आवेदन पर विचार करते हुए एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के अधीन अपराध का संज्ञान लिए जाने के पहले न्यायालय के पास यह विचार करने का विकल्प है कि क्या उक्त अधिनियम के अधीन अपराध किया गया है या नहीं किंतु अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिए जाने के बाद न्यायालय के पास यह मत निर्मित करने का विकल्प नहीं है कि क्या अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध प्रथम दृष्टया बनते है या नहीं। चूँकि संज्ञान

का आदेश केस डायरी में उपलब्ध सामग्री पर विचार किए जाने के बाद पारित न्यायिक आदेश है, ऐसा कोई निष्कर्ष देना कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के अधीन दंडनीय अपराध आकृष्ट नहीं होता है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत आवेदन पर विचार करते हुए अनावश्यक प्रतीत होता है क्योंकि ऐसा कोई निष्कर्ष पक्षों में से किसी पर प्रतिकूल प्रभाव कारित कर सकता है।

मेरे मस्तिष्क में आया दूसरा विचार यह है कि परिवाद के आधार पर दर्ज मामले में जिसमें जाँच करने के बाद अभियुक्त को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के प्रावधानों के अधीन किए गए अपराधों के लिए विचारण का सामना करने का निर्देश देते हुए आदेश किया गया है, वहाँ न्यायालय को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 204 के अधीन जमानत आवेदन पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित नहीं करना चाहिए कि एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधान आकृष्ट नहीं होते हैं। पुनः, मेरा दृष्टिकोण यह है कि न्यायिक आदेश जिसके द्वारा एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत आवेदन पर विचार करते हुए आगे कोई मत निर्मित नहीं किया जाना चाहिए कि एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों को आकृष्ट करने वाले अपराध बनते हैं या नहीं।

8. उक्त दो विचार अन्य दाँडिक अपराधों को आकृष्ट करने वाले अन्य मामलों में प्रयोज्य नहीं हो सकते हैं यदि कोई वर्जना नहीं होगी, किंतु विनिर्दिष्टतः ऐसे मामले में जहाँ एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराधों को आकृष्ट करते हुए संज्ञान आदेश पारित किया गया है, अधिनियम की धारा 18 दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 की प्रयोज्यता के विरुद्ध संपूर्ण वर्जना सृजित करती हैं। आगे, यह स्पष्ट किया गया है कि मेरा दृष्टिकोण यह नहीं है कि पुलिस मामले में जिसमें आरोप-पत्र दाखिल किया गया है और संज्ञान लिया गया है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 में अंतर्विष्ट प्रावधान का अवलंब नहीं लिया जा सकता है; बल्कि मैंने एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए लिए गए संज्ञान के संबंध में अपना मत निर्बंधित किया है।

9. अब इस मामले के तथ्यों पर आते हुए, सूचक को उसकी जाति के नाम से गाली दी गयी थी और गवाहों की उपस्थिति में कार्यालय में अपमानित किया गया था और, इसलिए, विद्वान दंडाधिकारी ने मामले के पूर्वोक्त पहलूओं पर विचार करते हुए भारतीय दंड संहिता की धाराओं 504/506 और एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 3 (1) (x) के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया है। यही दृष्टिकोण माननीय न्यायाधीशों द्वारा **विलास पांडुरंग पवार (उपर)** मामले में अपनाया गया है। जहाँ तक अभियुक्त की जाति के प्रकटकरण का संबंध है, माननीय न्यायाधीशों ने **आशाबाई मचिन्द्रा अधागले (उपर)** के निर्णय में स्पष्ट किया है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (1) (xi) के अधीन अपराध के लिए प्राथमिकी में अभियुक्त की जाति उल्लिखित नहीं किया जाना–प्रभाव–1989 अधिनियम की धारा 3 (1) (xi) के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त की जाति का उल्लेख नहीं किया जाना प्राथमिकी के अभिखंडन का आधार अभिनिर्धारित नहीं किया गया–अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति/अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 धारा 3 (1) (xi)—एस॰ सी॰, एस॰ टी॰, ओ॰ बी॰ सी॰, अन्य अल्पसंख्यक–के विरुद्ध अपराध।

10. समापन पर यह संप्रेक्षित किया जाता है कि न्यायालय को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438 के अधीन जमानत आवेदन पर विचार करते हुए कोई निष्कर्ष देने से परहेज करना चाहिए कि परिवाद के आधार पर संस्थित मामले में अथवा पुलिस मामले में जहाँ एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन दंडनीय अपराधों को आकृष्ट करते हुए संज्ञान पहले ही लिया गया है, एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम के अधीन अपराध आकृष्ट नहीं होते हैं।

ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में अग्रिम जमानत के लिए यह आवेदन पोषणीय नहीं है। तद्नुसार, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राधे श्याम साहू

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4242 of 2013. Decided on 1st October, 2013.

विद्यालय विधि–नियुक्ति–झारखंड राज्य में नव उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में सहायक शिक्षकों का पद–राज्य सरकार ने नव उत्क्रमित उच्च विद्यालयों में सहायक शिक्षकों की भर्त्ती के लिए परीक्षा लेने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् को प्राधिकृत करते हुए पहले ही निर्णय लिया है–सहायक शिक्षकों की नियुक्ति के लिए विशेष लिखित परीक्षा लेने के निर्देश के साथ रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 7 से 10)

अधिवक्तागण.–M/s. Manoj Tandon, Kumari Rashmi, Navin Kumar Singh, For the Petitioner; M/s R.N. Roy, Jalisur Rahman, For the State; M/s Sanjoy Piperwall, Mahadeo Thakur, K.K. Sinha, For the JPSC; M/s M. Sohail Anwar, Afaque Ahmad, For the JAC.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची वर्तमान रिट आवेदन में इस प्रार्थना के साथ आया है कि प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी परिशिष्ट-5 के तहत दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 के मेमो सं॰ 2787 में अंतर्विष्ट राज्य सरकार के निर्णय की दृष्टि में झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा जारी विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अनुसरण में झारखंड राज्य में नव-उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में सहायक शिक्षकों के पद पर भरती करने के लिए प्रत्यर्थी झारखंड एकेडमिक परिषद् को निर्देश दिया जाए।

3. याची झारखंड राज्य ने नव-उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में सहायक शिक्षकों के पद पर चयन/नियुक्ति के लिए पहले जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा जारी विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन उम्मीदवार था। तत्पश्चात् राज्य सरकार ने दिनांक 29 मई, 2011 के संकल्प सं॰ 1470 की दृष्टि में दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 को परिशिष्ट 5 के तहत निर्णय लिया जिसके द्वारा झारखंड एकेडमिक परिषद् को झारखंड राजकीयकृत माध्यमिक विद्यालय सेवा (शर्त) नियमावली, 2004 के अधीन सहायक शिक्षकों के पद पर चयन/नियुक्ति के लिए भरती संचिका तैयार करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। पहले, नव-उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में सहायक शिक्षकों के 2513 रिक्त पदों के विरुद्ध भरती करने के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को मांग पत्र भेजा गया था। राज्य सरकार के उक्त निर्णय की दृष्टि में, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को भेजा गया मांग-पत्र वापस ले लिया गया था और 2513 रिक्त पदों पर सहायक शिक्षकों की भरती के लिए ऐसी परीक्षा संचालित करने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् को प्राधिकृत किया गया था।

4. विज्ञापन सं॰ 2/2010 झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा विभिन्न विषयों में 2050 शिक्षकों की भरती के लिए जारी किया गया था जो परिशिष्ट 3 है और ऐसे विद्यालयों में विभिन्न विषयों में 463 सहायक शिक्षकों की भरती के लिए विज्ञापन सं॰ 5/2010 जारी किया गया था। 2050 में 463 जोड़ने पर ये 2513

शिक्षक पद होते हैं जिनके लिए ऐसे सहायक शिक्षकों के चयन के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को मांगपत्र भेजा गया था। स्पष्टत: इन पदों को झारखंड एकेडमिक परिषद् द्वारा संचालित परीक्षा के माध्यम से भरा जाना था। एक उम्मीदवार, जिसने विज्ञापन सं॰ 2/2010 के अधीन आवेदन दिया था, इस अभिवचन पर कि उसने उक्त विज्ञापन सं॰ 2/2010 के अधीन आवेदन दिया था, नव उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में सहायक शिक्षकों की नियुक्ति के लिए विशेष परीक्षा लेने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देने की प्रार्थना के साथ इस न्यायालय के पास आया। उक्त रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 442/2012 में झारखंड राज्य और झारखंड एकेडमिक परिषद् तथा जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के परस्पर दृष्टिकोण पर विचार करने के बाद निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:–

^^mDr ij fopkj djr g, vkj çR;Fkh l0 2, fun'kd ekè;fed f'k{kk] ekuo llkèku fodkl foHkkx] >kj[kM ljdkj }kjk bl U;k;ky; d le{k fn, x, vk'oklu dh nf"V e] mDr çR;Fkh dk ,d lIrkg d Hkhrj mu mEehnokjk ftUgku uo&mRØfer mPp fo|ky;k e f'k{kdk dh fu;fDr d fy, ijh{kk e mifLFkr gku d fy, t0 ih0 ,l0 lh0 d ekè;e l vkonu fn;k Fkk] d fy, fo'k"k ijh{kk yu d fy, fdlh vU; lcfèkr çkfèkdkjh d lkFk t0 ,0 lh0 dk lefpr vkn'k tkjh dju d fun'k d lkFk bl fjV ;kfpdk dk fuiVk;k tkrk gA

*fun'kd] ekè;fed f'k{kk }kjk tkjh vkn'k dh çkfIr d ckn t0 ,0 lh0] t0 ih0 ,l0 lh0 d ekè;e l vkonu nu oky ik= mEehnokjk dh fo'k"k ijh{kk yxk vkj mDr ijh{kk ijh gku d ckn lerY;rk vkj ,d#irk cuk, j[ku d fy, fdlh HknHkko d fcuk ,d çfØ;k e leLr mÙkj ifLrdkvk dk eY;kdu djxk vkj p;u lph d vu#i eèkk d vkèkkj ij leLr lQy mEehnokjk dk ,d ifj.kke çdkf'kr djxkA***

5. उक्त आदेश के परिणामस्वरुप झारखंड सरकार द्वारा अनुदेश जारी किए गए थे जो दिनांक 15 सितंबर, 2012 के परिशिष्ट A के रूप में संलग्न है और जिसका अनुसरण दिनांक 20 मई, 2013 और दिनांक 21 मई, 2013 के अन्य पत्रों द्वारा किया गया था (जे॰ ए॰ सी॰ के प्रतिशपथ पत्र की परिशिष्ट E श्रृंखला) जिसमें अन्य बातों के साथ प्रत्यर्थी झारखंड एकेडमिक परिषद् को उन उम्मीदवारों जो विज्ञापन सं॰ 02/2010 के अधीन आवेदक थे के लिए उक्त परीक्षा संचालित करने का निर्देश दिया गया था। पूर्वोक्त पत्रों ने उम्मीदवारों के लिए इस प्रभाव का शपथ पत्र दाखिल करने की कुछ शर्तों को अनुबंधित किया था कि वे केवल उक्त विज्ञापन के अधीन आवेदक थे। इस बीच, झारखंड एकेडमिक परिषद् ने झारखंड राज्य में नव–उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में रिक्त पदों की कुल संख्या 2513 के विरुद्ध और अनेक विषयों के विरुद्ध सहायक शिक्षकों के पद के लिए उम्मीदवारों का चयन करने के लिए दिनांक 29 मई, 2011 की संकल्प संख्या 1470 में अंतर्विष्ट राज्य सरकार के निर्णय की दृष्टि में विज्ञापन सं॰ 93/2011 जारी किया। डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 442/2012 में इस न्यायालय की विद्वान एकल पीठ द्वारा जारी आदेश और अनेक तिथियों पर माध्यमिक शिक्षा निदेशालय द्वारा जारी अनुदेश के बाद, जैसा यहाँ उपर निर्दिष्ट किया गया है, झारखंड एकेडमिक परिषद् द्वारा एक अन्य विज्ञापन सं॰ 39/2013 जारी किया गया था। ऐसा केवल उन उम्मीदवारों, जो विज्ञापन सं॰ 2/2010 के अधीन उम्मीदवार थे, द्वारा शपथपत्र दाखिल करने की आवश्यकता के संबंध में था।

6. इस पृष्ठभूमि में, याची की शिकायत है कि यद्यपि दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 के परिशिष्ट 5 पर अंतर्विष्ट निर्णय सहायक शिक्षकों के 2513 रिक्त पदों की कुल संख्या से संबंधित है जो विज्ञापन सं॰

2/2010 और विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन आच्छादित है किंतु झारखंड एकेडमिक परिषद केवल उन उम्मीदवारों जिन्होंने विज्ञापन सं॰ 2/2010 के अधीन आवेदन दिया था के लिए विशेष परीक्षा संचालित करने जा रहा है। यह युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता है क्योंकि यह राज्य सरकार के निर्णय के अनुकूल नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि उम्मीदवार जो इस न्यायालय के पास पहले आया था केवल विज्ञापन सं॰ 02/2010 के अधीन उम्मीदवार था और इसलिए, डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 442/2012 में पारित आदेश विज्ञापन सं॰ 5/2010 के संबंध में नहीं था जिसमें संभवत: प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के दिमाग में भ्रम कारित किया है। याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि विज्ञापन सं॰ 2/2010 के अधीन विशेष परीक्षा अभी भी झारखंड एकेडमिक परिषद् द्वारा नहीं ली गयी है, किंतु निकट भविष्य में इसे लेने की संभावना है।

7. जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सूचित किया गया है कि विज्ञापन सं॰ 2/2010 और विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन संपूर्ण आवेदन पत्रों को इसकी सॉफ्ट कौपी के साथ झारखंड एकेडमिक परिषद् को प्रेषित किया गया है। उनकी ओर से आगे यह निवेदन किया गया है कि उक्त दोनों विज्ञापनों के अधीन आवेदकों की ओर से जमा किया गया आवेदन फीस भी सरकारी खजाने में जमा कर दिया गया है। ऐसी परिस्थितियों में, वे निवेदन करते हैं कि अब जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ की कोई भूमिका नहीं है और दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 के परिशिष्ट 5 पर अंतर्विष्ट निर्णय के साथ संगत कार्रवाई उनके द्वारा की गयी है।

8. निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, के अनुदेश पर राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि राज्य सरकार झारखंड राज्य में नव-उत्क्रमित माध्यमिक विद्यालयों में 2513 रिक्त पदों के विरुद्ध सहायक शिक्षकों के चयन/नियुक्ति के लिए भरती करने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् को प्राधिकृत करने वाले दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 के परिशिष्ट 5 पर अंतर्विष्ट अपने निर्णय पर दृढ़ है। ऐसी परिस्थितियों में, ऐसे उम्मीदवारों, जिन्होंने विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन आवेदन दिया था, के लिए विशेष परीक्षा संचालित करने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् को आवश्यक अनुदेश जारी किया जाएगा।

9. झारखंड एकेडमिक परिषद् के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता भी निवेदन करते हैं कि यदि झारखंड एकेडमिक परिषद् को ऐसे अनुदेश/निदेश जारी किए जाते हैं। यह उन आवेदकों जो विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन आच्छादित है के लिए विशेष परीक्षा संचालित करने के लिए बाध्य है।

10. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि ऐसा कोई विवाद्यक नहीं है जिस पर पक्षगण एक-दूसरे के विरोध में हैं। राज्य सरकार ने पूर्वोक्तानुसार पहले ही दिनांक 27 अक्टूबर, 2011 की अपनी संसूचना के माध्यम से 2513 रिक्त पदों पर नव उत्क्रमित उच्च विद्यालयों में सहायक शिक्षकों की भरती के लिए परीक्षा लेने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् को प्राधिकृत करते हुए निर्णय लिया था। प्रत्यर्थी राज्य द्वारा लिए गए दृष्टिकोण की दृष्टि में, जैसा यहाँ उपर उपदर्शित किया गया है, प्रत्यर्थी सं॰ 2, निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, मानव संसाधन विकास विभाग (माध्यमिक शिक्षा निदेशालय), झारखंड सरकार को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से दो सप्ताह की अवधि के भीतर नव-उत्क्रमित उच्च विद्यालयों में सहायक शिक्षकों के पद पर चयन/नियुक्ति के लिए उम्मीदवारों, जिन्होंने पहले जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के माध्यम से विज्ञापन सं॰ 05/2010 के अधीन आवेदन दिया था, के लिए विशेष

लिखित परीक्षा संचालित करने के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद् तथा किसी अन्य संबंधित प्राधिकारी पर समुचित निर्देश जारी करने का निर्देश देते हुए इस रिट याचिका को निपटाया जाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 2, निदेशक, माध्यमिक शिक्षा से ऐसे आदेश की प्राप्ति के बाद झारखंड एकेडमिक परिषद् वैसे पात्र उम्मीदवारों जिन्होंने विज्ञापन सं॰ 5/2010 के अधीन आवेदन दिया था के लिए विशेष लिखित परीक्षा संचालित करेगा और विधि के अनुरुप चयनित उम्मीदवारों का परिणाम घोषित करेगा। ऐसा कार्य युक्तियुक्त समय के भीतर पूरा किया जाए।

पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

इस आदेश की प्रति प्रत्यर्थी राज्य और झारखंड एकेडमिक परिषद् के अधिवक्ता को दी जाए।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

अरविन्द कुमार वर्मा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 4985 of 2006. Decided on 20th September, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 21 नियम 97—डिक्री का निष्पादन–अवर न्यायालय ने डिक्री में उल्लिखित संपत्तियों का कब्जा देने के लिए रिट जारी किया–चूँकि डिक्री अंतिम बन गयी थी, डिक्री की आज्ञा का पालन करना याची के लिए अनिवार्य है–निर्णीत ऋणी कब्जा देने में विलंब करने की दृष्टि से डिक्री के विरुद्ध आपत्ति कर रहा है– रिट आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 8, 11, 12 एवं 13)

निर्णयज विधि.–(1970)1 SCC 670; (2004)1 SCC 287—Relied.

अधिवक्तागण.–Miss Nehala Sharmin, For the Petitioners; M/s Ayush Aditya, S. Shekhar, A. Verma, For the Respondents.

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.–यह रिट आवेदन हक निष्पादन केस सं॰ 2/1994 में उप-न्यायाधीश-I, दुमका द्वारा पारित दिनांक 27.7.2006 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्होंने याची/निर्णीत ऋणी द्वारा दाखिल प्रत्युत्तर अस्वीकार कर दिया और प्रत्यर्थी/डिक्रीधारक का आवेदन अनुज्ञात किया और डिक्री धारक के पक्ष में कब्जा देने का आदेश जारी किया।

2. प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने वादपत्र के अनुसूची A में वर्णित वाद संपत्ति से उनकी बेदखली के लिए और किराया के बकाया के वसूली के लिए भी याची और अन्य के विरुद्ध हक बेदखली वाद सं॰ 24/79 वाला वाद दाखिल किया है। यह प्रतीत होता है कि पूर्वोक्त वाद वादी/प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पक्ष में डिक्री किया गया था। तत्पश्चात, याची और अन्य ने अपर जिला न्यायाधीश, दुमका के समक्ष अपील दाखिल किया जिसे खारिज कर दिया गया था। तब याची ने इस न्यायालय में द्वितीय अपील दाखिल किया, जिसे भी खारिज कर दिया गया था। तब यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन दाखिल किया जिसे हक निष्पादन केस सं॰ 2/94 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त निष्पादन मामले के लंबित रहने के दौरान याची/निर्णीत ऋणी ने दिनांक 8.4.2005 को भूखंड सं॰ 1435/13 से संबंधित दुमका अंचल की खसरा पंजी की प्रमाणित प्रति को दाखिल किया और कथन किया कि उक्त भूमि राज्य सरकार

की गैर मजरुआ खास भूमि है। यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चात प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने दिनांक 12.4.2005 को आवेदन दाखिल किया जिसमें उसने कथन किया कि याची/निर्णीत ऋणी ने भ्रम उत्पन्न करने के लिए और निष्पादन कार्यवाही को लंबा खींचने के लिए खसरा की प्रमाणित प्रति को दाखिल किया है। तद्नुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने प्रार्थना किया कि कब्जा देने के लिए रिट जारी किया जाए और न्यायालय की प्रक्रिया द्वारा वादी/प्रत्यर्थी सं॰ 2 को कब्जा दिया जाए।

3. याची/निर्णीत ऋणी ने उक्त आवेदन के प्रति प्रत्युत्तर दाखिल किया जिसमें उसने कथन किया कि डिक्रीधारक ने अस्पष्ट और त्रुटिपूर्ण डिक्री पाया है जिसमें संपत्ति का क्षेत्रफल अथवा विनिर्दिष्ट चौहद्दी उल्लिखित नहीं किया गया है। यह कथन किया गया है कि वाद पत्र में वादी ने कथन किया है कि वाद संपत्ति वार्ड सं॰ 9 के धृति सं॰ 142/55 पर स्थित है, किंतु नगरपालिका रजिस्टर के परिशीलन से यह पता चलेगा कि वार्ड सं॰ 9 की धृति सं॰ 142 रामानंद साह के नाम में दर्ज की गयी है और धृति सं॰ 55, प्रोफेसर श्रीचंद ठाकुर की है। भूखंड सं॰ 1435/2033 के अधीन भूमि अभी भी गैर मजरुआ खास के रूप में दर्ज है। याची/निर्णीत ऋणी ने आगे कथन किया कि वे भूखंड सं॰ 1435/2033 के किसी भाग में निवास नहीं कर रहे हैं बल्कि वे मौजा दुमका के भूखंड सं॰ 324 पर निवास कर रहे हैं जो भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद की संपत्ति है। याची/निर्णीत ऋणी ने आगे कथन किया कि डिक्री धारक की डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद की भूमि पर लालच है, अत: कपट और दुर्व्यपदेशन द्वारा वह याची को बेदखल करके उक्त भूमि का कब्जा पाना चाहती है। तद्नुसार, यह प्रार्थना की गयी है कि हक निष्पादन केस सं॰ 2/94 को खारिज किया जाए और प्रत्यर्थी सं॰ 2 का दिनांक 12.4.2005 का आवेदन अस्वीकार किया जाए।

4. विद्वान उप न्यायाधीश ने पक्षों द्वारा दाखिल आवेदन पर विचार करने और तर्कों को सुनने के बाद निष्कर्षित किया कि डिक्री धारक डिक्री में उल्लिखित संपत्ति के संबंध में कब्जा दिए जाने के लिए रिट जारी किए जाने का हकदार है। तद्नुसार, उन्होंने याची/निर्णीत ऋणी द्वारा दाखिल प्रत्युत्तर अस्वीकार कर दिया और डिक्री धारक (प्रत्यर्थी सं॰ 2) द्वारा दाखिल आवेदन अनुज्ञात किया और दिनांक 27.7.2006 के अपने आदेश के तहत कब्जा दिए जाने के लिए रिट जारी किया।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्रीमती नेहला शर्मीन निवेदन करती हैं कि वर्तमान मामले में संबंधित न्यायालय द्वारा जारी डिक्री निष्पादित नहीं की जा सकती है क्योंकि यह अस्पष्ट और त्रुटिपूर्ण है क्योंकि वाद संपत्ति का क्षेत्रफल एवं विनिर्दिष्ट चौहद्दी इसमें उल्लखित नहीं किया गया है। वह आगे निवेदन करती हैं कि वस्तुत: डिक्री की ओट में प्रत्यर्थीगण याची/निर्णीत ऋणी को मौजा दुमका के भूखंड सं॰ 324 जो भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद की है से बेदखल करना चाहते हैं। तद्नुसार, वह निवेदन करती हैं कि निष्पादन न्यायालय के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के प्रावधानों के अनुसार निर्णीत ऋणी (याची) द्वारा उठाए गए पूर्वोक्त विवाद और/अथवा आपत्ति को विनिश्चित करना आवश्यक है। इस प्रकार, वह निवेदन करती हैं, कि आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने का दायी है क्योंकि निष्पादन न्यायालय ने निर्णीत ऋणी (याची) द्वारा उठाए गए आपत्तियों को विनिश्चित किए बिना कब्जा देने के लिए रिट जारी किया था।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री आयुष आदित्य निवेदन करते हैं कि हक बेदखली वाद सं॰ 24/1979 में विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित डिक्री वाद पत्र की अनुसूची में उल्लिखित संपत्तियों से संबंधित है। इसमें कोई अस्पष्टता और/अथवा भ्रम नहीं है। वह आगे निवेदन करते हैं कि याची/निर्णीत ऋणी ने उच्च न्यायालय तक उक्त डिक्री को चुनौती दिया है और हार गया है। उक्त परिस्थिति के अधीन, निष्पादन के चरण पर निर्णीत ऋणी (याची), में से एक डिक्री के निष्पादन में नयी आपत्ति उठा रहा है जिसे उसे विचारण के दौरान और/अथवा अपीलीय न्यायालय के समक्ष उठाना चाहिए

था। वह निवेदन करते हैं कि निष्पादन न्यायालय के पास डिक्री के परे जाने की और किसी विवाद को विनिश्चित करने की अधिकारिता नहीं है। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से याची/निर्णीत ऋणी द्वारा दाखिल प्रत्युत्तर को अस्वीकार कर दिया था और डिक्री में वर्णित संपत्तियों का कब्जा देने के लिए आदेश जारी किया था।

7. निवेदनों को सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

8. यह स्वीकृत अवस्था है कि याची/निर्णीत ऋणी द्वितीय अपील तक हार चुका था। यह प्रतीत होता है कि याची/निर्णीत ऋणी ने अपने प्रत्युत्तर में एक नया मामला बनाया और कहा कि हक निष्पादन सं॰ 24/1979 में विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री निष्पादन योग्य नहीं है क्योंकि यह अस्पष्ट और त्रुटिपूर्ण है क्योंकि संपत्ति का क्षेत्रफल और चौहद्दी इसमें उल्लिखित नहीं किया गया है। अवर न्यायालय ने याची/निर्णीत ऋणी द्वारा उठायी गयी आपत्तियों पर सावधानीपूर्वक विचार करके इसे अस्वीकार कर दिया और कथन किया कि वादी/डिक्री धारक उसी संपत्ति जिसे डिक्री में उल्लिखित किया गया है के संबंध में कब्जा दिए जाने के लिए प्रार्थना करता है। मैं पाता हूँ कि विद्वान निष्पादन न्यायालय ने सही प्रकार से याची का आवेदन अस्वीकार कर दिया था।

9. वासुदेव धानीभाई मोदी बनाम राजाभाई अब्दुल रहमान एवं अन्य, (1970)1 SCC 670, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि :–

> *^^fMØh fu"ikfnr dju okyk U;k;ky; fMØh l ij ugh tk ldrk g% i{kk vFkok mud çfrfufèk;k d chp bl fMØh dk bld Loj d vulkj yuk gkxk vkj ;g ,lh fdlh vkifÙk dk xg.k ugh dj ldrk g fd fMØh fofèk e vFkok rF; ij xyr FkhA tc rd bl vihy vFkok iujh{k.k e lefpr dk;okgh }kjk vikLr ugh fd;k tkrk g] fMØh Hky gh ;g xyr gk vHkh Hkh i{kk d chp ckè;dkjh gA***

10. रफीक बीबी बनाम सैयद वलीउद्दीन एवं अन्य, (2004)1 SCC 287 में माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया कि:–

> *^^vfèkdkfjrk ugh j[ku oky U;k;ky; }kjk ikfjr fMØh vkj ifj.kkeLo#i bld vÑr rFkk vfu"iknuh; ugh gku d ukr fMØh rFkk U;k;ky; dh fMØh tk voèk ek= g vFkok fofèk }kjk vfèkdfFkr çfØ;k d vu#i ikfjr ugh dh x;h g d chp lfHkUurk fo|eku gA voèkrk vFkok çfØ;k dh vfu;ferrk l ihfMr fMØh dk fu"iknu dju oky U;k;ky; }kjk vfu"iknuh; ugh dgk tk ldrk gA ,lh fMØh l 0;fFkr 0;fDr d ikl miyCèk mipkj bl lE;d :i l xfBr fofèkd dk;okgh e vFkok mPprj U;k;ky; }kjk vikLr djokuk g ftle foQy jgu ij ml fMØh dh vkKk dk ikyu djuk gh gkxkA l{ke vfèkdkfjrk d U;k;ky; }kjk ikfjr fMØh dk fdlh lkikf'od vkØe.k }kjk vFkok vku"kfxd dk;okgh e bld çHkko l jfgr ugh fd;k tk ldrk gA***

11. सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा अधिकथित पूर्वोक्त विधि की दृष्टि में याची/निर्णीत ऋणी द्वारा की गयी आपत्ति आधारहीन है। उन्होंने अपने प्रत्युत्तर में कहीं नहीं कथन किया है कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री अधिकारिताविहीन है। डिक्री (परिशिष्ट–1) के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि निम्नलिखित अनुसूची A संपत्ति से याची/निर्णीत ऋणी को बेदखल करने के लिए डिक्री पारित की गयी थी:–

*^^nedk Vkmu e okM l0 9 (u;k) d ekfr l0 142/55 d Hkhrj vkj nedk Vkmu ih0 ,l0] nedk Vkmu vueMy vkj ftyk nedk] lFkky ijxuk d Hk[kM l0 1435/2033 ij [kMh [kiMkik'k bV fufer ?kj] yfVu] dvk vkj vU; leLr fuek.k l xfBrA***

12. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि विद्वान अवर न्यायालय ने डिक्री में उल्लिखित संपत्ति का कब्जा देने के लिए रिट जारी किया। उक्त परिस्थिति के अधीन, चूँकि डिक्री अंतिम बन गयी थी, डिक्री की आज्ञा का पालन करना याची/निर्णीत ऋणी के लिए अनिवार्य है। यह प्रतीत होता है कि वर्तमान मामले में याची/निर्णीत ऋणी कब्जा देने में विलंब करने की दृष्टि से डिक्री के विरुद्ध आपत्ति कर रहा है। अत:, मैं निष्कर्षित करता हूँ कि विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से याची/निर्णीत ऋणी का प्रत्युत्तर अस्वीकार किया है।

13. परिणामस्वरुप, मैं इस रिट आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है। मैं अवर न्यायालय को इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से एक माह के भीतर डिक्री में उल्लिखित संपत्ति का कब्जा देने का निर्देश देता हूँ।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती सुनीता देवी एवं अन्य

cuke

बोकारो स्टील प्लान्ट एवं अन्य

W.P. (S) No. 3173 of 2009. Decided on 1st October, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–बरामदगी–आवासीय कर्ज राशि–याची के सेवानिवृत्ति पश्चात लाभों से बरामदगी इप्सित की गयी–याची को कारण बताओ अथवा नोटिस जारी नहीं किया गया–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैरा 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Manish Kumar, For the Petitioners; Mr. G.M. Mishra, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. मूल याची, जो भारतीय स्टील प्राधिकरण लिमिटेड की इकाई बोकारो स्टील प्लांट का कर्मचारी था, को दिनांक 7 अक्टूबर, 2011 को उसकी मृत्यु पर उसके विधिक उत्तराधिकारियों द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है। वह दिनांक 31 जनवरी, 2009 को सेवानिवृत्त हुआ बताया जाता है।

3. वह वर्तमान रिट याचिका में इस शिकायत के साथ इस न्यायालय के पास आया था कि याची की सेवा निवृत्ति पर परिशिष्ट–1 के तहत जनवरी, 2009 में जारी अंतिम व्यवस्थापन विवरण में उसके विरुद्ध 6 लाख रुपयों की राशि बकाया दर्शायी गयी थी। याची ने अभिकथित किया था कि वर्ष 1997 में नए भवन निर्माण कर्ज के लिए उसके आवेदन के विरुद्ध नए घर के निर्माण के लिए दिनांक 11 अप्रिल, 1997 के आवंटन पत्र के तहत उसे 1,90,000/- रुपयों की राशि मंजूर की गयी थी। उसे क्रमश: दिनांक 12 अगस्त, 1997 और दिनांक 18 दिसंबर, 1997 को 57,000/- रुपयों और 76,000/- रुपयों कुल 1,33,000/- रुपयों का भुगतान दो किस्तों में किया गया था। याची अपने घर का निर्माण पूरा नहीं कर

सका था और उसने प्राधिकारियों को सूचित किया था। अत:, मंजूर राशि के विरुद्ध शेष तीसरी किस्त जारी नहीं की गयी थी। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने फरवरी, 1999 से मुख्य राशि की ओर 1120/- रुपया प्रतिमाह और ब्याज की ओर 330/- रुपया की दर पर प्रत्येक माह के उसके वेतन से इसे काटते हुए भवन निर्माण अग्रिम वसूल करना आरंभ किया। अंतिम किस्त अक्टूबर, 2008 में काटी गयी थी। रिट याचिका के परिशिष्ट–3 पर अंतर्विष्ट पुनर्भुगतान विवरण के मुताबिक अक्टूबर, 2008 तक याची से वसूल की गयी कुल राशि 2,19,991/- रुपया थी। इस बीच, अपनी सेवानिवृत्ति के ठीक पहले उसे गृह निर्माण की राशि का उपयोग नहीं करने के लिए और अग्रिम निकालने के पहले अपने द्वारा दिए गए वचन का उल्लंघन करने के लिए दिनांक 24 अक्टूबर, 2008 को आरोप–पत्र जारी किया गया था। याची द्वारा उक्त आरोप का उत्तर दिया गया था और उस पर प्रत्यर्थी डी॰ जी॰ एम॰, बोकारो स्टील प्लांट द्वारा जारी परिशिष्ट 4 के तहत दिनांक 13/16 दिसंबर, 2008 को पारित निंदा का दंड अधिरोपित किया गया था।

4. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में याची की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि जब प्रत्यर्थीगण ने याची के वेतन से प्रतिमाह नियमित कटौती करने के बाद 1,33,000/- रुपयों के कर्ज अग्रिम के विरुद्ध अक्टूबर, 2008 तक ब्याज के साथ कुल राशि 2,19,991/- रुपया वसूल कर लिया और कि ऐसे आरोपों के लिए उसकी निंदा भी की गयी थी, नए गृह निर्माण कर्ज के विरुद्ध 6 लाख रुपयों का बकाया दर्शाने वाला अंतिम व्यवस्थापन, विवरण बिल्कुल मनमाना, अवैध और विधि की दृष्टि में असंपोषणीय है। यह निवेदन भी किया गया है कि उसके कुल सेवानिवृत्ति–पश्चात देयों 8.73 लाख रुपयों से ऐसी राशि समायोजित करने के पहले याची अथवा उसके विधिक उत्तराधिकारियों को कोई नोटिस जारी नहीं की गयी है। यह निवेदन किया गया है कि याची के विरुद्ध दर्शायी गयी 6 लाख रुपयों की बकाया कर्ज राशि काल्पनिक ब्याज दर पर संगणित की गयी है। यहाँ तक कि 2,19,991/- रुपयों की राशि जिसे पहले ही वसूल किया गया था को भी समायोजित नहीं किया गया है। अत: आक्षेपित वसूली विधि में पूर्णत: असंपोषणीय है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची ने गृह निर्माण पूरा नहीं किया था जिसके लिए उसे अग्रिम दिया गया था। उसने इस तथ्य को दबाया था कि उसका पुत्र पहले से ही व्यवसाय कर रहा था और कहा कि उसका पुत्र उस पर आश्रित था। ऐसी परिस्थितियों में, कंपनी के भवन निर्माण नियमावली के नियम 5.8 के अधीन यदि कर्मचारी योजना के प्रावधानों का अनुपालन नहीं करता है अथवा गलत या झूठी सूचना अथवा प्रमाण पत्र प्रस्तुत करता है अथवा किसी रूप में सुविधा का दुरुपयोग करता है, वह अवचार का दोषी होगा और गृह निर्माण अग्रिम की निकासी की तिथि से वार्षिक रूप से संयोजित किए जाने वाले 18% वार्षिक दर के साथ कर्ज की संपूर्ण बकाया राशि को वापस लौटाने का दायित्व उपगत करने के अतिरिक्त मुख्य दंड को अंतर्ग्रस्त करने वाली अनुशासनिक कार्रवाई के प्रति स्वयं को दायी बनाएगा। यह निवेदन किया गया है कि ऐसी परिस्थितियों में, याची के विरुद्ध निगरानी जाँच के समापन के बाद, जिसमें स्वीकृत रूप से उसे नोटिस कभी नहीं दिया गया था, प्रत्यर्थीगण ने 18% वार्षिक ब्याज की दर के साथ बकाया गृह अग्रिम राशि की वसूली इप्सित किया जो उनके प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 17 में दिए गए बयान के मुताबिक 5,94,249/- रुपया होता है। यह निवेदन किया गया है कि परिशिष्ट 4 के चार्ट में दर्शायी गयी दांडिक ब्याज की संगणना उपदर्शित करती है कि उसके वेतन से वसूल की गयी कुल ब्याज राशि अर्थात् 87,528/- रुपया पहले ही 6,81,777.70/- रुपयों के कुल दांडिक ब्याज से घटा दी गयी है। ऐसी परिस्थितियों में, याची गृह निर्माण अग्रिम नियमावली के नियम 5.8 के अधीन ब्याज की अनुबंधित दर पर ब्याज के साथ बकाया कर्ज राशि का भुगतान करने के दायित्व से बच नहीं सकता है। अत:, अंतिम व्यवस्थापन विवरण ने भी याची के विरुद्ध ऐसी बकाया कर्ज राशि को परिलक्षित किया है।

6. किंतु याची के अधिवक्ता इंगित करते हैं कि दिनांक 11 अप्रिल, 1997 का आवंटन आदेश (परिशिष्ट 2) पैरा III (ग) जो उक्त अनुबंध अंतर्विष्ट करता है, पर ब्याज की कोई दर नहीं दर्शाता है।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। वर्तमान मामले में, यह प्रतीत होता है कि संपूर्ण विवाद याची के सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों से लगभग 5.94 लाख रुपयों की राशि की वसूली के लिए प्रत्यर्थीगण के कार्य के इर्द-गिर्द इस आधार पर घूमता है कि वह अप्रिल, 1997 में उसको मंजूर की गयी गृह कर्ज अग्रिम का उपयोग करने में विफल रहा था। उक्त वसूली उसकी सेवानिवृत्ति के बाद गृह निर्माण अग्रिम नियमावली के नियम 5.8 के अधीन की जा रही थी जो प्रावधानित करती है कि गलत और झूठी सूचना अथवा प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने पर अथवा उस सुविधा का दुरुपयोग करने पर अथवा योजना के प्रावधानों का अनुपालन करने में विफलता पर कर्मचारी मुख्य दंड अंतर्ग्रस्त करने वाली अनुशासनिक कार्रवाई का दायी होगा और ऐसा कृत्य गंभीर अवचार माना जाएगा। उक्त नियम के अधीन, कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई की पूर्वोक्त संभावना के अतिरिक्त वह भवन निर्माण अग्रिम जारी किए जाने की तिथि से वार्षिक रूप से संयोजित किए जाने वाले 18% वार्षिक दर पर संपूर्ण बकाया कर्ज वापस करने का भी दायी है।

8. वर्तमान मामले में जैसा तथ्य दर्शाते हैं, दिनांक 12 अप्रिल, 1997 को याची के पक्ष में 1,90,000/- रुपयों की राशि की गृह निर्माण अग्रिम मंजूर की गयी थी। पहली और दूसरी किश्त, जैसा पहले के पैराग्राफों में उपदर्शित किया गया है। क्रमशः अगस्त, 1997 और दिसंबर, 1997 में कुल 1,33,000/- रुपयों के लिए निर्मुक्त की गयी थी। चूँकि याची ने गृह निर्माण पूरा नहीं किया था, उसने प्राधिकारियों को सूचित किया और तीसरी किश्त जारी नहीं की गयी थी। प्रत्यर्थी ने फरवरी, 1999 से उसके वेतन से मुख्य राशि की ओर 1120/- रुपए की दर पर और ब्याज की ओर 330/- रुपयों के दर पर मासिक कटौती करके कर्ज राशि वसूल करना जारी किया। ऐसी वसूली, परिशिष्ट 3 में संलग्न कटौतियों के विवरण के मुताबिक अक्टूबर, 2008 तक 2,19,991/- रुपया वसूल किए जाने तक जारी रही।

9. अक्टूबर, 2008 में, याची को कर्ज राशि के दुरुपयोग और गृह निर्माण के विनिर्दिष्ट प्रयोजन से इसका उपयोग करने में विफलता के पूर्वोक्त अभिकथन के संबंध में आरोपों पर कारण बताने के लिए कहा भी गया था। उसके द्वारा कारण बताओं का उत्तर देने पर उस पर परिशिष्ट 4 के तहत दिनांक 13 दिसंबर, 2008 को निंदा का दंड अधिरोपित किया गया था। अतः यह प्रतीत होता है कि गृह निर्माण अग्रिम नियमावली के नियम 5.8 के अनुपालन में याची ने अनुशासनिक कार्रवाई का सामना किया और उस पर दंड भी अधिरोपित किया गया था। गृह निर्माण अग्रिम नियमावली के नियम 5.8 में अनुबंधित अन्य शर्तों के कारण प्रत्यर्थीगण ने गृह निर्माण अग्रिम के संवितरण की तिथि से वार्षिक रूप से संयोजित किए जाने वाले 18% वार्षिक ब्याज की दर के साथ संपूर्ण बकाया कर्ज राशि की वसूली करना चुना। किंतु, उक्त कार्य याची को किसी कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना किया गया है। दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण ने स्वयं फरवरी, 1999 से अक्टूबर, 2008 तक याची के मासिक वेतन से कटौती करके याची के वेतन से 2,19,991/- रुपया वसूल किया। केवल 18% वार्षिक पर संगणित कुल दोंडिक ब्याज अर्थात् 6,81,777.70/- रुपयों के विरुद्ध ब्याज समायोजित किया गया है और 5,94,249/- रुपयों की शेष राशि याची से वसूल की जा रही है।

10. प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद यह है कि मूलधन की गणना नहीं की गयी है और पहली किश्त की तिथि से संगणना की गयी है और 18% वार्षिक दर पर ब्याज का दांडिक दर संगणित करने के बाद आँकड़ा 6,81,777.70 रुपया होता है। किंतु, प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट A पर चार्ट दर्शाता है कि चक्रवृद्धि दर पर प्रभारित ब्याज बार-बार मूलधन में जोड़ी गयी है जिसे ब्याज की उसी 18% चक्रवृद्धि दर पर प्रभारित किया गया था। यह पूर्णत: मनमाना और अयुक्तियुक्त है। याची के सेवा निवृत्ति पश्चात लाभों से पूर्वोक्त कटौती स्पष्टत: मूल याची अथवा उसके विधिक उत्तराधिकारियों को कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना की गयी है। याची वर्ष 2009 में सेवानिवृत्ति हुआ और अब उसका देहांत हो गया है। अत: ऐसी परिस्थितियों में, नए गृह निर्माण कर्ज के कारण 18% वार्षिक दर पर ब्याज के साथ बकाया कर्ज राशि की आक्षेपित वसूली नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन करने में विफलता के कारण दूषित हो गयी है। प्रत्यर्थीगण इस तथ्य से अवगत होने के बावजूद कि अक्टूबर, 2008 तक कुल कर्ज राशि वसूल कर ली गयी थी, केवल याची की सेवानिवृत्ति के बाद ऐसा करना चुना है। अत:, पूर्वोक्त राशि की वसूली विधि में संपोषित नहीं की जा सकती है और इसे मनमाना तथा अवैध अभिनिर्धारित किया जाता है। तद्नुसार, इसे अभिखंडित किया जाता है। प्रत्यर्थीगण इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से बारह सप्ताह की अवधि के भीतर विधि के अनुसार याची के विधिक उत्तराधिकारियों की कटौती की गयी संपूर्ण राशि वापस करेंगे।

रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

राजेश्वर प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य, निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No.1644 of 2011. Decided on 1st October, 2013.

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धारा 20—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—अवैध परितोषण–स्वीकरण की उपधारणा–जब कभी भी यह सिद्ध किया जाता है कि विधिक पारिश्रमिक से भिन्न धन की राशि स्वीकार की गयी है, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 के अधीन उपधारणा तुरन्त परितोषण के स्वीकरण के संबंध में उद्भूत होगी–करेंसी नोटों की बरामदगी मात्र स्वयं में अधिनियम के अधीन अपराध गठित नहीं करती है जब तक समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे यह सिद्ध नहीं किया जाता है कि अभियुक्त ने इसे घूस जानते हुए स्वेच्छापूर्वक धन स्वीकार किया था–केवल जब साक्ष्य दिया जाता, तभी यह जाना जा सकता था कि क्या याची के कब्जा से बरामद धन याची द्वारा इसे घूस से प्राप्त धन जानते हुए स्वेच्छापूर्वक स्वीकार किया गया था अथवा यह अन्यथा है जिसे पक्षों द्वारा विचारण के दौरान सिद्ध नहीं किया जा सकता था–इस चरण पर, संज्ञान लेने वाले आदेश के अभिखंडन का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 12, 17, 18 एवं 19)

निर्णयज विधि.–(2009)15 SCC 200; 2010 (8) Supreme 59; (2004)3 SCC 753; (AIR 2011 SC 608)—Referred; AIR 1964 SC 575; AIR 1966 SC 1762; (2009)3 SCC 779—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. P.P.N. Rai, For the Petitioner; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

यह आवेदन आरंभ में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13 (2) के अधीन संस्थित निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 4 वर्ष 2011 की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया था। बाद में, आरोप पत्र की दाखिली पर तत्कालीन विशेष न्यायाधीश, निगरानी द्वारा दिनांक 29.3.2011 के अपने आदेश के तहत याची के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7/13 (2) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया था। उक्त आदेश को भी चुनौती दी गयी थी।

2. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री पी॰ पी॰ एन॰ राय निवेदन करते हैं कि यह अभियोजन का मामला है कि तरुण कार ने परिवादी से अवैध परितोषण मांगा था। परिवादी ने तरुण कार को अवैध परितोषण दिया था जिसने इसे स्वीकार किया था और तब यह कहा गया है कि उसने कलंकित धन इस याची को दिया जिसके कब्जा से इसे बरामद किया गया था किंतु यह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7 और 13 के अधीन अभियोजन के लिए मामला नहीं बनाएगा जहाँ तक इस याची का संबंध है क्योंकि याची को तरुण कार की ओर से घूस धन स्वीकार करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है क्योंकि तरुण कार द्वारा दिए गए बयान के मुताबिक उसने इसे याची को इसे छिपाने के लिए दिया था और कि याची को कभी भी परिवादी से धन मांगता हुआ अभिकथित नहीं किया गया था और उस स्थिति में कलंकित धन की बरामदगी मात्र व्यक्ति को दोषी अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं क्योंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अपराध गठित करने के लिए अवैध परितोषण की मांग अनिवार्य है।

3. इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **महाराष्ट्र राज्य बनाम ध्यानेश्वर लक्ष्मण राव वानखेड़े, (2009)15 SCC 200,** मामले में और **सी॰ एम॰ शर्मा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य आई॰ पी॰ के माध्यम से, 2010 (8) Supreme 59,** मामले में भी दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

4. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि परिवादी से इस याची द्वारा अवैध परितोषण की मांग की किसी सामग्री की अनुपस्थिति में, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

5. किंतु, निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस तथ्य से इनकार नहीं किया गया है कि कलंकित धन याची के कब्जा से बरामद किया गया था। चूँकि कलंकित धन इस याची के कब्जा से बरामद किया गया है, अवैध परितोषण स्वीकार करने के लिए याची के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 20 के अधीन विधिक उपधारणा की जा सकती है। जब एक बार ऐसी विधिक उपधारणा की जायगी, याची को अपनी निर्दोषिता सिद्ध करना है और इसे केवल विचारण के चरण पर किया जा सकता है। अत:, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय कभी नहीं है।

6. अपने मामले के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने **टी॰ शंकर प्रसाद बनाम आंध्र प्रदेश राज्य [(2004)3 SCC 753]** के मामले में दिए गए एक निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

7. आगे यह निवेदन किया गया था कि केवल विचारण के दौरान अभियोजन के पास यह दर्शाने के लिए साक्ष्य देने का अवसर होगा कि इस याची और अन्य अभियुक्त तरुण कार के बीच षडयंत्र था और ऐसी परिस्थितियों में इस चरण पर संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित करना वांछनीय कभी नहीं होगा।

8. विद्वान अधिवक्ता ने इस संबंध में **सी॰ एम॰ शर्मा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, AIR 2011 SC 608,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

9. आगे यह निवेदन किया गया था कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7/13 के अधीन अपराध बनाए जाने पर याची को विधिक साक्ष्य गायब करने के लिए भा॰ दं॰ सं॰ के अधीन अपराध करने वाला कहा जा सकता है और इस प्रकार, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय कभी नहीं है।

10. इस प्रकार, प्रश्न जो सामने आया है यह है कि क्या कलंकित धन की बरामदगी अभियुक्तगण का विचारण करने के लिए पर्याप्त होगी?

11. इस संबंध में, मैं सीधे तौर पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> ***^^mièkkj.kk tgk¡ ykd lod fofèkd ikfjJfed l fHkUu ifjrk"k.k Lohdkj djrk g-***&*(1) tgk èkkjk 7 vFkok èkkjk 11 vFkok èkkjk 13 dh mièkkjk (1) d [kM (a) vFkok [kM (b) d vèkhu nMuh; vijkèk d fdlh fopkj.k e ;g fl) fd;k tkrk g fd tgk vfHk;Dr u (fofèkd ikfjJfed l fHkUu) fdlh ifjrk"k.k vFkok fdlh cgeY; pht dk fdlh 0;fDr l Lo; d fy, vFkok fdlh vU; 0;fDr d fy, Lohdkj vFkok çkIr fd;k g vFkok Lohdkj dju d fy, lger gvk g vFkok çkIr dju dk ç;kl fd;k g] ;g mièkkfjr fd;k tk,xk] tcrd foijhr fl) ugh fd;k tkrk g] fd mlu ml ifjrk"k.k vFkok ml cgeY; pht] ;FkkfLFkfr] dk gr vFkok ijLdkj tl k èkkjk 7 e mfYyf[kr fd;k x;k g vFkok] ;FkkfLFkfr] çfrQy d fcuk vFkok çfrQy d fy, ftld ckj e og voxr g fd ;g vi;kIr g] d :i e Lohdkj vFkok çkIr fd;k vFkok Lohdkj dju d fy, lger gvk vFkok çkIr dju dk ç;kl fd;kA*
>
> *(2) tgk èkkjk 12 d vèkhu vFkok èkkjk 14 d [kM (b) d vèkhu nMuh; vijkèk d fdlh fopkj.k e ;g fl) fd;k tkrk g fd vfHk;Dr 0;fDr }kjk (fofèkd ikfjJfed l fHkUu) dkb ifjrk"k.k vFkok dkb cgeY; pht nh x;h g vFkok fn, tku dk çLrko fn;k x;k g vFkok fn, tku dk ç;kl fd;k x;k g] ;g mièkkfjr fd;k tk,xk fd mlu ml ifjrk"k.k vFkok ml cgeY; pht] ;FkkfLFkfr] dk gr vFkok ijLdkj tl k èkkjk 7 e mfYyf[kr fd;k x;k g] vFkok ;FkkfLFkfr] çfrQy d fcuk vFkok çfrQy d fy, ftld ckj e voxr g fd ;g vi;kIr g] d :i e fn;k vFkok nu dk çLrko fn;k vFkok nu dk ç;kl fd;kA*
>
> *(3) mièkkjkvk (1) vkj (2) e vrfo"V fdlh pht d ckotn] U;k;ky; mDr mièkkjkvk e l fdlh e fufn"V mièkkj.kk dju l budkj dj ldrk g ;fn iokDr ifjrk"k.k vFkok pht bl dr e bruk rPN g fd Hk"Vkpkj dk dkb fu"d"k fu"i{krkiod ugh fudkyk tk ldrk gA***

12. इस प्रकार, प्रावधान के पठन से यह प्रतीत होता है कि जब कभी भी यह सिद्ध किया जाता है कि विधिक पारिश्रमिक से भिन्न धन की राशि स्वीकार की गयी है, परितोषण के स्वीकरण के संबंध में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 20 के अधीन उपधारणा तुरन्त उद्‌भूत होगी।

13. धनवंती बलवंत राय देसाई बनाम महाराष्ट्र राज्य, AIR 1964 SC 575, मामले में यह संप्रेक्षित किया गया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 4 (1) के अधीन उपधारणा किए जाने के लिए अभियोजन को जो सिद्ध करना है, वह यह है कि अभियुक्त ने विधिक पारिश्रमिक से भिन्न परितोषण प्राप्त किया है और जब यह दर्शाया जाता है कि उसने धन की कतिपय राशि जो विधिक पारिश्रमिक नहीं थी को प्राप्त किया है, तब इस धारा द्वारा विहित शर्त पूरी होती है और इसके अधीन उपधारणा करना ही होगा।''

14. वी॰ डी॰ झिंगन बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, AIR 1966 SC 1762, मामले में यह संप्रेक्षित किया गया है कि धन की प्राप्ति मात्र भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 4 (1) के अधीन उपधारणा करने के लिए पर्याप्त है।

15. सी॰ एम॰ गिरीश बाबू बनाम सी॰ बी॰ आई॰ कोचीन, केरल उच्च न्यायालय, (2009)3 SCC 779, मामले में माननीय न्यायाधीशों ने पैराग्राफ 18 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"18. ljtey cuke jkT; (fnYyh ç'kklu)] 1979 (4) SCC 725, e bl U;k;ky; u nf"Vdk.k viuk;k fd (SCC P 727 ijk 2 ij) mu ifjfLFkfr;k] ftud vèkhu bldk Hkxrku fd;k tkrk g] l foPNfnr dyfdr èku dh cjkenxh ek= vfHk;Dr dk nk"kfl) dju d fy, i;kIr ugh g tc ekey e lkjoku lk{; fo'oluh; ugh gA cjkenxh ek= Lo; e ?kl d Hkxrku dk fl) dju d fy, vFkok ;g n'kku d fy, fd vfHk;Dr u ?kl tkur g, LoPNkiod èku Lohdkj fd;k] fdlh lk{; dh vuifLFkfr e vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu dk vkjki fl) ugh dj ldrh gA***

16. उक्त निर्णय पर विश्वास करते हुए माननीय न्यायाधीशों ने याची की ओर से विश्वास किए गए **सी॰ एम॰ शर्मा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (ऊपर)** मामले में यह अभिनिर्धारित किया था कि अधिनियम के अधीन अपराध गठित करने के लिए अवैध परितोषण की मांग अनिवार्य है:–

*^^vkx ;g fd djlh ukVk dh cjkenxh ek= Lo; e vfèkfu;e d vèkhu vijkèk xfBr ugh djrh g tc rd leLr ;fDr;Dr lngk d ij ;g fl) ugh fd;k tkrk g fd vfHk;Dr u bl ?kl tkur g, LoPNkiod Lohdkj fd;k FkkA***

17. इस प्रकार, केवल जब साक्ष्य दिया जाता, यह जाना जा सकता था कि क्या याची के कब्जे से बरामद धन याची द्वारा इसे घूस जानते हुए स्वेच्छापूर्वक स्वीकार किया गया था अथवा यह अन्यथा है जिसे विचारण के दौरान सिद्ध किया जा सकता था।

18. अत:, इस चरण पर संज्ञान लेने वाले आदेश के अभिखंडन का प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता है।

19. तद्‌नुसार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। अत: इस आवेदन को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती निर्मला बेसरा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (S) No. 730 of 2011. Decided on 1st October, 2013.

सेवा विधि–नियुक्ति–महिला पर्यवेक्षक का पद–आंगनबाड़ी सेविका के रूप में अर्हता सेवा–महिला पर्यवेक्षक के पद पर नियुक्ति लिखित परीक्षा में परिणाम के उपर आधारित की जानी थी–जब एक से अधिक उम्मीदवारों ने एक ही अंक प्राप्त किया है और ऐसी स्थिति से निबटने के लिए कोई नियम, विनियमन अथवा कार्यपालिका अनुदेश नहीं है, तब मापदंड जो युक्तियुक्तता के साथ संगत हैं और जो आकस्मिक परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करते हैं को अपनाकर अधिक आयु वाले व्यक्ति को कम आयु वाले व्यक्ति से पहले नियुक्ति दी जानी

है–प्रत्यर्थीगण ने इस रास्ते को अपनाया है जिसमें दोष नहीं निकाला जा सकता है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 6 से 8)

निर्णयज विधि.–(2011)8 SCC 115—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Din Dayal Saha, Vishal Kumar Tiwary, For the Petitioner; Mr. Sumir Prasad, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची, आंगनबाड़ी सेविका ने दिनांक 28.11.2007 को जारी विज्ञापन (परिशिष्ट-3) के अधीन सामाजिक कल्याण विभाग, महिला एवं बाल विकास के अधीन महिला पर्यवेक्षक की नियुक्ति कार्य में भाग लिया। उक्त विज्ञापन के खंड 2 पर अधिकथित ऐसी आंगनबाड़ी सेविका के लिए पात्रता मापदंड यह था कि स्नातक की अर्हत्ता रखने वालों को सेविका के रूप में कम से कम दस वर्षों की संतोषजनक अर्हक सेवा होने की आवश्यकता थी और मैट्रिक की अर्हता रखने वालों को 15 वर्षों की संतोषजनक अर्हक सेवा होने की आवश्यकता थी। खंड 3 के मुताबिक पाँच वर्षों का आयु शिथिलीकरण प्रदान किया जाना था। खंड 8 नियुक्ति प्रक्रिया विहित करता है। खंड 8 (ii) अधिकथित करता है कि महिला पर्यवेक्षक के पद पर ऐसी नियुक्ति के लिए आवेदन आंगनबाड़ी सेविका को दो भागों अर्थात् सामान्य ज्ञान और अखंडित बाल विकास योजना (आई॰ सी॰ डी॰ एस॰) से गठित लिखित परीक्षा देना होगा। दोनों विषय 100 अंक प्रत्येक का होना चाहिए। ऐसी परीक्षा के आधार पर डिविजनल स्तर पर गठित चयन कमिटी की अनुशंसा पर डिविजनल आयुक्त को ऐसी नियुक्ति के मामले में निर्णय लेने के लिए सशक्त बनाया गया था। ऐसी परिस्थितियों में, याची ने लिखित परीक्षा देने के बाद 130 अंक पाया। भाग्यवश, चार अन्य आंगनबाड़ी सेविकाओं ने भी 130 अंक प्राप्त किया। उन सब पाँच व्यक्तियों, जिनके नामों को प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दिनांक 13.6.2011 को दाखिल प्रति शपथ पत्र के पैरा 7 पर उपदर्शित चार्ट में संलग्न किया गया है, में से चार ऐसे उम्मीदवारों जो याची से आयु में बड़े हैं को रिक्त पदों के विरुद्ध नियुक्त किया गया था। इन परिस्थितियों में, याची अपनी शिकायतों को दूर करवाने के लिए इस न्यायालय के पास आयी।

3. याची का प्रतिवाद यह है कि विज्ञापन में अंतर्विष्ट मापदंडों अथवा सन्नियमों को विनिर्दिष्ट करने वाली किसी नियमावली के बिना ऐसी नियुक्ति की गयी थी। याची के समान अंक रखने वाले ऐसे व्यक्तियों को आयु में वरीयता के आधार पर नियुक्ति का प्रदान भेदभावपूर्ण है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है।

4. प्रत्यर्थीगण को प्रत्युत्तर दाखिल करने का समय दिया गया था कि वे मानक क्या हैं जिनके अधीन ऐसा रास्ता अपनाया गया है। उन्हें प्रकट करने के लिए कहा गया था कि क्या महिला पर्यवेक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए प्रत्यर्थी विभाग के अधीन ऐसी अतिरिक्त रिक्तियाँ उपलब्ध थी। प्रत्यर्थीगण ने आई॰ ए॰ सं॰ 800 वर्ष 2012 के प्रति अपने उत्तर में प्रकट किया है कि कोई अतिरिक्त रिक्ति नहीं है। उन्होंने यह भी उपदर्शित किया है कि झारखंड स्टाफ चयन आयोग अधिनियम, 2008 के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन जारी दिनांक 2.12.2011 को जारी अधिसूचना द्वारा उसके पैराग्राफ 5 में ऐसी संभाव्यता, जब एक से अधिक उम्मीदवारों के पास एक ही अंक है, से निबटने के लिए प्रावधान बनाए गए हैं। उस स्थिति

में चयन जन्मतिथि में वरीयता के आधार पर करना होगा। किंतु यह विवादित नहीं है कि उक्त चयन कार्य उक्त अधिसूचना के प्रभाव में आने से पहले वर्ष 2010 में किया गया था।

5. ऐसी परिस्थितियों में, याची ने प्रार्थना किया कि प्रत्यर्थीगण को नया पद सृजित करके वर्तमान याची, जो चार अन्य के साथ समस्थित है, के लिए जगह बनाने का निर्देश दिया जाए। किसी विनिर्दिष्ट नियम की अनुपस्थिति में याची से आयु में बड़े व्यक्तियों का चयन करने के लिए अपनाया गया रास्ता भेदभावपूर्ण है और विधि में दोषपूर्ण है। यह निवेदन भी किया गया है कि याची 130 अंक पाने वाले दो अन्य ऐसे व्यक्तियों की तुलना में वरिष्ठ थी जहाँ तक आंगनबाड़ी सेविका के रूप में सेवा विधि का संबंध हैं। अत: उस तथ्य को विचार में लिया जाना चाहिए था यदि अन्य उम्मीदवारों को आगे प्राथमिकता दी जाती है।

6. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। दिनांक 28.11.2007 के विज्ञापन, परिशिष्ट-3 के तहत महिला पर्यवेक्षक के पद पर नियुक्ति कार्य किया गया था जिसमें यह अधिकथित किया गया था कि नियुक्तियाँ आवेदकों द्वारा दी गयी लिखित परीक्षा के आधार पर की जानी है। लिखित परीक्षा 100 अंक प्रत्येक वाले दो विषयों की थी। लिखित परीक्षा के आधार पर चयन कमिटी ने डिविजनल आयुक्त को अनुशंसा करने के लिए मेधा सूची तैयार किया। उक्त विज्ञापन के अधीन विहित पात्रता मापदंड को पहले ही निर्णय के आरंभिक भाग में उपदर्शित किया गया है। स्वयं पात्रता मापदंड विहित करता था कि स्नातक आंगनबाड़ी सेविका के लिए महिला पर्यवेक्षक के पद के लिए आवेदन देने के लिए 10 वर्षों की संतोषजनक अर्हक सेवा की आवश्यकता थी जबकि मैट्रिकुलेशन अर्हता रखने वाली आंगनबाड़ी सेविका के लिए आंगनबाड़ी सेविका के रूप में 15 वर्षों की संतोषजनक सेवा आवश्यक है। भाग लेने की पात्रता रखने के लिए उक्त अनुबंध के अतिरिक्त सेविका के रूप में अर्हता सेवा को कोई अन्य अधिमान प्रदान नहीं किया गया था जहाँ तक महिला पर्यवेक्षक के पद का संबंध है। महिला पर्यवेक्षक के पद पर नियुक्ति को लिखित परीक्षा के परिणाम पर आधारित किया जाना था। किंतु, स्वीकृत रूप से ऐसा कोई नियम नहीं है जिनके अधीन ऐसी संभाव्यता को विचार में लिया जाना था जब समान अंक रखने वाले एक से अधिक उम्मीदवार हैं और न ही विज्ञापन ऐसा अनुबंध अंतर्विष्ट करता है। ऐसी परिस्थितियों में, जब एक से अधिक उम्मीदवार ने समान अंक अर्थात् 130 अंक प्राप्त किया है और ऐसी स्थिति से निबटने के लिए कोई नियम, विनियमन अथवा कार्यपालिका अनुदेश नहीं है, तब मापदंडों जो युक्तियुक्तता के साथ संगत है और जो आकस्मिक परिस्थितियों पर निर्भर नहीं करते हैं, को अपनाकर स्पष्टत: कम आयु वाले व्यक्ति की तुलना में अधिक आयु वाले व्यक्ति को नियुक्ति दी जानी हैं। प्रत्यर्थीगण इसी रास्ते को अपनाते हुए प्रतीत होते हैं जिसमें कोई दोष नहीं निकाला जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, रास्ता जिसे प्रत्यर्थीगण ने अपनाया है, **डी॰ पी॰ दास बनाम भारत संघ एवं अन्य, 2011 (8) SCC 115** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से बल पाता है।

7. तद्नुसार, याची द्वारा हस्तक्षेप के लिए रिट याचिका में कोई आधार नहीं बनाया गया है।

8. यह रिट याचिका खारिज की जाती है और आई॰ ए॰ सं॰ 800 वर्ष 2012 भी निपटाया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

शेख मुजीबुर रहमान

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (S) No. 6721 of 2012. Decided on 3rd October, 2013.

विद्यालय विधियाँ–नियुक्ति–झारखंड राज्य में +2 विद्यालयों में शिक्षक-याची ने शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए वाणिज्य विषय में सामान्य कोटि के अधीन आवेदन दिया है–परिणाम परस्पर विषयों, जिन्हें उम्मीदवारों ने चुना था और उपस्थित हुए थे, में द्वितीय पेपर के मूल्यांकन के आधार पर तैयार किए गए थे–चूँकि याची द्वारा प्रथम पेपर में 33% का कट-ऑफ अंक प्राप्त नहीं किया गया है और मात्र इसलिए कि उसने द्वितीय पेपर में 186 अंक प्राप्त किया है, यह याची को झारखंड राज्य में +2 विद्यालयों में शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने का हकदार नहीं बनाता है–रिट याचिका खारिज। (पैरा 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Arwind Kumar, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the State; Mrs. Ruby Parween, For the JAC.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. याची का प्रतिवाद यह है कि उसने द्वितीय पेपर में 300 अंकों में से 186 अंक प्राप्त किया है किंतु उसका चयन नहीं किया गया है और उसे शिक्षक के पद पर नियुक्त नहीं किया गया है यद्यपि, वह झारखंड राज्य में + 2 विद्यालयों में शिक्षकों के चयन और नियुक्ति के लिए झारखंड एकेडमिक परिषद द्वारा जारी परिशिष्ट 1 पर अंतर्विष्ट विज्ञापन के अधीन समस्त आवश्यकताओं को परिपूर्ण करता है।

3. याची को शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए वाणिज्य विषय में सामान्य कोटि के अधीन आवेदन देने वाला बताया जाता है। परिशिष्ट-3 रिट आवेदन के साथ संलग्न परिणाम है जो उपदर्शित करता है कि पेपर-I में उसने 32.5 अंक प्राप्त किया है और पेपर II में उसने 186 अंक प्राप्त किया है।

4. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता ने विज्ञापन सं॰ 74/11 (परिशिष्ट 1) के निबंधनों और शर्तों को इंगित किया है जिसके मुताबिक लिखित परीक्षा के लिए दो विषय विहित किए गए थे। पेपर I 100 का महत्तम अंक रखने वाला सामान्य ज्ञान और हिंदी से गठित था। पेपर II 300 का महत्तम अंक रखने वाला वह विषय था जिसके लिए उम्मीदवार ने आवेदन दिया था। वह इंगित करते हैं कि प्रथम पेपर में उम्मीदवारों को अर्हित होने के लिए 33% अंक प्राप्त करने की आवश्यकता थी और केवल अर्हित अंक प्राप्त करने पर, उसके द्वितीय पेपर का मूल्यांकन किया जाएगा। स्वीकृत रूप से, याची ने अपने प्रथम पेपर में केवल 32.5% अंक प्राप्त किया था और इसलिए, उसके पास मामला नहीं है।

5. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने और विज्ञापन सं॰ 74/2011 के प्रासंगिक निबंधनों का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि प्रथम पेपर में परीक्षा में उपस्थित होने वाले उम्मीदवार को अर्हित होने के लिए कम से कम 33% अंक प्राप्त करना था। किंतु परिणाम परस्पर विषयों में द्वितीय पेपर, जिसे उम्मीदवारों ने चुना था और परीक्षा दिया था, के मूल्यांकन के आधार पर तैयार किया गया था। वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थीगण ने उसके द्वितीय पेपर का मूल्यांकन किया था यद्यपि उसने अर्हित होने के लिए

32.5% अंक प्राप्त नहीं किया है। चूँकि प्रथम पेपर में 33% का कट ऑफ अंक याची ने प्राप्त नहीं किया है और मात्र इसलिए कि उसने द्वितीय पेपर में 186 अंक प्राप्त किया है। यह याची को झारखंड राज्य में + 2 विद्यालयों में शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने के लिए उक्त विज्ञापन के अधीन हकदार नहीं बनाता है। इन परिस्थितियों में, रिट याचिका गुणागुण रहित है और तद्नुसार खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy dk;dkjh e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

महादेव महतो एवं अन्य (1265 में)

थानू महतो उर्फ थानेश्वर कुमार एवं एक अन्य (1067 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (DB) Nos. 1265 with 1067 of 2003. Decided on 4th July, 2013.

सत्र विचारण सं॰ 346 वर्ष 1992 में श्री संजय कुमार चंधरियावी, अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 18.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 19.7.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

(क) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 96, 97 एवं 102—प्राईवेट प्रतिरक्षा का अधिकार–घोर उपहति की युक्तियुक्त आशंका पर अभियुक्त को हमलावरों की मृत्यु कारित करने की सीमा तक भी अधिकार होगा–अभियुक्त को अपनी प्रतिरक्षा का विनिर्दिष्ट अभिवचन करने और साक्ष्य देने की आवश्यकता नहीं है–यद्यपि अभियुक्त को सामान्य अपवादों में से किसी के अंतर्गत लाने वाली परिस्थितियों के अस्तित्व को सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर है किंतु ऐसी उपधारणा खंडन किए जाने योग्य है–प्राईवेट प्रतिरक्षा के अपने अभिवचन को स्थापित करने का अभियुक्त का भार उतना कठिन नहीं है जितना वह भार जो अभियोजन पर युक्तियुक्त संदेह के परे अपराध के प्रत्येक अवयव को स्थापित करने का है–अभियुक्त अपने अभिवचन के समर्थन में साक्ष्य पुरःस्थापित करके अथवा स्वयं अभियोजन द्वारा दिए गए साक्ष्य से निकाली गयी परिस्थितियों अथवा किए गए स्वीकरण के माध्यम से उपधारणा का खंडन कर सकता है। (पैरा 23)

(ख) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 342—हत्या–सामान्य आशय–दोषसिद्धि–अभियुक्तगण ने भी वर्तमान घटना के लिए अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रति-मामला दर्ज किया–अभियुक्तगण उसी घटना जिसके संबंध में उनके विरुद्ध वर्तमान मामला आरंभ किया गया था के क्रम में उपहतियों से पीड़ित हुए–यद्यपि अभियुक्तगण पर उपहतियों को स्पष्ट करने में अभियोजन की विफलता अभियोजन मामले को संपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं करेगी किंतु इस प्रकृति के मामले में अभियुक्तगण को प्राईवेट प्रतिरक्षा का अधिकार था और विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का परीक्षण नहीं किया गया है–स्वयं विचारण न्यायालय ने गौर किया है कि अभियोजन समस्त आरोप-पत्रित गवाहों का परीक्षण करने में विफल रहा है–युक्तियुक्त संदेह प्रतीत होता है कि इस मामले में निर्दोष व्यक्तियों को भी आलिप्त किया जा सकता था–अभियुक्तगण को प्राईवेट प्रतिरक्षा का अधिकार था किंतु वे प्राइवेट प्रतिरक्षा के अपने अधिकार के परे गए–अभियुक्तगण का मृतक की हत्या कारित करने का

आशय नहीं था–भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्तगण की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया गया क्योंकि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन अपराध के लिए आरोप स्थापित करने में विफल रहा है–अभियुक्तगण की दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 से भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (I) में संपरिवर्तित की गयी और उन्हें दस वर्षों के कठोर कारावास से दंडित। (पैराएँ 20, 24, 30 से 33)

निर्णयज विधि.–A.I.R. 2000 SC 1779—Referredl A.I.R. 1962 SC 605; (1972) 4 SCC 694; (1989) 3 SCC 605; (2000) 4 SCC 110; (2010) 8 SCC 407—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s V.P. Singh, Rashmi Kumar, Rajeev Ranjan Tiwary, Pramod Kumar, For the Appellants; M/s Sanjay Kumar Srivastava (APP), Om Prakash Singh, S. Rahman, For the Respondents.

श्री चंन्द्रशेखर, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थीगण अर्थात् महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो ने दांडिक अपील संख्या 1265 वर्ष 2003 और अपीलार्थीगण थानू महतो और शंकर महतो ने दांडिक अपील सं॰ 1067 वर्ष 2013 अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, हजारीबाग द्वारा सत्र विचारण सं॰ 346 वर्ष 1992 में पारित दिनांक 18.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 19.7.2003 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल किया है। अपीलार्थीगण अर्थात् महादेव महतो, कैलाश महतो, जोधन महतो, थानू महतो और शंकर महतो को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 342, 302/34 के अधीन दंडनीय अपराधों का दोषी पाया गया है और प्रत्येक को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए 500/- रुपया के जुर्माना के साथ आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में दोषसिद्धों को दो माह का सामान्य कारावास भुगतने का आदेश दिया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 342/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए पृथक दंडादेश दर्ज नहीं किया गया था। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 324, 147 और 148 के अधीन अपराधों के लिए आरोप विफल रहे क्योंकि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे हित नारायण महतो और जुगल महतो पर प्रहार स्थापित करने में विफल रहा। अभियुक्त टुकन महतो की मृत्यु विचारण के दौरान हो गयी थी।

2. मामले के अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि कोई हितनारायण महतो सूचक है जिसने दिनांक 25.2.1991 को सरकारी अस्पताल चौपारन में दोपहर 3.30 बजे अपना बयान दिया। फर्दबयान में यह अभिकथित किया गया है कि उसका भाई जुगल महतो कुँआ से खेत की सिंचाई कर रहा था जब अभियुक्तगण महादेव महतो, जोधन महतो, शंकर महतो, कैलाश महतो, थानू महतो और टूकन महतो वहाँ आए। अभियुक्त जोधन महतो जुगल महतो को गाली देने लगा और बाल्टी तथा रस्सी छीन लिया जिसके माध्यम से जुगल महतो कुँआ से पानी खींच रहा था। सूचक और उसका छोटा भाई रेवा महतो वहाँ पहुँचे और प्राख्यान किया कि कुँआ उनका है और इसलिए वे अभियुक्तगण को कुँआ से सिंचाई करने की आज्ञा केवल तब देंगे जब ज्यादा पानी होगा जिस पर अभियुक्त महादेव महतो ने उनको धमकाया और समस्त अभियुक्तगण घर के अंदर चले गए। अभियुक्तगण महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो तलवार से लैस होकर और अभियुक्तगण शंकर महतो, थानु महतो और टुकन महतो लाठी से लैस होकर घर के बाहर आए और अभियुक्तगण महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो तलवार से रेवा महतो पर प्रहार करने लगे और उसको घायल किया। जब सूचक और उसका बड़ा भाई जुगल महतो

वहाँ गए, अभियुक्तगण शंकर महतो, टुकन महतो और थानू महतो ने उसके भाई जुगल महतो पर लाठी से प्रहार किया। अभियुक्तगण ने सूचक और उसके दो भाईयों पर प्रहार किया जो गिर गए और मदद के लिए चिल्लाने लगे। हल्ला सुनने पर, राम सेवक सिंह, सुदर्शन महतो, अक्षयवट सिंह, तुलसी सिंह, अशोक महतो और बाबूलाल मिस्त्री वहाँ पहुँचे और उनको आगे प्रहार से बचाया। तत्पश्चात, दैहर गाँव से लोग वहाँ पहुँचे और तीनों घायलों को बैलगाड़ी पर अस्पताल ले गए। किंतु, इलाज के दौरान रेवा महतो की मृत्यु हो गयी।

3. हित नारायण महतो के फर्दबयान पर दिनांक 25.2.1991 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 342, 323, 324, 307 और 302 के अधीन उक्त नामित छह व्यक्तियों के विरुद्ध प्राथमिकी चौपारन पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 1991 दर्ज किया गया था और अन्वेषण के बाद पुलिस ने समस्त अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147 और 323 के अधीन अपराधों के लिए आरोप अभियुक्तगण शंकर महतो, थानू महतो और टुकन महतो के विरुद्ध विरचित किए गए थे। भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148, 342 और 324 के अधीन अपराधों के लिए आरोप अभियुक्तगण महादेव महतो, जोधन महतो और कैलाश महतो के विरुद्ध विरचित किए गए थे और भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप समस्त छह नामित अभियुक्तगण के विरुद्ध विरचित किए गए थे।

4. विचारण के दौरान, अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में नौ गवाहों का परीक्षण किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट, शव परीक्षण रिपोर्ट, अभिग्रहण मेमो, चिकित्सीय परीक्षण के लिए तलब और प्राथमिकी पर विश्वास किया। अभियोजन साक्ष्य बंद किए जाने के बाद दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तगण का बयान दर्ज किया गया था। अभियुक्तगण की ओर से तीन गवाहों का परीक्षण किया गया था। दिनांक 18.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 19.7.2003 के दंडादेश द्वारा विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तगण को दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया था जैसा ऊपर गौर किया गया है।

5. अभियोजन द्वारा किसी रामसेवक सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 1 के रूप में किया गया है। उसने न्यायालय में कथन किया है कि हल्ला सुनने पर वह घटना स्थल पहुँचा। उसने स्वीकार किया है कि जब वह वहाँ पहुँचा, घायल व्यक्तियों पर पहले ही प्रहार किया जा चुका था और वे वहाँ पड़े हुए थे। वह घायल व्यक्तियों के साथ अस्पताल नहीं गया था और उसने कथन किया कि वह उन व्यक्तियों को नामित नहीं कर सकता था जो रेवा महतो को अस्पताल ले गए थे।

6. अभियोजन गवाह अर्थात्, अशोक महतो (अ॰ सा॰ 2) घटनास्थल पर उपस्थित होने का दावा करता है। उसने कथन किया है कि पहले अभियुक्तगण जोधन महतो, महादेव महतो और कैलाश महतो द्वारा तलवार से जुगल महतो और हितनारायण महतो पर प्रहार किया गया था और लाठी से लैस तीन अन्य अभियुक्तगण गाँव वालों को हस्तक्षेप करने से रोक रहे थे। उसने आगे कथन किया कि जुगल महतो और हित नारायण महतो पर प्रहार किए जाने के बाद वे गिर गए और तब अभियुक्तगण रेवा महतो पर प्रहार करने लगे। प्रति-परीक्षण में उसने स्वीकार किया है कि तुलसी महतो कुँआ पर नहीं गया था। उसने दावा किया है कि उसके हाथ और लुंगी रक्तरंजित थे और कुँआ जहाँ मार-पीट हुआ था के निकट खून था। उसने यह कथन भी किया है कि कमरे जहाँ रेवा महतो पर प्रहार किया गया था की दीवार पर खून के धब्बे थे। उसने आगे कथन किया कि पुलिस ने कमरे से रक्तरंजित मिट्टी लिया था। इस गवाह ने कथन किया है कि पुलिस ने अक्षयवट सिंह, कामेश्वर सिंह, सुदर्शन महतो, राम सेवक सिंह और कुछ अन्य का बयान लिया था। उसने यह कथन भी किया है कि दैहर मौजा से लोग वहाँ आए थे और उसने संजय दांगी, बंधन महतो और जानकी महतो का नामजद किया। उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि लगभग

10 मिनट तक दोनों पक्षों के बीच बहस हुआ था। उसने यह भी कथन किया है कि जोधन महतो के घर से तलवार और लाठी बरामद किया गया था किंतु उसने इस सुझाव से इनकार किया कि अभियुक्तगण और सूचक पक्ष के बीच भूमि विवाद था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि वह मुकदमा हार गया था जिसे अभियुक्तगण द्वारा उसके विरुद्ध दाखिल किया गया था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि अभियुक्तगण ने अभियोजन पक्ष के विरुद्ध भी मामला संस्थित किया था।

7. किसी कामेश्वर सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है। घटना के समय पर वह घर में था और हल्ला सुनने पर वह वहाँ गया और जुगल महतो तथा हितनारायण महतो को घायल दशा में देखा। उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि उसके घटनास्थल पर पहुँचने के बाद भी अभियुक्तगण घायल व्यक्तियों पर प्रहार कर रहे थे और अभियुक्तगण अर्थात् महादेव महतो, जोधन महतो और कैलाश महतो रेवा महतो को महादेव महतो के घर में खींचकर ले गए। अन्य गाँव वाले भी वहाँ पहुँचे और वे घायल रेवा महतो को अस्पताल ले गए जहाँ उसकी मृत्यु हो गयी। उसने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि सबसे पहले अभियुक्तगण द्वारा रेवा महतो पर प्रहार किया गया था और घटना स्थल पर लगभग 20-25 गाँव वाले जमा थे। उसने यह कथन भी किया है कि प्रभारी–अधिकारी ने उसका बयान कभी नहीं दर्ज किया था। किंतु उसने स्वीकार किया है कि उप अधीक्षक ने उसका बयान लिया था। उसने आगे कथन किया है कि घटना कुँआ से पानी खींचने के विवाद के उपर हुई थी।

8. अभियोजन ने अक्षयवट सिंह का परीक्षण अ॰ सा॰ 4 के रूप में किया है जिसने न्यायालय में कथन किया है कि हल्ला सुनने पर वह हितनारायण महतो के घर के निकट कुँआ के पास गया था। उसने अभियोजन साक्ष्य का समर्थन किया है जहाँ तक हित नारायण महतो, जुगल महतो और रेवा महतो पर प्रहार का संबंध है उसने प्रति–परीक्षण में स्वीकार किया है कि वह निरक्षर है और अब वह नहीं देख सकता है। अभियोजन मामले के विपरीत उसने न्यायालय में कथन किया है कि जुगल महतो तलवार की उपहति से पीड़ित नहीं हुआ था और लगभग सौ गाँववाले वहाँ जमा थे। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि अभियुक्तगण महादेव महतो एवं अन्य ने रेवा महतो एवं अन्य के विरुद्ध मामला दर्ज किया था।

9. घायल अर्थात् जुगल महतो का परीक्षण अ॰ सा॰ 5 के रूप में किया गया है। उसने भी कथन किया है कि दिनांक 25.2.1991 को प्रातः लगभग 11 बजे जब वह खेत की सिंचाई करने के लिए कुँआ से पानी निकाल रहा था, अभियुक्तगण अर्थात् जोधन महतो, महादेव महतो और कैलाश महतो वहाँ आए और 'लाठा' छीन लिया जिस पर उसने उनको कहा कि कुँआ उसका है और इसलिए, वह पानी खींचने के बाद उनको पानी निकालने देगा। अभियुक्तगण ने उसको धमकाया और अपने घर के अंदर गए और तुरन्त बाद अभियुक्तगण जोधन महतो, महादेव महतो और कैलाश महतो अपने हाथ में तलवार लेकर बाहर आए और अभियुक्तगण अर्थात् शंकर महतो और थानू महतो अपने हाथ में लाठी लिए थे। उसने कथन किया है कि अभियुक्तगण अर्थात् जोधन महतो, महादेव महतो और कैलाश महतो ने तलवार से उस पर प्रहार किया और वह तलवार की चार उपहतियों से पीड़ित हुआ। उसने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि अभियुक्तगण उसके कजिन थे। उसने यह भी स्वीकार किया है कि उसने पुलिस के समक्ष कथन नहीं किया था कि जब वह रेवा महतो को बचाने का प्रयास कर रहा था, अभियुक्तगण ने उस पर भी प्रहार किया था। उसने पुलिस के समक्ष कथन नहीं किया है कि अभियुक्तगण शंकर महतो, टुकन महतो और थानू महतो ने उस पर लाठी से प्रहार किया था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि भूमि के बँटवारा के संबंध में कोई विवाद था और कि अंचलाधिकारी के समक्ष कोई मामला आरंभ किया

गया था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि उन्होंने अभियुक्तगण पर प्रहार किया था और स्वयं को बचाने के लिए अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तगण के विरुद्ध वर्तमान मामला संस्थित किया।

10. सूचक अर्थात् हितनारायण महतो का परीक्षण अभियोजन गवाह सं॰ 6 के रूप में किया गया है। उसने अपने फर्दबयान का समर्थन किया है जिसके आधार पर प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। प्रति-परीक्षण में उसने स्वीकार किया है कि अभियुक्तगण ने भी इसी घटना के संबंध में प्रति-मामला दर्ज किया था। उसने यह भी स्वीकार किया है कि अभियुक्तगण द्वारा उनके विरुद्ध दाखिल बँटवारा वाद सं॰ 24/1996 न्यायालय में लंबित था। उसने आगे स्वीकार किया है कि कुँआ के लिए भी पहले एक मामला संस्थित किया गया था। उसने इस सुझाव से इनकार किया है कि उन्होंने 'मारपीट' शुरू किया था और अभियुक्तगण पर प्रहार किया था और स्वयं को बचाने के लिए उनके द्वारा वर्तमान मामला दर्ज किया गया था।

11. किसी सुदर्शन महतो का परीक्षण अ॰ सा॰ 8 के रूप में किया गया है जिसने अभिग्रहण मेमो, जिसके द्वारा पुलिस द्वारा एक तलवार जब्त किया गया था पर अपने हस्ताक्षर को पहचाना है। प्रति परीक्षण में उसने कथन किया है कि उसने घटना नहीं देखा था।

12. पुलिस अधिकारी, जिसने फर्दबयान दर्ज किया और घटनास्थल का निरीक्षण किया, का परीक्षण अ॰ सा॰ 9 के रूप में किया गया है। उसने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि उसने रक्तरंजित मिट्टी जब्त किया था। किंतु, उसने स्वीकार किया कि उसे याद नहीं था कि क्या गवाहों ने इस पर हस्ताक्षर किया था या नहीं क्योंकि केस डायरी में गवाहों द्वारा हस्ताक्षर के प्रति निर्देश नहीं था। उसने स्वीकार किया कि उसने अस्पताल के बरामदा में मृत शरीर पाया था और मृत शरीर पर सात जगह पट्टी बंधी हुई थी। उसने स्वीकार किया है कि उसने अभियुक्त महादेव महतो द्वारा दर्ज मामला संस्थित किया है और उसने महादेव महतो, शंकर महतो और जोधन महतो की उपहति के परीक्षण के लिए तलब फॉर्म जारी किया था।

13. डॉक्टर अर्थात् डॉ॰ रामानंद शर्मा, जिन्होंने मृतक रेवा महतो उर्फ रेवा शंकर दांगी के मृत शरीर का शव परीक्षण किया, का परीक्षण अ॰ सा॰ 7 के रूप में किया गया था। उन्होंने मृत शरीर पर निम्नलिखित उपहतियाँ पायी:-

(i) fly x, flj dh [kky d nk;s fgLl ij Ropk rd xgjk 3" x 1/4" dh dVu dh rh{.k migfrA

(ii) yykV d ck, fgLl ij 2" x 1/2" dh Ropk rd xgjh dVu dh rh{.k migfrA

(iii) flj dh [kky d ck, fgLl ij 1½" x 1/2" Ropk rd xgjh dVu dh rh{.k migfrA

(iv) ck;h gFkyh ij 3" x 2½" dk ltuA

(v) rtuh vkj vxB d chp ck;h gFkyh ij 3½" x 1/4" x 1/2" dh dVu dh rh{.k migfrA

(vi) nk;h ckg d ihN 3" x 1/4" x 1/2" dh dVu dh rh{.k migfrA

(vii) nk;h ckg d mijh ik'o Hkkx ij 4" x 1/4" x 1/2" dh dVu dh rh{.k migfrA

(viii) nk;h gFkyh ij 1" x 1/4" x 1/2" dh dVu dh rh{.k migfrA

(ix) nk, dèk d tkM d ihN 6" x 1" dk dkyk [kjkpA

(x) Nkrh d ihN 3" x 1/2" dk ltuA

(xi) prFk eVk dkikQyfyx;y tkM d 3" x 3/4" d ÝDpj d lkFk ltu

(xii) nk;h gFkyh d rrh; eVk dkikQyfyx;y tkM d 2½" x 2" d ÝDpj d lkFk ltuA

(xiii) nk, ?kVu d ihN 1½" x 1½" xgjk Hknu dk rh{.k t[eA

(xiv) nk, ij d vkx 2" x 1/2" Ropk rd xgjh fonh.k dVu dh migfr d lkFk ltuA

14. बचाव पक्ष ने भी तीन गवाहों का परीक्षण किया है जिनमें से एक जानकी प्रसाद डांगी (ब॰ सा॰ 1) उस महाविद्यालय में व्याख्याता थे जिसमें अभियुक्त थानू महतो अध्ययन कर रहा था। उसने कथन किया है कि दिनांक 25.2.1991 को अभियुक्त थानू महतो उनकी कक्षा में उपस्थित था। किसी महेन्द्र ठाकुर का परीक्षण ब॰ सा॰ 2 के रूप में किया गया है जो भी महाविद्यालय में व्याख्याता थे और उसने भी कथन किया है कि दिनांक 25.2.1991 को अभियुक्त थानू महतो उनकी कक्षा में उपस्थित था। बचाव ने राकेश पाल डांगी, महाविद्यालय व्याख्याता, का परीक्षण ब॰ सा॰ 3 के रूप में किया है जिसने भी न्यायालय में कथन किया है कि अभियुक्त थानेश्वर कुमार उर्फ थानू महतो दिनांक 25.2.1991 को कक्षा में उपस्थित था।

15. विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्त थानू महतो द्वारा अन्यत्र होने के अभिवचन पर निम्नलिखित रूप से विचार किया है:–

*"27. tgk rd bl fcn ij Fkku egrk d vU;= gku d vfHkopu dk lcèk g] rhu cpko xokgk dk ijh{k.k fd;k x;k gA c0 lkO 1 tkudh çlkn Mkxh u dFku fd;k g fd fnukd 25.2.1991 dk çkr% 10.30 ct l 11 ct rd Fkku egrk mudh d{kk e mifLFkr Fkk vkj mlu gkftjh yh FkhA mifLFkfr jftLVj dk Fkku egrk dh mifLFkfr d fy, çn'k B vkj B/1 d :i e fpfUgr fd;k x;kA blh çdkj l c0 lkO 2 u Hkh dFku fd;k g fd Fkku egrk fnukd 25.2.1991 dk fnu d 12 ct l 1 ct rd mudh d{kk e mifLFkr FkkA blh çdkj l c0 lkO 3 u Hkh dFku fd;k g fd fnukd 25.2.1991 dk çkr% 11.20 ct l 12.10 ct rd Fkku egrk mudh d{kk e mifLFkr FkkA og viuh d{kk yu ogk x, Fk vkj mlu çkr% 10 ct Fkku egrk dk n[kk FkkA fdr] c0 lkO 1 tkudh çlkn nkxh u dFku fd;k g fd mlu jftLVj Gy-B d vkèkkj ij Fkku egrk dh mifLFkfr d ckj e dFku fd;k g vkj jftLVj d ifj'kh yu l ;g xokg ;g dgu dh voLFkk e ugh g fd D;k Fkku egrk li.k vofèk d nkjku mifLFkr cuk jgk ;k ugh] bld vfrfjDr] bl xokg u ;g dFku Hkh fd;k g fd og ml fnu ij vU; Nk= dh mifLFkfr vkj vU; Nk=k d ifjogu d <x d ckj e dgu dh voLFkk e ugh gA bl xokg u ;g dFku Hkh fd;k g fd fnukd 25.2.1991 dk mlu Fkku egrk dk ugh n[kk Fkk tc og egkfo|ky; vk jgk Fkk vkj tc og egkfo|ky; l tk jgk FkkA bl xokg d erkfcd dkb 30 feuV d Hkh rj uhek xko igp ldrk gA blh çdkj l c0 lkO 2 egUn Bkdj u Hkh dFku fd;k g fd og ;g dgu dh voLFkk e ugh g fd D;k Nk= gkftjh d ckn li.k vofèk d nkjku d{kk e mifLFkr cuk jgk ;k ugh vkj blh çdkj l ;g xokg ugh dg ldrk g fd D;k li.k vofèk d nkjku Fkku egrk d{kk e mifLFkr Fkk ;k ughA c0 lkO 1, 2 vkj 3 d iokfYyf[kr ncyrkvk d vkykd e vkj vfHk;ktu xokg dk c;ku ftlu ?kVuk d le; vkj frfFk ij vfHk;Drx.k dh mifLFkfr d ckj e l>k;k g] e ikrk g fd vU;= gku dk vfHkopu ;fDr;Dr lng d ij fl) ugh fd;k x;k g fo'k"kr% tc dkb 30 feuV d Hkh rj dkyt l uhek xko igp ldrk gA***

16. यद्यपि, अभियुक्त थानू महतो की मृत्यु दांडिक अपील के लंबित रहने के दौरान हो गयी और इसलिए, उसके द्वारा दाखिल अपील उपशमनित हो गयी, हम पाते हैं कि अभियुक्त थानु महतो द्वारा अन्यत्र होने के अभिवचन के समर्थन में दिए गए बचाव साक्ष्य पर विचार करने में विद्वान विचारण न्यायाधीश का रुख गलत है। बचाव गवाहगण, महाविद्यालय में व्याख्याता हैं और उन सबों ने अभिकथित घटना होने के समय पर महाविद्यालय में अभियुक्त थानू महतो की उपस्थिति को अभिपुष्ट किया है और इसलिए,

यह अतात्विक है कि घटना स्थल से महाविद्यालय जहाँ अभियुक्त थानू महतो अध्ययन कर रहा था पहुँचने में कितना समय लगा होगा।

17. अभियुक्तगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ पी॰ सिंह ने प्रतिवाद किया कि अभियोजन ने घटना की उत्पत्ति को दबाया है क्योंकि यह अभियुक्तगण के शरीर पर उपहतियों को स्पष्ट करने में विफल रहा है और इसलिए, विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश अपास्त किए जाने का दायी है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि अभियुक्तगण में से दो को उसी घटना के क्रम में गंभीर उपहतियाँ आयी और अन्वेषण अधिकारी ने उनकी उपहति रिपोर्टों को संग्रहित किया और अभियुक्तगण द्वारा अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रति-मामला दर्ज किया गया था और यद्यपि विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा इन तथ्यों को ध्यान में लिया गया है, फिर भी विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा अभियुक्तगण को दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया है जो विधि में संपोषणीय नहीं है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि घटना तुच्छ विवाद्यक पर हुई थी और लंबे झगड़े के बाद 'मारपीट' हुआ था और यह नहीं कहा जा सकता है कि अभिकथित घटना पूर्वचिंतन के बाद हुई थी और इस प्रकार अभियुक्तगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की मदद से दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है।

18. उक्त के विरुद्ध, विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि सूचक हित नारायण महतो और जुगल महतो घायल चश्मदीद गवाह हैं जिन्होंने अभियोजन मामले का पूरा समर्थन किया है। अन्य अभियोजन गवाहों ने भी अभियुक्तगण के विरुद्ध मामले का समर्थन किया है। अभियुक्तगण द्वारा घटना स्वीकार की गयी है क्योंकि उनके द्वारा प्रति-मामला दर्ज किया गया था और इसलिए, अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध और दंडादेशित करने में विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा कोई गलती नहीं की गयी है।

19. अभियोजन अभिलेख स्पष्टत: प्रकट करता है कि अभियुक्त अर्थात् महादेव महतो को सिर की खाल के बायें पेराइटल क्षेत्र पर 3" x 1/2" x 1/2" के कटने की तीक्ष्ण उपहति आयी और अभियुक्त अर्थात् शंकर महतो की उपहति रिपोर्ट प्रस्तुत करती है कि वह भी गंभीर उपहति से पीड़ित हुआ।

20. यह अभिलेख पर है कि अभियुक्तगण ने भी वर्तमान घटना के लिए अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रति-मामला दर्ज किया। अभियुक्तगण की उपहति रिपोर्टों की प्रमाणित प्रति अभिलेख पर लायी गयी थी और डॉक्टर का हस्ताक्षर भी प्रति मामला में सिद्ध किया गया था। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने निम्नलिखित रूप से इस विवाद्यक पर विचार किया है:-

> *"28. tgk rd fo}ku cpko vfèkoDrk dk rd fd egkno egrk] tkèku egrk vkj 'kdj egrk d 'kjhj ij vk;h migfr dk vfHk;ktu }kjk Li"V ugh fd;k x;k g] vr% vfHk;Drx.k dk lng dk ykHk fn;k tkuk pkfg, dk lcèk g] ;g U;k;ky; ekey d rF;k vkj ifjLFkfr;k d vkykd e bl rd dk Lohdkj dju dh voLFkk e ugh gA cpko i{k dh vkj l bl ekey e 'kdj egrk] egkno egrk vkj tkèku egrk dh migfr fjkV dh çekf.kr çfr dk çLrr fd;k x;k FkkA fdr] MkDVj] ftUgku bu ?kk;y 0;fDr;k dk ijh{k.k fd;k] dk migfr fjkV fl) dju d fy, leu ugh fd;k x;k gA çfr&ekey e vkipkfjd xokg }kjk MkDVj dk gLrk{kj ek= fl) fd;k x;k gA vr% ;g U;k;ky; iokfYyf[kr vfHk;Drx.k dh migfr fjkV dh fo"k;oLr dk fopkj e yu dh voLFkk e ugh gA ekuuh; lokPp U;k;ky; d fu.k; d erkfcd (jkt Un flg cuke fcgkj jkT;] AIR 2000 SC 1779), ;fn vfHk;ktu xokgk dk fo'oluh; ik;k tkrk g] vfHk;Drx.k ij*

*migfr ;k dk vLi"Vhdj.k ?kkrd vfHkfuèkkfjr ugh fd;k tk ldrk gA vr% bl ekey e Hkh vfHk;Drx.k d 'kjhj ij migfr dk vLi"Vhdj.k vfHk;ktu d fy, ?kkrd ugh gA***

21. अभियुक्तगण/अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यहाँ उपर उद्धृत पैराग्राफ 28 में दर्ज विद्वान विचारण न्यायाधीश के तर्क को गंभीर चुनौती दिया है। उन्होंने निवेदन किया है कि जब एक बार अभिलेख पर आया है कि अभियुक्तगण गंभीर उपहतियों से पीड़ित हुए, यह अभिनिश्चित करना विद्वान विचारण न्यायाधीश का कर्तव्य था कि क्या अभियुक्तगण को प्राईवेट प्रतिरक्षा का कोई अधिकार प्रोद्भूत हुआ है या नहीं। उन्होंने आगे निवेदन किया कि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने **''राजेन्द्र सिंह बनाम बिहार राज्य'', AIR 2000 SC 1779,** मामले में निर्णयाधार का अर्थ गलत रूप से लगाया है क्योंकि वर्तमान मामले में तीन अभियुक्तगण उपहतियों से पीड़ित हुए हैं जबकि **''राजेन्द्र सिंह बनाम बिहार राज्य'' (ऊपर)** मामले में केवल एक अभियुक्त उपहति से पीड़ित हुआ। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अभियुक्तगण पर उपहति का गैर-स्पष्टीकरण अभियोजन मामले को प्रभावित नहीं करेगा यदि अभियोजन साक्ष्य अन्यथा तर्कपूर्ण, स्पष्ट और विश्वसनीय है। इस प्रकार, अभियुक्तगण/अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में घटना का तरीका, अभियोजन गवाहों पर अभियुक्तगण द्वारा प्रहार और घटना स्थल भी अभियोजन द्वारा स्थापित नहीं किया गया है और इसलिए न केवल **''राजेन्द्र सिंह बनाम बिहार राज्य'' (ऊपर)** मामले के तथ्य वर्तमान मामले के तथ्यों से स्पष्टतः सुभिन्न किए जाने योग्य है बल्कि उसमें अधिकथित निर्णयाधार भी वर्तमान मामले में प्रयोज्य नहीं है।

22. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा किए गए प्रतिवाद का परीक्षण करने के पहले भारतीय दंड संहिता की धाराओं 96, 97 और 102 के अधीन प्रावधानों को निर्दिष्ट करना लाभदायी होगा जो निम्नलिखित है:–

*96. **^^çkboV çfrj{kk e dh xbZ ckr**–&dkb ckr vijkèk ugh g] tk çkboV çfrj{kk d vfèkdkj d ç;kx e dh tkrh gA*

*97. **'kjhj rFkk lEifÙk dh çkboV çfrj{kk dk vfèkdkj**-&èkkjk 99 e vUrfo"V fucUèkuk d vèkhu] gj O;fDr dk vfèkdkj g fd og&*

***igyk**-&ekuo 'kjhj ij çHkko Mkyu oky fdlh vijkèk d fo#) viu 'kjhj vkj fdlh vU; O;fDr d 'kjhj dh çfrj{kk dj(*

***nljk**-&fdlh ,l dk;Z d fo#)] tk pkjh] yV] fjf"V ;k vkijkfèkd vfrpkj dh ifjHkk"kk e vku okyk vijkèk g] ;k tk pkjh] yV] fjf"V ;k vkijkfèkd vfrpkj dju dk ç;Ru g viuh ;k fdlh vU; O;fDr dh] pkg txe] pkg LFkkoj lEifÙk dh çfrj{kk djA*

*102. **'kjhj dh çkboV çfrj{kk d vfèkdkj dk çkjEHk vkj cuk jguk**-&'kjhj dh çkboV çfrj{kk dk vfèkdkj mlh {k.k çkjEHk gk tkrk g] tc vijkèk dju d ç;Ru ;k èkedh l 'kjhj d ldV dh ;fDr;Dr vk'kdk ink gkrh g] pkg og vijkèk fd;k u x;k gk vkj og rc rd cuk jgrk g tc rd 'kjhj d ldV dh ,lh vk'kdk cuh jgrh gA***

23. भारतीय दंड संहिता के उक्त प्रावधानों का सावधानीपूर्वक परीक्षण दर्शाएगा कि घोर उपहति की युक्तियुक्त आशंका पर अभियुक्त को हमलावरों की मृत्यु कारित करने की सीमा तक भी अधिकार

होगा। यह भी सुनिश्चित है कि अभियुक्त को अपने बचाव का विनिर्दिष्ट अभिवचन करने और साक्ष्य देने की आवश्यकता नहीं है। यद्यपि सामान्य अपवाद में से किसी के अंतर्गत अभियुक्त को लाने वाली परिस्थितियों का अस्तित्व सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर है किंतु ऐसी उपधारणा खंडित किए जाने योग्य है। प्राईवेट प्रतिरक्षा के अपने अभिवचन को स्थापित करने का अभियुक्तगण पर भार उतना प्रबल नहीं है जितना युक्तियुक्त संदेह के परे अपराध के प्रत्येक अवयव को स्थापित करने का भार अभियोजन पर है। अभियुक्त अपने अभिवचन के समर्थन में साक्ष्य पुरः स्थापित करके अथवा स्वयं अभियोजन द्वारा दिए गए साक्ष्य से निकाली गयी परिस्थितियों अथवा किए गए स्वीकरण के माध्यम से उपधारणा का खंडन कर सकता है। **''के॰ एम॰ नानावती बनाम महाराष्ट्र राज्य'', AIR 1962 SC 605,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"Hkkjr e] tl k bxyM e g] lkekU; fu;e d :i e vfHk;Dr d i{k e funkf"krk dh mièkkj.kk g vkj vfHk;Dr d nk"k dk fl) djuk vfHk;ktu dk drO; g(nl j 'kCnk e] vfHk;Dr dk rc rd funk"k mièkkfjr fd;k tkrk g tc rd vfHk;ktu }kjk mldk nk"k LFkkfir ugh fd;k tkrk gA fdr tc vfHk;Dr Hkkjrh; nM lfgrk e lkekU; vioknk ij vFkok nM lfgrk d fdlh vU; Hkkx e vrfo"V fo'k"k vioknk vFkok ijUrd ij vFkok vijkèk] ifjHkkf"kr dju okyh fdlh vU; fofèk e fo'okl djrk g] lk{; vfèkfu;e dh èkkjk 105 vfHk;Dr d fo#) mièkkj.kk djrh g vkj mDr mièkkj.kk dk [kMu dju dk Hkkj Hkh ml ij Mkyrh gA ml èkkjk d vèkhu U;k;ky; ekey dk vioknk e l fdlh d vrxr yku okyh ifjfLFkfr;k dh vuifLFkfr mièkkfjr djxk vFkkr U;k;ky; ,lh ifjfLFkfr d xj&vfLrRo dk rc rd fl) fd;k x;k ekuxk tc rd bl vfl) ugh fd;k tkrk g-------;g mièkkj.kk vfHk;ktu }kjk fn, x, lk{; l fudkyh x;h ifjfLFkfr;k vFkok fd, x, Lohdj.kk }kjk vFkok ,lh ifjfLFkfr;k rFkk vfHk;Dr }kjk fn, x, lk{; d fefJr çHkko }kjk Hkh [kfMr dh tk ldrh gA fdr èkkjk fdlh :i e ml Hkkj dk çHkkfor ugh djrh g tk vijkèk] ftl l vfHk;Dr dk vkjkfir fd;k x;k g] d leLr vo;ok dk fl) dju d fy, vfHk;ktu ij gA og Hkkj f'k¶V dHkh ugh gkrk gA lkekU; Hkkj tk vfHk;ktu ij g vkj lk{; vfèkfu;e dh èkkjk 105 d vèkhu vfHk;Dr ij vfèkjkfir fo'k"k Hkkj d chp vfHkdfFkr l?k"k okLrfod dh ryuk e dkYifud vfèkd gA oLrr% dkb l?k"k g gh ughA***

24. अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों से यह प्रतीत होगा कि दिनांक 25.2.1991 की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट ने मृत शरीर पर सिले गए जख्मों को उल्लिखित किया है। अन्वेषण अधिकारी ने प्रति–परीक्षण के दौरान स्वीकार भी किया है कि उसने मृत शरीर को सात जगहों पर पट्टियों से लिपटा हुआ अस्पताल के बरामदा में पाया था। डॉक्टर, जिन्होंने मृत शरीर का शव परीक्षण किया, ने मृत शरीर पर सिले हुए जख्मों को पाया है। किंतु अभियोजन ने उस डॉक्टर का नाम प्रकट नहीं किया है जिसने पहले मृतक रेवा महतो का परीक्षण किया था। विद्वान विचारण न्यायालय ने ध्यान में लिया कि अभियुक्तगण द्वारा अभियोजन पक्ष के विरुद्ध प्रति–मामला दर्ज किया गया था और यह भी स्वीकृत तथ्य है कि अभियुक्तगण अर्थात् महादेव महतो और शंकर महतो गंभीर उपहतियों से पीड़ित हुए थे। अन्वेषण अधिकारी ने स्वीकार किया है कि उसने अभियुक्तगण पर उपहतियों के परीक्षण के लिए तलब फॉर्म जारी किया था और बचाव पक्ष ने सम्यक रूप से उपहति रिपोर्टों को सिद्ध किया है जिन्हें प्रदर्श सं॰ E से E/2 तक चिन्हित किया गया है। अभियोजन गवाहों में से एक ने भी न्यायालय में स्वीकार किया है कि अभियुक्तगण भी उसी घटना

के क्रम में उपहतियों से पीड़ित हुए थे जिसके संबंध में वर्तमान मामला उनके विरुद्ध आरंभ किया गया था। इन तथ्यों में हमारा सुविचारित मत है कि यद्यपि अभियुक्तगण पर उपहतियों को स्पष्ट करने में अभियोजन की विफलता अभियोजन मामले को संपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं करेगी किंतु इस प्रकृति के मामले में अभियुक्तों को प्राईवेट प्रतिरक्षा का अधिकार था और विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का परीक्षण नहीं किया गया है। आगे, विद्वान विचारण न्यायालय ने स्वयं गौर किया है कि अभियोजन समस्त आरोप-पत्रित गवाहों का परीक्षण करने में विफल रहा है और इसलिए, हमारा मत है कि पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में युक्तियुक्त संदेह प्रतीत होता है कि निर्दोष व्यक्तियों को भी इस मामले में आलिप्त किया जा सकता था।

25. जहाँ तक अभियुक्त शंकर महतो का संबंध है, उसे लाठी से लैस अभिकथित किया गया है और अभियोजन गवाहों द्वारा लगाए गए कुछ बहुप्रयोजनीय अभिकथनों के सिवाए उसके विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है और इसलिए, हम उसको संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। अभियुक्तों शंकर महतो, थानू महतो एवं टुकन महतो के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323 और 147 के अधीन आरोपों को विरचित किया गया था किंतु विद्वान विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष दर्ज किया है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 324 और 147 के अधीन आरोप विफल हो गए हैं क्योंकि अभियोजन हित नारायण महतो और जुगल महतो पर प्रहार स्थापित करने में विफल रहा। जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोप का संबंध है, हमारा मत है कि अभियोजन यह स्थापित करने में सक्षम नहीं हुआ है कि अभियुक्त शंकर महतो अन्य अभियुक्तगण के साथ सामान्य आशय रख रहा था। मृतक रेवा महतो पर प्रहार करने का कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन शंकर महतो के विरुद्ध नहीं किया गया है। हित नारायण महतो और जुगल महतो पर अभिकथित प्रहार विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा असिद्ध पाया गया है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त का परीक्षण भी पूर्णत: असंतोषजनक पाया गया है। वस्तुत:, अन्य अभियुक्तगण के साथ सामान्य आशय रखने का आरोप अभियुक्त के समक्ष रखा भी नहीं गया था। अभियोजन साक्ष्य यह है कि कुँआ के निकट 'मारपीट' के बाद अभियुक्तगण अर्थात् महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो घायल रेवा महतो को महादेव महतो के घर के अंदर ले गए जहाँ उन व्यक्तियों द्वारा उस पर प्रहार किया गया था। वस्तुत:, पहली बार जब जुगल महतो के साथ झगड़ा हुआ था, अभियुक्त महादेव महतो ने सूचक और उसके भाई को धमकाया था और अभियुक्त शंकर महतो के विरुद्ध किसी प्रत्यक्ष कृत्य को अभिकथित नहीं किया गया है। अभियुक्त शंकर महतो को घर के बाहर रहने वाला अभिकथित किया गया है और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह तीन अन्य अभियुक्तगण के साथ रेवा महतो की हत्या करने का कोई आशय रखता था।

26. ''परीछत एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य'', (1972)4 SCC 694, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की प्रयोज्यता से संबंधित विधि को निम्नलिखित रूप में प्रतिपादित किया है:-

> *"22. èkkjk 34 vkÑ"V ugh gkxh tc rd ;g LFkkfir ugh fd;k tkrk g fd vud 0;fDr;k }kjk nkfMd ÑR; fd;k x;k Fkk] nljk fd lkekU; vk'k; vkj vijkèk dju dh io fu;kftr ;ktuk Fkh vkj rhljk fd ml lkekU; vk'k; dk vxlj dju e vijkèk dh dkfjrk e Hkkxhnkjh FkhA mPp U;k;ky; Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 326 lg&ifBr èkkjk 34 d vèkhu vihykFkh x.k ijhNr] lUu vkj lhrkjke dk nk"k fl) dju e xyr FkkA mudh nk"kfl) vikLr dh tkrh gA mPp U;k;ky; dk ijhNr] lUu vkj lhrkjke dh nk"kefDr vikLr dju e èkje oYyHk*

*vkj ijhNr d chp n'euh] èkje oYyHk d fo#) nth }kjk lfLFkr ekey] èkje oYyHk d fo#) ijhNr }kjk fd, x, vfHkdFkuk] èkje oYyHk d fo#) nth d ifjokn dk vUo"k.k dju e jkey[ku 'kek d fojkèkh vkj xj&lgkuHkfr.k jo; ij fopkj djuk pkfg, FkkA ;fn vihykFkhx.k dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjkvk 147, 447, 302 lg&ifBr èkkjk 149 d vèkhu nk"k fl) ugh fd;k tk ldrk Fkk vkj mUg nk"keDr fd;k x;k Fkk] mudh nk"kefDr dk mPp U;k;ky; }kjk vikLr ugh fd;k tk ldrk Fkk tc rd l= U;k;ky; vfHk;Drx.k dk nk"keDr dju e Li"V :i l xyr ugh Fkk vFkok xyr nf"Vdk.k ugh viuk;k Fkk vFkok ?kkj vU;k; ugh fd;k FkkA mPp U;k;ky; }kjk nk"kflf) dk vikLr fd;k tkuk Lo; xyr FkkA mPp U;k;ky; Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 326 lg&ifBr èkkjk 34 d vèkhu vihykFkhx.k dk nk"k fl) dju e Hkh xyr FkkA Qly dkVr le; xx d lkFk cuk jguk ek= dk'khjke dh gR;k d lcèk e Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 34 dh ç;kT;rk dk U;k;kfpr ugh Bgjk,xkA***

27. ''रामबिलास सिंह बनाम बिहार राज्य'', (1989)3 SCC 605, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"7. ....;g lR; g fd HkkO nO lO dh èkkjk 34 vFkok èkkjk 149 d vèkhu çfrfufèkd :i l O;fDr;k dk nk"kfl) dju d fy, ;g fl) djuk vko';d ugh g fd mue l çR;d çR;{k ÑR;k e fylr gvk FkkA fQj Hkh] ;g n'kku d fy, lkexh gkuh gkxh fd vfHk;Drx.k e l ,d vFkok vfèkd d çR;{k ÑR; vFkok ÑR;k dk leLr vfHk;Drx.k d lkekU; vk'k; dk vxlj dju e vFkok fofèk fo#) teko d lnL;k d lkekU; mí'; dk vxlj dju e fd;k x;k FkkA***

28. ''सुरेन्द्र चौहान बनाम म॰ प्र॰ राज्य'', (2000)4 SCC 110 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*11........ ^^bl rF; d vfrfjDr fd nk vFkok nk l vfèkd vfHk;Drx.k gku pkfg,] HkkO nO lO dh èkkjk 34 dk ykx dju d fy, nk dkjdk dk LFkkfir djuk gh gkxk % (i) lkekU; vk'k; vkj (ii) vijkèk dh dkfjrk e vfHk;Drx.k dh Hkkxhnkjh ;fn lkekU; vk'k; fl) fd;k tkrk g fdr fdlh vfHk;Dr d fo#) çR;{k ÑR; dk dFku ugh fd;k tkrk g] èkkjk 34 vkÑ"V gkxh D;kfd ;g vko';drk% çfrfufèkd nkf;Ro vrxLr djrh g fdr ;fn vijkèk e vfHk;Dr dh Hkkxhnkjh fl) dh tkrh g vkj lkekU; vk'k; vuifLFkr g] èkkjk 34 dk voyc ugh fy;k tk ldrk gA çR;d ekey e lkekU; vk'k; dk çR;{k lk{; gkuk lHko ugh gA bl çR;d ekey d rF;k vkj ifjfLFkfr;k e fu"df"kr djuk gkxkA***

29. ''विरेन्द्र सिंह बनाम म॰ प्र॰ राज्य'', (2010)8 SCC 407, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"39. lkekU; vk'k; io erD; foof{kr dju okyh io fu;kftr ;ktuk d vfLrRo dk çfrikfnr djrk gA ;g vijkèk dju dk vk'k; g vkj vfHk;Dr dk doy rc nk"kfl) fd;k tk ldrk g ;fn ,lk vk'k; leLr vfHk;Drx.k }kjk 'k;j fd;k x;k gA ,lk lkekU; vk'k; vijkèk dh dkfjrk d le; d fcn io gkuk pkfg, fdr ;g ?kVuk LFky ij Hkh fodflr gk ldrk g tc vijkèk fd;k tkrk gA vfèkdrj ekeyk e ,l vk'k; dk çR;{k lk{; çLr djuk ef'dy gA vfèkdrj ekeyk e bl vfHk;Drx.k d ÑR;k vFkok vkpj.k vkj vU; çklfxd ifjfLFkfr;k] l fu"df"kr fd;k tk ldrk gA vr% HkkO nO lO dh èkkjk 34 d vèkhu lkekU; vk'k; fu"df"kr dju e vfHky[k ij ektn nLrkot vR;Ur egRo

*vftr djrg vkjml U;k;ky; }kjk mudk vR;Ur lkoèkkuhiod lo{k.k fd;k tkuk gkxk---------------***

30. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि और वर्तमान मामले के तथ्यों की दृष्टि में हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अभियोजन अभियुक्त शंकर महतो के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन विरचित आरोप स्थापित करने में विफल रहा है। अभियुक्त टूकन महतो की मृत्यु विचारण के लंबित रहने के दौरान हो गयी थी और अभियुक्त थानू महतो की मृत्यु दांडिक अपील लंबित रहने के दौरान हो गयी और इसलिए, जहां तक अभियुक्त शंकर महतो का संबंध है, दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1067/2003 अनुज्ञात की जाती है।

31. जहाँ तक अन्य अभियुक्तगण अर्थात् महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो का संबंध है, वे तलवार से लैस थे और अभियोजन गवाहों ने उनकी उपस्थिति और मृतक पर उनके द्वारा किया गया प्रहार स्पष्टत: स्थापित किया है। किंतु, शव परीक्षण रिपोर्ट से यह प्रतीत होता है कि मृतक रेवा महतो को कुल 14 उपहतियाँ आयी थी जिनमें से समस्त उपहतियाँ उपहति सं॰ (i) (ii) और (iii) के सिवाए शरीर के गैर–महत्वपूर्ण भाग पर थी जो गंभीर प्रकृति की नहीं है और इसलिए, यह युक्तियुक्त रूप से निष्कर्षित किया जा सकता है कि अभियुक्तगण का रेवा तहतो की हत्या करने का आशय नहीं था। आगे यह प्रतीत होगा कि अभियोजन पक्ष और अभियुक्त पक्ष निकट संबंधी हैं और घटना तुच्छ मामले पर शुरु हुई थी। अभियोजन गवाहों के साक्ष्य में आया है कि ''मारपीट'' दस मिनट तक होता रहा। जैसा उपर गौर किया गया है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन उनके परीक्षण के दौरान अभियुक्तगण के समक्ष अपराध में फँसाने वाली परिस्थितियाँ नहीं रखी गयी थी। इसके अतिरिक्त, हित नारायण महतो और जुगल महतो पर प्रहार के संबंध में अभियोजन साक्ष्य असंगत है और अभियुक्तगण महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो के बीच में उनके द्वारा निजी रूप से कारित उपहतियों और मृतक रेवा महतो पर घातक उपहति अभिनिश्चित करने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य नहीं है। अत: इन तीनों अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करना समुचित नहीं होगा। पूर्वोक्त तथ्यों में, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अभियुक्तगण को प्राईवेट प्रतिरक्षा का अधिकार था किंतु वे प्राईवेट प्रतिरक्षा के अपने अधिकार के परे गए। आगे, अभियुक्तगण का रेवा महतो की हत्या करने का आशय नहीं था। परिणामस्वरुप, भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्तगण महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो की दोषसिद्धि अपास्त की जाती है क्योंकि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए आरोप स्थापित करने में विफल रहा है।

32. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, दांडिक अपील सं॰ 1265 वर्ष 2003 अंशत: अनुज्ञात किया जाता है और महादेव महतो, कैलाश महतो और जोधन महतो की दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 से भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (I) में संपरिवर्तित किया जाता है और उसे दस वर्षों के कठोर कारावास से दंडित किया जाता है। किंतु इन अपीलार्थीगण को उच्च न्यायालय से यह सूचना प्राप्त करने पर कि उन्होंने पीड़ित के परिवार को भुगतान किए जाने वाले मुआवजा की ओर 50,000/- रुपया जमा किया है, कारा से निर्मुक्त किया जाएगा। आज के दिन से दो सप्ताह की अवधि के भीतर अपीलार्थीगण द्वारा उच्च न्यायालय में यह राशि जमा की जानी चाहिए। यदि राशि पहले जमा की जाती है, अपीलार्थीगण को निर्मुक्त करने के लिए इसे इस न्यायालय की रजिस्ट्री द्वारा संबंधित कारा को संसूचित किया जाएगा।

37. जहाँ तक दांडिक अपील सं॰ 1067 वर्ष 2003 का संबंध है, कारा अधीक्षक, कोडरमा से अनुदेश पर विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के मुताबिक अपीलार्थी सं॰ 1 थानू महतो उर्फ थानेश्वर

महतो का देहान्त दिनांक 10 जून, 2007 को हो गया है और तद्नुसार, उसके विरुद्ध अपील उपशमनित होती है। जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 2 का संबंध है, उसे समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और उसके द्वारा दाखिल अपील अनुज्ञात की जाती है। चूँकि अपीलार्थी शंकर महतो जमानत पर है, उसे उसके जमानत बंध के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है और उसकी प्रतिभूतियों को भी उनके दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

---

ekuuh; çdk'k rkfr;k] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

राजकुमार अग्रवाल

cuke

चुनाव आयोग, अपने प्रधान सचिव के माध्यम से एवं अन्य

Civil Review No. 33 of 2012. Decided on 19th July, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—सी॰ बी॰ आई॰ अन्वेषण–झारखंड राज्य के राज्य सभा के द्विवार्षिक चुनाव के रद्दकरण को मान्य ठहराते हुए और सी॰ बी॰ आई॰ को अन्वेषण सौंपते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का पुनर्विलोकन इप्सित करने वाली याचिका–अन्वेषण समाप्त हो गया है और कोई अन्वेषण लंबित नहीं है–भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन स्वविवेकी अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय को राज्य सरकार की सहमति के बिना भी सी॰ बी॰ आई॰ को मामला निर्दिष्ट करने की व्यापक शक्ति है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 8 से 14)

निर्णयज विधि.–(2008) 3 SCC 542—Distinguished; 2010 (3) SCC 571—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Anil Kr. Sinha, Pandey Neeraj Rai, For the Petitioner.

आदेश

याची के अधिवक्ता को सुना गया।

2. यह सिविल पुनर्विलोकन डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1801/12 और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1802/12 में हमारे द्वारा पारित दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय का पुनर्विलोकन करने के लिए दाखिल किया गया है। इस आदेश द्वारा झारखंड राज्य के राज्यों के परिषद् (राज्य सभा) के द्विवार्षिक चुनाव को रद्द करने का भारत के चुनाव आयोग के निर्णय को मान्य ठहराते हुए इस न्यायालय ने राज्य पुलिस द्वारा पहले से ही रजिस्टर्ड मामलों में से एक का अन्वेषण केंद्रीय जाँच ब्यूरो को सौंपा। याची उक्त निर्णय से व्यथित है यद्यपि वह उक्त दो रिट याचिकाओं में पक्ष नहीं है।

3. डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1801/12 और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1802/12 के मामले के तथ्यों और दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के एक ही निर्णय द्वारा उक्त रिट याचिकाओं के निर्णय को निर्दिष्ट करना समुचित होगा।

4. झारखंड राज्य में वर्ष 2012 के राज्यों के परिषद् (राज्य सभा) के द्विवार्षिक चुनाव की प्रक्रिया में भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा और आयकर विभाग द्वारा विश्वसनीय सूत्रों से कुछ सूचना प्राप्त की गयी थी कि उम्मीदवारगण मतों को खरीद (हॉर्स ट्रेडिंग) सकते हैं और जिसके आधार पर राज्यों के परिषद् (राज्य सभा) के उक्त चुनाव की प्रक्रिया में विशेष कदमों को उठाया गया था ताकि ''नोट के लिए'' वोट

के लिए धन का अंतरण नहीं हो सके। उस निगरानी के कारण, वाहन से कुछ धन बरामद किया गया था जो अभिकथित रूप से राज्य सभा चुनाव के मतदाताओं को दिए जाने के लिए आशयित था। निर्वाचन आयोग ने सबसे पहले दिनांक 30 मार्च, 2012 की अधिसूचना के तहत मत की गणना को रोका और तत्पश्चात चुनाव रद्द कर दिया। पुलिस ने एक दांडिक मामला भी दर्ज किया, अत: मामला राज्य निगरानी पुलिस द्वारा अन्वेषण के अधीन था।

5. इन तथ्यों की पृष्ठभूमि में, दो रिट याचिकाओं को दाखिल किया गया था जिनमें से एक लोकहित मुकदमा डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1801/12 राजनीतिक दल के अध्यक्ष द्वारा दाखिल की गयी थी जो स्वयं राज्य सभा चुनाव का उम्मीदवार था। इन दोनों रिट याचिकाओं को विस्तारपूर्वक सुना गया था और दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय द्वारा विनिश्चित किया गया था जिसमें विवाद्यक की गंभीरता पर पूरी तरह विचार किया गया था और पैरा 34 में आदेश दिया गया था जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"34. pfd ;g jkT;k d ifj"kn d puko dh çfØ;k l lcfèkr èku 'kfDr] gkl VfMx vkj çHkko dh vrxLrrk dk xHkhj ekeyk g ft le ernkrk foèkku lHkk d lnL;x.k g] ge dnh; tkp C;jk dk ekeyk lkiu d fy, fuokpu vk;kx dk fun'k nuk lefpr le>r g tgk rd 0;fDr;k e l fdlh dh vijkfèkrk vrxLr gA***

6. श्री पांडे नीरज राय, अधिवक्ता की सहायता से विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा ने जोरदार निवेदन किया कि यह आदेश पुनर्विलोकन याची को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना पारित किया गया है जिसे **डिवाइन रीट्रीट सेंटर बनाम केरल राज्य एवं अन्य, (2008)3 SCC 542,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में सुना जाना चाहिए था। यह निवेदन भी किया गया है कि दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय, जो याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार सी॰ बी॰ आई॰ को मामला सौंपने के लिए तार्किक आदेश नहीं है, के कारण सी॰ बी॰ आई॰ ने याची को गिरफ्तार किया और सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा याची को परेशान किया जा रहा है जो पश्चातवर्ती घटनाओं जो बाद में हुई है से स्पष्टत: सिद्ध होता है। घटना दर्शाने के लिए याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा ने निवेदन किया कि याची को आरंभ में विचारण न्यायालय के आदेश द्वारा जमानत पर रिहा किया गया था क्योंकि अपराध, जिन्हें प्राथमिकी में उल्लिखित किया गया था, केवल जमानती अपराध थे। तत्पश्चात, सी॰ बी॰ आई॰ ने कुछ गैर–जमानती अपराधों को जोड़ा और तब याची की जमानत के रद्दकरण के लिए अग्रसर हुआ और विचारण न्यायालय द्वारा जमानत रद्द कर दिया गया था। किंतु, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के उक्त आदेश को अपास्त कर दिया है और याची को नया जमानत आवेदन दाखिल करने की अनुमति दी गयी थी जिसे विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था और याची अब कारा में है। यह अभिकथित किया गया है कि सी॰ बी॰ आई॰ निष्पक्ष रूप से मामले का अन्वेषण नहीं कर रही है और वस्तुत: याची जो राजनेता है को परेशान कर रही है। यह निवेदन भी किया गया है कि अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध समरुप अभिकथन हैं किंतु सी॰ बी॰ आई॰ ने उन व्यक्तियों के विरुद्ध प्रपीड़क कदम नहीं उठाता है और उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे जोरदार निवेदन किया कि ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि राज्य पुलिस समुचित रूप से मामले का अन्वेषण नहीं कर रही है और ऐसी स्थिति में याची का मामला सी॰ बी॰ आई॰ को सौंपा नहीं जाना चाहिए था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे **पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य बनाम लोकतांत्रिक अधिकार संरक्षण कमिटी, पश्चिम बंगाल एवं अन्य, (2010)3 SCC 571,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर

विश्वास किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दिल्ली विशेष पुलिस स्थापन अधिनियम जिसके अधीन सी० बी० आई० काम करती है की धारा 6 के बावजूद राज्य सरकार की सहमति के बिना भी सी० बी० आई० को मामला निर्दिष्ट करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायालय में शक्ति निहित की गयी है, किंतु केवल विरल से विरलतम मामले में और जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर आता है कि राज्य पुलिस समुचित रूप से मामले का अन्वेषण करने की अवस्था में नहीं होगी, सी० बी० आई० को मामला निर्दिष्ट किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि चूँकि उक्त दोनों रिट याचिकाओं में आक्षेपित निर्णय पारित किए जाने के पहले याची को सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया था, यह भी आदेश के पुनर्विलोकन के लिए पर्याप्त आधार है। किंतु, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अब दिनांक 4 जून, 2013 को अन्वेषण के बाद सी० बी० आई० द्वारा न्यायालय में आरोप पत्र दाखिल किया गया है और याची उस मामले में अभियुक्त है जैसा आरोप-पत्र में दर्शाया गया है।

7. हमने याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन पर विचार किया है और याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए सुविचारित निर्णयों का परिशीलन किया है।

8. यह पुनर्विलोकन याचिका इन कारणों में से एक सहित अनेक कारणों से खारिज की जा सकती थी क्योंकि इस समय तक अन्वेषण समाप्त हो गया है और कोई अन्वेषण सी० बी० आई० के साथ लंबित नहीं है। इस पुनर्विलोकन याचिका को इतनी लंबी अवधि के बाद पुनर्विलोकन याचिका दाखिल करने के आधार पर ही खारिज किया जा सकता था। आक्षेपित निर्णय दिनांक 5 अप्रिल, 2012 को दिया गया था और पुनर्विलोकन याचिका तेरह दिनों के भीतर ही दिनांक 18 अप्रिल, 2012 को दाखिल की गयी थी किंतु त्रुटियों के साथ और यह समय प्रदान किए जाने के बावजूद रजिस्ट्री के समक्ष त्रुटियों के साथ बनी रही और अंतत:, इस याचिका को दिनांक 9 मई, 2013 के आदेश द्वारा एक वर्ष बाद न्यायालय में सूचीबद्ध किया गया है क्योंकि याची द्वारा त्रुटियों को नहीं हटाया गया था। हम त्रुटियों को अनदेखा कर रहे हैं।

9. ऐसे गंभीर मामले में, जहाँ दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के इस न्यायालय के आदेश द्वारा दांडिक मामला सी० बी० आई० को सौंपा गया था, याची जिसे दांडिक मामले में अभियुक्त बनाया गया था और गिरफ्तार किया गया था और सी० बी० आई० के अन्वेषण सौंपे जाने के विरुद्ध उसे शिकायत थी, ने एक वर्ष से अधिक तक के लिए मामला न्यायालय में सूचीबद्ध नहीं करवाया था जबकि तथ्यपरक स्थिति में यह पीठ उसी दिन और रुटीन रूप से अगले दिन मामला सूचीबद्ध करने की अनुमति प्रदान करता है। चाहे जो भी हो, हम इन आधारों पर अथवा त्रुटियों को नहीं हटाए जाने के आधार पर इस पुनर्विलोकन याचिका को खारिज नहीं कर रहे हैं, क्योंकि हमने पाया है कि पुनर्विलोकन याचिका में कोई गुणागुण नहीं है।

10. पुनर्विलोकन याची का प्रतिवाद कि इस मामले में कोई कारण दिए बिना न्यायालय ने सी० बी० आई० को मामला निर्दिष्ट करने के लिए आदेश पारित किया है, का संबंध है, हमने पहले ही निर्णय के पैरा 34 को उद्धृत किया है जो दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय का अंतिम पैराग्राफ है। हमने आक्षेपित निर्णय के पैरा 34 में पहले ही उल्लिखित किया है कि यह राज्यों के परिषद् के चुनाव की प्रक्रिया से संबंधित धन शक्ति, हॉर्स ट्रेडिंग और प्रभाव की अंतर्ग्रस्तता का गंभीर मामला है जिसमें मतदातागण विधान सभा के सदस्यगण हैं। हमारा सुविचारित मत है कि ये कारण स्वयं पर्याप्त रूप से सी० बी० आई० को मामला सौंपने का कारण उपदर्शित करते हैं। जहाँ तक 'विरल मामलों में विरलतम'' का संबंध है, यह निष्कर्ष का मामला है और निष्कर्ष तथ्यों और परिस्थितियों से निकाले जा सकते हैं और शब्द मात्र ''विरल मामलों में विरलतम'' यदि किसी आदेश में इनका उपयोग आदेश में कारण द्वारा समर्थित नहीं किया गया है, मामले

के तथ्य और परिस्थितियाँ है, जब वह विरल मामलों में विरलतम नहीं होगा। सी॰ बी॰ आई॰ को मामला सौंपने के लिए विरल मामलों में विरलतम जो पाया गया है, वह तथ्यों की संपूर्णता है और न कि निर्णय में शब्द मात्र। एक विस्तृत निर्णय स्वयं कहता है। इस आक्षेपित आदेश में, न्यायालय ने रिट याचिका खारिज किया है जिसे एक व्यक्ति द्वारा 1,00,000/- (एक लाख) रुपयों के व्यय के साथ जनहित मुकदमा के नाम में दाखिल किया गया है। एक अन्य याचिका राजनीतिक दल के अध्यक्ष द्वारा दाखिल की गयी है जो देश में राष्ट्रीय पार्टी है और न तो उक्त दल ने और न ही उस दल के राज्य अध्यक्ष ने और न ही व्यक्ति ने दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय को चुनौती दिया है।

11. चूँकि याची के विद्वान अधिवक्ता ने कुछ नए तथ्यों, जो सी॰ बी॰ आई॰ को अन्वेषण सौंपे जाने के बाद सामने आए थे, को इस न्यायालय के ध्यान में लाया है, हम पश्चातवर्ती महत्वपूर्ण और तात्विक तथ्यों का न्यायिक ध्यान ले सकते हैं कि झारखंड राज्य में वर्ष 2010 में राज्य सभा के पूर्व द्विवार्षिक चुनाव में, जहाँ राज्यसभा चुनाव 2010 में हॉर्स ट्रेडिंग का अभिकथन करते हुए न्यूज चैनल द्वारा स्टिंग ऑपरेशन किया गया था, राज्य पुलिस और राज्य निगरानी विभाग ने दांडिक मामला दर्ज किया और तत्पश्चात् लगभग तीन वर्षों तक मामले का अन्वेषण नहीं किया था। जब इस तथ्य को न्यायालय के ध्यान में लाया गया था, इस न्यायालय ने इस मामले को भी दिनांक 5.4.2012 के आक्षेपित निर्णय के बाद सी॰ बी॰ आई॰ को सौंप दिया बल्कि सी॰ बी॰ आई॰ को यह अन्वेषण करने का निर्देश भी दिया कि क्या ऐसे हाई प्रोफाइल मामले हैं, जहाँ धन शक्ति के उपयोग, हॉर्स ट्रेडिंग और विपुल प्रभाव का अभिकथन था और वह भी राज्यों की परिषद् के चुनाव की प्रक्रिया को प्रभावित करते हुए, का अन्वेषण नहीं करने के लिए निगरानी विभाग में उपर से नीचे तक के पुलिस अधिकारियों की कोई अपराधिता थी। ऐसी चीजों को हल्के रूप में नहीं लिया जा सकता है और ये पहले से ही दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के हमारे निर्णय में उपलब्ध है जिसमें इस न्यायालय ने पाया कि यह राज्यों के परिषद् के चुनाव की प्रक्रिया में धन शक्ति, हॉर्स ट्रेडिंग और प्रभाव की अंतर्ग्रस्तता का गंभीर मामला है। अत:, हमारा सुविचारित मत है कि आक्षेपित निर्णय के पूर्ववर्ती पैराओं में दिए गए कारणों के साथ हमारे निर्णय का पैरा 34 सी॰ बी॰ आई॰ को मामला सौंपने का पूरा कारण देता है। वर्ष 2010 के पूर्व हॉर्स ट्रेडिंग मामले का अन्वेषण वर्ष 2013 में सी॰ बी॰ आई॰ को सौंपने के लिए उक्त निर्दिष्ट पश्चातवर्ती घटना हमारे दृष्टिकोण को और भी मजबूत करती है कि मामला सी॰ बी॰ आई॰ को सौंपा जाना चाहिए था।

12. जहाँ तक याची को सुनवाई का अवसर देने का संबंध है, राज्य निगरानी पुलिस द्वारा पहले ही प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और अभियुक्त कौन है, इसे आरंभ में केवल प्राथमिकी दर्ज करने के समय पर प्राथमिकी से अथवा बाद में अन्वेषण के दौरान पाया जा सकता है और तत्पश्चात उन व्यक्तियों को दांडिक विचारण के अध्यधीन किया जाता है, दं॰ प्र॰ सं॰ में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो प्रावधानित करता है कि प्राथमिकी दाखिल करने के पहले अभियुक्त को सुनने की आवश्यकता है।

13. जहाँ तक **डिवाइन रीट्रीट सेन्टर (उपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का संबंध है, उस मामले के तथ्य बिल्कुल भिन्न हैं। उस मामले में मामला उच्च न्यायालय के आदेश पर दर्ज किया गया था और सी॰ बी॰ आई॰ को निर्दिष्ट किया गया था और इसलिए, न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि ऐसी स्थिति में संबंधित व्यक्ति, जिसके विरुद्ध सी॰ बी॰ आई॰ जाँच का आदेश दिया गया है, को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था। यहाँ इस मामले में, यह डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1801/12 और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1802/12 में पारित दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के इस न्यायालय के निर्णय के

आधार पर दर्ज मामला नहीं है। स्वीकृत रूप से, राज्य पुलिस द्वारा पहले ही दांडिक मामला दर्ज किया गया है। सी॰ बी॰ आई॰ को अन्वेषण मात्र सौंपा गया है। हमने पहले ही संप्रेक्षित किया है कि दांडिक मामले में अन्वेषण एजेंसी भी प्राथमिकी से नहीं जान सकती है कि क्या और भी अभियुक्त है जिन्होंने अपराध किया है और इसलिए, हमारा सुविचारित मत है कि ऐसी स्थिति में उन अज्ञात व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर देने की आवश्यकता नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याची प्राथमिकी में मुख्य अभियुक्त नहीं था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने इंगित किया कि दिनांक 5 अप्रिल, 2012 का निर्णय देने के पहले न्यायालय को ज्ञात था कि याची अभियुक्त हो सकता है या अभियुक्त है, अत: याची को सुनवाई का अवसर दिया जा सकता था। हमारा सुविचारित मत है कि न तो इस न्यायालय ने अपराध का अन्वेषण किया और न ही यह जाँच करने की अवस्था में था कि कौन अभियुक्त हो सकता है। उक्त निर्दिष्ट रिट याचिकाएँ पक्षों के अभिवचनों और विशेषत: याची के अभिवचनों के आधार पर विनिश्चित की गयी थी। किसी व्यक्ति के संबंध में किसी विवाद्यक को विनिश्चित करने के प्रयोजन से तथ्यों पर विचार नहीं किया गया है। न्यायालय का सरोकार मामले के तथ्यों के साथ था जिसमें मामला प्राथमिकी के रूप में राज्य निगरानी पुलिस द्वारा दर्ज किया गया था। संदिग्ध व्यक्ति और अभियुक्त के बीच भिन्नता है। याची उस समय पर संदिग्ध व्यक्ति हो सकता है क्योंकि उसके विरुद्ध अभिकथन था जो अभियुक्त के दर्जा की तुलना में किसी प्रकार के अभियुक्त का दर्जा है। संदिग्ध व्यक्ति अंतिम रूप से अभियुक्त नहीं हो सकता है और उसे स्वयं अन्वेषण में विमुक्त किया जा सकता है।

14. हमारा सुविचारित मत है कि यह न्यायालय उन सब व्यक्तियों जो केवल संदिग्ध व्यक्ति हैं को आमंत्रित करके भानुमती का पिटारा नहीं खोल सकता था। उक्त कारणों की दृष्टि में, हमारा सुविचारित मत है कि दिनांक 5 अप्रिल, 2012 के निर्णय के पुनर्विलोकन का मामला नहीं बनता है और विशेषत: **लोकतांत्रिक अधिकार संरक्षण कमिटी, पश्चिम बंगाल (ऊपर)** मामले में याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन स्वविवेकी अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय को राज्य सरकार की सहमति के बिना भी सी॰ बी॰ आई॰ को मामला निर्दिष्ट करने की व्यापक शक्ति है और इसलिए पुनर्विलोकन याचिका कोई व्यय अधिरोपित किए बिना खारिज की जाती है। यह कहना अनावश्यक है कि हमारे द्वारा किया गया कोई भी संप्रेक्षण किसी दांडिक मामले में याची पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

श्रीमती कुसुम चौहान

cuke

क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, राँची एवं अन्य

W.P.S. No. 4432 of 2003. Decided on 5th July, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971—कर्मचारी योजना के अधीन लाभ प्रदान किए जाने का हकदार होगा यदि कर्मचारी द्वारा नियमित रूप से योगदान का भुगतान किया गया है और इसका भुगतान एक वर्ष की न्यूनतम अवधि के लिए किया गया है—मृत्यु की तिथि की प्रासंगिकता नहीं है—याची के पति की मृत्यु काफी पहले हो गयी और याची समय के भीतर

अपना दावा नहीं कर सकी थी–इस आधार पर याची का दावा अस्वीकार नहीं किया जा सकता है–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 10 से 14)

निर्णयज विधि.–(2003)1 SCC 184—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Himanshu Kr. Mehta, Kanchan Kumari, For the Petitioners; M/s P.P.N. Roy, Pragati Prasad, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–याची कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 के अधीन लाभ के भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए इस न्यायालय के पास आयी है।

2. आई॰ ए॰ सं॰ 3516 वर्ष 2011 दाखिल करके दिनांक 12.11.2003 का आदेश, जिसके द्वारा याची का दावा अस्वीकार कर दिया गया था, अभिलेख पर लाया गया है। रिट याचिका के प्रार्थना खंड में संशोधन इप्सित करते हुए प्रार्थना की गयी थी जिसे दिनांक 11.4.2013 के आदेश द्वारा अनुज्ञात किया गया था और इस प्रकार, दिनांक 12.11.2003 के आदेश को भी याची द्वारा चुनौती दिया गया है।

3. रिट याचिका में प्रकट किए गए मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची किसी हरिलाल चौहान की विधवा है जो मेसर्स कटरास सेरामिक्स एन्ड रीफ्रैक्टरीज प्रा॰ लि॰ धनबाद में कार्यरत था। याची के पति की मृत्यु दिनांक 16.3.1979 को हो गयी। यह कथन किया गया है कि कर्मचारी ने पारिवारिक पेंशन निधि में अगस्त, 1975 से फरवरी, 1979 तक अपना योगदान दिया किंतु याची के पति की मृत्यु के बाद याची को कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना के अधीन लाभों को प्रदान नहीं किया गया था और मासिक पारिवारिक पेंशन के प्रदान के लिए याची का दावा दिनांक 12.11.2003 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें यह कथन किया गया है कि कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 के अधीन लाभों के प्रदान के लिए याची से आवेदन की प्राप्ति के बाद याची के पति के नियोक्ता को उसके नियोजन का विवरण देने के लिए कहा गया था। नियोक्ता द्वारा आपूर्त्त दस्तावेज फॉर्म 10A, 3A और 6A अंतर्विष्ट करते थे। यह अभिवचन किया गया है कि स्थापन का प्रबंधन, जिसके अधीन याची का पति नियोजित था, यह सिद्ध करने में विफल रहा कि अपनी मृत्यु के समय पर याची का पति कंपनी के रॉल पर था और, इसलिए, याची पारिवारिक पेंशन प्रदान किए जाने का हकदार नहीं थी। आगे यह इंगित किया गया है दस्तावेज जिसे फॉर्म 3A के रूप में दिया गया है में दो कॉलमों अर्थात् मृत्यु की तिथि तथा सेवा छोड़ने के कारण को प्रक्षेपित किया गया है अथवा खाली छोड़ दिया गया है जो संदेह सृजित करता है। पूरक शपथ पत्र दाखिल करके फॉर्म 10A प्रतियों और अन्य दस्तावेजों को अभिलेख पर लाया गया है। यह कथन किया गया है कि दो फॉर्म 10A हैं और दोनों फॉर्म 10A में याची का हस्ताक्षर मेल नहीं खा रहा है और याची के पति की मृत्यु की तिथि आरंभ में दिनांक 18.1.1979 लिखी गयी थी और तत्पश्चात्, इसे काट दिया गया था और दिनांक 16.3.1979 के रूप में सुधारा गया था। पूर्वोक्त की दृष्टि में, यह प्रतिवाद किया गया है कि याची का दावा रहस्यमय है और यह गंभीर संदेह उत्पन्न करता है और इसलिए, इसे प्रदान नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह स्थापित नहीं किया गया है कि याची के पति की मृत्यु तब हुई जब वह स्थापन के पंजी पर था।

5. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 के पैराग्राफ सं० 28 जो पारिवारिक पेंशन पर विचार करती है और पैराग्राफ सं० 2(f) तथा 9(2-A) पर विश्वास करते हुए प्रतिवाद किया है कि कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 के अधीन यह आवश्यक नहीं है कि कर्मचारी को अपनी मृत्यु के समय पर प्रबंधन की पंजी पर होना चाहिए था। योजना के अधीन लाभ प्रदान करने की एकमात्र आवश्यकता पर पैराग्राफ 28 के अधीन विचार किया गया है और वह गणनीय सेवा है जिसे 1971 की उक्त योजना के पैराग्राफ सं० 2 (f) में परिभाषित किया गया है। योजना के प्रासंगिक प्रावधानों को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"2 (f) ^x.kuh; lok l vfHkçr g ikfjokfjd i'ku fufèk d lnL; }kjk nh x;h lok ftld lcèk e bl ;ktuk d vèkhu vfHknk; Hkxr; g (vkj lok d fdlh 0;fDr dk lfEefyr djrk g ftld lcèk e LFkkiu d vLFkk;h cnh] gMrky] ykd vkmV vFkok orujfgr vodk'k d dkj.k vFkok le#i çÑfr vFkok vU;Fkk d fdlh vU; dkj.k l ,l lnL; }kjk dkb etnjh çkIr ugh dh x;h g vkj ftld lcèk e vfHknk; (lnL; vkj fu;kDrk nkuk dk fgLlk) mld Hkfo"; fufèk [kkrk l vi;ktu }kjk Hkxr; g tlk bl ;ktuk d ijkxkQ 9 d mi&ijkxkQ (2-A) e çkoèkkfur fd;k x;k g%*

ijUr ;g fd lok dh dkb vofèk] ftld lcèk e

(i) lnL; d fu;kDrk dh ith l lnL; dk uke dkV fn, tku d ckn(vFkok

(ii) tk ,d o"k l vfèkd g(vFkok

*(iii) dk"k e vFkok NV çkIr LFkkiu dh Hkfo"; fufèk e] ;FkkfLFkfr] lnL; d ØfMV e iMh fdlh jkf'k d lekIr gk tku d ckn lnL; }kjk etnjh çkIr ugh dh x;h g] x.kuh; lok d :i e ugh ekuk tk,xkA***

9(2-A) vk;Dr vFkok NV çkIr LFkkiu d ekey e ml LFkkiu d Hkfo"; fufèk d çHkkjh çkfèkdkjh d lr"V gku ij fd etnjh d fcuk lok dh dkb vofèk g ftl bl ;ktuk d ijkxkQ 2 d mi&ijkxkQ (f) d vèkhu x.kuh; lok d :i e ekuk tkuk g] dk"k e vFkok NV çkIr LFkkiu dh Hkfo";fufèk e] ;FkkfLFkfr] ml ij C;kt d lkFk lnL; d ØfMV e iMh gb vkj fu;kDrk ,o depkjh }kjk ijLij :i l ;kxnku dh x;h jkf'k l mDr vofèk d fy, fu;kDrk vkj depkjh }kjk mi&ijkxkQ (1) e fofufn"V njk ij Hkxr; vfHknk; d lerY; jkf'k dk ikfjokfjd i'ku fufèk e çf"kr djxk vkj dn ljdkj Hkh mi ijkxkQ (2) e fofufn"V njk ij Hkxr; vfHknk; d lerY; jkf'k dk ;kxnku mDr vofèk d fy, djxkA]

*28. **ikfjokfjd i'ku dk nj**-&(1) fdlh lnL; d ekey e ftld ikfjokfjd i'ku fufèk dk lnL; gku d ukr 60 o"k dh vk; çkIr dju d igy x.kuh; lok dh vofèk d nkjku eR; gk tkrk g] ikfjokfjd i'ku dk Hkxrku uhp nh x;h rkfydk e fofufn"V nj ij bl 'kr d vè;èkhu fd;k tk,xk fd (mlu ,d o"k l vU;u dh vofèk d fy, ikfjokfjd i'ku fufèk e vfHknk; fn;k g)***

7. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया कि योजना की प्रकृति अनुबंधित करती है कि कर्मचारी को अपनी मृत्यु के समय पर प्रबंधन के पंजी पर होना चाहिए अन्यथा योजना के लाभों को मृत कर्मचारी के आश्रितों तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि प्रतिशपथ पत्र में यह विनिर्दिष्टत: इंगित किया गया है कि याची द्वारा दावा किए जाने की दृष्टि से प्रक्षेपांश किया गया है।

8. दिनांक 20.1.2004 के प्रतिशपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा लिया गया दृष्टिकोण नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"7. .....;gk ;g mYy[k djuk çklfxd g fd Lo0 gfjgj pkgku (BR) 2244/16) dh foèkok Jherh dle pkgku dk i'ku dh etjh dk ekeyk etjh nu oky çkfèkdkjh d le{k vk;k gA ;g lçf{kr fd;k x;k Fkk fd ekfld ikfjokfjd i'ku dk nkok ych vofèk d volku d ckn bl dk;ky; e nkf[ky fd;k x;k FkkA vr% nkonkj dh okLrfodrk vkj gdnkjh dk lR;kfir djuk vko';d ik;k x;k FkkA okf"kd fjVuk (Qke 3A) e tuojh] 1979 d eè; ekg rd Hkxr; vkj Qojoh 1979 e Hkxrku fd;k x;k lnL; dk vfHknk; vkj etnjh n'kk;k x;k gA Qke l0 3A e nk dkyek dk mfYyf[kr fd;k x;k g ftl LFkkiu }kjk [kkyh NkM fn;k x;k gA ; dkye g% (a) lok NkMu dh frfFk vkj (b) lok NkMu dk dkj.kA vkx] o"k 1979-80 e lnL; gfjyky pkgku dk uke okf"kd fjVuk Qke 3A vFkok Qke 6A e ugh vkrk gA çoru vfèkdkjh dk ;g lR;kfir dju d fy, çfrfu;Dr fd;k x;k Fkk fd D;k lnL; dh eR; LFkkiu d ith ij jgr g, gk x;h FkhA LFkkiu dh ith ij eR; ikfjokfjd i'ku ;ktuk] 1971 d vèkhu i'ku dh etjh d fy, vfuok; vko';drk gA LFkkiu foxr db o"kk l cn iMk g vkj LFkkiu dk çcèku lnL; d LFkkiu dh ith ij jgr g, eR; dk fl) dju e foQy jgkA

*çoru vfèkdkjh u ih0 ,Q0 lnL;rk l lcfèkr ijku vfHky[k dh Nk;k çfr dk çkIr fd;kA bl vfHky[k d Nk;k çfr d erkfcd lnL; d lok NkMu dh frfFk dk fnukd 18.1.79 d :i e igy gh fy[k x, frfFk dk dkVu d ckn fnukd 16.3.79 d :i e mfYyf[kr fd;k x;k gA fnukd 18.1.79 d :i e NkMu dh frfFk LFkkiu }kjk çLrr fjVu d lkFk lxr gA vkx lok NkMu d dkj.k d dkye e ^^er** fy[kk x;k gA ;g çrhr gkrk g fd lok NkMu dh frfFk vkj lok NkMu dk dkj.k ckn e vk;k fopkj g vkj ych vofèk d ckn ekfld ikfjokfjd i'ku dk ik= foèkok dk cuku d fy, NMk x;k gA vkx ;g ik;k x;k Fkk fd LFkkiu d ikl LFkkiu dh ith ij jgr g, lnL; dh eR; fl) dju d fy, vfHky[k ugh g fdr ;g 20 o"kk l vfèkd le; chru d ckn LFkkiu dh ith ij jgr g, lnL; dh eR; dk çek.k if=r djrk g----------**

9. यह दोहराते हुए कि याची के पति की मृत्यु स्थापन की पंजी पर रहते हुए हुई थी, प्रत्यर्थी सं० 4 की ओर से शपथ पत्र दाखिल किया गया है।

10. कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 में अंतर्विष्ट प्रावधानों का परिशीलन प्रकट करेगा कि कर्मचारी उक्त योजना के अधीन लाभों के प्रदान का हकदार होगा यदि नियोक्ता द्वारा नियमित रूप से अभिदाय का भुगतान किया गया है और इसका भुगतान एक वर्ष की न्यूनतम अवधि के लिए किया गया है। कर्मचारी की मृत्यु तिथि प्रासंगिक नहीं है। दस्तावेजों, जिन्हें अभिलेख पर लाया गया है और जिन

पर प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास किया गया है, वे दस्तावेज थे जो प्रबंधन की अभिरक्षा में थे और वे लाभार्थी नहीं हैं और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि याची के लिए दावा बनाने की दृष्टि से प्रविष्टियों में प्रक्षेपांश किया गया है।

11. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपना दावा करने के लिए याची की ओर से घोर विलंब और ढिलाई हुई है और केवल इस आधार पर रिट याचिका खारिज किए जाने की दायी है। स्वीकृत रूप से, याची के पति की मृत्यु काफी पहले हो गयी और याची निरक्षर महिला होने के कारण समय के भीतर अपना दावा नहीं कर सकी थी। इस आधार पर याची का दावा अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

12. ''एस॰ के॰ मस्तान बी बनाम महाप्रबंधक, दक्षिण मध्य रेलवे एवं एक अन्य, (2003)1 SCC 184, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मृत कर्मचारी के आश्रित को भुगतेय पारिवारिक पेंशन की संगणना करना और इसका प्रस्ताव मृतक कर्मचारी की विधवा को देना नियोक्ता के लिए बाध्यकारी था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"6. ge xkj djr g fd vihykFkh dk ifr xxeu d :i e dk;jr Fkk ft ldh eR; lokjr jgr gk x;hA ;g vfHky[k ij g fd vihykFkh fuj{kj g tk ml le; ij viu fofèkd vfèkdkj dk ugh tkurh Fkh vkj ikfjokfjd i'ku d viu vfèkdkj d çfr vkj viu ,l vfèkdkj d çoru d çfr mldh fdlh lpuk rd igp ugh FkhA vihykFkh d ifr dh eR; ij mld ifr d fu;kDrk vFkkr bl ekey e jyo d fy, vihykFkh dk Hkxr; ikfjokfjd i'ku dh lx.kuk djuk vkj mld }kjk nkok fd, fcuk vFkok ednek dju d fy, ml etcj fd, fcuk bldk çLrko nuk ckè;dkjh FkkA ikfjokfjd i'ku iku d mld vfèkdkj l budkj] tlk fo}ku ,dy U;k;kèh'k vkj [kMihB }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g] jyo dh vkj l xyr fu.k; g vkj oLrr% lfoèkku d vuPNn 21 d vèkhu vihykFkh dk vk'oklu fn, x, xkjVh d mYy?ku d rY; g----------**

13. प्रत्यर्थीगण द्वारा इससे इनकार नहीं किया गया है कि याची निरक्षर महिला है। फॉर्म 10A का परिशीलन स्पष्टत: प्रकट करेगा कि याची का हस्ताक्षर उस व्यक्ति के हस्ताक्षर के समान है जो हिंदी भी लिखना नहीं जानता है और यही कारण हो सकता है कि एक अन्य फॉर्म 10A में उसने बाएँ अंगूठे का निशान लगाया। यह प्रबंधन द्वारा की गयी गलती हो सकती है किंतु, इस कारण से याची का दावा अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, इस कारण से यह नहीं कहा जा सकता है कि यह स्थापित नहीं किया गया है कि याची के पति की मृत्यु उद्योग के पंजी पर रहते हुए हुई थी। इसके अतिरिक्त, जैसा पहले ही गौर किया गया है, याची के पति की मृत्यु अप्रासंगिक है और याची के पति की मृत्यु दिनांक 18.1.79 को हुई या दिनांक 16.3.1979 को, यह 1971 की योजना के अधीन लाभ प्रदान करने के प्रयोजन से अतात्विक है। योजना के पैराग्राफ 28 के निबंधनानुसार लाभ प्रदान करने की एकमात्र आवश्यकता एक वर्ष की न्यूनतम अवधि के लिए अभिदाय का भुगतान है। पैराग्राफ 28 में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया गया है कि कर्मचारी की मृत्यु की स्थिति में उसका परिवार पारिवारिक पेंशन के प्रदान का हकदार होगा।

14. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 को इस आदेश की प्रति की प्रस्तुती की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर कर्मचारी पारिवारिक पेंशन योजना, 1971 के अधीन याची के दावा की संगणना करने और याची को समस्त ग्राह्य लाभों का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

लवलेश शर्मा

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य

W.P. (S) No. 6413 of 2011. Decided on 30th August, 2013.

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000–नियम 43 (b) एवं 139—पेंशन एवं उपदान का रोका जाना–नियम 43B के प्रावधानों का अनुसरण किए बिना सेवानिवृत्ति के बाद आक्षेपित आदेश पारित किया गया–आरोप-पत्र जारी किए जाने पर विभागीय कार्यवाही शुरू की गयी बतायी जाती है–याची को ऐसा कोई आरोप-पत्र जारी नहीं किया गया था–आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात।

(पैराएँ 11 से 17)

निर्णयज विधि.–AIR 1995 SC 1853—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Yogesh Modi, For the Petitioner; Mr. Rajan Raj, For the Respondents-JSEB.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान मामले में याची झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड का सेवानिवृत कर्मचारी है। वह लेखा सहायक के रूप में कार्यरत था। वर्तमान रिट याचिका दाखिल करने के लिए याची की शिकायत यह है कि मेमो सं॰ 479 में अंतर्विष्ट परिशिष्ट 2 के तहत कार्मिक निदेशक द्वारा जारी दिनांक 13 मार्च 2008 के आदेश द्वारा 10% पेंशन, उपदान की संपूर्ण राशि और अवकाश नगदकरण रोक लिया गया है। किंतु, याची की आगे शिकायत लेखा निदेशक द्वारा जारी दिनांक 23 जून, 2010 के पत्र के कारण है जिसके अधीन परिशिष्ट-9 के तहत याची के उपदान से 1,38,670.70/- रुपयों की राशि काट ली गयी है।

3. याची ने जब वह झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड में लेखा सहायक के रूप में कार्यरत था, दिनांक 31 दिसंबर, 2005 को अपनी सेवानिवृति के बाद समस्त सेवा निवृत्ति देयों का भुगतान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6274 वर्ष 2006 में इस न्यायालय के पास आया था। उक्त रिट आवेदन के लंबित रहने के दौरान याची को 4,40,170.10/- रुपयों की जी॰ पी॰ एफ॰ राशि और जी॰ एस॰ एस॰ की ओर कतिपय राशि का भुगतान किया गया था किंतु याची को अवकाश नगदीकरण, उपदान और 10% पेंशन जैसे अन्य सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान नहीं किया गया था। ऐसी परिस्थितियों में, याची को नए अभ्यावेदन के साथ सक्षम प्राधिकारी के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ रिट याचिका निपटायी गयी थी जिसे बदले में दिनांक 29 जून, 2007 के निर्णय (परिशिष्ट 1) के तहत अनुबंधित अवधि के भीतर विधि के अनुरुप आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था। तत्पश्चात् दिनांक 13 मार्च, 2008 का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। याची को भुगतेय उपदान राशि से 1,38,670.70/- रुपयों की राशि के राजस्व हानि की वसूली के लिए और 10% पेंशन रोकने के लिए दंड की प्रकृति में कार्मिक निदेशक द्वारा दिनांक 27 दिसंबर, 2008 का आदेश भी पारित किया गया था।

4. तत्पश्चात, याची को दिनांक 18 फरवरी, 2009 के परिशिष्ट 4 के तहत प्रस्तावित दंड के विरुद्ध कारण बताने के लिए पुनः कहा गया था जिसका उसने परिशिष्ट 5 के तहत उत्तर दिया और तत्पश्चात

दिनांक 23 जून, 2010 के परिशिष्ट 9 के तहत उसकी बकाया उपदान राशि से 1,38,670.70/- रुपयों की राशि की कटौती करने का आदेश पारित किया गया था जो भी इसमें आक्षेपित किया गया है।

5. याची की ओर से आक्षेपित आदेश का विरोध इस आधार पर किया गया है कि इसे झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के प्रावधानों का अनुसरण किए बिना और उस तरीके से जिसे उक्त नियमावली ने नियम 139 के अधीन अनुध्यात नहीं किया गया है, उसकी सेवानिवृत्ति के बाद पारित किया गया था।

6. याची का प्रतिवाद यह है कि अप्रिल, 1988 से अप्रिल, 1992 के बीच उसकी पदस्थापना की अवधि के लिए कतिपय अभिकथित आरोपों के लिए उसे प्रत्यर्थी बोर्ड के संयुक्त सचिव द्वारा दिनांक 9 दिसंबर, 1997 को कारण बताओ जारी किया गया था। याची को दिनांक 4 मई, 1998 को अपना उत्तर देता हुआ बताया जाता है। उसके उत्तर के बाद बिहार राज्य विद्युत बोर्ड के संयुक्त सचिव द्वारा झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के अपने प्रति-सहयोगी को दिनांक 22 नवंबर, 2002 की संसूचना भेजी गयी थी। ऐसी परिस्थितियों में, याची को अपना उत्तर देने के लिए कहते हुए दिनांक 1 सितंबर, 2003 का एक अन्य कारण बताओ जारी किया गया था। तत्पश्चात, प्रत्यर्थीगण के पदधारियों के बीच कतिपय पत्राचार किया गया था। इस बीच याची दिनांक 31 दिसंबर, 2005 को सेवानिवृत्त हो गया। याची की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि सेवावधि के दौरान और उसकी सेवानिवृत्ति के बाद भी उसके विरुद्ध कोई आरोप-पत्र अथवा विभागीय कार्य आरंभ नहीं की गयी थी। नियमावली के नियम 43(b) के अधीन वर्ष 1988 से वर्ष 1992 की अवधि के लिए अभिकथित आरोपों के लिए ऐसी कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती थी क्योंकि यह चार वर्षों की अवधि के काफी परे था जैसा झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43(b) के परन्तुक a (ii) के अधीन अनुध्यात किया गया है।

7. अत:, याची ने आक्षेपित आदेश का विरोध किया है जिसके द्वारा उसका पेंशन काटा गया है और उसकी बकाया उपदान राशि से 1,38,670.70/- रुपयों की राशि वसूली गयी है।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **बिहार राज्य एवं अन्य बनाम मो॰ इदरीस अंसारी, AIR 1995 Supreme Court 1853,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय और इसके पैरा 9 और 10 पर विश्वास किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता की ओर से निवेदन किया गया है कि याची की सेवावधि के दौरान न तो आरोप पत्र जारी करके कोई विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी और न ही नियमावली के नियम 43 (b) के प्रासंगिक प्रावधानों के अधीन उसकी सेवानिवृत्ति के बाद ऐसी कार्यवाही की जा सकती थी क्योंकि अभिकथित आरोप उसकी सेवानिवृत्ति के चार वर्षों के काफी परे की अवधि से संबंधित थे और वह भी वर्ष 1988 से वर्ष 1992 के बीच तक की अवधि के लिए। ऐसी परिस्थितियों में, नियमावली के नियम 139 के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग आरोपों, जिसके लिए उसे सेवावधि के दौरान कारण बताओ जारी किया गया था, पर अभिकथित अवचार के लिए दोष के किसी निश्चित निष्कर्ष के बिना उन्हीं अभिकथनों पर नहीं किया जा सकता था।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया है। प्रत्यर्थी बोर्ड के अधिवक्ता की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि आदेश नियमावली के नियम 139 का अवलंब लेकर पारित किया गया है जिसके अधीन याची कर्मचारी का पेंशन घटाना मंजूरी प्राधिकारी के लिए अनुज्ञेय है यदि उसकी सेवाओं को असंतोषजनक पाया जाता है।

10. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार वर्तमान मामले में याची को पहले ही कारण बताओ जारी किया गया था और उसने अपना स्पष्टीकरण दाखिल किया था जिसे असंतोषजनक पाया

गया था क्योंकि अवचार के उसके अभिकथित कृत्यों से बोर्ड को राजस्व हानि कारित की गयी थी। ऐसी परिस्थितियों में, 10% पेंशन रोकते हुए और उसके बकाया उपदान से कतिपय राशियों की वसूली के लिए आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

11. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को कुछ विस्तारपूर्वक सुना है और आक्षेपित आदेश सहित अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परिशीलन किया है। यह विवादित नहीं है कि आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा याची के 10% पेंशन की कटौती की गयी है और 1,38,670.70/- रुपयों की राशि वसूल की गयी है। अभिकथित आरोप के संबंध में है जो वर्ष 1988 से वर्ष 1992 के बीच की अवधि से संबंधित है। अभिलेख पर मौजूद संपूर्ण अभिवचनों से किसी भी स्थान पर यह नहीं दर्शाया गया है कि उसकी सेवावधि के दौरान याची के विरुद्ध आरोप-पत्र जारी करके विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी। प्रत्यर्थीगण का सर्वोत्तम मामला, जैसा अभिलेख पर मौजूद अभिवचनों और दस्तावेजों से प्रतीत होगा कि याची को अभिकथित आरोपों के लिए दिनांक 9 दिसंबर 1997 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। तत्पश्चात, पुनः बिहार राज्य विद्युत बोर्ड के प्रति सहयोगी प्राधिकारी अर्थात् झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा दिनांक 1 सितंबर, 2003 को एक अन्य कारण बताओ नोटिस उस पर तामील किया गया था। किंतु, उसके कारण बताओं पर कोई आदेश पारित हुए बिना अथवा कोई विभागीय कार्यवाही, जो विहित फॉरमेट में समुचित आरोप पत्र जारी किए जाने पर आरंभ होती है, आरंभ हुए बिना याची दिनांक 31 दिसंबर, 2005 को सेवानिवृत हो गया। यह विधि की सुनिश्चित अवस्था है कि आरोप-पत्र जारी किए जाने पर विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी बतायी जाती है। वर्तमान मामले में, जैसा पाया गया है, याची को कोई ऐसा आरोप-पत्र जारी नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी बोर्ड का शपथ-पत्र भी किसी आरोप पत्र को जारी किया जाना अथवा सेवावधि के दौरान विभागीय कार्यवाही संचालित किया जाना निर्दिष्ट नहीं करता है।

12. दूसरी संभाव्यता कतिपय अभिकथित आरोपों, जिसे उसकी सेवावधि के दौरान घटना के लिए याची के विरुद्ध लगाया गया बताया जाता है, के लिए नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही जारी किया जाना हो सकती थी। इसे पुनः उस घटना के लिए जारी किया जा सकता था जो झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के प्रावधानों के अधीन ऐसी कार्यवाही जारी करने के लिए चार वर्षों की अवधि के भीतर थी जो झारखंड राज्य द्वारा अपनाए जाने के बाद बिहार राज्य पर भी प्रयोज्य थी और झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड पर भी प्रयोज्य थी। उस संबंध में विधिक अवस्था अब विवादित नहीं है जैसा उच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों में दिया गया है और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी अनेक निर्णयों में सुनिश्चित किया गया है।

13. दिनांक 27 दिसंबर, 2008 के आदेश (परिशिष्ट 3) के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि वे वर्ष 1988 से वर्ष 1992 के बीच की अवधि के लिए आठ अभिकथित आरोपों के लिए याची के विरुद्ध अवचार के दोष के निष्कर्ष की प्रकृति के हैं। यह स्पष्ट है कि न तो कोई विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसके अधीन उक्त आरोपों को स्थापित किया गया था और न ही उसकी सेवानिवृत्ति के बाद नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कोई कार्यवाही आरंभ की गयी थी। यह पहले ही संप्रेक्षित किया गया है कि वर्ष 1988 से वर्ष 1992 के बीच की अवधि से संबंधित घटना के लिए, किसी भी सूरत में याची की सेवानिवृत्ति के बाद, नियम 43 (b) का अवलंब लेकर ऐसी कोई कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती थी क्योंकि उक्त घटना झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के परन्तुक a (ii) के अधीन अनुध्यात चार वर्षों की अवधि से काफी परे थी। **बिहार राज्य एवं अन्य बनाम मो॰ इदरीस अंसारी, AIR 1995 Supreme Court 1853,** मामले में याची द्वारा विश्वास किया गया निर्णय और उसका पैरा 9 और 10 उदाहरणात्मक है जिसे बेहतर अधिमूल्यन के लिए यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:-

^^ijk 9– tgk rd ml fu;e dk lcèk g] ;g jkT; çkfèkdkfj;k dk bl ç'u dk fofuf'pr dju d fy, l'kDr cukrh g fd D;k lokfuoÙk ljdkjh lod dk fu;ekoyh }kjk vuè;kr ifjfLFkfr;k e i.k i'ku fn;k tkuk pkfg, ;k ughA çFke ifjfLFkfr ;g g fd ;fn ljdkjh lod dh lok ijh rjg lrk"k tud ugh ik;h tkrh g] etjh çkfèkdkjh }kjk i'ku lefpr :i l ?kVku dk vkn'k fn;k tk ldrk gA f}rh; ifjfLFkfr ;g g fd ;fn ;g ik;k tkrk g fd i'ku iku oky dh lok ijh rjg lrk"k tud ugh Fkh vFkok lok e jgr g, lcfèkr ljdkjh lod dh vkj l xHkhj vopkj dk çek.k g] jkT; ljdkj iujh{k.k 'kfDr d ç;kx e vèkhuLFk çkfèkdkjh }kjk i'ku d fu;rhdj.k e gLr{ki dj ldrh gA fdr fu;e 139 l çokfgr , lh 'kfDr] iokDr ifjfLFkfr;k d vèkhu] nk 'krk }kjk vkx ?kjh tkrh gA çFke 'kr ;g g fd iujh{k.k 'kfDr dk ç;kx ulfxd U;k; d fl)krk d vu:i djuk gkxk vkj f}rh;r% , lh iujh{k.k 'kfDr dk ç;kx doy igyh ckj i'ku dh etjh dh frfFk l rhu o"kk d Hkhrj fd;k tk ldrk gA fu;e 43 (b) vkj fu;e 139 dk l;Dr iBu fuEufyf[kr fp= ç{kfir djrk g%

(i) fu;e 139 d vèkhu lokfuoÙk ljdkjh lod d fo#) dk;okgh dh tk ldrh g vkj mldk i'ku lefpr :i l ?kVk;k tk ldrk g ;fn etjh çkfèkdkjh lr"V g fd çR;Fkh dk lok vfHky[k ijh rjg lrk"k tud ugh FkkA

(ii) Hky gh lcfèkr vfèkdkjh dk lok vfHky[k etjh çkfèkdkjh }kjk ijh rjg lrk"k tud ik;k tkrk g vkj ;fn jkT; ljdkj ikrh g fd ;g ijh rjg lrk"k tud ugh g vFkok fd mldh lokofèk d nkjku lcfèkr vfèkdkjh d xHkhj vopkj dk çek.k g] jkT; ljdkj i'ku ?kVku d fy, iujh{k.k 'kfDr dk ç;kx dj ldrh g fdr og iujh{k.k Hkh mifjdk d vè;èkhu g fd frfFk] ftl ij i'ku etj dju okyk vkn'k etjh çkfèkdkjh }kjk igyh ckj mld i{k e ikfjr fd;k x;k Fkk] l vkj u fd ml vofèk d ij rhu o"kk d vofèk d Hkhrj ç;kx fd;k tkuk pkfg,A

ijk 10– tgk rd nlj çdkj d ekeyk dk lcèk g] mldh lokofèk d nkjku lcfèkr ljdkjh lod dh vkj l xHkhj vopkj dk çek.k iujh{k.k çkfèkdkjh }kjk foHkkxh; dk;okgh vFkok U;kf;d dk;okgh] ftl mldh lokofèk d nkjku vkjHk fd;k tk ldrk Fkk] l vFkok foHkkxh; dk;okgh] ftl bl çdkj d ekeyk e mldh lokfuoÙk d ckn Hkh vkjHk fd;k tk ldrk g] l vyx dj fudkyuk gkxkA fdr , lh foHkkxh; dk;okgh dk fu;e 43 (b) dh vko';drkvk dk vuikyu djuk gkxkA **ifj.kkeLo#i] lokfuoÙk ljdkjh lod dk mldh lokfuoÙk d ckn Hkh mld fo#) lpkfyr foHkkxh; dk;okgh d vulj.k e mldh lokofèk d nkjku xHkhj vopkj dk nk"kh ik;k tk ldrk g fdr , lh dk;okgh doy , l vopkj d lcèk e vkjHk dh tk ldrh Fkh tk mld fo#) , lh foHkkxh; dk;okgh vkjHk fd, tku d pkj o"kk d Hkhrj fd;k tk ldrk FkkA oreku ekey e çR;Fkh fnukd 31.1.1993 dk lokfuoÙk gvk vkj xHkhj vopkj d vkèkkj ij dkj.k crkvk ukfVl fnukd 27.9.1993 dk tkjh fd;k x;k Fkk vkj u fd bl vkèkkj ij fd i'ku iku oky dk lok vfHky[k ijh rjg lrk"k tud ugh FkkA bl etjh nu oky çkfèkdkjh d :i e jkT; ljdkj }kjk tkjh**

fd;k x;k FkkA vr% bldk iBu fu;e 43 (b) d lkFk fd;k tkuk FkkA vr% ,lk ukfVl fdlh vopkj dk vkPNkfnr dj ldrk Fkk ;fn bl fnukd 27.9.1993 d igy pkj o"kk d Hkhrj fd;k tkrk rn}kjk ftldk vFk g fd bl fnukd 26.9.1989 l fnukd 31.3.1993 rd dh vofèk d nkjku fd;k tkuk pkfg, Fkk tc çR;Fkh lokfuoÙk gvkA doy ,l vopkj d ekey e fu;e 43 (b) d vèkhu çR;Fkh d fo#) foHkkxh; dk;okgh vkjHk dh tk ldrh FkhA ,lh dk;okgh e] ;fn ml vopkj dk nk"kh ik;k x;k Fkk] fu;e 139 (a) vkj (b) d vèkhu mld fo#) vxlj gvk tk ldrk FkkA oreku ekey d rF;k ij mPp U;k;ky; l lger gkr g, ;g vfHkfuèkkfjr djuk gh gkxk fd fu;e 139 (a) vkj (b) d vèkhu 'kfDr;k dk voyc yr g, fnukd 27.9.1993 dh ukfVl i.kr% vfHkdfFkr foxr vopkj d vkèkkj ij tkjh dh x;h Fkh vkj bl vkèkkj ij vkèkkfjr ugh Fkh fd çR;Fkh dk lok vfHky[k ijh rjg lrk"ktud ugh FkkA tgk rd ml vkèkkj dk lcèk Fkk] fu;e 43 (b) vkj fu;e 139 (a) d l;Dr iBu ij bl fu"d"k l ugh cpk ldrk g fd pfd çR;Fkh }kjk ml frfFk] ftl ij fnukd 27.9.1993 dk dkj.k crkvk ukfVl tkjh fd;k x;k Fkk] l pkj o"k igy vfHkdfFkr vopkj fd;k x;k Fkk] vihyh; çkfèkdkjh dk fl) vopkj d vkèkkj ij çR;Fkh d fo#) fu;e 139 (a) vkj (b) dk voyc yu dh 'kfDr ugh FkhA ifj.kkeLo#i] ;g vfHkfuèkkfjr djuk gh Fkk fd fu;e 139 d vèkhu dk;okgh i.kr% v{ke FkhA *mPp U;k;ky; fnukd 13.12.1993 dk vfre vkn'k vfHk[kfMr dju e leku :i l U;k;kfpr Fkk D;kfd ,l volj dk çek.k ugh FkkA fu;e 139 (a) vkj (b) d vèkhu dk;okgh okil Hktu dk ç'u 'k"k ugh gkxk D;kfd o"k 1986-87 l pkj o"kk d volku d ckn fdlh foHkkxh; dk;okgh e vfHkdfFkr xHkhj vopkj LFkkfir ugh fd;k tk ldrk Fkk pfd ,lh dk;okgh fu;e 43 (b) d ijUrd a (ii) }kjk Li"Vr% oftr gkxhA ifj.kkeLo#i] fnukd 27.9.1993 d dkj.k crkvk ukfVl dk bld vkjHk l gh enk ink g, vkj çHkkoghu d :i e ekuuk gkxkA fjekM d :i e fdlh u;h dk;okgh dk leFku dju d fy, ,lh ukfVl dk lgkjk ugh fy;k tk ldrk gA bu lc dkj.kk l bl vihy e gekj gLr{ki d fy, ekeyk ugh curk gA ifj.kkeLo#i] vihy foQy gkrh g vkj [kkfjt dh tkrh gA 0;; dk vkn'k ugh gA***

14. प्रत्यर्थी का मामला यह नहीं है कि प्रश्नगत आदेश झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 139 (c) के अधीन पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित किया गया है। प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने नियमावली के नियम 139 (b) के प्रावधानों के अधीन आक्षेपित आदेश को न्यायोचित ठहराना इप्सित किया है जिसके अधीन मंजूरी प्राधिकारी पेंशन की राशि घटा सकता है यदि यह पाया जाता है कि याची की सेवा पूरी तरह संतोषजनक नहीं थी।

15. वर्तमान मामले में निष्कर्ष, जिन्हें दिनांक 27 दिसंबर, 2008 के आदेश में दिया गया है जो लेखा निदेशक द्वारा परिशिष्ट 9 के तहत दिनांक 23 जून, 2010 का आक्षेपित आदेश जारी किए जाने के पहले दिनांक 18 फरवरी, 2009 को याची को जारी नोटिस के पूर्ववर्ती हैं, प्रकटत: वर्ष 1988 से वर्ष 1992 की अवधि के बीच अवचार के अभिकथित आरोप पर याची के दोष पर निष्कर्षों की प्रकृति के हैं। ऐसी परिस्थितियों में, नियमावली के नियम 139 (b) के अधीन शक्ति का प्रयोग प्रकटत: किया जा सकता था यदि उसकी सेवावधि में समुचित रूप से गठित विभागीय कार्यवाही के क्रम में अथवा झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन आरंभ की गयी कार्यवाही में अवचार स्थापित किया गया था। वर्तमान मामले में दोनों अनुपस्थित हैं। याची के विरुद्ध अभिकथित अवचार पर दोष का निष्कर्ष है। ऐसी परिस्थितियों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का मत, जिसे यहाँ उपर निर्दिष्ट किया गया है, याची

की मदद के लिए आता है क्योंकि नियमावली के नियम 139 (a) और (b) के अधीन शक्ति के प्रयोग के पहले विभागीय कार्यवाही में अथवा नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही में अवचार का दोष स्थापित किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। जैसा यहाँ ऊपर पहले ही उपदर्शित किया गया है; अवचार के अभिकथित आरोप वर्ष 1988 से वर्ष 1992 के बीच की अवधि से अर्थात् याची के दिनांक 31 दिसंबर, 2005 को सेवानिवृत होने के काफी पहले से संबंधित है जिसके लिए उसकी सेवानिवृत्ति के बाद और वह भी वर्ष 2008 अथवा 2009 में झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती थी।

16. अतः, तथ्यों और परिस्थितियों की संपूर्णता में, जिन पर यहाँ उपर चर्चा की गयी है, आक्षेपित आदेश जिसके द्वारा याची के पेंशन का 10% स्थायी रूप से रोक दिया गया है और उसकी कुल भुगतेय बकाया उपदान राशि से 1,38,670.70/- रुपयों की राशि की वसूली का आदेश विधि में और तथ्यों पर संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार आक्षेपित आदेशों को विधि में तथा तथ्यों पर असंपोषणीय होने के कारण अभिखंडित किया जाता है।

17. तद्नुसार, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। परिणामस्वरुप याची काटौती की गयी राशि वापस पाने और रोकी गयी पेंशन की राशि के शेष की निर्मुक्ति का इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर हकदार होगा।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Writ Petition (C) Nos. 5513 of 2011 with 4633 of 2010. Decided on 1st October, 2013.

(क) झारखंड औद्योगिक नीति, 2001–खंड 29.11—मेगा इकाईयों को प्रोत्साहन दिया जाना–पूंजी निवेश सहायिकी से इनकार–कोटि (II) अथवा कोटि (III) के रूप में विक्रय कर और अन्य प्रोत्साहनों को पाने के अर्हता की निर्णायक तिथि विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के संबंध में राज्य सरकार को सूचना देने की तिथि है–यदि सूचना देने की तिथि पर औद्योगिक इकाई विगत दो वर्षो से विद्यमान और कार्यशील घाटा में चलने वाली इकाई है, तब यह मेगा औद्योगिक इकाई की कोटि (III) के अधीन आती है–यदि राज्य सरकार का प्रतिवाद कि प्रोत्साहन की स्वीकार्यता वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ होने की तिथि पर विद्यमान तथ्यों पर निर्भर करेगी, स्वीकार किया जाता है, तब कोटि (III) औद्योगिक इकाई को प्रोत्साहन देने के लिए बनाए गए संपूर्ण प्रावधान व्यर्थ और अकरणीय बन जाएँगे क्योंकि कोई इकाई जो सूचना की तिथि पर कार्यशील है यह निर्धारित नहीं कर सकती थी कि क्या यह आधुनिकीकरण के बाद वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ होने तक घाटे में चलने वाली इकाई बनी रहेगी या नहीं–उद्योग का कोटिकरण केवल उस तिथि पर किया जा सकता है जिस तिथि पर उद्योग ने विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करने की सूचना दी–याची की इकाई का दर्जा घाटे में चलने वाली इकाई से लाभ कमाने वाली इकाई में बदलने की राज्य सरकार की कार्रवाई सही नहीं हैं क्योंकि विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के लिए सूचना की तिथि पर याची की इकाई घाटे में

चलने वाली इकाई थी क्योंकि इसने विगत पाँच वर्षों से नगद हानि उपगत किया था–याची की इकाई कोटि (III) मेगा औद्योगिक इकाई अर्थात् घाटे में चलने वाली, विद्यमान और कार्यशील औद्योगिक इकाई के रूप में पूंजी निवेश प्रोत्साहन/सहायिकी पाने की हकदार है।

(पैराएँ 23 से 26)

(ख) झारखंड औद्योगिक नीति, 2001—खंड 22—औद्योगिक इकाईयों को प्रोत्साहन दिया जाना–औद्योगिक इकाई जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती है, झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के खंड 22 के अनुसार प्रोत्साहन पाने की हकदार है–याची की सिंदरी इकाई में कोई विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण नहीं हुआ–सरकार अपना वादा पूरा करने के लिये बाध्य है अगर वचनदाता ने इस पर भरोसा करके अपनी स्थिति परिवर्तित की है किंतु, सरकार को अथवा निजी पक्ष को भी विधि द्वारा निषिद्ध कृत्य करने के लिए मजबूर करने के लिए वचन विवंध का अवलंब नहीं लिया जा सकता है–वचन विवंध के आधार पर सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर अतिरिक्त क्रमिक विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर याची को पूंजी निवेश सहायिकी देने के लिए राज्य सरकार को मजबूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि राज्य सरकार द्वारा उक्त मांग और/अथवा वादा औद्योगिक नीति के विरुद्ध है–चूँकि सिंदरी इकाई को विक्रय कर पर प्रोत्साहन का भुगतान करने का वादा औद्योगिक नीति के विरुद्ध है, याची वैध प्रत्याशा के सिद्धांत के आधार पर इसका दावा नहीं कर सकता है–राज्य सरकार को इसे घाटे में चलने वाली, विद्यमान और कार्यशील मेगा औद्योगिक इकाई के रूप में मानते हुए याची को पूंजी निवेश सहायिकी का भुगतान करने, जैसा वादा इसके द्वारा किया गया है, का निर्देश दिया गया–राज्य सरकार को आगे चाईबासा इकाई द्वारा बनाए गए सीमेन्ट और क्लिंकर के विक्रय पर राज्य सरकार को अतिरिक्त क्रमिक विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर याची को पूंजी निवेश सहायिकी देने का निर्देश दिया जाता है–इसकी सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर सरकार को अतिरिक्त क्रमिक विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी प्रदान करने के लिए याची की प्रार्थना अस्वीकार की गयी।

(पैराएँ 28 से 32, 36 एवं 37)

(ग) न्यायिक पुनर्विलोकन–प्रशासनिक कार्रवाई–वैध प्रत्याशा के आधार पर व्यक्ति प्रशासनिक प्राधिकारी जो अपने वादा से मुकर जाता है की कार्रवाई के न्यायिक पुनर्विलोकन का दावा कर सकता है–कोई व्यक्ति वैध प्रत्याशा के सिद्धांत के आधार पर प्रशासनिक प्राधिकारी से सीधे तौर पर अनुतोष का दावा नहीं कर सकता है–वह केवल यह दावा कर सकता है कि प्राधिकारी, जिसने वादा नकारने का निर्णय लिया, को उसे उचित सुनवाई का अवसर देना चाहिए–याची जान रहा है कि औद्योगिक नीति के अनुसार केवल वे इकाईयाँ जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती हैं, विक्रय कर के भुगतान पर प्रोत्साहन पाने की हकदार हैं–राज्य सरकार ने याची को यह स्पष्ट करने के लिए लिखा था कि किस प्रकार यह सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर राज्य सरकार को अतिरिक्त विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर सहायिकी का दावा करता है क्योंकि इसका चाईबासा क्लिंकर संयंत्र, जिसने विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण किया, प्रोत्साहन का पात्र है और न कि इसका सिंदरी ग्रिडिंग संयंत्र–याची ने पत्र का अपना उत्तर दिया–वादा नकारने का निर्णय लेने के पहले याची को निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार दिया गया है। (पैराएँ 34 एवं 35)

निर्णयज विधि.—1979(2) SCC-409; 2005(1) SCC-625—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s T.R. Andhyarujina, Rajiv Ranjan, A.K. Yadav, For the Petitioners; M/s Ajit Kumar, Upadhyay, P.K. Singh, For the Respondents/State.

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.—इन रिट आवेदनों को याची को प्रोत्साहन एवं सहायिकी का भुगतान करने के लिए, जैसा राज्य सरकार द्वारा दिनांक 21.7.2003 के पत्र सं॰ 2318 (परिशिष्ट-6) के तहत मंजूर किया गया था, प्रत्यर्थी राज्य को आदेश देते हुए समुचित रिट और निर्देश जारी करने के लिए ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड द्वारा दाखिल किया गया है।

2. यह कथन किया गया है कि झारखंड राज्य ने अस्तित्व में आने के बाद औद्योगिक निवेश को महत्तम बढ़ाने के लिए समुचित वातावरण सृजित करने, औद्योगिक विकास त्वरित करने, प्राकृतिक साधनों, खानों एवं खनिजों का समुचित उपयोग करने तथा खोजी गतिविधियों को बढ़ावा देने की दृष्टि से झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 (इसमें इसके बाद नीति के रूप में निर्दिष्ट) निरुपित और अधिसूचित किया था। पूर्वोक्त नीति ने औद्योगिक विकास को त्वरित करने के लिए पूंजी निवेश सहायिकी, ब्याज तथा वैट रियायत/वापसी पर सहायिकी जैसे प्रोत्साहनों को प्रदान करने के प्रावधानों के अंतर्विष्ट किया। नीति का खंड 29.11 मेगा इकाईयों को प्रोत्साहन देने का प्रावधान बनाता है। यह प्रावधानित करता है कि प्रत्येक मामले के लिए 50 करोड़ रुपयों से अधिक के सीधे निवेश वाली नयी परियोजनाओं के लिए विशेष पैकेजों विरचित किया जाएगा। नीति के खंड-17 परिशिष्ट 1 ने निम्नलिखित तीन कोटियों अर्थात् कोटि 'A' (अल्प पिछड़ा), कोटि 'B' (पिछड़ा) और कोटि 'C' (अत्यन्त पिछड़ा) में राज्य के विभिन्न क्षेत्रों को वर्गीकृत किया। नीति का खंड 22 मेगा औद्योगिक इकाईयों के लिए इसी प्रकार का प्रोत्साहन पैकेज प्रावधानित करता है जो अपना उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से विस्तारण/विविधिकरण अथवा आधुनिकीकरण कर रहे हैं।

3. आगे प्रतीत होता है कि राज्य सरकार ने दिनांक 10.6.2003 के मेमो सं॰ 1885 में अंतर्विष्ट आदेश द्वारा मेगा औद्योगिक इकाईयों को पूंजी निवेश प्रोत्साहन/सहायिकी प्रदान करने के लिए निम्नलिखित तीन कोटियों में वर्गीकृत किया:–

> *(i)* ***u;h vk|kfxd bdkb;k-****&ftue vk|kfxd uhfr] 2001 d fucèkuku lkj 50 djkM #i;k l vfèkd dk fuo'k fd;k x;k g vFkok fd;k tk jgk gA*
>
> *(ii)* ***fo|eku vk|kfxd bdkb;k-****&oreku e dk;'khy vk|kfxd bdkb;k ftue uhfr d fucèkuku lkj foLrkj.k@fofoèkdj.k@vkèkfudhdj.k d :i e 50 djkM #i;k dk i th fuo'k fd;k x;k g vFkok fd;k tk jgk gA*
>
> *(iii)* ***?kkV e pyu okyh fo|eku ,o dk;'khy vk|kfxd bdkb;k-****&o fo|eku vkj dk;'khy vk|kfxd bdkb;k tk chekj ugh g fdr foxr nk o"kk l fujrj uxn ?kkVk mixr dj jgh gA ,lh vk|kfxd bdkb;k e uhfr d fucèkuku lkj 50 djkM #i;k l vfèkd dk i th fuo'k fd;k x;k g vFkok fd;k tk jgk gA*

4. याची ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड भारतीय कंपनी अधिनियम के अधीन निगमित कंपनी है जिसका रजिस्टर्ड कार्यालय मुंबई में है। यह कथन किया गया है कि ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड सीमेन्ट उत्पादन के व्यवसाय में लगी हुई है और इसकी उत्पादन इकाईयाँ पूरे देश में है जिसमें झारखंड में जिला धनबाद में सिंदरी में एक और पश्चिमी सिंहभूम जिला में झिंकपानी में दूसरी इकाई सम्मिलित है। यह कथन किया गया है कि वर्तमान रिट आवेदनों को चाईबासा सीमेन्ट वर्क्स के नाम से ज्ञात झिंकपानी स्थित इकाई की ओर से दाखिल किया गया है।

5. यह कथन किया गया है कि ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड की झिंकपानी इकाई विगत 60 वर्षों से कार्यशील है और झारखंड राज्य के अत्यन्त पिछड़े क्षेत्र में अवस्थित है। इस प्रकार यह नीति के परिशिष्ट 1 के खंड 17 के कोटि 'C' के अधीन आता है।

6. यह कथन किया गया है कि ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड की झिंकपानी इकाई पुरानी इकाई है और विगत पाँच वर्षों से नगद घाटा उपगत करती है और इस प्रकार इसे विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण की अत्यावश्यकता है। तद्नुसार, याची ने चाईबासा में 1.20 एम॰ टी॰ अर्द्ध-शुष्क प्रक्रिया क्लिंकरिंग प्लान्ट स्थापित करके और अप्रचलित आर्द्र प्रक्रिया भट्टी का संकार्य बंद करके इकाई के आधुनिकीकरण के लिए 270 करोड़ रुपयों से अधिक के निवेश के लिए दिनांक 29.10.2002 को झारखंड मुख्यमंत्री को प्रस्ताव दिया। इसने आगे अपने संकार्यों को सहारा देने करने के लिए नया 15-20 एम॰ डब्ल्यू॰ कैप्टिव पावर प्लान्ट स्थापित करने का प्रस्ताव दिया। उक्त पत्र में आगे कहा गया है कि क्लिंकरिंग इकाईयाँ सिंदरी सीमेन्ट ग्रिंडिंग प्लान्ट की निरंतरता को इसकी मुख्य और मूल कच्चा माल अर्थात् क्लिंकर की आपूर्ति करके सुनिश्चित करेंगी जिनको अपने वर्तमान स्रोतों से पूरा कर पाना खतरे में पड़ गया है। उक्त पत्र में, याची ने प्रार्थना किया कि राज्य सरकार को चाईबासा सीमेन्ट प्लान्ट में किए गए क्लिंकरिंग से निर्मित सीमेन्ट को विक्रय कर और अन्य प्रोत्साहनों के रूप में बंदी के कगार पर खड़ी बीमार इकाई को पुनः जीवित करने के लिए पैकेज देना चाहिए।

7. तब यह प्रतीत होता है कि याची ने 270 करोड़ रुपयों का निवेश करके अपने चाईबासा क्लिंकरिंग एन्ड सीमेन्ट ग्रिंडिंग प्लान्ट के आधुनिकीकरण के लिए नीति के खंड 29.11 के निबंधनानुसार प्रोत्साहन प्रदान के लिए मुख्य सचिव, झारखंड सरकार से दिनांक 26.2.2003 के पत्र के तहत अनुरोध किया। तब यह प्रतीत होता है कि इसके चाईबासा क्लिंकरिंग एन्ड सीमेन्ट ग्रिंडिंग प्लान्ट के आधुनिकीकरण के लिए याची को सहायिकी एवं प्रोत्साहन देने के लिए दिनांक 17.5.2003 को सचिव (उद्योग) झारखंड सरकार को एक अन्य पत्र लिखा गया।

8. तत्पश्चात्, उद्योग विभाग, झारखंड सरकार ने इसके झिंकपानी इकाई के आधुनिकीकरण के लिए याची को निम्नलिखित प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए कैबिनेट के समक्ष प्रस्ताव लाया जो निम्नलिखित है:

क्रमांक	प्रावधान	देय राशि
A.	वाणिज्यिक उत्पादन के आरंभ होने की तिथि के बाद पूंजी निवेश प्रोत्साहन सहायिकी (मेमो सं॰ 1885 के पैरा 'ग' के मुताबिक)	15 करोड़ रुपया
B.	वाणिज्यिक उत्पादन के आरंभ होने से 11 वर्षों के लिए विद्युत शुल्क छूट (परियोजना आवेदन के आधार पर संगणित)	5.40 करोड़ रुपया
C.	वाणिज्यिक उत्पादन से 11 वर्षों के लिए ब्याज सहायिकी (एक करोड़ रुपया प्रतिवर्ष की अधिकतम सीमा तक)	11 करोड़ रुपया
D.	(चाईबासा और सिन्दरी) इकाई द्वारा 11 वर्षों तक अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि की महत्तम सीमा तक अगले वित्तीय वर्ष में भुगतान की जानेवाली पूंजी निवेश सहायिकी (मूल्यांकित)	
	कुल	82.6981 करोड़ रुपया

9. आगे यह कथन किया गया है कि कैबिनेट ने उद्योग विभाग के पूर्वोक्त प्रस्ताव को दिनांक 16.7.2003 की अपनी बैठक में इस शर्त के अध्यधीन अनुमोदित किया कि विक्रय कर पर प्रोत्साहन कंपनी द्वारा वस्तुतः भुगतान की गयी अतिरिक्त विक्रय कर की राशि पर निर्भर करेगा। यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार का निर्णय याची को उद्योग विभाग निदेशक द्वारा दिनांक 21.7.2003 के अपने (परिशिष्ट–6) के तहत संसूचित किया गया।

10. यह कथन किया गया है कि उद्योग विभाग से पूर्वोक्त पत्र पाने के बाद याची ने अपने झिंकपानी इकाई के आधुनिकीकरण में विपुल राशि का निवेश किया और अगले दो वर्षों में आधुनिकीकरण प्रक्रिया को पूरा किया था। यह कथन किया गया है कि आधुनिकीकरण का काम पूरा करने के बाद याची ने निरीक्षण के लिए इसके बारे में उद्योग विभाग को सूचित किया। यह कथन किया गया है कि तत्पश्चात उद्योग विभाग ने याची के काम का निरीक्षण करने के लिए कमिटी बनाया। पूर्वोक्त कमिटी ने निरीक्षण के बाद दिनांक 1.3.2006 के अपने पत्र सं॰ 529 के तहत रिपोर्ट दिया कि आधुनिकीकरण के बाद याची की इकाई ने दिनांक 9.8.2005 के प्रभाव से वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किया।

11. तत्पश्चात याची ने दिनांक 21.7.2003 के पत्र सं॰ 2318 के निबंधानानुसार पूंजी निवेश सहायिकी प्रदान करने के लिए दिनांक 3.3.2006 को आवेदन दाखिल किया। यह कथन किया गया है कि उद्योग विभाग ने याची को वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि से 10 वर्षों के लिए विद्युत ड्यूटी का भुगतान करने से छूट प्रदान किया जिसका लाभ याची ले रहा है। यह कथन किया गया है कि याची का पूंजी निवेश सहायिकी प्रदान करने के लिए आवेदन अनेक रिमाइंडरों और अनुरोधों के बावजूद पाँच वर्षों से अधिक तक के लिए लंबित रखा गया था। इससे विवश होकर याची ने अपनी पहली रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4633 वर्ष 2010 दाखिल किया।

12. पूर्वोक्त रिट याचिका में प्रत्यर्थी राज्य द्वारा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया जिसमें राज्य सरकार का दृष्टिकोण है कि याची की इकाई विद्यमान इकाई के रूप में प्रोत्साहन का पात्र है और न कि घाटे में चलने वाली विद्यमान और कार्यशील औद्योगिक इकाई के रूप में क्योंकि याची की इकाई वित्तीय वर्ष 2003-04 और 2004-05 के लिए अर्थात् वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि से विगत दो वर्षों से नगद घाटा उपगत नहीं कर रही थी।

13. याची द्वारा आगे कथन किया गया है कि निदेशक (उद्योग) ने दिनांक 20.5.2011 के अपने पत्र सं॰ 1162 के तहत निम्नलिखित नयी आपत्तियों को उठाया था:–

> *(d) pkbcklk fDydj lykUV] tk foLrkj.k@vkèkfudhdj.k d vèkhu g] çkRlkgu dk ik= g vkj u fd flnjh fxfMx lykUV] (b) fopkjkèkhu mRikn fDydj g u fd lheUV vkj (c) dj dh lerY; jkf'k dk fDydj d :i e lxf.kr dju dh vko';drk g ftld fy, nLrkoth lk{; l lE;d :i l lefFkr lh0 ,0 çek.ki= nkf[ky dju dh vko';drk gA*

यह कथन किया गया है कि याची ने राज्य सरकार द्वारा की गयी नयी आपत्तियों का विरोध करते हुए अभ्यावेदन दाखिल किया और दावा किया कि याची राज्य सरकार के निर्णय के मुताबिक प्रोत्साहन पाने का हकदार है। यह कथन किया गया है कि बाद में राज्य सरकार ने **विद्यमान उद्योगों** पर प्रयोज्य पूंजी निवेश प्रोत्साहन सहायिकी प्रदान किया जिसे याची ने विरोध के अधीन प्राप्त किया और दूसरी रिट आवेदन डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 5513 वर्ष 2011 दाखिल किया।

14. प्रतिशपथ पत्र में राज्य सरकार ने कथन किया कि प्रोत्साहन/सहायिकी प्रदान करने के लिए याची कंपनी का अनुरोध प्राप्त करने के बाद झारखंड के मुख्य सचिव की अध्यक्षता के अधीन गठित स्क्रीनिंग कमिटी द्वारा याची के आवेदन का संवीक्षण किया गया था। यह कथन किया गया है कि कमिटि

ने संपूर्ण विवाद्यक पर विचार करने के बाद निष्कर्षित किया कि याची की इकाई अपने वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि से विगत दो वर्षों से (2003-04 और 2004-05) नगद घाटा उपगत नहीं कर रही थी, अत: यह **घाटा में चलने वाली विद्यमान और कार्यशील औद्योगिक इकाई** नहीं है बल्कि यह **विद्यमान कार्यशील औद्योगिक इकाई** की कोटि के अंतर्गत आती है। तद्नुसार, स्क्रीनिंग कमिटि ने अनुशंसा किया कि याची की कंपनी विद्यमान कार्यशील इकाई, जो विस्तारण/आधुनिकीकरण कर रही है, पर प्रयोज्य सात करोड़ रुपयों की पूंजी निवेश सहायिकी की हकदार है। स्क्रीनिंग कमिटि की पूर्वोक्ता अनुशंसा को कैबिनेट द्वारा अनुमोदित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि याची की कंपनी ने झिंकपानी अवस्थित अपने क्लिंकर प्लान्ट के आधुनिकीकरण और प्रोत्साहन के लिए आवेदन दिया। इस प्रकार, याची चाईबासा इकाई द्वारा क्लिंकर के विक्रय के लिए सरकार को अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय-कर की ओर भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार है। यह कथन किया गया है कि याची चाईबासा इकाई द्वारा अथवा सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर इक्रीमेंटल विक्रय कर पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार नहीं है। तद्नुसार, यह कथन किया गया है कि याची को क्लिंकर पर इंक्रीमेंटल विक्रय पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने के लिए विवरण देने की आवश्यकता है ताकि इसे संगणित किया जा सके और याची को दिया जा सके।

15. याची की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री टी॰ आर॰ अंध्युरुजिना निवेदन करते हैं कि उद्योग विभाग का प्रतिवाद कि याची **विद्यमान कार्यशील औद्योगिक** इकाई के रूप में और न कि **घाटे में चलने वाली विद्यमान कार्यशील और औद्योगिक इकाई** के रूप में प्रोत्साहन पाने का हकदार है, संपोषणीय नहीं है। वह निवेदन करते हैं कि पूंजी निवेश प्रोत्साहनों और अन्य समस्त प्रोत्साहनों के रूप में लाभों की ग्राह्यता ऐसे प्रोत्साहनों के लिए आवेदन की तिथि पर विद्यमान तथ्यों के आधार पर विनिश्चित की जाएगी। वह निवेदन करते हैं कि ऐसे लाभों को आधुनिकीकरण के बाद वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि से ग्राह्य नहीं बनाया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि याची की झिंकपानी इकाई द्वारा औद्योगिक नीति के मुताबिक प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए आवेदन विगत पाँच वर्षों से नगद घाटा सहने वाली इकाई के रूप में था। इस प्रकार, याची की इकाई मेगा इकाईयों की कोटि 'III' अर्थात **घाटे में चलने वाली विद्यमान एवं कार्यशील औद्योगिक इकाई** की परिभाषा के अंतर्गत आती है। यह निवेदन किया गया है कि यदि प्रोत्साहन की ग्राह्यता वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ होने की तिथि पर विद्यमान तथ्यों से विनिश्चित की जाएगी, तब औद्योगिक नीति में अंतर्विष्ट संपूर्ण प्रावधान निरर्थक और अव्यवहार्य हो जाएँगे क्योंकि पात्र निर्धारिती आवेदन देने के समय पर अनभिज्ञ होगा कि क्या वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ होने के समय पर यह घाटा में चलने वाली कंपनी बनी रहेगा अथवा लाभ कमाने वाली कंपनी बन जाएगा। आगे यह निवेदन किया गया है कि निदेशक (उद्योग) ने दिनांक 21.7.2003 के अपने पत्र (परिशिष्ट 5) में कथन नहीं किया है कि यदि वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि पर इकाई का दर्जा घाटे में चलने वाली इकाई से लाभ कमाने वाली इकाई में परिवर्तित हो गया, तब घाटे में चलने वाली इकाई के रूप में याची को मंजूर किया गया लाभ उपलब्ध नहीं होंगे अथवा इन्हें उपांतरित किया जाएगा।

16. आगे यह निवेदन किया गया है कि सरकार का प्रतिवाद कि केवल क्लिंकर के विक्रय पर और न कि सीमेन्ट के विक्रय पर भुगतान किए गए करों के संबंध में प्रोत्साहन उपलब्ध होगा, मान्य नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि क्लिंकर बीच का उत्पाद है जिसे नगण्य मात्राओं के सिवाए सामान्यत: बेचा नहीं जाता है। सीमेन्ट ही दोनों इकाईयों का अंतिम उत्पाद है और बेचे जाने के लिए आशयित है। अत: इंक्रीमेंटल विक्रय कर की वापसी से जुड़ी पूंजी निवेश सहायिकी सीमेन्ट, जो याची की इकाई का

अंतिम उत्पाद है, के विक्रय पर प्रयोज्य है। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रोत्साहन के लिए आवेदन में याची ने कथन किया कि कैबिनेट ने चाईबासा क्लिंकर एण्ड ग्रिंडिंग प्लान्ट के आधुनिकीकरण के लिए ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट, झिंकपानी को प्रोत्साहन देने के लिए प्रस्तावों पर विचार किया। परिशिष्ट 6 से यह भी स्पष्ट है कि सरकार ने नीति के खंड 29.11 के मामले में विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण पर पूंजी नीति निवेश करने के लिए ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट, झिंकपानी को विशेष पैकेज मंजूर किया। दिनांक 21.7.2003 के मंजूरी पत्र (परिशिष्ट 6) में ऐसा कोई अनुबंध नहीं है कि विशेष पैकेज केवल क्लिंकर के लिए मंजूर किया गया बल्कि मंजूरी पत्र अनुबंधित करता है कि विशेष पैकेज ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट, झिंकपानी के लिए मंजूर किया गया था, तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि विक्रय कर पर आधारित प्रोत्साहन अंतिम उत्पाद अर्थात् सीमेन्ट पर याची की कंपनी को उपलब्ध है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि राज्य सरकार का प्रतिवाद कि याची सीमेन्ट के विक्रय पर अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान किए गए राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार नहीं है, भ्रामक है और अस्वीकार किए जाने का दायी है।

17. आगे यह निवेदन किया गया है कि इस आधार पर कि चाईबासा क्लिंकर प्लान्ट और न कि सिन्दरी प्लांट विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के अधीन था, राज्य सरकार का प्रतिवाद कि करों की वापसी चाईबासा प्लान्ट द्वारा उत्पादित सीमेन्ट के विक्रय पर इंक्रीमेंटल करों तक सीमित होगी, संपोषणीय नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि याची ने अपने समस्त अभ्यावेदनों में राज्य सरकार से चाईबासा में उत्पादित क्लिंकर से चाईबासा और सिंदरी दोनों प्लांटों में निर्मित सीमेन्ट के विक्रय पर विक्रय कर प्रोत्साहनों सहित विशेष प्रोत्साहनों को मंजूर करने का अनुरोध किया। तब यह निवेदन किया गया है कि उक्त अभ्यावेदन में यह कथन किया गया था कि विद्यमान चाईबासा निर्माण इकाई चाईबासा और सिंदरी दोनों इकाईयों के लिए क्लिंकर का एकमात्र स्रोत है। इस प्रकार, चाईबासा इकाई का आधुनिकीकरण चाईबासा और सिंदरी दोनों इकाईयों को जारी रखने के लिए आवश्यक था। यह निवेदन किया गया है कि चाईबासा और सिंदरी के सीमेन्ट निर्माण इकाईयों की उत्तर जीविता के लिए प्रस्ताव दिया गया था। यह निवेदन किया गया है कि उद्योग निदेशक ने याची के अभ्यावेदन पर विचार किया और चाईबासा तथा सिंदरी दोनों इकाईयों के लिए प्रोत्साहन प्रदान किया जिसे दिनांक 21.7.2003 के पत्र में उल्लिखित किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि केवल चाईबासा इकाई तक प्रोत्साहनों को निर्बंधित करने का प्रत्यर्थीगण का निर्णय वचन विवंध और/अथवा वैध प्रत्याशा के सिद्धांतों के विरुद्ध है। अत:, इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि राज्य सरकार द्वारा प्रदान किए गए अभिव्यक्त मंजूरी के आधार पर याची ने चाईबासा में अपने प्लान्ट के आधुनिकीकरण के लिए विपुल राशि का निवेश किया और इसकी अवस्था को परिवर्तित किया। अत:, अब राज्य सरकार को याची को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना पात्रता और अथवा वादा को उपांतरित करने की छूट नहीं है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि प्रोत्साहनों को मंजूर करने के लिए, जैसा इसने वादा किया था, प्रत्यर्थीगण/राज्य को उपयुक्त निर्देश जारी किया जाए।

18. दूसरी ओर, अपर महाधिवक्ता श्री अजित कुमार निवेदन करते हैं कि याची झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के आधार पर प्रोत्साहनों का दावा करता है। वह आगे निवेदन करते हैं कि औद्योगिक नीति के खंड 29.2 के अधीन यह स्पष्टत: उल्लिखित किया गया है कि प्रोत्साहन केवल उन इकाईयों के लिए ग्राह्य होंगे जो इस नीति के प्रभावशील बने रहने की अवधि के दौरान वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ करते हैं। वह आगे निवेदन करते हैं कि राज्य सरकार ने मेगा इकाईयों को प्रोत्साहन नियमावली के नियम 3.2 के अधीन यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि इस नियम के अधीन लाभ केवल उन इकाईयों को उपलब्ध होंगे जिन्होंने विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करने के बाद वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किया है। वह निवेदन करते हैं कि पूर्वोक्त नियमावली का नियम 3.3 दर्शाता है कि इन नियमों के अधीन

लाभ कमजोर और घाटा में चलने वाली इकाईयों को उपलब्ध होंगे जिन्होंने वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किया है। वह निवेदन करते हैं कि यह विवादित नहीं है कि याची की इकाई ने दिनांक 9.8.2005 को वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किया। तद्नुसार, इसने प्रोत्साहन/सहायिकी के लिए आवेदन दिया। यह निवेदन किया गया है कि याची के आवेदन का संवीक्षण किया गया था और यह पाया गया था कि इकाई का दर्जा घाटा में चलने वाली इकाई से लाभ कमाने वाली इकाई में परिवर्तित हो गया था, क्योंकि इकाई ने वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि (दिनांक 9.8.2005) से विगत दो वर्षों तक नगद घाटा उपगत नहीं किया था। यह निवेदन किया गया है कि तद्नुसार, मुख्य सचिव की अध्यक्षता के अधीन गठित स्क्रीनिंग कमिटी ने अनुशंसा किया कि याची की इकाई को **कोटि (II) उद्योग अर्थात् विद्यमान कार्यशील उद्योग और न कि कोटि (III) इकाईयों अर्थात् घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील इकाईयों पर** प्रयोज्य प्रोत्साहन सहायिकी दी जाए। यह निवेदन किया गया है कि तद्नुसार याची को प्रोत्साहन सहायिकी के रूप में सात करोड़ रुपया मंजूर किया गया। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची के अभ्यावेदन से यह स्पष्ट है कि याची झिंकपानी, चाईबासा स्थित अपने क्लिंकर प्लान्ट का आधुनिकीकरण करने का इच्छुक था। उक्त परिस्थिति के अधीन, याची क्लिंकर के विक्रय पर और न कि सीमेन्ट के विक्रय पर अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश प्रोत्साहन अथवा सहायिकी पाने का हकदार है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची स्वीकार करता है कि यह अपनी चाईबासा इकाई का आधुनिकीकरण/विविधकरण करना चाहता है। यह भी स्वीकृत अवस्था है कि सिंदरी इकाई का विविधकरण/आधुनिकीकरण नहीं किया गया था। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि झारखंड औद्योगिक नीति के खंड 22 के मुताबिक केवल चाईबासा इकाई प्रोत्साहन पाने की हकदार है। याची का दावा कि यह सिंदरी इकाई से उत्पादित सीमेन्ट के विक्रय पर इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार है, औद्योगिक नीति के विरुद्ध है, अत: यह अवैध है। विद्वान अपर महाधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह सुनिश्चित है कि विधि द्वारा निषिद्ध कृत्य करने के लिए राज्य सरकार को मजबूर करने के लिए वचन विवंध का अवलंब नहीं लिया जा सकता था। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि याची द्वारा दाखिल रिट आवेदन में गुणागुण नहीं है, अत: यह खारिज किए जाने का दायी है।

19. निवेदनों को सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख और दोनों पक्षों की ओर से दाखिल अनेक दस्तावेजों का परिशीलन किया है। पक्षों के अभिवचनों और उनकी ओर से किए गए परस्पर विरोधी प्रतिवादों से निम्नलिखित तीन बिंदु इन रिट आवेदनों में विनिश्चयकरण के लिए सामने आते हैं:–

(1) D;k ;kph fo|eku dk;'khy vk|kfxd bdkb (dkfV II bdkb) d :i e vFkok ?kkVk e pyu okyh fo|eku dk;'khy vk|kfxd bdkb (dkfV III bdkb) d :i e çkR lkgu@lgkf;dh dk ik= g

(2) D;k jkT; ljdkj dk vfHkopu fd ;kph doy fDydj d foØ; ij vkj u fd lheUV d foØ; ij dj vurk"k iku dk gdnkj g] lk"k.kh; g

(3) D;k ;kph pkbcklk vkj flnjh nkuk bdkb;k }kjk vFkok doy pkbcklk bdkb }kjk mRikfnr lheUV d foØ; ij vfrfjDr bØheVy foØ; dj d :i e jkT; ljdkj dk Hkxrku dh x;h jkf'k ij ith fuo'k lgkf;dh iku dk gdnkj g

20. <u>प्रश्न सं॰ 1 के संबंध में</u>

जैसा ऊपर गौर किया गया है, औद्योगिक नीति के खंड 29.11 के मुताबिक उन मेगा इकाईयों, जो 50 करोड़ रुपयों से अधिक का निवेश करने का आशय रखती हैं, के लिए विशेष पैकेज विरचित

किया गया है। नीति का खंड 22 उन मेगा इकाईयों से प्रोत्साहन विहित करता है जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करते हैं और यह कथन किया गया है कि उक्त औद्योगिक इकाई इंक्रीमेंटल उत्पादन पर निर्भर करते हुए नवस्थापित इकाई को दी जाने वाली इसी प्रकार का प्रोत्साहन को पाने का हकदार है। राज्य सरकार ने आदेश जारी करके, जैसा दिनांक 10.6.2003 के मेमो सं॰ 1885 में अंतर्विष्ट है, इकाईयों को तीन कोटियों में कोटिकृत किया है। **कोटि (I) नयी औद्योगिक इकाईयों से संबंधित है, कोटि (II) विद्यमान औद्योगिक इकाई से संबंधित है जो 50 करोड़ रुपयों से अधिक का पूंजी निवेश करके विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करना चाहते हैं जबकि कोटि (III) उन औद्योगिक इकाईयों से संबंधित है जो घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील औद्योगिक इकाईयाँ हैं।** यह कथन किया गया है कि औद्योगिक इकाईयाँ जो कार्यशील हैं किंतु विगत दो वर्षों से निरंतर नगद घाटा उपगत कर रही हैं, कोटि III औद्योगिक इकाई में आएँगी। यदि ऐसी औद्योगिक इकाईयाँ विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के बदले 50 करोड़ रुपयों से अधिक का निवेश करना चाहती है, वे औद्योगिक नीति के मुताबिक प्रोत्साहन पाने की हकदार हैं।

21. याची ने कोटि (III) मेगा औद्योगिक इकाई अर्थात् घाटा में चलने वाली विद्यमान और कार्यशील औद्योगिक इकाई पर प्रयोज्य प्रोत्साहनों के लिए परिशिष्टों 2, 3 और 4 के तहत आवेदनों को दाखिल किया। उन आवेदनों में याची ने कथन किया कि इसका चाईबासा क्लिंकर एन्ड सीमेन्ट ग्रिंडिंग प्लान्ट विगत 55 वर्षों से कार्यशील है और सीमेन्ट ग्रेड लाइम स्टोन की अल्प उपलब्धता के साथ अपनी पुरानी प्रौद्योगिकी और अलाभ-कर आकार के कारण अब वित्तीय रूप से जीवनक्षम/कारगर नहीं है। आगे यह कथन किया गया है कि पूर्वोक्त प्लान्ट विगत पाँच वर्षों से अधिक से भारी घाटा उपगत कर रहा है जिसने प्लान्ट के संचालन को परिसंकट में डाल दिया है। आगे यह कथन किया गया है कि याची इसके संकार्य को समर्थित करने के लिए नया 1.2 एम॰ टी॰ क्लिंकर प्लान्ट स्थापित करके और नया 15-20 एम॰ डब्ल्यू॰ कैप्टिव पावर प्लांट स्थापित करके लगभग 270 करोड़ रुपयों के पूंजी निवेश के माध्यम से अपनी चाईबासा इकाई का आधुनिकीकरण करना चाहता है। तद्नुसार, याची ने औद्योगिक नीति के खंड 29.11 के अधीन मेगा इकाईयों पर प्रयोज्य प्रोत्साहनों को मंजूर करने के लिए राज्य सरकार से अनुरोध किया। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि राज्य सरकार ने याची के प्रस्ताव पर विचार किया और कोटि (III) मेगा इकाईयों अर्थात् झारखंड राज्य के अत्यन्त पिछड़े क्षेत्र में अवस्थित घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील औद्योगिक इकाईयों को उपलब्ध विशेष पैकेज मंजूर किया।

22. यह प्रतीत होता है कि विशेष पैकेज की मंजूरी के बाद याची ने चाईबासा स्थित अपने क्लिंकर प्लान्ट के आधुनिकीकरण के लिए और कैप्टिव पावर प्लान्ट स्थापित करने के लिए 300 करोड़ रुपयों से अधिक का निवेश किया। आगे यह प्रतीत होता है कि तत्पश्चात दिनांक 9.8.2005 को वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ हुआ। यह भी प्रतीत होता है कि तत्पश्चात याची ने प्रोत्साहन/सहायिकी प्रदान करने के लिए आवेदन दाखिल किया जैसा मंजूरी आदेश (परिशिष्ट 6) में उल्लिखित किया गया है।

23. यह प्रतीत होता है कि राज्य सरकार याची के आवेदनों का संवीक्षण करने के बाद इस निष्कर्ष पर आयी कि इकाई ने वित्तीय वर्ष 2003-04 और 2004-05 के दौरान नगद घाटा उपगत नहीं किया था। इस प्रकार, इकाई का दर्जा घाटा में चलने वाली इकाई (कोटि III इकाई) से लाभ कमाने वाली इकाई (कोटि II इकाई) में परिवर्तित हो गया है। तद्नुसार, राज्य सरकार ने परिशिष्ट-6 में लिए गए अपने दृष्टिकोण को उपांतरित किया और विनिश्चित किया कि याची की इकाई मेगा औद्योगिक इकाई के कोटि (II) के अधीन और न कि कोटि (III) अर्थात **घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील इकाई** के अधीन आती है। राज्य सरकार का पूर्वोक्त निर्णय प्रथम दृष्टया गलत प्रतीत होता है।

24. मेरे दृष्टिकोण में, कोटि (II) अथवा कोटि (III) इकाई के रूप में विक्रय कर तथा अन्य प्रोत्साहनों को पाने के लिए अर्हता की निर्णायक तिथि विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के संबंध में राज्य सरकार को दी गयी सूचना की तिथि है। औद्योगिक नीति के परिशिष्ट–1 के खंड 8 में यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि विक्रय कर और अन्य प्रोत्साहनों के लिए अर्हित होने के लिए इकाई को विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करना चाहिए और विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करने के पहले उद्योग विभाग के संबंधित अधिकारी को पूर्व सूचना भेजना चाहिए। दिनांक 16.6.2003 के मेमो सं॰ 1885 में अंतर्विष्ट आदेश ने मार्गदर्शक सिद्धांतों को भी अधिकथित किया और यह उल्लिखित किया गया है कि औद्योगिक इकाईयों से प्राप्त प्रस्तावों को उक्त मार्गदर्शक सिद्धांत के अनुसार प्रसंस्कृत किया जाएगा। इस प्रकार, औद्योगिक इकाई जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण कर रही है को कोटिकृत करने के लिए यह देखना आवश्यक है कि क्या सूचना की तिथि पर उक्त इकाई घाटा में चलने वाली इकाई है अथवा लाभ कमाने वाली इकाई है। इस प्रकार, यदि सूचना की तिथि पर औद्योगिक इकाई विगत दो वर्षों से घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील इकाई है, तब यह मेगा औद्योगिक इकाई के कोटि (III) के अधीन आती है।

25. यदि राज्य सरकार का प्रतिवाद कि प्रोत्साहन की ग्राह्यता वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ किए जाने की तिथि पर विद्यमान तथ्यों पर निर्भर करेगी स्वीकार किया जाता है, तब कोटि (III) औद्योगिक इकाईयों को प्रोत्साहन देने के लिए बनाए गए संपूर्ण प्रावधान निरर्थक और अव्यवहार्य हो जाएँगे, क्योंकि कोई इकाई जो सूचना की तिथि पर कार्यशील है यह निर्धारित नहीं कर सकती थी कि क्या यह आधुनिकीकरण के बाद वाणिज्यिक उत्पादन आरंभ करने तक घाटा में चलने वाली इकाई बनी रहेगी या नहीं? इसके अतिरिक्त, दिनांक 16.6.2003 के मेमो सं॰ 1885 में अंतर्विष्ट आदेश के अनुसार राज्य सरकार विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण की सूचना की प्राप्ति पर किसी औद्योगिक इकाई को प्रोत्साहन अथवा सहायिकी प्रदान करने पर विचार करेगी और इसे प्रसंस्कृत करेगी। उक्त परिस्थिति के अधीन, उद्योग का कोटि करण केवल उस तिथि पर किया जा सकता है जिस पर उद्योग ने विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करने के लिए सूचना दिया। इस मामले में भी, सरकार ने ऐसा ही किया और परिशिष्ट–6 के तहत प्रोत्साहन और सहायिकी को वर्ष 2003 में मंजूर किया।

26. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, याची की इकाई का दर्जा घाटा में चलने वाली इकाई से लाभ कमाने वाली इकाई में परिवर्तित करने की राज्य सरकार की कार्रवाई सही नहीं है, क्योंकि विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण की सूचना की तिथि पर याची की इकाई घाटा में चलने वाली इकाई थी क्योंकि इसने विगत पाँच वर्षों से नगद घाटा उपगत किया था। इस प्रकार, मैं अभिनिर्धारित करता हूँ कि याची की इकाई कोटि (III) मेगा औद्योगिक इकाई अर्थात् घाटा में चलने वाली विद्यमान कार्यशील औद्योगिक इकाई के रूप में पूंजी निवेश प्रोत्साहन सहायिकी पाने की हकदार है।

27. <u>प्रश्न सं॰ 2 के संबंध में</u>

परिशिष्टों 2, 3 और 4 में अंतर्विष्ट याची के आवेदन प्रकट करते हैं कि याची ने चाईबासा क्लिंकर एन्ड सीमेन्ट ग्रिंडिंग प्लान्ट का आधुनिकीकरण करने के लिए प्रोत्साहन/सहायिकी के लिए प्रार्थना किया। परिशिष्ट 2 आगे प्रकट करता है कि याची ने चाईबासा सीमेन्ट प्लान्ट में उत्पादित क्लिंकरों से निर्मित सीमेन्ट पर विक्रय कर तथा अन्य प्रोत्साहनों से छूट के लिए प्रार्थना किया। कैबिनेट के समक्ष प्रस्तुत प्रस्ताव (परिशिष्ट 5) से छूट के लिए प्रार्थना किया। कैबिनेट के समक्ष प्रस्तुत प्रस्ताव (परिशिष्ट 5) के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि कैबिनेट ने ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट झिंकपानी के विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के लिए विशेष पैकेज पर विचार किया और इसे अनुमोदित किया। तत्पश्चात्, उद्योग निदेशक ने दिनांक 21.7.2003 के अपने पत्र सं॰ 2318 के तहत विशेष पैकेज मंजूर किया जैसा ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट

झिंकपानी के विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण के लिए उक्त पत्र में उल्लेख किया गया है। उक्त पत्र में, यह कहीं नहीं उल्लिखित किया गया है कि ए॰ सी॰ सी॰ सीमेन्ट झिंकपानी इकाई को मंजूर पैकेज क्लिंकर तक सीमित है और यह सीमेन्ट पर प्रयोज्य नहीं होगा। यह स्वीकृत अवस्था है कि चाईबासा स्थित याची की इकाई का अंतिम उत्पाद क्लिंकर से निर्मित सीमेन्ट है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, राज्य सरकार का प्रतिवाद कि याची क्लिंकर के विक्रय पर और न कि सीमेन्ट के विक्रय पर विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान की गयी राशि पर प्रोत्साहन का हकदार है, एतद् द्वारा अस्वीकार किया जाता है। तद्नुसार, मैं निष्कर्षित करता हूँ कि याची क्लिंकर और सीमेन्ट पर इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार है।

28. <u>प्रश्न सं॰ 3 के संबंध में</u>

जैसा उपर गौर किया गया है, औद्योगिक इकाई, जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती है, झारखंड औद्योगिक नीति, 2001 के खंड 22 के अनुसार प्रोत्साहन पाने की हकदार है। औद्योगिक नीति का खंड 22 निम्नलिखित है:–

foLrkj.k@fofoèkdj.k@vkèkfudhdj.k dju okyh bdkbZ%

doy mud foLrkj.k@fofoèkdj.k@vkèkfudhdj.k d dkj.k mud bØheVy mRiknu d lcèk e , lh bdkbZ;k d lkFk u;h bdkbZ;k d :i e ln'k 0;ogkj fd;k tk,xkA , lh bdkbZ;k] tk ifjf'k"V e fn, x, foLrkj.k@fofoèkdj.k@vkèkfudhdj.k dh ifjHkk"kk }kjk vkPNkfnr g] dk Lohdk; , l leLr çkRlkgu çnku fd, tk,xA

इस प्रकार, नीति के खंड 22 के मुताबिक, केवल ऐसी इकाई, जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती है, को प्रोत्साहन स्वीकार्य है।

स्वीकृत रूप से, याची की सिंदरी इकाई में विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण नहीं किया गया है।

29. यह सत्य है कि दिनांक 21.7.2003 के मंजूरी आदेश (परिशिष्ट–6) में यह उल्लिखित किया गया है कि इकाई (चाईबासा और सिंदरी) द्वारा 11 वर्षों तक सरकार को अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय–कर के रूप में भुगतान की गयी राशि की महत्तम सीमा तक अगले वित्तीय वर्ष में भुगतान की जानेवाली पूंजी निवेश सहायिकी ने प्रावधानित करता है कि उक्त राशि कंपनी द्वारा वास्तविक रूप से भुगतान किए गए अतिरिक्त विक्रय कर पर निर्भर करेगी।

30. पूर्वोक्त अनुबंध की दृष्टि में, याची के विद्वान अधिवक्ता श्री टी॰ आर॰ अंध्युरुजिना निवेदन करते हैं कि याची ने इस वैध प्रत्याशा के अधीन अपने चाईबासा प्लान्ट के आधुनिकीकरण में विपुल राशि उपगत किया था कि यह चाईबासा इकाई और सिंदरी इकाई से सीमेन्ट के विक्रय पर इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पायेगा। अत:, राज्य सरकार वचन विवंध के सिद्धांत पर अपने वादा से बाध्य है और चाईबासा तथा सिंदरी इकाईयों द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर विक्रय कर के रूप में राज्य सरकार को भुगतान की गयी राशि पर पूर्वोक्त प्रोत्साहन निर्मुक्त करने की दायी है। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में श्री टी॰ आर॰ अंध्युरुजिना के पूर्वोक्त प्रतिवाद को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

31. यह सुनिश्चित है कि सरकार अपना वादा परिपूर्ण करने के लिए बाध्य है यदि वचनग्रहीता ने इस पर विश्वास करके अपनी स्थिति परिवर्तित करता है। यह भी समान रूप से सुनिश्चित है कि विधि द्वारा निषिद्ध कृत्य करने के लिए सरकार को अथवा निजी पक्ष को भी मजबूर करने के लिए वचन विवंध का अवलंब नहीं लिया जा सकता है। इस संबंध में **''मेसर्स मोतीलाल पदमपत चीनी मिल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य'', 1979 (2) SCC 409** को निर्दिष्ट किया जा सकता है।

32. वर्तमान मामले में, जैसा ऊपर गौर किया गया है, झारखंड औद्योगिक नीति के खंड 22 के अनुसार केवल वे इकाईयाँ प्रोत्साहन पाने की हकदार है जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती हैं। स्वीकृत रूप से ए॰ सी॰ सी॰ लिमिटेड की सिंदरी इकाई में कोई विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण नहीं किया गया है। उक्त परिस्थितियों के अधीन, सिंदरी इकाई परिशिष्ट–6 में अंतर्विष्ट वादा के आधार पर प्रोत्साहन और/अथवा सहायिकी का दावा नहीं कर सकती है जो विधि औद्योगिक नीति के विरुद्ध है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, राज्य सरकार को वचन विवंध के आधार पर सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर याची को पूंजी निवेश सहायिकी देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि उक्त मांग और/अथवा राज्य सरकार द्वारा वादा औद्योगिक नीति के विरुद्ध है।

33. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **बन्नारी अन्यन सुगर्स लि॰ बनाम वाणिज्य कर अधिकारी एवं अन्य, 2005 (1) SCC 625,** में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *^^fdlh 0;fDr dk ç'kklfud çkfèkdkjh }kjk dfri; rjhd l 0;ogkj fd, tku dh ^^oèk çR;k'kk** gk ldrh g ;|fi ,lk 0;ogkj fd, tku d fy, çkboV fofèk e mld ikl fofèkd vfèkdkj ugh gA çR;k'kk foof{kr 0;in'ku lfgr çkfèkdkjh }kjk fd, x, çfrfufèkRo vFkok oknk l vFkok fujrj foxr çFkk l mnHkr gk ldrh gA oèk çR;k'kk dk fl)kr U;kf;d iufoykdu dh fofèk fodflr dju e egRoi.k LFkku j[krk gA fdr bl ekey e bl fl)kr dk [kktuk vko';d ugh g] bruk xkj ek= djuk i;klr g fd oèk çR;k'kk fdlh dk l{ke cuku d fy, i;klr fgr çnku dj ldrh g tk U;kf;d iufoykdu d fy, vkonu nu d fy, U;k;ky; dh vuefr çklr dju d fy, lkjoku@vfèk"Bk;h vfèkdkj dk bfxr ugh dj ldrk gA blij lkekU; lgefr g fd ^^oèk çR;k'kk** vkond dk U;kf;d iufoykdu d fy, i;klr vfèkdkj nrh g vkj fd oèk çR;k'kk dk fl)kr fu.k;] ftldk ifj.kke oknk udkju vFkok opu oki l yu e gkrk g] yu d igy fu"i{k luokb d vfèkdkj rd e[;r% lhfer fd;k tkuk gA fl)kr ç'kklfud çkfèkdkfj;k l lhèk rkj ij vurk"k dk nkok dju dh xtkb'k ugh nrk g D;kfd dkb fuf'pr :i dk vfèkdkj vrxLr ugh gA ,lh oèk çR;k'kk dk lj{k.k çR;k'kk dk ifji.k fd;k tkuk vko';d ugh cukrk g tgk vè;kjkgh ykdfgr vU;Fkk vko';d cukrk gA nlj 'kCnk e] tgk dkb fu.k; fo'k"k ydj 0;fDr dh oèk çR;k'kk dk ifji.k ugh fd;k tkrk g] rc fu.k; yu okyk fdlh vè;kjkgh ykd fgr dk n'kkdj ,lh çR;k'kk l budkj dk U;k;kfpr Bgjk ldrk gA***

34. इस प्रकार, वैध प्रत्याशा के आधार पर व्यक्ति प्रशासनिक प्राधिकारी, जो अपने वादा से मुकर जाता है, की कार्रवाई के न्यायिक पुनर्विलोकन का दावा कर सकता है। व्यक्ति वैध प्रत्याशा के सिद्धांत के आधार पर प्रशासनिक प्राधिकारी से सीधे तौर पर अनुतोष का दावा नहीं कर सकता है। वह केवल यह दावा कर सकता है कि प्राधिकारी, जिसने वादा नकारने का निर्णय लिया, को उसे निष्पक्ष सुनवाई का अवसर देना चाहिए।

35. वर्तमान मामले में, जैसा उपर गौर किया गया है, याची जानता है कि औद्योगिक नीति के अनुसार केवल वे इकाईयाँ विक्रय कर के भुगतान पर प्रोत्साहन पाने की हकदार हैं जो विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण करती हैं। परिशिष्ट 9 के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि राज्य सरकार ने याची को यह स्पष्ट करने के लिए लिखा था कि किस प्रकार यह सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय

पर राज्य सरकार को अतिरिक्त विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर सहायिकी का दावा करता है क्योंकि चाईबासा क्लिंकर प्लान्ट ने और न कि सिंदरी ग्रिंडिंग प्लान्ट ने विस्तारण/विविधकरण/आधुनिकीकरण किया है और प्रोत्साहन का पात्र है। यह प्रतीत होता है कि याची ने पूर्वोक्त पत्र (परिशिष्ट 9) का उत्तर दिया। उक्त परिस्थिति के अधीन, वादा न करने के लिए निर्णय लेने से पहले निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार याची को दिया गया है।

36. पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों में, चूँकि सिंदरी इकाई को विक्रय कर पर पूर्वोक्त प्रोत्साहन का भुगतान करने का वादा औद्योगिक नीति के विरुद्ध है, याची वैध प्रत्याशा के सिद्धांत के आधार पर इसका दावा नहीं कर सकता है। तद्नुसार, याची की ओर से किया गया पूर्वोक्त प्रतिवाद एतद् द्वारा अस्वीकार किया जाता है। उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं अभिनिर्धारित करता हूँ कि याची सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर सरकार को अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय के रूप में भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार नहीं है। याची केवल चाईबासा इकाई द्वारा सिमेन्ट और क्लिंकर के विक्रय पर अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर पूर्वोक्त पूँजी निवेश सहायिकी पाने का हकदार है।

37. परिणामस्वरुप, इन रिट आवेदनों को अंशत: अनुज्ञात किया जाता है। राज्य सरकार को याची को इसे घाटा में चलनेवाली विद्यमान कार्यशील मेगा औद्योगिक इकाई के रूप में मानते हुए पूंजी निवेश सहायिकी का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है जैसा इसके द्वारा परिशिष्ट-6 में वादा किया गया है। राज्य सरकार को आगे चाईबासा इकाई द्वारा बनाए गए सीमेन्ट और क्लिंकर के विक्रय पर सरकार को अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर याची को पूंजी निवेश सहायिकी देने का निर्देश दिया जाता है। इसकी सिंदरी इकाई द्वारा सीमेन्ट के विक्रय पर सरकार को अतिरिक्त इंक्रीमेंटल विक्रय कर के रूप में भुगतान की गयी राशि पर पूंजी निवेश सहायिकी प्रदान करने की याची की प्रार्थना अस्वीकार की जाती है। याची को अपनी चाईबासा इकाई द्वारा क्लिंकर और सीमेन्ट के विक्रय पर भुगतान किए गए इंक्रीमेंटल विक्रय कर पर पूंजी निवेश सहायिकी के लिए विहित फॉर्म में आवेदन दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है। राज्य सरकार को याची द्वारा विहित फॉर्म में दाखिल किए गए आवेदन की तिथि से तीन माह के भीतर याची को पूर्वोक्त सहायिकी देने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

बिनोद भूइयाँ

cuke

बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ एवं अन्य

Civil Review No. 4 of 2012. Decided on 17th October, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ–वर्ष 2006 में उच्च न्यायालय ने इस प्रभाव का आदेश पारित किया था कि अनुकंपा के आधार पर अपनी नियुक्ति के लिए याची का दावा मान्य नहीं है–इस प्रकार, तत्पश्चात दिया गया कोई निर्णय आदेश के पुनर्विलोकन का विषय वस्तु नहीं हो सकता–पुनर्विलोकन आवेदन खारिज।

(पैराएँ 4 से 7)

निर्णयज विधि.–(2007) 8 SCC 549—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. S.P. Sinha, For the Petitioner; None, For the B.C.C.L.

आदेश

यह पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल करके दिनांक 14.7.2011 के आदेश, जिसके अधीन याची सं॰ 2 बिनोद भुइयाँ को लाइव रोस्टर पर रखने के लिए बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ को निर्देश देने के लिए प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी, का पुनर्विलोकन इप्सित किया गया है।

2. कथन किया जाए कि रिट याचिका दाखिल की गयी थी जिसमें याचीगण द्वारा दो प्रार्थनाएँ की गयी थी। एक अनुकंपा आधार पर याची सं॰ 2 की नियुक्ति से संबंधित थी क्योंकि याची सं॰ 2 के पिता की कार्यरत रहते हुए मृत्यु हो गयी थी। दूसरी प्रार्थना मृत्यु-सह-सेवा निवृत्ति लाभ से संबंधित थी।

3. जहाँ तक अनुकंपा आधार पर याची सं॰ 2 की नियुक्ति से संबंधित प्रार्थना का संबंध था, उसे इस न्यायालय द्वारा मान्य नहीं पाया गया था। उसके बावजूद जब द्वितीय अनुतोष के प्रदान के संबंध में मामले पर बाद में विचार किया गया था, अंतर्वर्ती आवेदन सं॰ 1391 वर्ष 2009 दाखिल किया गया था जिसमें याची को अभिवचन तथा रिट आवेदन के प्रार्थना अंश को संशोधित करने की अनुमति देने की प्रार्थना की गयी थी कि उसके वयस्कता प्राप्त करने तक याची सं॰ 2 को लाइव रोस्टर पर रखने का निर्देश दिया जाए। उस अंतर्वर्ती आवेदन को भी इस कारण से अस्वीकार किया गया था कि ऐसी प्रार्थना अनुज्ञात करना उस आदेश, जिसके द्वारा अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए याची सं॰ 2 दावा मान्य नहीं पाया गया था, के पुनर्विलोकन के तुल्य होगा।

4. उस आदेश के विरुद्ध, याची ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 343 वर्ष 2011 के तहत अंतरा-न्यायालय अपील दाखिल किया जिसे दिनांक 7.12.2011 के आदेश के तहत याची को इस न्यायालय के समक्ष विवाद्यक उठाने का निर्देश देते हुए निपटाया गया था।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सिन्हा निवेदन करते हैं कि **मोहन महतो बनाम सी॰ सी॰ एल॰ एवं अन्य, (2007)8 SCC 549,** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में न्यायालय को बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ को याची का नाम लाइव रोस्टर पर रखने का निर्देश देना चाहिए था।

6. कथन किया जाए कि इस न्यायालय ने दिनांक 20.11.2006 के आदेश के तहत इस प्रभाव का आदेश पारित किया था कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए याची सं॰ 2 का दावा मान्य नहीं है। उस स्थिति में तत्पश्चात दिया गया कोई निर्णय आदेश के पुनर्विलोकन का विषय वस्तु नहीं हो सकता है।

7. तद्नुसार, मैं इस पुनर्विलोकन आवेदन में कोई गुणावगुण नहीं पाता हूँ और इसलिए, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

यज्ञानन्द पाठक

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 3274 of 2006. Decided on 18th October, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

विद्यालय विधि–वेतन–माध्यमिक विद्यालय शिक्षक–एक दशक की अवधि के बाद न्यायालय के पास आने में याची का आचरण स्पष्ट उपदर्शन देता है कि उसे पद पर विधितः

नियुक्त नहीं किया गया था–याची न्यूनतम शैक्षणिक अर्हता नहीं रखता है–याची की प्रार्थना प्रदान नहीं की जा सकती है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 10 से 12)

निर्णयज विधि.–AIR 1988 SC 305—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s Kanti Kumar Ojha, Rakesh Kumar, For the Petitioner; Mr. Abhijeet Kumar Singh, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–याची निम्नलिखित अनुतोषों को इप्सित करते हुए इस न्यायालय के पास आया है:–

(i) tuojh 1996 l n; oru d cdk;k d rjUr Hkxrku d fy, çR;Fkhx.k fo'k"kr% çR;Fkh l0 4 dk vkn'k nu d fy,

(ii) ;kph] ft l fnukd 6.1.1996 dk etj in d fo#) th0 b0 ,y0 mPp fo|ky;] dkpnxk dh çcèku dfeVh }kjk fu;Dr fd;k x;k g] dh fu;fDr vuekfnr dju d fy, çR;Fkhx.k dk fun'k nu d fy,A

(iii) fun'kd ¼ekè;fed f'k{kk½ >kj[kM] jkph d gLrk{kj d vèkhu tkjh fnukd 10.5.2010 d i= l0 2610 rFkk fun'kd ekè;fed f'k{kk >kj[kM d gLrk{kj d vèkhu tkjh fnukd 2.2.2011 d i= l0 370 dk vfHk[kfMr dju d fy, vkj ekU;rk çkIr fo'ofo|ky; l mld f'k{kd çf'k{k.k e mÙkh.k gku dh frfFk vkj mldh fu;fDr dh frfFk l mldh fu;fDr dk vuknu çnku dju d fy,A

2. रिट याचिका में प्रकट किए गए मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची को जी॰ ई॰ एल॰ उच्च विद्यालय, कोचेडेगा, सिमडेगा की शासी निकाय द्वारा लिए गए दिनांक 5.1.1996 के अनुसरण में दिनांक 10.1.1996 को सहायक शिक्षक के पद पर नियुक्त किया गया था। यह कथन किया गया है कि उक्त विद्यालय को वर्ष 1979 में ही मान्यता दी गयी थी और नौ अनुमोदित पद थे। दिनांक 15.12.1995 को विज्ञापन जारी किया गया था और याची उपस्थित हुआ था और उक्त चयन प्रक्रिया के अनुसरण में याची को उक्त विद्यालय में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था।

3. चूँकि याची की नियुक्ति के अनुमोदन का मामला राज्य प्राधिकारियों के पास लंबित पड़ा रहा और याची को वेतन का भुगतान नहीं किया गया था, दिनांक 21.6.2006 को याची पूर्वोक्त प्रार्थना के साथ वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया।

4. इस बीच, दिनांक 28.9.2007 को लिए गए निर्णय के अनुसरण में याची की सेवा अनुमोदित नहीं की गयी थी। अंतर्वर्ती आवेदन दाखिल करके याची द्वारा उक्त निर्णय को आक्षेपित किया गया था जिसे दिनांक 16.1.2012 के आदेश द्वारा अनुज्ञात किया गया था। पक्षों की ओर से प्रतिशपथ पत्र, प्रत्युत्तर शपथ पत्र और पूरक शपथ पत्र दाखिल किया गया है।

5. यह विनिर्दिष्ट अभिवचन करते हुए प्रत्यर्थी झारखंड राज्य द्वारा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है कि विद्यालय, जिसमें याची को अभिकथित रूप से सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था, मान्यता प्राप्त नहीं था और वस्तुत: इसे केवल दिनांक 28.9.2007 को अल्पसंख्यक संस्थान के रूप में मान्यता दिया गया था। आगे अभिवचन किया गया है कि दिनांक 5.11.2004 को अधिसूचना जारी की गयी थी जिसके अधीन माध्यमिक विद्यालय शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए पात्रता मापदंड विहित किया गया था और चूँकि याची अर्हता नहीं रखता है, उसकी सेवा को मान्यता नहीं दी गयी थी और इस प्रकार प्रत्यर्थी झारखंड राज्य द्वारा याची की प्रार्थना का प्रतिरोध किया गया था।

6. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दिनांक 10.1.1996 को याची की नियुक्ति के बाद मामला राज्य प्राधिकारियों के पास लंबित पड़ा रहा यद्यपि विद्यालय प्राधिकारी द्वारा आवश्यक कदम उठाए गए थे। जिला शिक्षा अधिकारी द्वारा पत्र लिखे गए थे किंतु सहायक शिक्षक के रूप में याची की नियुक्ति को अनुमोदन प्रदान करने का मामला निष्कर्षित नहीं किया जा सका था और इसलिए, याची को वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आना पड़ा था। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि झारखंड राज्य के सृजन के बाद वर्ष 2004 में भरती नियमावली अस्तित्व में आयी और इसलिए नियमावली, जो याची की नियुक्ति के समय पर प्रयोज्य थी, सहायक शिक्षक के पद पर याची की नियुक्ति के लिए पात्रता निर्णीत करते हुए याची के मामले पर प्रयोज्य होगी। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि दिनांक 2.2.2011 के आक्षेपित आदेश में लिया गया एक मात्र आधार कि याची ने तृतीय श्रेणी में बी॰ एड॰ डिग्री अर्जित किया था, इस तथ्य की दृष्टि में न्यायोचित नहीं है कि उस समय पर जब याची को नियुक्त किया गया था, न्यूनतम शैक्षणिक पात्रता मापदंड केवल स्नातक होना था।

8. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने **''ऑल बिहार क्रिश्चियन स्कूल्स एसोसियेशन बनाम बिहार राज्य''**, **AIR 1988 SC 305** मामले पर विश्वास किया है जिसमें अभिनिर्धारित किया गया है:–

"13. èkkjk 18 (3) çkoèkkfur djrh g fd ekU;rk çkIr vYil[;d ekè;fed fo|ky;k dk [kMk (a) l (k) e vrfo"V çkoèkkuk d vu#i çcfèkr vkj fu;f=r fd;k tk,xkA [kM (a) vYil[;d ekè;fed fo|ky; d fy, lkIkbVh jftLV'ku vfèkfu;e] 1860 d vèkhu jftLVM çcèku dfefV gkuk vko';d cukrk gA çcèku dfeVh d lcèk e mifofèk;k dk Lo; vYil[;d lLFkku }kjk fojfpr fd, tku dh vko';drk gA jkT; vFkok fdlh vU; çkfèkdkjh dk çcèku dfeVh d xBu d fy, fdlh fucèku vFkok 'kr dk vfèkjkfir dju dh 'kfDr vFkok çkfèkdkj ugh gA ;fn vYil[;d lLFkku dk pyku okyh lkIkbVh viu fo|ky; dk pyku vkj ç'kklr dju d dk; l U;Lr çcèku dfeVh dk xBu çkoèkkfur djr g, fyf[kr mifofèk;k dk fojfpr djrh g] ;g çHkko'khy ç'kklu lfuf'pr djxhA ;g [kM Lo; vYil[;d lLFkku d fgr e g D;kfd çcèku dfeVh d lnL; d :i e dkb ckgjh 0;fDr vfèkjkfir ugh fd;k tkrk g] vr% viu fo|ky; dk ç'kklr dju d vYil[;d d vfèkdkj e gLr{ki ugh gA [kM (b) nk phtk dk çkoèkkfur djrk gA çFker% ;g vè;if{kr vgrk] tlk jkT; ljdkj }kjk vU; jk"Vh;Ñr fo|ky;k d f'k{kdk dh fu;fDr d fy, fofgr fd;k x;k g] j[ku oky f'k{kdk dh fu;fDr vYil[;d fo|ky; dh çcèku dfeVh d fy, vko';d cukrk g(f}rh;r%] çcèku dfeVh dk vfèkfu;e dh èkkjk 10 d vèkhu xfBr fo|ky; lok fy, vko';d cukrk g(f}rh;r% çcèku dfeVh dk vfèkfu;e dh èkkjk 10 d vèkhu xfBr fo|ky; lok ckM dh lgefr d lkFk f'k{kd dh fu;fDr dju dh vko';drk gA [kM (b) dk ijUrd vfèkdfFkr djrk g fd f'k{kd dh fu;fDr dk vueknu çnku dju d ç'u ij fopkj djr g, fo|ky; lok ckM vfHkfuf'pr djxk fd D;k fu;fDr vgrk vfèkdfFkr dju oky fu;ek vkj jkT; ljdkj }kjk fojfpr fu;fDr dju d rjhd d vu#i gA ijUrd ;g Li"V djrk g fd fo|ky; lok ckM dk f'k{kd dh fu;fDr e vYil[;d fo|ky; dh çcèku dfeVh d vfèkdkj e gLr{ki dju dh 'kfDr ugh gA [kM (b) d vèkhu

çcèku dfeVh dk fo|ky; lok ckM dh lgefr l f'k{kd dh fu;fDr dju dh vko';drk gA vfHk0;fDr ^lgefr* l vfHkçr g vueknuA ,l vueknu dh io vueknu gku dh vko';drk ugh g D;kfd [kM fdlh io vueknu dk çkoèkkfur ugh djrk gA [kM (b) dk j[kkfdr dju okyk mí'; vkj ç;ktu ;g lfuf'pr djuk g fd vYil[;d fo|ky; e fu;Dr f'k{kd vè;if{kr vgrk j[kr g vkj mUg fofgr çfØ;k d vu#i fu;Dr fd;k x;k g vkj fu;fDr etj ink ij dh x;h gA f'k{kdk dk p;u vkj fu;fDr vYil[;d fo|ky; d çcèku ij NkM fn;k x;k g] lLFkku d çcèkdh; vfèkdkjk e gLr{ki ugh gvk gA vueknu çnku dju e fo|ky; lok ckM d ikl lhfer 'kfDr gA vYil[;d fo|ky; e vfgr f'k{kdk dh fu;fDr 'k{kf.kd Lrj çkIr dju vkj lLFkku d cgrj ç'kklu d fy, vfuok; gA [kM (b) vYil[;d fo|ky; e mRÑ"Vrk lfuf'pr dju d fy, fofu;kRed çÑfr dh gA [kM (c) viu f'k{kdk dh lok 'krk dk fofu;fer dju oky fu;ek dk fojfpr djuk vYil[;d fo|ky; d fy, vko';d cukrk gA ,l fu;e ulfxd U;k; d fl)krk rFkk ipfyr fofèk d vu:i gku pkfg,A fofèk ,lh fu;ekoyh dh ,d ifr jkT; ljdkj dk iLrr dju dh Hkh vi{kk vYil[;d lLFkkuk l djrh gA

;g [kM lkjr% vfèkdfFkr djrk g fd ekU;rk çkIr vYil[;d fo|ky; dk çcèku f'k{kdk dh lok 'krk dk fofu;fer dju okyh fu;ekoyh fojfpr djxk vkj ,l fu;e ulfxd U;k; d fl)krk vkj çpfyr fofèk d lkFk lxfr e gkxA ;s çkoèkku 'kfDr d eueku ç;kx vkj vfuf'prrk l cpu d fy, funf'kr gA ;fn çcèku }kjk fu;ekoyh fojfpr dh tkrh g] o fu;e ç'kklu e ,d:irk yk,x vkj f'k{kdk dk fu;ktu ljf{kr gkxkA lH; lekt e ulfxd U;k; d fl)krk dk ikyu LohÑr fu;e g(; fl)kr fu"i{krk vkj U;k; d ey fu;ek dk vrfo"V djr g vkj vc ;g çfrokn ugh fd;k tk ldrk g fd çcèku dk ulfxd U;k; d fl)kr d mYy?ku e ÑR; dju dk vfèkdkj gkuk pkfg, FkkA [kM (c) fofu;kRed çÑfr dk g tk ulfxd U;k; d fl)kr vkj çpfyr fofèk d lkFk lxr fu;ktu d fu;ek dk fojfpr djuk çcèku dfeVh d fy, vko';d cukrk gA f'k{kdk d fu;ktu d fu;ek dk fojfpr dju d fy, fdlh ckgjh ,tUlh dh vko';drk ugh g(bld ctk,] Lo; çcèku fu;ek dk fojfpr dju d fy, l'kDr gA vr% vYil[;d fo|ky; dk ç'kkflr dju d fy, çcèku d vfèkdkj e gLr{ki dju dk rRo ugh gA**

9. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रति शपथ पत्र में अपनाए गए दृष्टिकोण को दोहराया और निवेदन किया कि चूँकि विद्यालय को केवल दिनांक 28.9.2007 को अल्पसंख्यक दर्जा प्रदान किया गया था, दिनांक 10.1.1996 से वेतन के भुगतान की प्रार्थना उद्भूत नहीं होगी क्योंकि यह झारखंड राज्य का दायित्व नहीं होगा। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि दिनांक 5.11.2004 की अधिसूचना द्वारा माध्यमिक विद्यालय शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए न्यूनतम अर्हता विहित की गयी है और यह याची पर बाध्यकारी होगी और चूँकि याची ऐसी अर्हता नहीं रखता है, उसकी नियुक्ति को प्राधिकारी द्वारा सही प्रकार से अनुमोदित नहीं किया गया था।

10. मैं पाता हूँ कि यद्यपि याची ने दावा किया है कि उसे दिनांक 10.1.1996 को नियुक्त किया गया था, रिट याचिका केवल दिनांक 21.6.2006 को दाखिल की गयी थी और इस प्रकार, 10 वर्षों से अधिक के लिए वेतन के बिना अभिकथित रूप से सेवा में बना रहा। मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची की अभिकथित नियुक्ति अवैध थी। एक दशक के बाद इस न्यायालय के पास आने में याची का आचरण स्पष्ट उपदर्शन देता है कि उसे पद पर विधित: नियुक्त नहीं किया गया था जैसा उसने वर्तमान रिट याचिका में दावा किया है। इसके अतिरिक्त, प्रतिशपथ पत्र में झारखंड राज्य द्वारा लिए गए विनिर्दिष्ट दृष्टिकोण की दृष्टि में कि याची न्यूनतम शैक्षणिक अर्हता नहीं रखता है और चूँकि प्रश्नगत विद्यालय को दिनांक 28.9.2007 को अल्पसंख्यक दर्जा दिया गया था, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची की प्रार्थना स्वीकार नहीं की जा सकती है।

11. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **''ऑल बिहार क्रिश्चियन स्कूल्स एसोसियेशन बनाम बिहार राज्य'' (उपर)** मामले पर और डब्ल्यू० पी० (एस०) सं० 5639 वर्ष 2004 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 28.3.2007 के आदेश पर विश्वास किया है। मेरा दृष्टिकोण है कि याची के अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए निर्णय वर्तमान मामले के विवाद्यक विशेषत: उस समय जब नियुक्ति का अनुमोदन इप्सित किया गया था पर प्रवर्तित भरती नियमावली के प्रभाव के साथ बिल्कुल संबंधित नहीं है। **''ऑल बिहार क्रिश्चियन स्कूल्स एसोसियेशन बनाम बिहार राज्य (उपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विवाद्यक अल्पसंख्यकों द्वारा चलाए जा रहे विद्यालय की प्रबंधन कमिटी की शक्ति थी। वर्तमान मामले में ऐसा विवाद्यक अंतर्ग्रस्त नहीं है।

वर्तमान रिट याचिका में याची की नियुक्ति के अनुमोदन के संबंध में उसके द्वारा उठाया गया मामला उक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विवाद्यक नहीं था। डब्ल्यू० पी० (एस०) सं० 5639 वर्ष 2004 में अभिवचनित तथ्य बिल्कुल भिन्न हैं और इसलिए, यह याची के मामले की कोई मदद नहीं करता है।

12. मैं इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

रविजित सिंह उर्फ रविजीत सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 165 of 2013. Decided on 17th October, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 418—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल—संज्ञान—अस्पताल में त्रुटिपूर्ण ऑक्सीजन पाइपलाइन लगाया जाना—याची को न्यास के दांडिक भंग अथवा छल का अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि याची ने अभिकथित रूप से कभी कोई भी दुर्व्यपदेशन नहीं किया है अथवा उसके द्वारा किसी चीज के दुर्विनियोग का अभिकथन नहीं है—भा० दं० सं० की धाराओं 406 अथवा 418 के अधीन अपराध नहीं बनता है—दांडिक अभियोजन अभिखंडित किया गया—आवेदन अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.—Mr. Shailesh, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Tapas Kabiraj, For the O.P. No.2.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना गया।

2. यह आवेदन सी॰ पी॰ केस सं॰ 1590 वर्ष 2010 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 19.12.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन तत्कालीन न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गिरीडीह ने याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 418 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया।

3. परिवादी–विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का मामला यह है कि जी॰ डी॰ बगरिया सेवा सदन अस्पताल द्वारा जारी नोटिस के अनुसरण में चिकित्सा उपकरणों के व्यवसाय के काम में लगे मेसर्स नामधारी हेल्थ केयर सिस्टम जिसका याची स्वत्वधारी है ने सेंट्रल ऑक्सीजन पाइन लाइन को लगाने के लिए अपना कोटेशन दिया और तद्नुसार, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 और याची के बीच करार हुआ था जिसके द्वारा याची 3,59,000/- रुपयों के भुगतान की शर्त पर अस्पताल में सेंट्रल ऑक्सीजन पाइप लाइन लगाने के लिए सहमत हुआ और वस्तुतः, समय के क्रम में ऑक्सीजन पाइप लाइन बिछायी गयी थी किंतु इसे त्रुटिपूर्ण पाया गया था और इसलिए, उन त्रुटियों को दूर करने के लिए बार–बार याची से अनुरोध किया गया था किंतु याची ने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के अनुरोध पर ध्यान नहीं दिया था और तद्द्वारा यह अनुपयोगित पड़ा रहा और इन परिस्थितियों के अधीन परिवादी के पास परिवाद दाखिल करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था जिसे सी॰ पी॰ केस सं॰ 1590 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें पूर्वोक्तानुसार दिनांक 19.12.2011 के आदेश के तहत संज्ञान लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि समस्त अभिकथन को सत्य मानने पर भी भारतीय दंड संहिता की धारा 406 अथवा धारा 418 के अधीन अपराध नहीं बनता है क्योंकि यह दुर्विनियोग अथवा छल का मामला नहीं है बल्कि परिवाद में बनाया गया परिवादी का मामला यह है कि त्रुटिपूर्ण ऑक्सीजन पाइप लाइन बिछायी गयी थी जिसे सुधारा नहीं गया था किंतु इसके लिए कोई दांडिक दायित्व नहीं होगा और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

5. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें यह कथन किया गया है कि त्रुटिपूर्ण ऑक्सीजन पाइपलाइन नहीं सुधारे जाने के कारण उक्त पाइपलाइन अनुपयोगित पड़ी हुई है और अस्पताल के प्रति किसी प्रयोजन को पूरा नहीं कर रही है।

6. याची के विरुद्ध लगाए गए अभिकथन को सत्य मानते हुए याची को न्यास के दांडिक भंग अथवा छल का अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि याची ने कभी कोई दुर्व्यपदेशन नहीं किया है और न ही किसी चीज के दुर्विनियोग का अभिकथन है और न ही परिवादी को करार करने के लिए कपटपूर्वक अथवा गैर ईमानदार रूप से प्रेरित करने का कोई अभिकथन है। ऐसी स्थिति में, भारतीय दंड संहिता की धारा 406 अथवा धारा 418 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है।

7. तद्नुसार, सी॰ पी॰ केस सं॰ 1590 वर्ष 2010 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही संज्ञान लेने वाले आदेश सहित एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

8. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; ujUn ukFk frokjh ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efrx.k

चंदन कुमार

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 777 of 2009. Decided on 20th August, 2013.

किशोर न्याय (बालकों की देख-रेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000—धाराएँ 7A, 15 एवं 49—हत्या–सात वर्षों का दंडादेश भुगतने के बाद किशोरिता का अभिवचन–किशोर न्याय बोर्ड के रिपोर्ट के आधार पर घटना की तिथि पर अपीलार्थी की आयु 18 वर्ष से नीचे थी–किसी भी चरण पर किशोरिता का दावा और विनिश्चयकरण किया जा सकता है भले ही किशोर की किशोरिता समाप्त हो गयी है–अपीलार्थी अब 27 वर्ष की आयु का है और उसे विशेष गृह में भेजना सही नहीं होगा–दोषसिद्धि संपुष्ट की गयी किंतु दंडादेश अपास्त किया गया।

(पैराएँ 28 से 36)

निर्णयज विधि.–AIR 2011 SC 842; AIR 2005 SC 2731; (1997)8 SCC 720; 1984 Supp. SCC 228; (1989)3 SCC 1; 1995 Supp. (4) SCC 419—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Manoj Kumar Choubey, Altamash Khan, For the Appellant; Mr. Amaresh Kumar, For the State.

आदेश

एकमात्र अपीलार्थी चंदन कुमार, जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन भी दोषसिद्ध किए जाने पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन 2000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कारावास भुगतने और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने के लिए दंडादेशित किया गया था, ने अपने दंडादेश का सात वर्ष भुगतने के बाद इस अपील के लंबित रहने के दौरान इस न्यायालय में अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर होने का दावा किया।

2. उसने अपनी किशोरिता के संबंध में जाँच करने और तत्पश्चात विधि के अनुरुप आगे की कार्यवाही के प्रयोजन से किशोर न्याय बोर्ड, गढ़वा के पास स्वयं को रिमान्ड किए जाने के लिए प्रार्थना करते हुए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 7A सह-पठित धारा 49 के अधीन आवेदन भी दाखिल किया।

3. दिनांक 9.12.2011 के आदेश के तहत मामला अपीलार्थी की आयु के विनिश्चयकरण और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड, गढ़वा को निर्दिष्ट किया गया था। तत्पश्चात् अपीलार्थी को किशोर धारित करते हुए दिनांक 16.1.2012 की रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। बोर्ड के रिपोर्ट के आधार पर, अपीलार्थी की आयु घटना की तिथि पर 15 वर्ष, 5 माह और 25 दिन होती है।

4. विशेषत: अपीलार्थी की आयु विनिश्चित करने में किशोर न्याय बोर्ड द्वारा अपनायी गयी प्रक्रिया के संबंध में विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा रिपोर्ट पर आपत्ति की गयी थी।

5. उक्त आपत्ति पर पक्षों को सुना गया था और दिनांक 1.8.2012 के आदेश के तहत मामला विधि के अनुरुप नयी जाँच करने के लिए और तत्पश्चात रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड, गढ़वा को वापस भेजा गया था।

6. जे॰ जे॰ बोर्ड ने अपीलार्थी की आयु दिनांक 18.12.2012 को 21-23 वर्ष निर्धारित करते हुए और यह संप्रेक्षित करते हुए कि उसे घटना की तिथि पर 18 वर्ष से कम की आयु का पाया गया था, दिनांक 11.1.2013 का अपनाया गया रिपोर्ट प्रस्तुत किया।

7. बोर्ड के उक्त रिपोर्ट की प्राप्ति पर अपीलार्थी के अधिवक्ता ने विधि के अनुरुप आदेश पारित करने के लिए प्रार्थना किया।

8. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी को अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर धारित किए जाने पर किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 के प्रावधानों के अधीन विचार किए जाने की आवश्यकता है और उक्त अधिनियम की धारा 14 के प्रावधानों के अधीन जाँच करने के लिए मामला किशोर न्याय बोर्ड, गढ़वा को भेजा जाए।

9. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि चूँकि विधि से अनभिज्ञता के कारण अपीलार्थी द्वारा उक्त बिंदु पहले नहीं लिया गया था, उसका विचारण नियमित न्यायालय में किया गया था और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन सत्र विचारण में दोषसिद्ध किया गया है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन 2000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कारावास भुगतने और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलना है।

10. उन्होंने निवेदन किया कि तत्पश्चात अपीलार्थी अब तक आठ वर्ष से अधिक का दंडादेश पहले ही भुगत चुका है।

11. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ऐसी स्थिति में अपराध जिसके लिए उसे आरोपित किया गया है के संबंध में बोर्ड द्वारा जाँच का निर्देश देना उक्त विधि के उद्देश्य और आत्मा को चोट पहुँचाएगा क्योंकि अपीलार्थी पहले ही सत्र न्यायालय में नियमित विचारण की कठोरता से पीड़ित हुआ है और आठ वर्ष से अधिक के लिए दंडादेशों को भी भुगत चुका है जबकि अधिनियम की धारा 15 (1) (g) विशेष गृह में किशोर के रहने की महत्तम अवधि तीन वर्ष तक विहित करती है।

12. उन्होंने आग्रह किया कि अपीलार्थी पहले ही आठ वर्षों से अधिक दंडादेश भुगत चुका है और समुचित आदेश पारित करने के लिए, जैसा अधिनियम की धारा 7A (2) के अधीन परिकल्पित किया गया है, अपीलार्थी को बोर्ड के पास भेजना न्याय के हित में न्यायोचित और समुचित नहीं होगा।

13. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **लखन लाल बनाम बिहार राज्य, AIR 2011 Supreme Court 842,** में लगभग समरुप मामले पर विचार किया है और यह मामला उक्त निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है।

14. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में तथ्य और परिस्थितियाँ लगभग **लखन लाल के मामले (उपर)** के समरुप हैं। किशोर न्याय बोर्ड के रिपोर्ट के मुताबिक अपीलार्थी अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर था। किंतु, अनभिज्ञता के कारण नियमित सत्र न्यायालय द्वारा उसका विचारण किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन 2000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कारावास और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध करने के लिए एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने के लिए दंडादेशित किया गया था। अपीलार्थी पहले ही आठ वर्ष से अधिक के दंडादेशों को भुगत चुका है और **लखन के लाल मामले (उपर)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में अपीलार्थी अपने दंडादेशों को अपास्त किए जाने के बाद निर्मुक्त किए जाने के योग्य हैं।

15. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने अपीलार्थी के प्रतिवाद और प्रार्थना का विरोध किया। उन्होंने निवेदन किया कि अपीलार्थी बिल्कुल मौन रहा और किशोरिता का दावा पहले कभी नहीं किया। उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन 2000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कारावास और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध करने के लिए एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। पहले उक्त आधार नहीं लेने पर अपीलार्थी उक्त अधिनियम के किसी लाभ को पाने योग्य नहीं है।

16. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि वैकल्पिक रूप से उस पर उक्त अधिनियम की धारा 15 के अधीन विचार किए जाने की आवश्यकता है और उक्त अधिनियम की धारा 15 के अधीन समुचित आदेश पारित करने के लिए उसे किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजा जा सकता है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि धारा 7A (2) के प्रावधान के अधीन न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश प्रभावहीन समझा जाएगा।

17. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों, जिन पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किया गया है और जिन्हें निर्दिष्ट किया गया है, में धारा 7A (2) के प्रभाव पर विचार नहीं किया गया था और इस प्रकार यह मामला उन निर्णयों द्वारा आच्छादित नहीं है।

18. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और अपीलार्थी के दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय तथा किशोर न्याय बोर्ड द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों/साक्ष्यों पर पूरी तरह चर्चा करने के बाद पाया कि अभियोजन अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन आरोपों को स्थापित करने में सक्षम रहा था।

19. विद्वान अवर न्यायालय अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 5 के परिसाक्ष्यों और अ॰ सा॰ 7 के चिकित्सीय साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक चर्चा और विचार करने पर उक्त निष्कर्ष पर आया है।

विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों को समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे पूर्णत: स्थापित पाया।

20. अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों और साक्ष्य के सूक्ष्म संवीक्षण करने पर हम विद्वान विचारण न्यायालय के उक्त निष्कर्ष में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं।

21. अपीलार्थी के दोष को स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री और साक्ष्य की दृष्टि में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और निष्कर्षों को चुनौती नहीं दिया है बल्कि **लखन लाल (उपर)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में आक्षेपित दंडादेश को अपास्त करके अपराध की कारिता की तिथि पर उसकी किशोरिता के आधार पर अपीलार्थी की निर्मुक्ति के लिए प्रभावोत्पादक प्रार्थना किया है।

22. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने अधिनियम की धारा 7A (2) के अधीन प्रावधानों के आलोक में समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजने के लिए हमें आश्वस्त करने का प्रयास किया।

23. दोनों पक्षों के विस्तृत तर्कों को सुनने और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 के प्रावधानों और **लखन लाल (ऊपर)** के मामले सहित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों का परीक्षण करने पर हम विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ के निवेदनों को स्वीकार करने में अक्षम हैं।

24. अधिनियम की धारा 7A (2) अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया प्रावधानित करती है जब किसी न्यायालय के समक्ष किशोरिता का दावा किया जाता है। धारा 7A का पठन निम्नलिखित हैं:–

^^7-A- **fdlh U;k;ky; d le{k fd'kkjkoLFkk dk nkok fd, tku ij vulj.k dh tku okyh ifØ;k-**&(1) tc dHkh fdlh U;k;ky; d le{k fd'kkjkoLFkk dk dkb nkok fd;k tkrk g ;k U;k;ky; dh ;g jk; g fd vfHk;Dr 0;fDr vijkèk dkfjr gku dh rkjh[k dk fd'kkj Fkk rc U;k;ky; ,l 0;fDr dh vk; dk voèkkj.k dju d fy; tkp djxk] ,lk lk{; yxk tk vko';d gk (fdUr 'kiFk&i= ij ugh) vkj bl ckj e mldh fudVre vk; dk dFku djr g, fu"d"k vfHkfyf[kr djxk fd og 0;fDr fd'kkj ;k ckyd g vFkok ugh%

ijUr fd'kkjkoLFkk dk nkok fdlh U;k;ky; d le{k fd;k tk ldxk vkj ml fdlh Hkh iØe ij] ;gk rd fd ekey d vfre fuiVku d i'pkr Hkh] ekU;rk nh tk,xh vkj ,l nko dk bl vfèkfu;e e vkj mld vèkhu cuk, x, fu;ek d micUèkk d vulkj voèkkj.k fd;k tk,xk] Hkyk gh mldh fd'kkjkoLFkk bl vfèkfu;e d ikjEHk dh rkjh[k dk ;k mll igy lekIr gk xb gkA

(2) ;fn U;k;ky; bl fu"d"k ij igprk g fd dkb 0;fDr mi&èkkjk (1) d vèkhu dkfjr dju dh rkjh[k dk fd'kkj Fkk] rk og ml fd'kkj dk lefpr vkn'k ikfjr fd, tku d fy, ckM dk Hktxk] vkj ;fn U;k;ky; }kjk dkb n.Mkn'k ikfjr fd;k x;k g rk ;g le>k tk,xk fd mldk dkb iHkko ugh gA**

25. उक्त धारा के कोरे पठन पर हम पाते हैं कि किशोरिता का दावा किसी भी चरण पर किया जा सकता है और इसे विनिश्चित किया जा सकता है भले ही किशोर की किशोरिता इस अधिनियम के आरंभ होने की तिथि पर अथवा इसके पहले समाप्त हो गयी है।

26. उक्त प्रावधान की दृष्टि में, अपीलार्थी का दावा इस न्यायालय द्वारा ग्रहण किया गया था और बोर्ड द्वारा जाँच की गयी थी।

27. किशोर न्याय बोर्ड, गढ़वा ने जाँच करने के बाद रिपोर्ट किया कि अपीलार्थी अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर था। राज्य-प्रत्यर्थी द्वारा उक्त रिपोर्ट को चुनौती नहीं दी गयी है।

28. धारा 7A (2) प्रावधानित करती है कि यदि न्यायालय किसी व्यक्ति को अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर पाता है, यह समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर को बोर्ड के पास भेजेगा और दंडादेश, यदि हो, प्रभावहीन समझा जाएगा।

29. जब एक बार अपीलार्थी को किशोर अभिनिर्धारित किया जाता है, उसे उक्त प्रावधान के अधीन समुचित आदेश पारित करने के लिए बोर्ड के पास भेजा जाना चाहिए था।

30. किंतु, अधिनियम की धारा 15, जो किशोर के संबंध में बोर्ड द्वारा आदेश पारित करने के लिए प्रावधान बनाती है, धारा 15 (1) (g) के तहत तीन वर्षों की अवधि के लिए किशोर को विशेष गृह भेजने का महत्तम दंड विहित करती है।

31. न्यायालय में विवादित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी ने पहले ही आठ वर्षों से अधिक के लिए दंडादेशों को भुगत लिया है।

32. लखन लाल बनाम बिहार राज्य, AIR 2011 Supreme Court 842, मामले में अपीलार्थी लखन लाल उच्च न्यायालय द्वारा उसके दांडिक अपील की खारिजी से व्यथित था जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन हत्या करने के लिए उसकी दोषसिद्धि उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट की गयी थी। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपील की सुनवाई के क्रम में यह निवेदन किया गया था कि अपराध की कारिता के समय उक्त अपीलार्थी उक्त अधिनियम की धारा 2 (k) के अर्थ के अंतर्गत किशोर था और इसलिए, अपीलार्थी के विरुद्ध पारित दंडादेश अपास्त किए जाने

का दायी है। तत्पश्चात, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, AIR 2005 SC 2731,** मामले में संवैधानिक पीठ के निर्णय और **भोला भगत बनाम बिहार राज्य, 1997 (8) SCC 720; गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1984 Supp. SCC 228; भूपराम बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, 1989 (3) SCC 1, और प्रदीप कुमार बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, 1995 Supp. (4) SCC 419** मामलों में निर्णयों सहित पूर्व न्यायिक उद्घोषणाओं के आलोक में उक्त निवेदनों पर विचार किया। सर्वोच्च न्यायालय ने तब आदेश दिया कि आरोपों के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को संपोषित करते हुए उसको अधिनिर्णीत दंडादेशों को अपास्त करने की आवश्यकता है। **लाखन लाल (ऊपर)** मामले में विचार किए जाने की तिथि पर अपीलार्थी 40 वर्ष की आयु पार कर चुका था। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उसको विशेष गृह के वातावरण में भेजना सही नहीं होगा और इस तथ्य की दृष्टि में भी कि उसने तीन वर्षों से अधिक के दंडादेशों की वास्तविक अवधि भुगत लिया था जो 2000 अधिनियम की धारा 15 के अधीन प्रावधानित महत्तम अवधि है। भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि संपोषित करते हुए उसको अधिनिर्णीत दंडादेशों को अपास्त कर दिया गया था।

33. वर्तमान मामले के स्वीकृत तथ्यों की दृष्टि में हमारा दृष्टिकोण है कि अपीलार्थी का मामला **लाखन लाल (ऊपर)** मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित परिधि में आता है।

34. वर्तमान मामले में अपीलार्थी अब लगभग 27 वर्ष की आयु का है और हम महसूस करते हैं कि उसको विशेष गृह भेजना सही नहीं होगा विशेषत:, जब वह विशेष गृह में तीन वर्षों के दंड की महत्तम अवधि के विरुद्ध आठ वर्ष से अधिक की अवधि भुगत चुका है जैसा अधिनियम की धारा 15(1)(g) के अधीन प्रावधानित है।

35. यहाँ उपर दर्ज कारणों से भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि से संपुष्ट करते हुए हम उसको अधिनिर्णीत दंडादेशों को अपास्त करते हैं।

36. तद्नुसार, अपीलार्थी को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

37. तद्नुसार, यह अपील निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

बिनोद कुमार सिंह

cuke

केंद्रीय जाँच ब्यूरो

Cr. M.P. No. 141 of 2013. Decided on 18th October, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 120B सह-पठित धाराएँ 420, 478 एवं 471—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 13 (2) एवं 13 (i) (d)—झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001—धारा 52—राँची योजना मानक एवं भवन उपविधि, 2002 का खंड C-8—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—भवन उपविधि का उल्लंघन-मंजूर योजनाओं से विपथित होते बहुमंजिला भवनों के दुरभिसंधिपूर्ण निर्माण के मामले में सी॰ बी॰ आई॰

जाँच–आर्किटेक्ट याची को इस आधार पर अभियोजित किया जा रहा है कि भूमि जिसके लिए नक्शा मंजूर किया गया था 'सार्वजनिक खुला स्थान' (पी० ओ० एस०) हुआ करती है और कि उस भूमि तक जाने वाले दो पथों को दर्शाया गया था जबकि वस्तुतः केवल एक पथ विद्यमान था और कि दूसरी सड़क की चौड़ाई को इसकी वास्तविक चौड़ाई की तुलना में ज्यादा चौड़ा दिखाया गया था ताकि भवन के उपर एक अतिरिक्त तल का निर्माण किया जा सके–टेक्निकल व्यक्ति को न केवल झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण बल्कि अन्य संबंधित अधिनियमों, उपविधियों और नियमों से भिज्ञ होना ही चाहिए ताकि कोई संरचनात्मक विस्तार अधिनियम और नियमावली के अनुरुप किया जा सके–यदि भवन निर्माण के मामले में अधिनियम, नियमावली अथवा उपविधियों के प्रावधान का कोई उल्लंघन होता है, टेक्निकल व्यक्ति को जिम्मेदार अभिनिर्धारित किया जा सकता है–याची की ओर से किया गया निवेदन कि क्या आर्किटेक्ट को भवन योजना के अधिनियम, नियमावली अथवा उपविधियों के प्रावधान के साथ संगत नहीं होने के लिए जिम्मेदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है, स्वीकार्य नहीं है–किंतु यह विचारण के दौरान देखा जाएगा कि भवन योजना बनाने में आर्किटेक्ट जिम्मेदार था या नहीं–संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय नहीं है–आवेदन खारिज किया गया।
(पैराएँ 11, 16, 20 से 25)

अधिवक्तागण.–Mr. S.N. Prasad, For the Petitioner; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आदेश

'चंद्रलोक अपार्टमेन्ट' के पार्किंग क्षेत्र में निर्मित दुकान और गोदाम के रूप में उपयोगित अप्राधिकृत संरचना को हटाने के लिए उपाध्यक्ष, राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण, राँची और मुख्य कार्यपालक अधिकारी, राँची नगर निगम, राँची सहित प्रत्यर्थी राज्य को निर्देश देने वाला परमादेश जारी करने के लिए इस न्यायालय के समक्ष एक रिट आवेदन डब्ल्यू० पी० (पी० आई० एल०) सं० 1531 वर्ष 2011 दाखिल किया गया था। मामले के सुनवाई के दौरान इस न्यायालय के ध्यान में लाया गया था कि केवल एक अपार्टमेन्ट ही नहीं बल्कि अनेक अपार्टमेंट के लिए बिल्डरों और अन्य के साथ मौनानुकूलता में राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के पदधारियों द्वारा अवैध रूप से ऐसी मंजूरी प्रदान की गयी है। इसी समय पर, न्यायालय के ध्यान में यह भी लाया गया है कि अपने मंजूर नक्शों से विपथित होते हुए अनेक बहुमंजिला भवनों का निर्माण किया गया है। राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के पदधारियों की मौनानुकूलता से किया गया ऐसा विपथन और परिवर्तन न्यायालय द्वारा न केवल सिविल गलती के रूप में बल्कि दांडिक अपराध के रूप में भी लिया गया था क्योंकि सामान्य उपयोग के लिए आशयित स्थान का उपयोग अन्य प्रयोजन से किया जाना अन्य के अधिकार के अतिक्रमण के तुल्य है। अतः, न्यायालय ने सी० बी० आई० से मामले की जाँच करवाना समुचित पाया था। तद्नुसार, राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के साथ मौनानुकूलता में गलती करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध मामला संस्थित करने और इसपर कार्यवाही करने के लिए सी० बी० आई० को औपचारिक पत्र जारी किया गया था।

2. तद्नुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 120B सह–पठित धाराओं 420, 468, 471 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13(i)(d) के अधीन और झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001 की धारा 52 के अधीन और रजिस्ट्रेशन अधिनियम की धारा 82 के अधीन सी० बी० आई० द्वारा अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गयी थी।

3. मामला दर्ज करने पर, सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण शुरू किया। अन्वेषण के दौरान मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लिमिटेड, राँची और मेसर्स रानी शिशु अस्पताल एवं शोध (प्रा॰) लिमिटेड के भवन योजना की मंजूरी से संबंधित मामले का परीक्षण किया गया था। उस क्रम में यह पाया गया था कि मेसर्स रानी शिशु अस्पताल एवं शोध (प्रा॰) लि॰ के निदेशक डॉ॰ राजेश कुमार और मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लि॰ के निदेशक डॉ॰ सुधीर कुमार ने छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 49 के प्रावधान के निबंधनानुसार अनुमति पाने के बाद श्री बसंत टोप्पो से मौजा हत्मा के अधीन अवस्थित खाता सं॰ 27 से संबंधित भूखंड सं॰ 564 वाली भूमि को खरीदा था।

4. भूमि खरीदने के बाद मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लिमिटेड ने वर्ष 2008 में भवन निर्माण योजना दाखिल किया जिस पर मामला बी॰ सी॰ सं॰ 269 वर्ष 2008 आरंभ किया गया था।

5. ऐसी योजना की प्रस्तुति पर, आवेदक सी॰ बी॰ आई॰ के मामले के चलते आशंकित हो गया कि नख्शा मंजूर नहीं किया जा सकता है क्योंकि भूमि जिसके उपर नक्शा की मंजूरी इप्सित की गयी थी 'सार्वजनिक खुला स्थान' था। अत:, मेसर्स ग्रिड कंसल्टेन्ट्स जिसका याची भागीदारों में से एक था के माध्यम से मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लिमिटेड द्वारा भूखंड सं॰ 568 के रूप में दर्शाते हुए योजना पुन: प्रस्तुत की गयी थी जिस पर मामला बी॰ सी॰ सं॰ 531 वर्ष 2008 आरंभ किया गया था।

6. उक्त मामले में, भूखंड सं॰ 564 को 568 के रूप में दर्शाते हुए, क्योंकि मौजा हत्मा में अवस्थित आर॰ एस॰ भूखंड सं॰ 564 'सार्वजनिक खुला स्थान' था, राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण द्वारा नक्शा मंजूर किया गया था। उक्त नक्शा इस याची के पर्यवेक्षण के अधीन तैयार किया गया था। उक्त नक्शा में दो पथों को भूखंड के सामने विद्यमान दर्शाया गया था। दूसरी सड़क को 9 मीटर चौड़ाई वाला दर्शाया गया था किंतु, वस्तुत: भूमि 'कैसरे हिंद' के रूप में दर्ज की गयी थी और उस सड़क की चौड़ाई 9 मीटर नहीं थी।

7. अभियोजन के मामले के अनुसार, इसे झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के पदधारियों के साथ दुरभिसंधि में भवन के नक्शा (G + 4) को मंजूर करवाने के लिए मेसर्स ग्रिड कंसल्टेंट्स द्वारा किया गया था जिसके भागीदारों में से याची एक था।

8. ऐसे अभिकथन पर, जहाँ तक मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लिमिटेड से संबंधित भवन योजना का संबंध है, इस याची और मेसर्स ग्रिड कंसल्टेंट्स के अन्य भागीदारों सहित मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा॰) लिमिटेड एवं अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। इसी प्रकार से, अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध भी आरोप-पत्रों को दाखिल किया गया था जिनकी सह-अपराधिता राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम और राँची योजना मानक एवं भवन उपविधि, 2002 जिसे राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001 के प्रावधान के निबंधनानुसार प्राधिकारी द्वारा विरचित किया गया था के प्रावधानों के उल्लंघन में अन्य भवनों का नक्शा मंजूर करवाने में पायी गयी थी।

9. आरोप-पत्र प्रस्तुत किए जाने पर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 120B सह-पठित धाराओं 420, 478, 471 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) और झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001 की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया।

10. उस आदेश से व्यथित होकर, याची ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन इस आवेदन को दाखिल किया है।

11. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस० एन० प्रसाद निवेदन करते हैं कि सी० बी० आई० का मामला यह है कि याची, आर्किटेक्ट के पर्यवेक्षण के अधीन भवन (G + 4) के निर्माण के लिए ले आउट योजना तैयार की गयी थी जिसे भूमि के स्वामी द्वारा प्रस्तुत किए जाने पर राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के प्राधिकारी से मंजूर करवाया गया था किंतु आर्किटेक्ट याची को इस आधार पर अभियोजित किया जा रहा है कि भूमि जिसके लिए नक्शा मंजूर किया गया था 'सार्वजनिक खुला स्थान' (पी० ओ० एस०) हुआ करती है और उस भूमि की ओर जाते हुए दो पथों को दर्शाया गया था किंतु वस्तुत: केवल एक पथ विद्यमान था किंतु यह आधार आर्किटेक्ट को अभियोजित करने का वैध आधार नहीं हो सकता है जिससे राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के समक्ष इसकी मंजूरी के लिए स्वामी द्वारा प्रस्तुत किए जाने के लिए नक्शा बनाने की उम्मीद की जाती है क्योंकि आर्किटेक्ट द्वारा योजना बनाने के पहले भूमि की प्रकृति की जाँच करने के लिए आर्किटेक्ट पर जिम्मेदारी डालने के लिए कोई विधि अथवा विनियमन नहीं है।

12. इस संबंध में आगे यह निवेदन किया गया था कि अधिनियम की धारा 32 के प्रावधान के निबंधनानुसार भूस्वामी से ले-आउट प्लान देने की उम्मीद की जाती है जिसके आधार पर आर्किटेक्ट से नक्शा का खाका तैयार करने की उम्मीद की जाती है जिसे अधिनियम की धारा 37 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार मंजूर किया जाता है यदि यह अधिनियम, नियमावली और विनियमन के अनुरूप है। यदि भूस्वामी कोई दुर्व्यपदेशन करके नक्शा मंजूर करवाता है, यह अधिनियमन की धारा 38 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार रद्द किए जाने का दायी है और ऐसे नक्शा पर निर्मित भवन भंजित किया जा सकता है।

13. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि यदि कोई दुर्व्यपदेशन करके नक्शा मंजूर किया जाता है, भूस्वामी को और न कि आर्किटेक्ट को जिम्मेदार अभिनिर्धारित करना है। इसके बावजूद याची को अभियोजित किया जा रहा है और इसलिए संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

14. इसके विरुद्ध, सी० बी० आई० के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि नक्शा से विपथित होकर निर्मित किए गए भवनों से संबंधित मामले का और सामान्य उपयोग के स्थान का उपयोग अन्य प्रयोजन से करने की अनुमति राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के पदधारियों द्वारा दिए जाने के मामले का भी अन्वेषण करने के लिए सी० बी० आई० को इस न्यायालय द्वारा निर्देश दिया गया था और मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण के दौरान, यह पाया गया था कि मेसर्स जगन्नाथ लाइफ केयर (प्रा०) लिमिटेड द्वारा प्रस्तुत भवन योजना को राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण द्वारा मंजूर किए जाने के बाद 'सार्वजनिक खुले स्थान' के उपर भवन निर्मित किया गया है। भवन योजना मेसर्स ग्रिड कंसल्टेंट्स द्वारा तैयार की गयी थी जिसके भागीदारों में से एक याची है और उसके पर्यवेक्षण के अधीन भवन योजना तैयार की गयी थी। भवन योजना को आर० एस० भूखंड सं० 568 के उपर भवन के निर्माण के लिए तैयार किया गया दर्शाया गया था किंतु वस्तुत: यह आर० एस० भूखंड सं० 564 था और कि भवन में अधिक तल बनाने के लिए दो पथों को उक्त भूखंड से लगा हुआ दर्शाया गया था किंतु वस्तुत: केवल एक पथ विद्यमान था और कि सड़क की चौड़ाई जो विद्यमान थी को इसकी वास्तविक चौड़ाई की तुलना में अधिक दर्शाया गया था ताकि अतिरिक्त तल बनाया जा सके जो निश्चय ही अधिनियम और उपविधि के प्रावधानों के उल्लंघन में है। ऐसी स्थिति में याची यह अभिवचन नहीं कर सकता है कि भवन योजना बनाने के पहले भूमि की कोई जाँच अथवा अन्वेषण करना उसका काम नहीं है क्योंकि राँची योजना मानक एवं भवन उपविधि, 2002 (संशोधित) के प्रावधानों के अधीन आर्किटेक्ट यह देखने के लिए कर्तव्यबद्ध है कि तैयार की गयी

भवन योजना झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम और इसके विनियमन एवं उपविधि के प्रावधानों के अनुरुप है। यदि उक्त उपविधि के अधीन ऐसा उत्तरदायित्व डाला गया है, आर्किटेक्ट को भी अभियोजित किया जा सकता है यदि यह पाया जाता है कि उसने अधिनियम, नियमावली और विनियमन को अनदेखा करके भवन योजना तैयार किया है।

15. इस प्रकार, संज्ञान लेने वाला आदेश किसी अवैधता से पीड़ित नहीं है।

16. पक्षों की ओर से किए गए प्रकथन से जो सामने आता है, वह यह है कि याची के अनुसार आर्किटेक्ट जो भवन योजना तैयार करता है से भूमि जिसके लिए भवन योजना तैयार की गयी है के संबंध में जाँच करने की उम्मीद कभी नहीं की जाती है बल्कि भवन योजना भूस्वामी के अनुदेश के मुताबिक तैयार की जाती है जबकि सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से लिया गया दृष्टिकोण यह है कि आर्किटेक्ट से भी राँची योजना मानक एवं भवन उपविधि, 2002 (संशोधित) के रूप में नामित उपविधि के प्रावधान के अधीन अधिनियम, नियमावली और उपविधि के प्रावधान का पालन करने की उम्मीद की जाती है।

17. यह कथन किया जाए कि अभियोजन का मामला यह है कि उस भूखंड जिसे 'सार्वजनिक खुला स्थान' घोषित की जाती है के उपर भवन के निर्माण के लिए भवन योजना तैयार की गयी थी और कि दो पथों को प्रश्नगत भूमि से होकर जाते हुए दर्शाया गया था किंतु केवल एक पथ विद्यमान था और कि सड़क की चौड़ाई इसके वास्तविक चौड़ाई की तुलना में अधिक दर्शायी गयी थी ताकि भवन के उपर एक और तल का निर्माण किया जा सके।

18. यह प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इस कारण आर्किटेक्ट को अपराध की कारिता के लिए जिम्मेदार अभिनिर्धारित किया जा सकता है जिसके अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है।

19. इस संबंध में, मैं राँची योजना मानक एवं भवन उपविधि, 2002 के परिशिष्ट C के खंड C-2.2.3 को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *C-2.2.3. vkfdVDVk ftUg vkfdVDV ifj"kn vfèkfu;e] 1972 d vèkhu jftLVM fd;k x;k g] bld fy, fdlh okf"kd ykblflx Qhl dk Hkxrku fd, fcuk vkj0 vkj0 MhO ,0 d ykblsl VfDudy dkfed d :i e jftLV'ku d gdnkj gkxA fdr ;fn o çkfèkdj.k dk thoui;r ykbllh d :i e ithÑr gkuk pkgr g] ,l ukekdu d fy, mUg Qhl d :i e çkfèkdkjh dk 500/-#i;k dh ,de'r jkf'k dk Hkxrku djuk gkxk rkfd çkfèkdkjh mUg çkfèkdj.k d ;ktuk®ed ,o Hkou mifofèk rFkk fu;ek ,o mifofèk;k e l'kkèkuk (;fn gk) dh vU; çklfxd lpuk le;≤ ij n ldA fdr ;fn vkfdVDV] tk igy l gh ukekfdr g vFkok ftl Hkfo"; e vkj0 vkj0 MhO ,0 d ykbllh d :i e ukekfdr fd, tku dh lHkkouk g] rRle; çoÙk fu;ek] fofu;euk] mifofèk;k vkj@vFkok vkj0 vkj0 MhO ,0 d ;ktuk ekud e l fdlh dk mYy?ku djrk g] vkj0 vkj0 MhO ,0 e mldk ukekdu jí dj fn;k tk,xk vkj mll fy;k x;k 500/-#i;k dk ukekdu 'kYd çkfèkdkjh }kjk leigr dj fy;k tk,xkA***

20. इसके परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि आर्किटेक्ट जो आर्किटेक्ट अधिनियम, 1972 के अधीन रजिस्टर्ड है आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के लाइसेंस टेक्निकल कार्मिक के रूप में रजिस्ट्रेशन का हकदार है।

21. उप विधि का खंड C-8 टेक्निकल कार्मिक के कर्तव्य और उत्तरदायित्व के बारे में कहता है। विवाद्यक विनिश्चित किए जाने के प्रयोजन से खंड C-8.1 का खंड (a) और (g) प्रासंगिक होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"(a) o fcgkj ,o mMhlk uxjikfydk vfèkfu;e] 1922, iVuk uxj fuxe vfèkfu;e] 1951, fcgkj Hkfe mi;kx fucèku vfèkfu;e] 1948 vkj mud vèkhu cuk, x, fu;ekoyh vkj mifofèk rFkk fcgkj uxj ;ktuk ,o lèkkj U;kl vfèkfu;e] 1951 >kj[kM {k=h; fodkl çkfèkdj.k vfèkfu;e] 2001 vkj mud vèkhu cuk, x, fofu;euk l fHkK gkx vkj leLr vk;kek dk Li"Vr% fpfUgr djr g, {k= rkfydk çLrr djr g, fofgr Ldyk d vulkj mDr [kMk dh vko';drk d erkfcd ;ktuk] lD'ku ,yho'ku vkj vU; ljpukfred fooj.kk dk r;kj djx vkj fofufn"Vk dk [khpxA

*(g) mUg fcgkj ,o mMhlk uxj ikfydk vfèkfu;e] 1922, iVuk uxj fuxe vfèkfu;e] 1951, fcgkj Hkfe mi;kx fucèku vfèkfu;e] 1948 fcgkj uxj ;ktuk ,o lèkkj U;kl vfèkfu;e] 1951, >kj[kM {k=h; fodkl çkfèkdj.k vfèkfu;e] 1982, 1975 vkj mud vèkhu fojfpr fu;ekoyh ,o mifofèk d çkoèkkuk d mYy?ku e LFky ij fu"ikfnr dk; d fy, ftEenkj vfHkfuèkkfjr fd;k tk,xkA***

22. पूर्वोक्त दो प्रावधान अनुबंधित करते हैं कि टेक्निकल व्यक्ति को न केवल झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम के प्रावधान बल्कि अन्य संबंधित अधिनियमों, उपविधियों और नियमों से भिन्न होना ही होगा ताकि कोई संरचनात्मक विस्तार अधिनियम और नियमावली के अनुरुप किया जा सके। यदि भवन निर्माण के मामले में अधिनियम, नियमावली अथवा उपविधि के प्रावधान का उल्लंघन किया जाता है, टेक्निकल व्यक्ति को जिम्मेदार अभिनिर्धारित किया जा सकता है।

23. ऐसी स्थिति में, याची की ओर से किया गया निवेदन कि आर्किटेक्ट को भवन योजना अधिनियम, नियमावली और उपविधि के प्रावधान के साथ संगत नहीं होने के कारण जिम्मेदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है, स्वीकार्य नहीं है। किंतु, यह विचारण के दौरान देखा जाएगा कि क्या याची आर्किटेक्ट होने के नाते भवन योजना बनाने में जिम्मेदार था या नहीं क्योंकि याची के अनुसार याची यद्यपि मेसर्स ग्रिड कंसल्टेंट के भागीदारों में से एक था, उसका भवन योजना तैयार करने से कुछ लेना–देना नहीं था जबकि सी॰ बी॰ आई॰ का मामला यह है कि इस याची के पर्यवेक्षण के अधीन भवन योजना तैयार की गयी थी।

24. इस स्थिति के अधीन, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन अपेक्षणीय कभी नहीं है।

25. परिणामस्वरुप, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

26. किंतु, इस आदेश से अलग होने के पहले यह संप्रेक्षित किया जाए कि इस मामले के निपटान के प्रयोजन से दर्ज कोई निष्कर्ष पक्षों के मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

शांति देवी एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2503 of 2013. Decided on 24th October, 2013.

सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–याची का पति वर्ष 2000 से लापता है–साक्ष्य अधिनियम की धारा 108 के मुताबिक व्यक्ति को मृत उपधारित किया जाएगा यदि सात वर्षों की अवधि तक उसके बारे में कुछ नहीं सुना गया है अथवा वह लापता है–अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के प्रयोजन से सिविल मृत्यु और स्वाभाविक मृत्यु के बीच सुभिन्नता नहीं है–जब एक बार याची के पति की सेवानिवृत्ति के लाभ के प्रदान करने के लिए दावा प्रत्यर्थीगण द्वारा स्वीकार किया गया है, अनुकंपा के आधार पर उसकी नियुक्ति के लिए याची के दावा से इनकार करने की छूट प्रत्यर्थीगण को नहीं है–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 9 से 12)

निर्णयज विधि.–W.P. (S) No. 3956 of 2011; (2005)3 AWC 2724 (LB), W.P. No. 17395 of 2011—Relied on.

अधिवक्तागण.–M/s Swami Nath Prasad Roy, Atanu Banerjee, For the Petitioners; Mr. Sumir Prasad, For the Respondents.

आदेश

याचीगण अनुकंपा के आधार पर याची सं॰ 2 की नियुक्ति के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश अथवा वैकल्पिक रूप से अनुकंपा आधार पर नियुक्ति के लिए याची सं॰ 2 के मामले पर विचार करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए इस न्यायालय के पास आए हैं।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची सं॰ 1 के पति अर्थात् प्रहलाद बहादुर सिंह को दिनांक 22.11.2000 से लापता बताया गया है। पुलिस को सूचना दी गयी थी और दिनांक 20.8.2005 को पुलिस ने रिपोर्ट दिया कि समस्त प्रयासों के बावजूद वह उक्त प्रहलाद बहादुर सिंह का पता नहीं लगा सकी थी। तत्पश्चात, याची सं॰ 1 ने अपने पति के सेवा निवृत्ति लाभों की निर्मुक्ति के लिए प्राधिकारियों को आवेदन दिया। दिनांक 18.11.2006 को याची सं॰ 2 को अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए अभ्यावेदन दिया गया था। चूँकि याचीगण के दावा को प्राधिकारियों द्वारा विनिश्चित नहीं किया गया है, याचीगण वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आए हैं।

3. प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिसमें स्वीकार किया गया है कि वर्ष 2010 में जारी विभिन्न कार्यालय आदेशों द्वारा याची सं॰ 1 के पति के सेवानिवृत्ति लाभों को प्रदान किया गया है। किंतु अभिवचन किया गया है कि व्यक्तियों जो लापता हैं के आश्रितों को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए प्रावधान नहीं है।

4. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि प्रत्यर्थीगण ने उसके पक्ष में याची सं॰ 1 के पति के सेवानिवृत्ति लाभों को निर्मुक्त किया है, याची सं॰ 2 को अनुकंपा के आधार पर प्रत्यर्थीगण द्वारा नियुक्ति प्रदान किया जाना चाहिए था। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि प्रयासों के बावजूद पुलिस याची सं॰ 1 के पति का पता नहीं लगा सकी थी और प्रत्यर्थीगण ने स्वीकार किया है कि उसका पति अब सेवा में नहीं है और इसलिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 108 की दृष्टि में याची सं॰ 1 के पति की मृत्यु को उपधारित किया जाना चाहिए। याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रतिवाद करने के लिए **''विजय कुमार प्रधान बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰)**

सं॰ 3956 वर्ष 2011, में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विश्वास किया है कि जहाँ तक अनुकंपा पर नियुक्ति के दावा का संबंध है, सिविल मृत्यु और स्वाभाविक मृत्यु के बीच सुभिन्नता नहीं है।

6. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता एस॰ सी॰ 1 श्री सुमीर प्रसाद ने निवेदन किया है कि व्यक्तियों जो लापता हैं अथवा जिनका पता नहीं लगाया जा सका था के आश्रितों को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए कोई अभिव्यक्त प्रावधान नहीं है।

7. साक्ष्य अधिनियम की धारा 108 निम्नलिखित है:–

> *"108. **;g lkfcr djus dk Hkkj fd og 0;fDr] ftls ckjs esa lkr o"kZ ls dN lquk ugha x;k g] thfor g&** ijUrq tcfd ç'u ;g g fd dkbZ euq"; thfor g ;k ej x;k g vkj ;g lkfcr fd;k x;k g fd mls ckjs esa lkr o"kZ ls mUgksus dN ugha lquk g] ftUgksus mls ckjs esa ;fn og thfor gksrk rks LoHkkfodr;k lquk gksrk] rc ;g lkfcr djus dk Hkkj fd og thfor g mlls 0;fDr ij pyk tkrk g] tks mls çfrKkr djrk gA**"*

8. साक्ष्य अधिनियम की धारा 108 के अधीन की गयी उपधारणा व्यक्ति जिसका जीवन अथवा मृत्यु विवाद्यक में है की मृत्यु के तथ्य को उपधारित करने तक सीमित है। किसी व्यक्ति को मृत उपधारित किया जाएगा यदि सात वर्षों की अवधि तक उसके बारे में सुना नहीं गया है अथवा, वह लापता है, **''संजय कुमार सिंह बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, (2005)3 AWC 2724 (LB),** में एक मामला जिसमें अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति से कर्मचारी के आश्रित को इनकार किया गया था क्योंकि कर्मचारी की स्वाभाविक मृत्यु स्थापित नहीं की गयी थी, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"10. ,sls ekeys gksa ldrs g tgka fo'k"krk% ifyl cy esa vFkok lU; cy esa drZ0; dk fuoZgu djus okys 0;fDr;ksa dk dN vKkr dkj.kksa ls xk;c depkfj;ksa dh lphs esa Mkyk tk ldrk g vkj lkr o"kksa dh lkfofèkd vofèk chrus ds ckn Hkh ,sls depkfj;ksa ds vkfJrksa dks vudEik ds vkèkkj ij fu;qfDr ls budkj lokZjr jgrs eR;q fu;ekoyh ds ç;kstu dk gh foQy djuk gksxkA*
>
> *11. mDr ppkZ dh nf"V esa] lokZjr jgrs eR;q fu;ekoyh ds vèkhu ;kph dk ykHkk dh miyCèkrk ij fopkj djrs g, ç;kstukFkZ 0;k[;k ds fl)kUr dks oreku ekeys ij ykxw fd;k tk ldrk gA lokZjr jgrs eR;q fu;ekoyh dk ç;kstu vudEik ds vkèkkj ij fu;qfDr djds er ljdkjh depkjh ds ifjokj dks enn çnku djuk gA lokZjr jgrs ljdkjh depkjh dh eR;q ds ckn vFkok ;fn dfri; n?kZVukvksa ds dkj.k ljdkjh depkjh ykirk g tSls oreku ekeys esa gvk g] vkfJrksa dks vudEik vkèkkj ij fu;qfDr nsuk ifjokj dks Hk[kejh vkj foiUkh; dfBukb ds dkj.k eju ls cpkus ldrk g-------**"*

9. ''अविनाश गुप्ता बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, (सिविल विविध रिट याचिका सं॰ 17395 वर्ष 2011) में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक अन्य विद्वान न्यायाधीश ने **संजय कुमार सिंह (ऊपर)** में निर्णय पर विश्वास करते हुए संप्रेक्षित किया है कि अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के प्रयोजन से सिविल मृत्यु और स्वाभाविक मृत्यु के बीच सुभिन्नता नहीं है क्योंकि दोनों मामलों में परिवार का अन्नदाता वहाँ बिल्कुल नहीं है जो दरिद्रता में रह रहे परिवार के सदस्यों की मदद करने आगे आएगा। प्रयोजन मृत कर्मचारी के परिवार को सहायता प्रदान करना है चाहे यह स्वाभाविक मृत्यु का मामला है अथवा सिविल मृत्यु का मामला है।

10. **''पुलिस महानिदेशक एवं दो अन्य बनाम बंशीधर भट्ट'' (विशेष अपील सं॰ 173 वर्ष 2008)** में उत्तराखंड उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने उस व्यक्ति, जो सात वर्षों से अधिक से लापता था और अन्वेषण के बाद पुलिस गायब व्यक्ति का पता नहीं लगा सकी थी, के आश्रित का अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति का दावा अनुज्ञात किया है।

11. मैं आगे पाता हूँ कि इस न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने उक्त निर्दिष्ट आदेशों को ध्यान में लेते हुए पाया है कि उक्त मामले में प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण न्यायोचित नहीं था जब अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए कर्मचारी के आश्रित का दावा अस्वीकार करने के लिए कर्मचारी की समझी गयी मृत्यु और स्वाभाविक मृत्यु के बीच सुभिन्नता किया जाना इप्सित किया गया था। वर्तमान मामले में, याची सं॰ 1 का पति अर्थात प्रहलाद बहादुर सिंह को दिनांक 22.11.2000 से लापता बताया गया था और पुलिस को सूचना दी गयी थी। दिनांक 20.8.2005 को पुलिस ने रिपोर्ट दाखिल किया कि उक्त प्रहलाद बहादुर सिंह लापता है। याची सं॰ 1 के पति के सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान प्रत्यर्थीगण द्वारा किया गया है किन्तु दिनांक 18.11.2006 को जब याची सं॰ 2 की नियुक्ति प्रदान करने के लिए आवेदन दिया गया था, प्रत्यर्थीगण द्वारा याचीगण के दावा को विनिश्चित नहीं किया गया था। वर्तमान कार्यवाही में, अभिवचन किया गया है कि व्यक्ति जो लापता है के आश्रितों को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिये प्रावधान नहीं है। दिनांक 8.7.2013 को प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिससे यह स्वीकार किया गया है कि स्वयं वर्ष 2010 में ही याची सं॰ 1 के पति के सेवानिवृत्ति लाभों को प्रदान किया गया है। मेरा सुविचारित मत है कि जब एक बार प्रत्यर्थीगण द्वारा याची सं॰ 1 के पति के सेवानिवृत्ति लाभों को प्रदान करने का दावा स्वीकार किया गया है, अनुकंपा के आधार पर उसकी नियुक्ति के लिए याची सं॰ 2 के दावा से इनकार करने की छूट प्रत्यर्थीगण को नहीं है। मैं **''बिजय कुमार प्रधान'' (ऊपर)** में पारित आदेश से समर्थन पाता हूँ जिसके अधीन कर्मचारी की समझी गयी मृत्यु को स्वाभाविक मृत्यु के बीच सुभिन्नता करके अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के दावा का अस्वीकरण न्यायोचित नहीं पाया गया है। वर्तमान मामला इसी प्रकार का मामला है।

12. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और प्रत्यर्थी सं॰ 2 को अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति के लिए याची सं॰ 2 के दावा पर विचार करने का निर्देश दिया जाता है। यह स्पष्ट किया गया है कि इस अवधि के दौरान जो विलंब हुआ है उसे विचार में नहीं लिया जाएगा और याची सं॰ 2 के दावा को गुणावगुण पर विनिश्चित किया जाएगा।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

दुखनी देवी

cuke

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 5948 of 2010. Decided on 29th October, 2013.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–धनीय मुआवजा–एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI का खंड 9.5.0—इस आधार पर दावा का अस्वीकरण कि याची द्वारा 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद विकल्प दिया गया था–ये प्रावधान एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के अधीन गारन्टीयुक्त सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों की प्रकृति में है–ये संकट के समय अनुतोष प्रदान करने के लिए आशयित हैं–ऐसे

प्रावधान, जो लाभदायी प्रावधान की प्रकृति के हैं और ऐसे विशेषाधिकारहीन व्यक्ति को सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार प्रदान करते हैं; के अर्थान्वयन के मामले में न्याय के हेतु को आगे बढ़ाने वाला दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए–खंड 9.5.0 याची का दावा अस्वीकार करने के लिए आक्षेपित आदेश में अंतर्विष्ट कारणों का समर्थन नहीं करते हैं–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–प्रत्यर्थीगण को याची को देय धनीय मुआवजा देना होगा। (पैराएँ 9 से 14)

निर्णयज विधि.–2008 (1) JCR 403 (Jhr.)—Referred; **Cr. M.P. No. 19530 with S.L.P. (Cri.) No. 8596 of 2013 reported in 2013(4) JLJ & BLJ 233 (SC).**

अधिवक्तागण.–M/s. Ajit Kumar, Rahul Kumar, Saket Upadhyaya, For the Petitioner; M/s. A.K. Mehta, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गये।

2. याची प्रत्यर्थी महाप्रबंधक, बी॰ सी॰ सी॰ एल॰, गोविन्दपुर, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 10.9.2010 को धनीय मुआवजा के लिए उसके दावा के अस्वीकरण पर इस न्यायालय के पास आयी है। उसने अपने पति की मृत्यु की तिथि अर्थात् दिनांक 21.1.1997 से वर्ष 2008 में उसके द्वारा 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक उसको देय धनीय मुआवजा के भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाना इप्सित किया है। धनीय मुआवजा के लिए याची का दावा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि उसका विकल्प वर्ष 2010 में दिया गया था और उसने पहले ही वर्ष 2008 में 60 वर्ष की आयु प्राप्त कर लिया है। अत:, यह राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के प्रावधानानुसार धनीय मुआवजा के भुगतान की हकदार नहीं होगी।

3. संपूर्ण विवाद की संक्षिप्त पृष्ठभूमि है जिसे मामले के तथ्यों के बेहतर अधिमूल्यन के लिए उद्धृत किया जा रहा है।

4. दिनांक 21.1.1997 को अपने पति की मृत्यु पर याची ने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए अपना दावा किया। किंतु प्रत्यर्थी ने दिनांक 6.6.1997 के परिशिष्ट 2 के तहत सूचित किया था कि वह पहले से ही 49 वर्ष की आयु की थी और वह एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के निबंधनानुसार धनीय मुआवजा इप्सित करने की हकदार होगी जिसके लिए उसे विकल्प दाखिल करने की आवश्यकता थी। किंतु याची ने अपने दामाद की अनुकंपा नियुक्ति के मामले का अनुसरण करना चुना जिस पर विचार नहीं किया गया था। अत: उसने इस न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5430 वर्ष 2004 दाखिल किया। आई॰ ए॰ सं॰ 2184 वर्ष 2004 (परिशिष्ट 3) के माध्यम से उक्त रिट याचिका में उसने निम्नलिखित शब्दों में वैकल्पिक प्रार्थना किया था:–

> *^^fd ;kph vkx çkFkuk djrh g fd vudik vkèkkj ij ;kph d nkekn dh fu;fDr l budkj dh fLFkfr e çR;Fkhx.k dk fodYi e jk"Vh; dk;yk etnjh djkj vl d [kM 9.5.0 d çkoèkkuk d erkfcd mi;Dr C;kt d lkFk oreku ekfld èkuh; evkotk vkj li.k cdk;k dk ;kph dk Hkxrku dju d fy, fun'k fn;k tk ldrk gA***

5. याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, यद्यपि अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए दावा ग्रहण नहीं किया गया था और इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 21.1.2010 के आदेश (रिट याचिका परिशिष्ट 4) के तहत रिट याचिका खारिज कर दी गयी थी, किंतु इस न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि याची प्रत्यर्थीगण द्वारा दिए गए धनीय मुआवजा का प्रस्ताव स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र होगी। तत्पश्चात्, उसके आवेदन, दिनांक 23.2.2010 का परिशिष्ट 5 की दाखिली पर आक्षेपित आदेश पारित

किया गया है। याची ने अपने प्रतिवाद के समर्थन में **एतवरिया देवी बनाम मेसर्स भारत कोकिंग कोल लि॰ एवं अन्य, 2008 (1) JCR 403 (Jhr.)** मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर भी विश्वास किया है कि वह कम से कम 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक अपने पति की मृत्यु पर धनीय मुआवजा पाने की हकदार है।

6. अपनी ओर से प्रत्यर्थीगण ने अन्य बातों के साथ निम्नलिखित आधारों पर दावा का प्रतिवाद किया है; कि आश्रित द्वारा धनीय मुआवजा के लाभ का लाभ लेने के लिए विकल्प का प्रयोग किया जाना है। स्वयं प्रत्यर्थीगण ने जून, 1997 में परिशिष्ट–2 के तहत उसको ऐसा करने का सलाह दिया। उसने रिट याचिका दाखिल किया जिसे दिनांक 21.1.2010 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। ऐसी परिस्थिति में, धनीय मुआवजा का लाभ प्रोद्भूत योग्य नहीं है जब एक बार आश्रित आवेदक 60 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेती है। याची ने वर्ष 2008 में ही 60 वर्ष की आयु प्राप्त कर लिया है, अत: धनीय मुआवजा के लिए उसका दावा अस्वीकार कर दिया गया है।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित आदेश सहित अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। यह सत्य है कि याची ने आरंभ में जून, 1997 में ही स्वयं के लिए अनुकंपा पर नियुक्ति का आवेदन दिया था। उसे स्वयं प्रत्यर्थीगण द्वारा दिनांक 6.6.1997 के परिशिष्ट 2 के तहत 49 वर्ष की आयु का होने के नाते धनीय मुआवजा का विकल्प चुनने की सलाह दी थी। किंतु, यह भी सत्य है कि वह अपने दामाद की अनुकंपा नियुक्ति के लिए रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5430 वर्ष 2004 का अनुसरण कर रही थी। उक्त रिट याचिका में उसने अपने मामले पर विचार करने के लिए आई॰ ए॰ सं॰ 2184 वर्ष 2004 में प्रार्थना किया और विकल्प में एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के खंड 9.5.0 के प्रावधानों के मुताबिक उपयुक्त ब्याज के साथ वर्तमान मासिक धनीय मुआवजा और बकायों के भुगतान के लिए प्रार्थना किया। यद्यपि इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 21.1.2010 के निर्णय के तहत रिट याचिका खारिज कर दी गयी थी, निर्णय के अंत में संप्रेक्षण किया गया था कि याची प्रत्यर्थीगण द्वारा दिए गए धनीय मुआवजा के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र होगी। तत्पश्चात, याची ने वर्ष 2008 में 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद दिनांक 20.2.2010 को आवेदन दिया जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

8. एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के अधीन उसमें विनिर्दिष्ट परिपत्र के निबंधनों और शर्तों पर निर्भर करते हुए कर्मचारियों, जो बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ जैसी कोयला कंपनी–प्रत्यर्थीगण के अधीन कार्यरत हैं, के आश्रितों को अनेक लाभ दिए गए हैं। जैसा पक्षों के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के अध्याय 9 से प्रतीत होगा, यह कर्मचारियों अथवा उनकी मृत्यु अथवा नि:शक्तता की स्थिति में उनके आश्रितों के लाभ के लिए अनेक प्रावधानों को अंतर्विष्ट करते हुए अन्य बातों के साथ सामाजिक सुरक्षा योजना पर विचार करती है। खंड 9.1.0 जीवन आच्छादन योजना प्रावधानित करता है। यह घोषणा करते हुए कि करार द्वारा आच्छादित कर्मचारी कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 के अधीन ग्राह्य लाभों का हकदार होगा, खंड 9.2.0 कर्मकार मुआवजा लाभ प्रावधानित करता है। खंड 9.3.0 मजदूरों, जो स्थायी रूप से नि:शक्त हो गए हैं अथवा कार्यरत रहते हुए जिनकी मृत्यु हो गयी है, के एक आश्रित को रोजगार प्रावधानित करता है। खंड 9.3.2 अन्य बातों के साथ मजदूर जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हुए हो जाती है के आश्रित को रोजगार देने पर विचार करता है। जहाँ तक महिला आश्रित का संबंध है, उनका नियोजन/धनीय मुआवजा का भुगतान खंड 9.5.0 द्वारा शासित होगा। खंड 9.4.0 भी मजदूर जो स्थायी रूप से नि:शक्त हो गया है के आश्रित को उसके स्थान पर नियोजन प्रावधानित करता है। इसी प्रकार, खंड 9.5.0 कर्मकार, जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हुए हो जाती है अथवा जिसे खंड 9.4.0 के मुताबिक चिकित्साीय रूप से अयोग्य घोषित किया जाता है, के महिला आश्रित के लिए नियोजन/धनीय मुआवजा प्रावधानित करता है। बेहतर अधिमूल्यन के लिए खंड 9.5.0 यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"9.5.0. efgyk vkfJr dk fu;ktu@ekuh; evkotk-&dedkj] ftudh eR; lokjr jgr g, gk tkrh g vkj ftUg [kM 9.4.0 d erkfcd fpfdRlh; :i l v;kX; ?kkf"kr dj fn;k tkrk g] d efgyk vkfJrk dk fu;ktu@ekuh; evkotk d çkoèkku fuEufyf[kr :i l fofu;fer fd, tk,x%&

(i) [kku n?kVuk d dkj.k eR; d ekey e efgyk vkfJr d ikl mldh vk; dk è;ku e fy, fcuk fu;ktu vFkok 4000/-#i;k çfrekg dk ekuh; evkotk Lohdkj dju dk fodYi gkxkA

(ii) [kku n?kVuk l fHkUu dkj.k l eR;@dy LFkk;h fuh'kDrrk vkj [kM 9.4.0 d vèkhu fpfdRlh; v;kX; rk d ekey e ;fn efgyk vkfJr 45 o"k l de vk; dh g] mld ikl 3000/-#i;k çfrekg ekuh; evkotk vFkok fu;ktu Lohdkj dju dk fodYi gkxkA

;fn efgyk vkfJr 45 o"k l vfèkd vk; dh g] og doy ekuh; evkotk dh vkj u fd fu;ktu dh gdnkj gkxhA

(iii) [kku n?kVuk d dkj.k eR; vFkok vU; dkj.kk l vFkok [kM 9.4.0 d vèkhu fpfdRlh; v;kX; rk d ekey e ;fn fu;ktu dk çLrko ugh fn;k tkrk g vkj lcfèkr etnj dk i#"k vkfJr 12 o"k vkj mll mij dh vk; dk g] ml ykbo jkLVj ij j[kk tk,xk vkj mld 18 o"k dh vk; çkIr dju ij ml mldh n{krk vkj vgrk d vu#i fu;ktu çnku fd;k tk,xkA ml vofèk tc i#"k vkfJr ykbo jkLVj ij g d nkjku efgyk vkfJr dk mDr ijkvk (i) vkj (ii) ij of.kr nj d erkfcd ekuh; evkotk dk Hkxrku fd;k tk,xkA ;g fnukd 1.1.2000 l çHkkodkjh gkxkA

(iv) ekuh; evkotk] tgk dgh Hkh ;g ç;kT; g] dk Hkxrku efgyk vkfJr d 60 o"k dh vk; çkIr dju rd fd;k tk,xkA

*(v) ekuh; evkotk dh fo|eku nj tkjh jgxhA ekey ij ekuddj.k dfeVh e vkx ppk dh tk,x vkj bl vfre :i fn;k tk,xkA***

9. खंड 9.5.0 के अधीन पूर्वोक्त प्रावधान का परिशीलन उपदर्शित करता है कि महिला आश्रित के 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक धनीय मुआवजा दिया जाएगा। यह प्रावधान उन कर्मचारियों, जिनकी सेवारत रहते हुए मृत्यु होती है अथवा स्थायी नि:शक्तता से पीड़ित होते हैं, और उनके आश्रितों के लाभ के लिए कर्मकार और नियोक्ता के बीच हुए राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के अधीन प्रत्याभूत सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार की प्रकृति का है। वे सारत: संकट के समय में मृतक अथवा नि:शक्त कर्मचारी के परिवार को अनुतोष प्रदान करने के लिए आशयित हैं। ऐसे प्रावधान, जो लाभदायी प्रावधान की प्रकृति के हैं और ऐसे विशेषाधिकारहीन व्यक्ति को सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार प्रदान करते हैं, के अर्थान्वयन के मामले में न्याय के हेतु को आगे बढ़ाने वाला दृष्टिकोण अपनाना होगा। यदि संकुचित दृष्टिकोण न्याय के उद्देश्य को विफल करता है, इसे छोड़ना होगा और न्याय के उद्देश्य को बढ़ाने वाला दृष्टिकोण अपनाना होगा।

10. इस रुख को अनेक मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों में दोहराया गया है। अत: ऐसे प्रावधानों की प्रयोजनात्मक व्याख्या करने की आवश्यकता है जो परिवार के अन्नदाता की मृत्यु पर दरिद्रता में जीवित पत्नी, संतानों और परिवार से संबंधित है। अभिव्यक्ति 'पत्नी' के अर्थ पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के प्रावधान की व्याख्या से संबंधित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष अनुमति याचिका **(दांडिक) सं॰ 8596 वर्ष 2013 [: 2013(4) JLJ & BLJ 233 (SC)]** में

दांडिक विविध याचिका सं॰ 19530 वर्ष 2013 में **बादशाह बनाम सौ॰ उर्मिला बादशाह गोडसे एवं एक अन्य** मामले में दिनांक 18.10.2013 के निर्णय के तहत एक बार फिर जोर दिया गया है कि न्यायालयों को ''सामाजिक न्याय न्यायनिर्णयन'' जो ''सामाजिक संदर्भ न्याय निर्णयण'' के रूप में भी जाना जाता है, में भिन्न-भिन्न रवैया अपनाना होगा क्योंकि मात्र ''प्रतिकूलात्मक रवैया'' अत्यन्त समुचित नहीं हो सकता है। यह पाया गया था कि भरण-पोषण का प्रावधान निश्चय ही उक्त कोटि में आता है जिसका लक्ष्य दरिद्रों को सशक्त बनाना है और सामाजिक न्याय अथवा समानता और व्यक्ति की प्रतिष्ठा बनाये रखना है। पूर्वोक्तानुसार, ऐसी परिस्थितियों में माननीय न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि यदि दो व्याख्याओं के बीच चुनाव करना है, संकुचित व्याख्या, जो विधान के स्पष्ट प्रयोजन को प्राप्त करने में विफल होगी, से बचना चाहिए। हमें ऐसे अर्थान्वयन से बचना चाहिए जो विधान को निरर्थक बना देगी और इस दृष्टिकोण पर आधारित मुखर व्याख्या को स्वीकार करना चाहिए कि संसद केवल प्रभावकारी परिणाम पाने के लिए विधान बनाएगी।

11. पूर्वोक्त निर्णय के पैराग्राफों 17 से 21, 25 और 27 पर अभिव्यक्त न्यायमूर्ति सिकरी के उदयीमान मत को यहाँ नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

> *17. rrh;r%] ,l ekeyk e] n0 ç0 l0 dh èkkjk 125 d çkoèkkuk dh ç;ktukRed 0;k[;k djuk vko';d gA bl çkoèkku d vèkhu nfjn iRuh vFkok fuHkgk; lrkuk ;k ekrk&firk d vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; lekt d gkf'k;kÑr oxk ij fopkj dj jgk gA ç;ktu ^^lkekftd U;k;** çkIr djuk g tk Hkkjr d lfoèkku dh çLrkouk e çfr"Bkfir loèkkfud njnf"V gA Hkkjr d lfoèkku dh çLrkouk Li"Vr% ldr nrh g fd geu viu leLr ukxfjdk d fy, Lor=rk] U;k;] lekurk vkj cèkRo ljf{kr dju dk y{; çkIr dju d fy, fofèk d 'kklu d vèkhu ç tkrkf=d iFk puk gA ;g fofufn"Vr% mud lkekftd U;k; dh çkfIr djuk çnhIr djrk gA vr%] lkekftd U;k; d gr dk vkx y tkuk U;k;ky;k dk ckè;dkjh dr0; cu tkrk gA çkoèkku fo'k"k dh 0;k[;k djr g, U;k;ky; l fofèk vkj lekt d chp dh njh dk ikVu dh mEehn dh tkrh gA*

> *18. gky e] bl fn'kk e] ;g tkj fn;k x;k g fd U;k;ky;k dk ^^lkekftd U;k; fu.k;u**] ftl ^^lkekftd lnHk U;k; fu.k;u** d :i e Hkh tkuk tkrk g] e fHkUu jo;k viukuk gkxk D;kfd ^^çfrdykRed jo;k** ek= cgr lefpr ugh gk ldrk gA lekt d Hk| leg dk fo'k"k lj{k.k vkj ykHk nu oky vud lkekftd U;k; foèkku gA çk0 ekèko euu budk okYe; o.ku djr g%&*

> *^^vr%] ;g lEekuiod fuonu fd;k x;k g fd ^^lkekftd lnHk U;k;** vko';dr%@lkjr% lekurk fofèk'kkL= dh ç;kT;rk g tlk lln ,o lokPp U;k;ky; }kjk U;k;ky;k d le{k çLrr vudkud fLFkfr;k e fodfIr fd;k x;k g tgk nk vleku i{k ifrdykRed dk;okgh e ,d&nlj d fo#) [kM g vkj tgk U;k;ky;k dk leku U;k; çnku dju d fy, dgk tkrk gA vleku yMkb e xjhc dh fu%'kDrrk dk vkj Hkh xgu cuku oky lkekftd&vkfFkd vlekurkvk d vfrfjDr] çfrdykRed çfØ;k Lo; detkj i{k d vykHk d çfr çofrr gkrh gA ,l fLFkfr e] U;k;kèkh'k dk u doy vrxLr i{kk dh vlekurkvk d çfr lonu'khy gkuk gkxk cfYd detkj i{k d çfr ldkjkRed :i l >duk gkxk ;fn vlryu ?kkj vU;k; e ifj.kr gkrk gA ;g ifj.kke ml çkIr fd;k tkrk g ftl ge lkekftd lnHk U;k; vFkok lkekftd U;k; fu.k;u dgr gA**

> *19. Hkj.k&ik"k.k dk çkoèkku fu'p; gh bl dkfV e vk,x ftl dk y{; nfjn dk l'kDr cukuk vkj 0;fDr dk lkekftd U;k; vFkok lekurk vkj e;knk çkIr*

djuk gA bl çkoèkku d vèkhu ekeyk ij fopkj djr g, ^^çfrdykRed** ednek l lkekftd lnHk U;k; fu.k;u dh vkj jo; e ifjoru le; dh vko';drk gA

20. fofèk ykxk d chp lcèk dk fofu;fer djrh gA ;g 0;ogkj dk iVu fofgr djrh gA ;g lekt d eY;k dk ifjyf{kr djrh gA U;k;ky; dh Hkfedk lekt e fofèk dk ç;ktu le>uk g vkj viuk ç;ktu çkIr dju e fofèk dh enn djuk gA fdr lekt dh fofèk thfor vfLrRo gA ;g fn, x, rkfF;d vkj lkekftd okLrfodrk ij vkèkkfjr g tk yxkrkj cny jgh gA dHkh&dHkh lekt e ifjoru d igy fofèk ifjofrr gkrh g vkj ;g bldk çkRlkfgr dju d fy, vk'kf;r gA fdr] vfèkdrj ekeyk e fofèk e ifjoru lkekftd okLrfodrk e ifjoru dk ifj.kke gA oLrr%] tc lkekftd okLrfodrk ifjofrr gkrh g] fofèk dk Hkh ifjofrr djuk gh gkxkA ftl çdkj lkekftd okLrfodrk e ifjoru thou dh fofèk g] lkekftd okLrfodrk e ifjoru d çfr çR;Ùkjrk fofèk dk thou gA ;g dgk tk ldrk g fd fofèk dk bfrgkl lekt dh cnyrh vko';drkvk d çfr fofèk dk vudy cuku dk bfrgkl gA loèkkfud vkj lkfofèkd nkuk 0;k[;kvk e U;k;ky; l fofèk d 0;fDrijd vkj oLrijd ç;ktu d chp lefpr lcèk fofuf'pr dju e Lofood dk ç;kx dju dh mEehn dh tkrh gA

21. dkjnktk viuh Ñfr e vfHkLohÑr djr g%&

^^----fyf[kr fofèk dh dkb ç.kkyh bldh vko';drk l cp fudyu e l{ke ugh gb g** vkj og foLrkj djr g] ^^;g lR; g fd lfgrk vkj lfofèk U;k;kèkh'k dk vuko';d ugh cukr g vkj u gh mud dke dk ykijokg vkj ;kf=d@vrjk dk Hkjk tkuk gA dfBukb;k ,o nk"kk dk de djuk gkxk ;fn bul cpk ugh tk ldrk gA 0;k[;k ç;% bl vFk e dh tkrh g ekuk ;g dN vkj ugh cfYd ml vFk dh [kkt vkj ryk'k g tk fdruk Hkh vLi"V rFkk çPNUu D;k u gk fdr foèkk;d d food e bldk okLrfod vkj vfHkfuf'pr fd, tku ;kX; vfLrRo gA dHkh&dHkh çfØ;k oLrr% ogh g fdr ç;% ;g dN vkj vfèkd gA lfofèk dk vFk crku e vk'k; dk vfHkfu'p;dj.k U;k;kèkh'k d fy, lcl de fprk gk ldrh gA**

x viu 0;k[;ku e dgr g&

^^rF; ;g g fd rFkkdfFkr 0;k[;k dh ef'dy mnHkr gkrh g tc foèkkueMy d ikl dkb vFk fcYdy ugh g] tc ç'u ftl lfofèk ij mBk;k x;k g] bld lkeu dHkh vk;k gh ugh(tc U;k;kèkh'kk] dk tk djuk g] og ;g fofuf'pr ugh djuk g fd foèkkueMy dk ml fcn ij tk vFk Fkk bld efLr"d e mifLFkr Fkk cfYd ;g vueku yxkuk g fd bldk vk'k; ml fcn ij D;k Fkk tk bld efLr"d e mifLFkr ugh Fkk ;fn og fcn bld efLr"d e mifLFkr gkrkA**

25. bl çdkj] lfofèk dh 0;k[;k djr g, U;k;ky; u doy ml ç;ktu ftld fy, lfofèk vfèkfu;fer dh x;h Fkh cfYd fjf"V ftldk neu ;g bfllr djrh g dk Hkh è;ku e y ldrk gA gMu ekey e igyh ckj çfrikfnr fjf"V dk ;g fu;e ç;ktukRed 0;k[;k dk ,frgkfld lkr cu x;kA U;k;ky; ,l ekeyk e fofèkd lfDr ^^vekU; l ekU; djuk vPNk g** dk Hkh voyc yxk vFkkr tgk odfYid vFkkUo;u lHko g] U;k;ky; dk ml vFkkUo;u dh ryuk e tk bld jkLr e #dkoV Mkyxh dh ryuk e ,l vFkkUo;u dk çHkko nuk gkxk tk ç.kkyh d lxe dk; d fy, ftEenkj g ftld fy, lfofèk vfèkfu;fer dh x;h gA ;fn ilUn nk 0;k[;kvk d chp g] mle l ldfpr] tk foèkku d Li"V ç;ktu dk çkIr dju e foQy gkxk] 0;k[;k l cpuk pkfg,A ge ,l vFkkUo;u

l cpuk pkfg, tk foèkku dk fu"Qy dj nxk vkj ge bl nf"Vdk.k ij vkèkkfjr fuMj vFkkZo;u puuk pkfg, fd l ln doy çHkkodkjh ifj.kke çkIr dju d ç;ktu l foèkku cuk,xhA ;fn bl 0;k[;k dk Lohdkj ugh fd;k tkrk g] ;g iRuh dk èkk[kk nu d fy, ifr dk çhfe;e nu d rY; gkxkA vr%] de l de n0 ç0 l0 dh èkkjk 125 d vèkhu Hkj.k&ik"k.k dk nkok dju d ç;ktu l , lh efgyk dk fofèkor C;kgrk iRuh d : i e ekuuk gkxkA

27. iokDr nf"Vdk.k viuku e ge dlVu je'k pn dk'ky cuke oh.kk dk'ky] e bl U;k;ky; d fuEufyf[kr lç{k.kk }kjk çkIkfgr g, g%&

*^^efgykvk vkj cPpk tl detkj oxk d fy, loèkkfud lgkuHkfr dh mifLFkfr d vulkj 0;k[;k dh tkuh pkfg, ;fn bldk lkekftd çkIfxdrk cuk;h j[kh gA bl çdkj n[k tku ij] nk fodYik] tk gr xjhck d gr dk vkx c<kr g] e l ml 0;k[;k dk puu d fy, p;udkjh gkuk lHko gA***

12. अत:, पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में वह रवैया अपनाना अनिवार्य है जो न्याय के हित को आगे बढ़ाता है जो एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के खंड 9.5.0 के प्रावधान के अधीन महिला आश्रित को एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के प्रावधान के अधीन कल्पित लाभ प्रदत्त करता है। अन्यथा भी, खंड 9.5.0 में अंतर्विष्ट प्रावधान का पठन दर्शाएगा कि वह वर्तमान मामले के तथ्यों में धनीय मुआवजा के लिए याची का दावा अस्वीकार करने के लिए आक्षेपित आदेश में अंतर्विष्ट कारणों का समर्थन नहीं करता है।

13. वर्तमान मामले में, स्वयं याची ने अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 2184 वर्ष 2004 दाखिल करके मुकदमे के पहले दौर में ऐसे वैकल्पिक अनुतोष को इप्सित किया था और एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰–VI के खंड 9.5.0. के अधीन उसको देय धनीय मुआवजा का लाभ लेने का अपना आशय अभिव्यक्त किया था। किंतु रिट याचिका के निपटान के बाद उसने धनीय मुआवजा के लिए अपना आवेदन दाखिल किया जिसे टेक्निकल आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि उसने इसे दाखिल करने के पहले 60 वर्ष की आयु प्राप्त कर लिया था। ऐसी व्याख्या जो न्याय के हित को विफल करेगी स्वीकार नहीं की जा सकती है। इन परिस्थितियों में, आक्षेपित आदेश विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, इसे अपास्त किया जाता है।

14. प्रत्यर्थीगण इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर बकाया के साथ प्रचलित एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के खंड 9.5.0. के प्रावधान के मुताबिक याची के पति की मृत्यु के बाद याची द्वारा 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने की तिथि तक याची को देय धनीय मुआवजा देंगे।

15. पूर्वोक्त निबंधनों में इस रिट याचिका को अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

डॉ॰ रंजीत कौर अरोड़ा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2824 of 2013. Decided on 28th October, 2013.

विश्वविद्यालय विधि–प्रोन्नति–फीजियोलॉजी विभाग, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ में प्रोफेसर का पद–याची ने उस समस्थित व्यक्तियों को प्रकट नहीं किया है जिन्हें प्रोन्नति का लाभ दिया

गया है–याची जो दिनांक 18.10.1998 के प्रभाव से प्रोफेसर का पद इप्सित कर रही है, वर्ष 2013 में वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके अपना दावा नहीं कर सकती है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Prashant Vidyarthi, For the Petitioner; Mr. Vaibhav Kumar, For the Respondents.

आदेश

याची निम्नलिखित प्रार्थना करते हुए इस न्यायालय के पास आयी है:–

(a) fnukd 18.10.1998 d çHkko l Qhft ;kykth foHkkx] vkj0 vkb0 ,e0 ,l0] jkph e çkQlj d in ij çkUufr nu d fy, çR;Fkh ij ijekn'k çÑfr d lefpr fjV@vkn'k@fun'k tkjh dju d fy, D;kfd ;kph ,e0 lh0 vkb0 fu;ekoyh d erkfcd bldk vkèkkj g vkj tlk vkj0 vkb0 ,e0 ,l0 d vU; foHkkxk e fd;k x;k gA

(b) ikfj.kkfed ykHkk d Hkxrku d fy,] tk çknHkr gkx ;fn ;kph dk fnukd 18.10.1998 d çHkko l çkQlj d in ij çkUufr nh tkrh g] çR;Fkhx.k dk fun'k nu d fy,A

2. रिट याचिका में प्रकट किए गए संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची को दिनांक 17.7.1981 को नियुक्त किया गया था। उसने दिनांक 18.10.1986 को राँची मेडिकल कॉलेज हॉस्पिटल, राँची के फीजियोलॉजी विभाग में ट्यूटर के रूप में पद ग्रहण किया। याची को दिनांक 8.4.2004 की अधिसूचना के तहत दिनांक 30.9.1989 के प्रभाव से सहायक प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नत किया गया था और उसे दिनांक 14.10.2006 की अधिसूचना द्वारा दिनांक 1.4.2004 को एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नत किया गया था। याची बिहार सरकार की दिनांक 23.11.1976 की अधिसूचना, जो सहायक प्रोफेसर और एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति के लिए पात्र बनने के लिए सेवा की न्यूनतम अवधि प्रावधानित करता है, पर विश्वास करते हुए इस न्यायालय के पास आयी है। याची ने दिनांक 17.12.1990 की अधिसूचना पर भी विश्वास किया है जो सहायक प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति के लिए तीन वर्षों का न्यूनतम अनुभव और प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति के लिए न्यूनतम चार वर्षों का शिक्षण अनुभव विहित किया गया है। याची ने रिट याचिका में कथन किया है कि वह दिनांक 18.10.1989 के प्रभाव से सहायक प्रोफेसर के पद पर और दिनांक 18.10.1994 से एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति की पात्र थी। उसने आगे दावा किया है कि वह एम॰ सी॰ आई॰ नियमावली के मुताबिक दिनांक 18.10.1998 से प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति प्रदान किए जाने की हकदार है।

3. याची के दावा का प्रतिरोध करते हुए प्रत्यर्थी झारखंड राज्य की ओर से प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है।

4. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि समस्थित व्यक्तियों को प्रोन्नति प्रदान की गयी है, याची को प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति के लाभ से इनकार किया गया है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि प्रति शपथ पत्र में प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा लिया गया दृष्टिकोण न्यायोचित नहीं है और प्रत्यर्थीगण द्वारा याची का दावा अवैध रूप से इनकार किया गया है।

6. प्रत्यर्थीगण सं॰ 2 की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र को देखे बिना मेरा सुविचारित मत है कि याची जो दिनांक 18.10.1998 के प्रभाव से प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति इप्सित कर रही है, वर्ष 2013

में वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके अपना दावा नहीं कर सकती है। याची ने अभिवचन किया है कि समस्थित व्यक्तियों को प्रोन्नति का लाभ प्रदान किया गया है किंतु याची द्वारा रिट याचिका में उन व्यक्तियों का नाम प्रकट नहीं किया गया है। मैं आगे पाता हूँ कि यद्यपि याची को दिनांक 8.4.2004 की अधिसूचना द्वारा सहायक प्रोफेसर के पद पर और दिनांक 14.10.2006 की अधिसूचना द्वारा एसोशिएट प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति प्रदान की गयी थी, उन अधिसूचनाओं को याची द्वारा वर्तमान रिट याचिका में चुनौती नहीं दी गयी है और इसलिए, याची को यह प्रतिवाद करने की छूट नहीं है कि वह दिनांक 18.10.1998 के प्रभाव से प्रोफेसर के पद पर प्रोन्नति प्रदान किए जाने के लिए हकदार है।

7. मैं रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ।

8. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

बिनीता कुमारी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(S) No. 6737 of 2011. Decided on 30th October, 2013.

सेवा विधि–बर्खास्तगी–झारखंड सैन्य पुलिस में कॉस्टेबल–अप्राधिकृत अनुपस्थिति–बर्खास्तगी का आदेश पारित करने के पहले अनुशासनिक कमिटी ने याची पर द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया है और न ही जाँच रिपोर्ट जिसके द्वारा याची को अवचार के अभिकथित आरोप से विमुक्त कर दिया गया था से असहमत होने के लिए कारण दिया गया है–दंड का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया है और द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी करने के चरण से अग्रसर होने के लिए मामला अनुशासनिक प्राधिकारी के पास वापस भेजा गया। (पैरा 5)

निर्णयज विधि.–2013(3) JCR 461(Jhr.)—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s S.N. Pathak, For the Petitioner; Mr. JC to AG, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची अपीलीय प्राधिकारी अर्थात् प्रत्यर्थी सं॰ 3, पुलिस उप-महानिरीक्षक, झारखंड सैन्य पुलिस, राँची द्वारा पारित दिनांक 23.6.2011 के आदेश और अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 31.10.2009 के मूल आदेश, जिसके द्वारा उसे झारखंड सैन्य पुलिस-10 राँची के अधीन कॉस्टेबल के रूप में सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था, से व्यथित है।

3. कमांडेन्ट, जे॰ ए॰ पी॰ 10, राँची द्वारा जारी परिशिष्ट 1 दिनांक 4.8.2009 के आरोप-पत्र के अधीन अप्राधिकृत अनुपस्थित रहने के आरोप पर याची के विरुद्ध अग्रसर हुआ गया था। तत्पश्चात, दिनांक 11.10.2009 की जाँच रिपोर्ट, परिशिष्ट-4 प्रस्तुत किया गया था। जाँच अधिकारी ने मत दिया कि याची 135 दिनों की अवधि के लिए मातृत्व अवकाश पर गयी थी। किंतु संतान जनने के बाद वह शारीरिक रूप से कमजोर थी और कर्तव्य ग्रहण करने की अवस्था में नहीं थी। इन परिस्थितियों में मानवीय आधार पर यह अभिनिर्धारित करना समुचित नहीं था कि वह अभिकथित अवचार की दोषी थी। किंतु

कमांडेन्ट, जे॰ ए॰ पी॰ 10 तुरन्त दिनांक 31.10.2009 के मेमो सं॰ 354 के तहत याची के विरुद्ध बर्खास्तगी का आदेश पारित करने के लिए अग्रसर हुए। यह याची का स्पष्ट कथन है कि बर्खास्तगी का ऐसा आदेश पारित करने के पहले जाँच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत होने के कारणों को उपदर्शित करते हुए याची को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था। इन परिस्थितियों में, प्रस्तावित दंड द्वारा याची पर गंभीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था जो अनिवार्य है जैसा **मो॰ रमजान खान, AIR 1991 SC 471,** मामले जैसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों में अधिकथित किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **इंद्रदेव गोप बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2013 (3) JCR 461 (Jhr.)** मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भी विश्वास किया है।

4. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थी राज्य ने पहले प्रति शपथ पत्र दाखिल किया जिसमें उक्त प्राख्यान से इनकार नहीं किया गया था। अत:, अंतिम अवसर पर प्रत्यर्थीगण को यह सिद्ध करने का एक और मौका दिया गया था कि क्या बर्खास्तगी का आक्षेपित आदेश पारित करने के पहले जाँच रिपोर्ट से असहमत होते हुए द्वितीय कारण बताओ नोटिस याची को जारी किया गया था। तत्पश्चात, प्रत्यर्थीगण द्वारा पूरक प्रतिशपथ पत्र भी दाखिल किया गया था। किंतु, उक्त प्राख्यान से स्पष्टत: इनकार नहीं किया गया है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता निष्पक्षत: निवेदन करते हैं कि अनुशासनिक कार्यवाही के अभिलेख के परिशीलन पर यह प्रतीत नहीं होता है कि याची पर द्वितीय कारण बताओ नोटिस तामील किया गया था अथवा दंड का आदेश पारित करने के पहले जाँच रिपोर्ट के साथ असहमति का कारण दिया गया था। किंतु, याची की अपील भी अस्वीकार कर दी गयी है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को ध्यान से सुना है और जाँच रिपोर्ट तथा दंड के आक्षेपित आदेशों सहित अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। अभिलेख पर लाए गए तथ्यों जिन्हें विवादित नहीं किया गया है से यह प्रकट है कि बर्खास्तगी का आदेश पारित करने के पहले अनुशासनिक प्राधिकारी ने याची पर द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया था और न ही जाँच रिपोर्ट जिसके द्वारा याची को कर्तव्य से अप्राधिकृत अनुपस्थिति के अवचार के अभिकथित आरोप से विमुक्त कर दिया गया था से असहमत होने का कारण दिया था। इन परिस्थितियों में, निर्णय लेने की प्रक्रिया विधि में दूषित है। द्वितीय कारण बताओ नोटिस और जाँच रिपोर्ट जिसने याची को मानवीय आधार पर विमुक्त कर दिया है से असहमत होने के आधार की आवश्यकता अवचारी को प्रस्ताविक दंड के विरुद्ध स्वयं का बचाव करने के लिए सक्षम बनाना है। यदि ऐसा रास्ता नहीं अपनाया जाता है, याची जैसा अवचारी पीड़ित होने के लिए बाध्य है। अत: **मो॰ रमजान खान मामला (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार जिसका समय-समय पर अनुसरण किया गया है को दृष्टि में रखते हुए दिनांक 31.10.2009 का दंड का आक्षेपित आदेश और दिनांक 23.6.2011 का अपीलीय आदेश विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, अभिखंडित किया जाता है। जाँच अधिकारी की जाँच रिपोर्ट से असहमत होने के कारणों को अंतर्विष्ट करता द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी करने के चरण से अग्रसर होने के लिए और इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर याची को अवसर देने के बाद विभागीय कार्यवाही निष्कर्षित करने के लिए मामला अनुशासनिक प्राधिकारी अर्थात् कमांडेन्ट, जे॰ ए॰ पी॰ 10, रांची को वापस भेजा जाता है।

6. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सीता राम प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2064 of 2005. Decided on 9th January, 2013.

सेवा विधि–प्रोन्नति–भेदभाव–पुलिस इंस्पेक्टर का पद–डी॰ पी॰ सी॰ में प्रत्यर्थीगण ने असंतोषजनक सेवा के कारण याची को प्रोन्नति के अयोग्य पाया है जिसे याची द्वारा चुनौती नहीं दी गयी है–भेदभाव का अभिवचन नहीं किया जा सकता है–याची को कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Dr. S.N.Pathak, For the Petitioner; Mr. Saket Upadhyay, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान रिट आवेदन में याची ने वर्ष 1994 से उस तिथि से जिस पर उसके जूनियरों को प्रोन्नत किया गया था प्रोन्नति के लिए अपने मामले पर विचार करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित किया है। याची के अनुसार उसे दिनांक 14.2.1966 को राइटर कॉंस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था और वर्ष 1971 में उसे सहायक पुलिस सब इंस्पेक्टर के रूप में प्रोन्नत किया गया था। बिहार राज्य के विभाजन के बाद उसे झारखंड राज्य के अंतर्गत पदस्थापित किया गया था और वह दिनांक 1.7.2004 को सेवानिवृत्त हुआ था। याची के मुताबिक यद्यपि वर्ष 2001 में याची वरीयता सूची में क्रमांक 94 पर था किंतु बिहार राज्य के अधीन आने वाली पदस्थापना के तत्कालीन स्थान से सेवा पुस्तिका की अनुपस्थिति में अन्य के साथ उसकी प्रोन्नति के मामले पर विचार नहीं किया गया था। याची इसी अनुतोष के लिए इस न्यायालय के समक्ष डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 6426 वर्ष 2003 में आया था जिसे दिनांक 24.12.2003 के आदेश द्वारा उसको प्रत्यर्थी सं॰ 2 झारखंड पुलिस महानिदेशक के समक्ष अभ्यावेदन देने की अनुमति देते हुए निपटाया गया था जिन्हें आगे ऐसे अभ्यावेदन की प्रस्तुति पर अनुबंधित समय के भीतर तार्किक आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया था। किंतु, याची के अनुसार, प्रत्यर्थीगण ने उसकी सेवानिवृत्ति की तिथि तक उसे प्रोन्नत नहीं किया था और न ही कोई तार्किक आदेश पारित किया था। अंततः वह अपने दावा, क्योंकि उसके जूनियरों को बाद में प्रोन्नत किया गया है, पर विचार किए जाने के लिए सेवानिवृत्ति के बाद इस न्यायालय के पास आया।

3. प्रत्यर्थीगण के अनुसार, कैडर के अंतर्गत आने वाले याची और अन्य कर्मचारियों के संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के अनेक मामलों में दिए गए निर्णयों में निर्देश के मुताबिक ग्रेडेशन सूची तैयार की गयी थी और यह कथन किया गया था कि ग्रेडेशन सूची के मुताबिक वर्ष 1980 के बाद नियुक्त याची की कोटि से आने वाले किसी सब-इंस्पेक्टर को पुलिस सब-इंस्पेक्टर की श्रेणी में प्रोन्नत नहीं किया गया था। इस प्रकार, मामले में भेदभाव उद्भूत नहीं होता है। दिनांक 19.2.2004 को पुलिस महानिदेशक की अध्यक्षता में की गयी प्रोन्नति कमिटी की बैठक के मिनटों, परिशिष्ट-4 को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थीगण द्वारा अपने प्रतिशपथ पत्र के पैरा 8 में यह कथन किया गया है कि याची के मामले पर विचार किया गया था कि वर्ष 1994 से आगे असंतोषजनक सेवा के कारण याची को प्रोन्नति के अयोग्य पाया गया था। प्रत्यर्थीगण ने आगे कथन किया है कि मामला अविभाजित बिहार से संबंधित है और याची

ने ऐसा अनुतोष इप्सित करने के लिए बिहार राज्य को पक्षकार नहीं बनाया है जिसे वर्ष 1994 से 11 वर्षों बाद वर्ष 2004 में दाखिल किया गया था।

4. यहाँ उपर कथित तथ्यों से और पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत नहीं होता है कि याची भेदभाव का मामला बनाने में सक्षम नहीं हुआ है क्योंकि दिनांक 24.12.2003 के परिशिष्ट-2 पर निर्दिष्ट दस्तावेज उन कर्मचारियों की सूची के बारे में है जिनकी सेवा पुस्तिका बिहार के मूल राज्य के अधीन पदस्थापना के उनके पूर्व स्थान से पुलिस मुख्यालय, राँची के कार्यालय में उपलब्ध नहीं थी जिसमें याची का नाम भी आता है। किंतु वर्ष 2004 में की गयी डी॰ पी॰ सी॰ में प्रत्यर्थीगण ने असंतोषजनक सेवा के कारण याची को प्रोन्नति के अयोग्य पाया है जिसे याची द्वारा चुनौती नहीं दी गयी है और न ही उक्त निर्णय के प्रति याची द्वारा कोई प्रत्युत्तर दाखिल किया गया है। याची दिनांक 1.7.2004 को सेवा निवृत्त हो चुका है।

5. इन तथ्यों और परिस्थितियों में, यह बयान देकर कि उसके जूनियरों को प्रोन्नत किया गया है, वर्ष 1994 के प्रभाव से प्रोन्नति के लिए याची का दावा रिट याचिका में किए गए प्रकथनों से बनता हुआ प्रतीत नहीं होता है। अत: न्यायालय के स्वविवेकी अधिकारिता के प्रयोग में याची को अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है।

6. तद्नुसार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî ilkn] U;k;efr

कमल कुमार सिंघानिया एवं अन्य

cuke

झारखण्ड राज्य

Cr. M.P. No 3036 of 2013. Decided on 31st October, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 41 एवं 73–गिरफ्तारी वारंट का निर्गत किया जाना–गैर-जमानती गिरफ्तारी वारंट इस आधार पर निर्गत किया गया है कि याचीगण अध्यपेक्षा के अधीन दी गई सूचनानुसार फरार हो गये हैं–याचीगण को फरार घोषित करते हुए अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा प्रस्तुत अध्यपेक्षा दोषपूर्ण है–न्यायालय ने ऐसी अध्यपेक्षा पर कार्रवाई करते हुए याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने के लिये आदेश पारित करने में त्रुटि कारित किया था–गिरफ्तारी वारंट अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 12)

अधिवक्तागण.–M/s Rajendra Krishna, Amit Sinha, For the Petitioners; Mr. Krishna Shankar, For the State; M/s A.K. Kashyap, Deepak Roshan, For the Informant.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को दिन के कार्यकलाप के अनुक्रम में त्रुटियों को दूर करने के लिए अनुमति दी गयी।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता तथा सूचनादाता के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना।

3. याचीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री राजेन्द्र कृष्णा निवेदन करते हैं कि यद्यपि इन याचीगण ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341/342/323/307/353/34 के अधीन दर्ज कोतवाली (सदर) पुलिस थाना केस सं॰ 953 वर्ष 2013 (जी॰ आर॰ सं॰ 5876 वर्ष 2013), दिनांक

24.10.2013 की प्रथम सूचना रिपोर्ट को अभिखंडित करने के लिये तथा विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, रांची द्वारा पारित दिनांक 26.10.2013 के आदेश, जिसके द्वारा इन याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने का आदेश किया गया है, को भी अभिखंडित करने के लिये यह आवेदन दाखिल किया है, परन्तु ये याचीगण केवल दिनांक 26.10.2013 के आदेश को अभिखंडित करने के संबंध में अपने आग्रह को सीमित रखेंगे।

4. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियोजन के मामले के अनुसार, आय–कर प्राधिकार ने सर्वेक्षण करने के लिये 24.10.2013 को इन याचीगण के व्यवसायिक परिसर का दौरा किया था। उस अनुक्रम के दौरान, किसी कारणवश उन व्यक्तियों, जो सर्वेक्षण करने के लिये आये थे, तथा इन याचीगण के बीच एक हाथापाई हो गयी थी, परन्तु इसे इस सीमा तक बढ़ाकर रखा गया है कि इन याचीगण ने उन्हें मार डालने के इरादे से उनपर प्रहार किया था। इसके बाबजूद, सर्वेक्षण अगली सुबह, अर्थात, 25.10.2013 तक जारी रहा था। प्रात:काल में, अर्थात, 25.10.2013 को याची सं॰ 1 का बयान 6.15 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था। इसके बावजूद, अन्वेषण पदाधिकारी ने गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने के लिये 25.102013 को एक अध्यपेक्षा प्रस्तुत किया था, इस आधार पर कि ये याचीगण एक संज्ञेय अपराध में अभियुक्त हैं तथा उनकी संलिप्तता दर्शाने वाली पर्याप्त सामग्रियाँ हैं तथा वह भूमिगत हो गये हैं क्योंकि वह फरार हो चुके हैं। ऐसी अध्यपेक्षा पर, दिनांक 26.10.2013 के आदेश द्वारा गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने का आदेश किया गया था। उस आदेश को चुनौती दी गयी है।

5. याचीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री राजेन्द्र कृष्णा निवेदन करते हैं कि सर्वेक्षण 24.10.2013 को किया गया था जो 25.10.2013 की सुबह तक चला था जिस दौरान ये याचीगण आयकर पदाधिकारियों के साथ उपस्थित थे। दोपहर में किसी समय, एक अध्यपेक्षा दाखिल की गयी है जिसमें यह दर्शाया गया है कि ये याचीगण फरार हो चुके हैं, जिस प्रतिपादना को स्वीकार करना अति कठिन होगा क्योंकि छह या सात घंटों के भीतर किसी का फरार हो जाना कैसे कहा जा सकता है तथा अतएव, न्यायालय को इस विशिष्ट तथ्य में इन याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी वारंट निर्गत नहीं करना चाहिए था, तथा तद्द्वारा, न्यायालय ने इन याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी वारंट के संबंध में आदेश पारित करने में आवैधानिकता कारित किया है।

6. सूचनादाता के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ कश्यप निवेदन करते हैं कि न्यायालय ने गिरफ्तारी वारंट का आदेश पारित करके कोई अवैधानिकता कारित नहीं किया है, क्योंकि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 73 में यथा अंतर्विष्ट प्रावधान के अनुसार आदेश पारित किया गया है। इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि अध्यपेक्षा में, यह स्पष्टत: कथित किया गया है कि ये याचीगण फरार हो चुके हैं तथा केवल उसी दशा में, गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने का आदेश किया गया है और, तद्द्वारा, आक्षेपित आदेश कभी भी किसी अवैधानिकता से ग्रस्त नहीं है क्योंकि प्रथम सूचना रिपोर्ट में किया गया अभिकथन प्रकट करता है कि इन याचीगण ने संज्ञेय अपराध कारित किया है।

7. विधि की इस प्रतिपादना में कोई विवाद नहीं है कि पुलिस या अन्वेषण अभिकरण को एक संज्ञेय अपराध में गिरफ्तारी वारंट न होने पर भी किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति है, परन्तु यह शक्ति दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 41 के अधीन उल्लिखित शर्तों द्वारा सीमित की गयी है। जहाँ तक गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने से संबंधित मामले का सवाल है, यह शक्ति दंडाधिकारी दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 73 में यथा अंतर्विष्ट उपबंध से प्राप्त करता है, जो निम्नवत् पठित है:–

> *73.* ***okj.V fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V gk Idx-****&(1)* *e[; U;kf;d eftLVV ;k çFke ox eftLVV fdlh fudy Hkkx fl)nk"k] mn?kkf"kr vijkèkh ;k fdlh , l 0;fDr dh tk fdlh vtekurh; vijkèk d fy, vfHk;Dr g vkj*

fxj¶rkjh l cp jgk g] fxj¶rkjh dju d fy, okj.V viuh LFkkuh; vfèkdkfjrk d vUnj d fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V dj ldrk gA

(2) ,lk 0;fDr okj.V dh çkfIr dk fyf[kr :i e vfHkLohdkj djxk vkj ;fn og 0;fDr] ftldh fxj¶rkjh d fy, okj.V tkjh fd;k x;k g] mld Hkkj lkèku d vèkhu fdlh Hkfe ;k vU; lifUk e g ;k ço'k djrk g rk og ml okj.V dk fu"iknu djxkA

(3) tc og 0;fDr] ftld fo:) ,lk okj.V tkjh fd;k x;k g] fxj¶rkj dj fy;k tkrk g] rc og okj.V lfgr fudVre ifyl vfèkdkjh d goky dj fn;k tk,xk] tk ;fn èkkjk 71 d vèkhu çfrHkfr ugh yh xb g rk] ml ml ekey e vfèkdkfjrk j[ku oky eftLVV d le{k fHktok,xkA

8. इस पूर्वोक्त धारा के कोरे परिशीलन से, यह प्रकट है कि यह व्यक्तियों की तीन कोटियों, अर्थात, (i) भागे हुए दोषसिद्ध (ii) एक घोषित अपराधी तथा (iii) एक ऐसे व्यक्ति, जो एक गैर जमानतीय अपराध में अभियुक्त है तथा गिरफ्तारी से बच रहा है, कि गिरफ्तारी के लिए वारंट निर्गत करने की शक्ति दंडाधिकारी को प्रदान करती है।

9. यहाँ प्रस्तुत मामले में, गिरफ्तारी का गैर जमानतीय वारंट निर्गत किया गया है इस उपधारणा पर कि याचीगण फरार हो गये हैं जैसा कि अध्यपेक्षा के अधीन सूचना दी गयी है, परन्तु प्रश्न इस संबंध में बाकई उद्भूत होता है कि क्या मामले के तथ्यों तथा परिस्थितियों में, इन याचीगण को फरार कहा जा सकता है।

10. स्वीकार्यत:, आयकर पदाधिकारीगण 24.10.2013 को याचीगण के व्यावसायिक परिसर में पहुँचे थे। उसी दिन, इन याचीगण के व्यावसायिक परिसरों में किसी प्रकार की घटना घटित हुई प्रतीत होती है, जिसके लिये प्रस्तुत प्रथम सूचना रिपोर्ट 24.10.2013 को 6.30 बजे अपराह्न में दर्ज की गयी थी। इसके अतिरिक्त, यह भी स्वीकार किया गया है कि सर्वेक्षण अगली सुबह तक, अर्थात, 25.10.2013 को जारी रहा था तथा प्रात:काल में, आयकर पदाधिकारियों ने याची सं॰ 1 का बयान भी अभिलिखित किया था। ऐसी परिस्थिति में, किसी व्यक्ति को फरार कैसे कहा जा सकता है।

11. मामले की उस दृष्टि में, याचीगण को फरार घोषित करते हुए अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा प्रस्तुत अध्यपेक्षा दोषपूर्ण है और इस प्रकार, न्यायालय ऐसी अध्यपेक्षा पर कार्रवाई करते हुए इन याचीगण के विरूद्ध गिरफ्तारी का वारंट निर्गत करने के लिये आदेश पारित करने में त्रुटि कारित करता हुआ प्रतीत होता है।

12. तद्नुसार, दिनांक 26.10.2013 का आदेश, जिसके अधीन गिरफ्तारी का वारंट निर्गत करने का आदेश किया गया है, एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

13. परिणामत:, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

श्रीमती पिंकी देवी

cuke

झारखण्ड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 6474 of 2011. Decided on 30th August, 2013.

सेवा विधि–सेवा समाप्ति–याची पर केवल एक दिन अनुपस्थित रहने के आधार पर आंगनबाड़ी सेविका के पद से हटाकर सेवा समाप्ति का दंड अधिरोपित किया गया है–दंड का

आक्षेपित आदेश एक दिन के अनुपस्थित होने के अभिकथित कदाचार के लिये अचंभित रूप से अननुपाती है तथा विधि में समर्थित नहीं किया जा सकता है एवं तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–2012 (1) JCR 342 (Jhr)—Applied.

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Kr. Dwivedi, For the Petitioners; M/s JC to AAG, For the Respondent-State.

आदेश

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. बाल विकास परियोजना पदाधिकारी, बोकारो द्वारा निर्गत 14.10.2011 के आदेश द्वारा याची की सेवा समाप्त कर दी गयी है अभिकथित रूप से इस आरोप के लिये कि जिला स्तरीय प्राधिकारी द्वारा 24.6.2011 को निरीक्षण करने पर, उक्त आंगनबाड़ी केन्द्र माम्रकुन्दर, कुट सं॰ 78, चास, ग्रामीण परियोजना बंद पाया गया था। याची को दिनांक 1.7.2011 का एक कारण पृच्छा तामिल किया गया था इस अभिकथन के साथ कि 24.6.2011 को, उक्त आंगनबाड़ी केन्द्र बंद था तथा इससे प्रतिबिंबित होता था कि याची विधि के अनुसार एक नियमित ढंग से कर्त्तव्यों को पूरा नहीं कर रही थी। वह अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन के प्रति लापरवाह थी। उसने परिशिष्ट 12, दिनांक 7.7.2011 के माध्यम से अपना जवाब दाखिल किया था अन्य के साथ यह अभिवाक् लेते हुए कि उक्त तिथि को वह अपनी बीमार माता को देखने मिघरा, बोकारो गई थी जिसकी शल्क-क्रिया हुई थी। उसके अनुसार, उसने माता समिति की अध्यक्षा, अर्थात, श्रीमती यमुना देवी को सूचना दिया था तथा अपने वापस आने तक उससे केन्द्र की देखभाल करने का आग्रह किया था। वह प्रात:काल में 5.30-6.00 बजे पूर्वाहन् में अपनी माता के घर के लिये रवाना हो गयी थी तथा 8.45 से 8.50 बजे पूर्वाह्न में बोकारो वापस आयी थी। उसने अपनी कारण-पृच्छा के जवाब में यह भी कथित किया था कि उपस्थिति पंजी में, उक्त तिथि को 10 बच्चे उपस्थित पाये गये थे, और इसे भी रिट याचिका के परिशिष्ट 10 के तौर पर उसके उत्तर से संलग्न किया गया था। याची की ओर से यह तर्क दिया गया है कि एक दिन अनुपस्थित रहने, और वह भी 26.6.2011 को दिन की एक विशिष्ट अवधि के दौरान अनुपस्थित रहने के ऐसे आरोप पर, प्रत्यर्थी-उप-विकास आयुक्त, बोकारो ने 1.10.2011 को उसकी सेवा समाप्त करने का आदेश पारित किया था, जिसे दिनांक 14.10.2011 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से बाल विकास परियोजना पदाधिकारी, चास द्वारा संसूचित किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **2012(1) JCR 342 (Jhar.)** में रिपोर्ट किये गये **कृष्णा चौधरी बनाम सचिव, कल्याण विभाग, झारखंड सरकार के माध्यम से झारखंड राज्य एवं अन्य** के मामले में दिये गये इस न्यायालय की एकल पीठ के निर्णय पर भरोसा किया है। वह निवेदन करते हैं कि उक्त मामले में भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल एक दिन के लिए अनुपस्थित होने पर सेवा समाप्ति का दंड अभिकथित कदाचार का अचंभित रूप से अननुपाती है तथा तद्नुसार, सेवा समाप्ति का आक्षेपित आदेश अभिखंडित कर दिया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 30.1.2008 के आदेश के माध्यम से **WP(S) सं॰ 4561 वर्ष 2006** में पारित **नीलिमा मंडल बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया है। जिसके अधीन, उनके अनुसार यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उप-विकास आयुक्त को आंगनबाड़ी सेविका को हटाने का आदेश पारित करने की अधिकारिता नहीं थी। इन आधारों पर, याची द्वारा आक्षेपित आदेश की आलोचना की गयी है।

3. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता प्रारंभ में निवेदन करते हैं कि आंगनबाड़ी सेविका के सेवा-शर्त से संबंधित नियमावली के अनुसार आक्षेपित आदेश एक अपीलीय आदेश है। उसकी ओर से यह भी तर्क

दिया गया है कि उसे जिला स्तरीय प्राधिकार द्वारा निरीक्षण पर 24.6.2011 को अनुपस्थित पाया गया था और अतएव कारण–पृच्छा इसके बाद दाखिल किया गया था। यह पाया गया था कि वह अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग नहीं थी तथा उक्त केन्द्र के संचालन में अन्य अनियमितताएँ भी कारित की गयी थी। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता दिनांक 7.2.2013 के आदेश के माध्यम से **WP(S) सं॰ 4784 वर्ष 2009** में पारित **पानो देवी बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** के मामले में दिए गए इस न्यायालय की एकल पीठ के निर्णय पर भरोसा करते हैं जहाँ, उनके अनुसार, आंगनबाड़ी सेविका/सहायिका की नियुक्ति एवं सेवा समाप्ति के लिये मार्ग निर्देश विहित करने वाले पत्र के पैरा 16 पर चर्चा की गयी है। वह निवेदन करते हैं कि इस प्रकार उप विकास आयुक्त ऐसी नियुक्ति के अनुमोदन के लिये एक प्राधिकारी होने के नाते ऐसे नियुक्ति को रद्द करने का आदेश पारित करने का हकदार है अगर उसमें कोई आवैधानिकता पाई जाती है।

4. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को कुछ विस्तार से सुना है तथा आक्षेपित आदेश समेत अभिलेख पर उपलब्ध सुसंगत सामग्रियों का अवलोकन किया है। प्रस्तुत मामले के स्वीकृत तथ्य यह हैं कि जिला स्तरीय प्राधिकारी द्वारा निरीक्षण पर 24.6.2011 को एक दिन की अवधि के लिये याची को आंगनबाड़ी केन्द्र माम्रकुंदर, कूट सं॰ 78, चास, ग्रामीण परियोजना से अनुपस्थित पाया गया था। याची से कारण–पृच्छा का जवाब दाखिल करने की मांग करते हुए उसे 1.7.2011 को उप–विकास आयुक्त, बोकारो के हस्ताक्षराधीन कारण–पृच्छा निर्गत किया गया था। याची ने अपने उपस्थित रहने का स्पष्टीकरण दिया था यह कथित करके कि वह अपनी बीमार माता को देखने के लिये गयी हुई थी। उसने श्रीमती यमुना देवी नामक माता समिति की अध्यक्षा को सूचना दे दिया था। वह अपनी कारण–पृच्छा के जवाब में यह भी कथित करती है कि वह प्रात:काल में 8.45 से 8.50 बजे पूर्वाह्न में लौट आई थी और उस तिथि को भी वस्तुत: 10 बच्चे विद्यालय में उपस्थित थे जिनकी उपस्थिति विद्यालय में अनुरक्षित पंजी में दर्ज भी की गयी थी। उक्त दस्तावेज भी वर्तमान रिट याचिका के परिशिष्ट 10 के तौर पर संलग्न किया गया है। अतएव, याची का यह मामला है कि आंगनबाड़ी केन्द्र वस्तुत: उस दिन बंद नहीं था।

5. स्थिति चाहे जो भी हो, याची पर केवल एक दिन अनुपस्थित रहने के आधार पर सेविका के पद से हटाकर सेवा समाप्ति का दंड अधिरोपित किया गया है। इन परिस्थितियों में, **2012(1) JCR 342 (Jhar.)** में रिपोर्ट किये गये **कृष्णा चौधरी के मामले (ऊपर)** में हुआ निर्णय, जिसपर याची द्वारा भरोसा किया गया है, प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर भी प्रयोज्य प्रतीत होता है। उक्त मामले में भी आंगनबाड़ी सेविका के तौर पर उक्त व्यक्ति की सेवा समाप्ति अभिखंडित कर दी गयी थी क्योंकि उक्त मामले में केवल एक दिन अनुपस्थित रहने के कारण सेवा समाप्ति का आदेश अचंभित रूप से अननुपाती पाया गया था। वर्तमान मामले में भी, अभिकथन 24.6.2011 को एक दिन के लिए अनुपस्थित रहने का है, जिसका याची ने कारण–पृच्छा के अपने जवाब में स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया है। इन परिस्थितियों में, एक दिन अनुपस्थित रहने के अभिकथित कदाचार के लिये दंड का आक्षेपित आदेश अचंभित तौर पर अननुपाती प्रतीत होता है और, अतएव, विधि में समर्थित नहीं किया जा सकता है और, तद्नुसार, अभिखंडित किया जाता है।

6. इसके परिणाम स्वरूप याची को सेवा में पुनर्बहाल किया जाएगा। तथापि, याची को अपना बचाव करने का अवसर प्रदान करने के उपरान्त प्रत्यर्थीगण को कार्रवाई प्रारंभ करने की स्वतंत्रता होगी।

7. तद्नुसार, रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; i'kkUr dekj] U;k;efr

बहादुर साव एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

A.B.A. No. 4769 of 2012. Decided on 25th October, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 438–अवैधानिक खनन–याचीगण के विरूद्ध कोई मामला लम्बित नहीं–याचीगण के विरूद्ध लगाया गया यह अभिकथन कि वह आदतन अपराधी हैं, झूठा है–सूचनादाता पुलिस पदाधिकारी का जिम्मेदार पद धारण किये हुये है परन्तु प्राथमिकी के पहले, उसने तथ्यों का सत्यापन नहीं किया है तथा झूठा मामला दाखिल किया है–यह एक अति गंभीर मामला है–अग्रिम जमानत स्वीकार किया गया तथा प्रधान मुख्य वन परिरक्षक को सूचनादाता के ए॰ सी॰ आर॰ में उसके कुकृत्यों को प्रविष्ट करने का निर्देश दिया गया।

(पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Deepak Kumar, For the Petitioners; M/s R. Mukhopadhyay, Niki Sinha, For the State.

आदेश

याचीगण बहादुर साव, उमेश साव, पंकज चक्रवर्ती, सुभाष महतो उर्फ सुभाष यादव, श्याम लाल साव उर्फ सैम साव, गणेश महतो, युगल महतो उर्फ युगल यादव, विक्रम साव, महादेव पासवान, रूप लाल यादव, ईश्वर महतो उर्फ ईश्वर साव तथा राजू साव उर्फ राजेन्द्र प्रसाद साव द्वारा दाखिल अग्रिम जमानत का आवेदन श्री दीपक कुमार द्वारा प्रस्तुत किया है तथा विद्वान एस॰ सी॰–II श्री आर॰ मुखोपाध्याय द्वारा इसका विरोध किया गया है।

2. प्राथमिकी में, यह अभिकथित किया गया है कि याचीगण आदतन अपराधी हैं तथा वे अवैधानिक खनन में संलिप्त थे। याचीगण द्वारा पूर्वोक्त तथ्यों को चुनौती दी गयी थी तथा ये निवेदन किया गया है कि वर्तमान प्राथमिकी दर्ज होने की तिथि तक कोई मामला लंबित नहीं है। तद्नुसार, प्रभारी पदाधिकारी, कोडरमा पुलिस थाना से एक रिपोर्ट मंगायी गयी थी। प्रभारी पदाधिकारी, कोडरमा पुलिस थाना ने एक प्रतिशपथ पत्र दाखिल करके सूचना दिया था कि इन याचीगण के विरूद्ध कोई मामला लंबित नहीं है। तत्पश्चात्, सूचनादाता, जो डिवीजनल वन पदाधिकारी, वन्य जीवन डिवीजन, हजारीबाग है, को इसका कारण बताने को कहा गया है कि उसने याचीगण के विरूद्ध गलत सूचना क्यों दिया था। अपनी कारण पृच्छा में उसने स्वीकार किया था कि वर्तमान प्राथमिकी दाखिल किये जाने के पहले बहादुर साव, उमेश साव, पंकज चक्रवर्ती, सुभाष महतो उर्फ सुभाष यादव, गणेश महतो, युगल महतो उर्फ युगल यादव, रूप लाल यादव, ईश्वर महतो उर्फ ईश्वर साव के विरूद्ध कोई मामला लंबित नहीं था। यह दर्शाता है कि प्राथमिकी में पूर्वोक्त याचीगण के विरूद्ध लगाया गया यह अभिकथन कि वह आदतन अपराधी हैं, बिल्कुल झूठा है। यह उल्लिखित किये जाने योग्य है कि सूचनादाता डिवीजनल वन पदाधिकारी का एक जिम्मेदार पद धारण किये हुये है परन्तु प्राथमिकी दाखिल करने के पहले, उसने तथ्यों का सत्यापन नहीं किया है तथा पूर्वोक्त अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध झूठा मामला दाखिल कर दिया था। मेरी राय में, यह अति गंभीर मामला है क्योंकि कोई इस प्राथमिकी का लाभ उठा सकता है तथा याचीगण को हानि कारित करने का प्रयास कर सकता है।

3. मामले की दृष्टि में, मैं प्रधान मुख्य वन परिरक्षक, झारखंड को सूचनादाता के ए॰ सी॰ आर॰ में उसके पूर्वोक्त कुकृत्यों को प्रविष्ट करने का निर्देश देता हूँ, ताकि उसकी प्रोन्नति पर विचार करते समय इसे ध्यान में रखा जा सके।

4. चूँकि उपरोक्त यथा उल्लिखित पूर्वोक्त अभिकथन झूठे प्रतीत होते हैं, अत: मैं यह आवेदन अनुज्ञात करता हूँ तथा याचीगण को 13.11.2013 तक अवर न्यायालय में आत्म समर्पण करने का निर्देश देता हूँ तथा उस अवस्था में, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 438(2) के अधीन यथा अधिकथित शर्त्त के अध्यधीन जी॰ आर॰ सं॰ 583 वर्ष 2012 के तत्सम कोडरमा पुलिस थाना केस सं॰ 237 वर्ष 2012 के संबंध में विद्वान सिविल न्यायाधीश (वरीय डिवीजन) सह-सी॰ जे॰ एम॰, कोडरमा का समाधान कराते हुए दस-दस हजार रुपये के दो प्रतिभू के साथ इतनी ही राशि का जमानत बंध पत्र प्रस्तुत करने पर उपरोक्त नामजद याचीगण को जमानत पर रिहा करने का निर्देश अवर न्यायालय को देता हूँ।

---

ekuuh; vkjñ ckuefFk] e[; U;k;kèkh'k ,o Mhñ ,uñ iVy] U;k;efr

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड

cuke

बैकुन्ठ नन्दन सिंह एवं अन्य

L.P.A. No. 259 of 2012. Decided on 22nd November, 2013.

बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000–धारा 62–सेवा से बर्खास्तगी–एकल न्यायाधीश द्वारा बर्खास्तगी के प्रत्यावर्त्तन के अनुसरण में वैचारिक पुनर्बहाली–अनुशासनिक प्राधिकार द्वारा प्रत्यर्थी पर 22.6.2000 को बर्खास्तगी का दंड अधिरोपित किया गया था, जब प्रत्यर्थी बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ की सेवा में था–जब वैचारिक पुनर्बहाली हुई थी, यह आवश्यक रूप से माना जाना है कि प्रत्यर्थी को जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ में पुनर्बहाल किया गया था क्योंकि प्रत्यर्थी वर्ष 2004 में अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका था–वर्ष 2001 से 2004 के बीच, प्रत्यर्थी को जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ की सेवा में माना जायेगा जो एक 1.4.2001 को अस्तित्व में आया था–एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को अपेक्षित भुगतान करने का उत्तरदायी अभिनिर्धारित किया था–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैरा 9)

निर्णयज विधि.–2000(1) LAB I.C. 221; 2004 (1) JCR 16 (Jhr)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Ranjan, For the Appellant; Mr. Nipur Bakshi, For the Res No.1; Mr. Manoj Tandon, For the B.S.E.B..

आदेश

WP(S) सं॰ 2444 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 30.3.2012 के आदेश के विरूद्ध यह एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल किया गया है जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश ने बर्खास्तगी की तिथि से अधिवर्षिता की तिथि तक प्रत्यर्थी सं॰ 1 को पिछले पारिश्रमिक के 50% का भुगतान करने का निर्देश झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड (संक्षेप में 'जे॰ एस॰ ई॰ बी॰') को दिया है तथा अपेक्षित भुगतान करने का उत्तरदायी जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को अभिनिर्धारित किया है। विचार के लिए उद्भूत होने वाला संक्षिप्त बिन्दु यह है कि क्या प्रत्यर्थी को अपीलार्थी-जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के गठित होने के पहले सेवा से बर्खास्त किये जाने के कारण, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को प्रथम प्रत्यर्थी को वैधानिक बकायों का भुगतान करने का उत्तरदायी अभिनिर्धारित किया जायेगा।

2. संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी विद्युत कामगार संघ का महासचिव था तथा एक सौहार्दपूर्ण एवं शांतिपूर्ण ढंग से विद्युत कामगार संघ एवं बोर्ड के कल्याण के लिये भी कार्य किया था। प्रथम प्रत्यर्थी के विरूद्ध आरोप विरचित किये गये थे यह अभिकथित करते हुए की उसने अपने उच्चतर पदाधिकारी पर प्रहार किया था तथा उसके साथ दुर्व्यवहार किया था। बोर्ड के दिनांक 8.4.1996 के आदेश के माध्यम से प्रथम प्रत्यर्थी को अभियोग पत्र का तामिला किया गया था तथा उपनिदेशक कार्मिक, बी॰ एस॰ ई॰ बी॰, पटना को जाँच पदाधिकारी के तौर पर नियुक्त किया गया था एवं जाँच पदाधिकारी ने जाँच का संचालन

करने के उपरान्त पाया था कि प्रथम प्रत्यर्थी के विरूद्ध विरचित आरोप सिद्ध होते हैं तथा अनुशासनिक प्राधिकार को एक शास्ति अधिरोपित करने की अनुशंसा किया था। जाँच पदाधिकारी द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर विचार करके, अनुशासनिक प्राधिकार ने दिनांक 22.6.2000 के आदेश के माध्यम से सेवा से बर्खास्तगी का दंड अधिरोपित किया था। उक्त आदेश से व्यथित होकर, प्रथम प्रत्यर्थी ने अध्यक्ष, बी॰ एस॰ ई॰ बी॰, पटना (अपीलीय प्राधिकार) के समक्ष 18.7.2000 को एक अपील दाखिल किया था तथा अपीलीय प्राधिकार ने 15.1.2001 के आदेश के माध्यम से बर्खास्तगी का दंड सम्पुष्ट कर दिया था।

3. दिनांक 22.6.2000 के आदेश के माध्यम से सेवा से बर्खास्तगी के दंड, जिसे 15.1.2001 को अपीलीय प्राधिकार द्वारा सम्पुष्ट कर दिया गया था, को चुनौती देते हुए प्रथम प्रत्यर्थी ने WP(S) सं॰ 2444 वर्ष 2003 दाखिल किया था। पक्षकारों की सुनवाई करने के उपरान्त एवं **2000(1) LAB. I.C. 221** में रिपोर्ट किये गये निर्णय को निर्दिष्ट करने के उपरान्त, विद्वान एकल न्यायाधीश ने सेवा से बर्खास्तगी का दंड अभिखंडित कर दिया था तथा सभी सेवानिवृत्ति लाभों समेत बर्खास्तगी की तिथि अधिवर्षिता की तिथि तक पिछले पारिश्रमिक के 50% का भुगतान करने का निर्देश अपीलार्थी–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को दिया था तथा विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को अपेक्षित भुगतान करने का उत्तरदायी अभिनिर्धारित किया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने पूर्वोक्त दृष्टिकोण लिया था इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि समूची सेवा के दौरान प्रथम प्रत्यर्थी का सेवा इतिहास बेदाग रहा था तथा अपीलार्थी–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ एवं बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ उक्त तथ्य खंडित करने में असमर्थ रहे थे तथा अनुशासनिक प्राधिकार बड़ा दंड अधिरोपित करते समय मामले के इस पहलू पर विचार करने में विफल रहा था तथा तथ्यों पर उपयुक्त विचारण के बिना एक कठोर दंड अधिरोपित किया है, जिनपर सेवा से बर्खास्तगी का बड़ा दंड अधिरोपित करने के पहले विचार किये जाने की आवश्यकता थी।

4. रिट याचिका में पारित आदेश से व्यथित होकर, अपीलार्थी–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ ने यह अपील दाखिल किया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया है कि अपीलार्थी–जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के गठन के काफी पहले प्रथम प्रत्यर्थी को सेवा से बर्खास्त किया गया था तथा, इस प्रकार, वह उसके विरूद्ध इन कार्यवाहियों के प्रारंभ किये जाने के पहले वह बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ का कर्मचारी था और प्रथम प्रत्यर्थी ने केवल अपनी अधिवर्षिता की तिथि तक जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के अधीन कार्य किया था। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि सेवा समाप्ति या बर्खास्तगी के आदेश के अपास्त कर दिये जाने पर भी, प्रथम प्रत्यर्थी के बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ के एक कर्मचारी होने के नाते, की गयी कार्रवाई तथा तदुपरी उत्पन्न परिणाम केवल बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ के लिए होंगे और, अतएव, विद्वान एकल न्यायाधीश वैधानिक बकायों का भुगतान करने के लिये जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को उत्तरदायी अभिनिर्धारित करने में सही नहीं थे।

5. प्रथम प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ का गठन 1.4.2001 को किया गया था तथा प्रथम प्रत्यर्थी ने वर्ष 2004 में अधिवर्षिता की आयु प्राप्त की थी तथा न्यायालय के आदेश द्वारा जब प्रथम प्रत्यर्थी को वैचारिक रूप से सेवा में पुनर्बहाल किया गया था, तब प्रथम प्रत्यर्थी को जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ का एक कर्मचारी माना जाना है और, अतएव, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को उत्तरदायी अभिनिर्धारित किया है तथा आक्षेपित आदेश में दोष नहीं निकाला जा सकता। विद्वान अधिवक्ता ने **2004(1) JCR 16 (Jhar.)** पर भी भरोसा किया था।

6. बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उन कर्मचारियों के लिये, जो नियमित अधिवर्षिता द्वारा या न्यायालय के आदेश द्वारा 1.4.2001 के उपरान्त सेवानिवृत्त हुए थे, बकायों का भुगतान करने के लिये केवल जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ उत्तरदायी है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि प्रथम प्रत्यर्थी को 22.6.2000 को सेवा से बर्खास्त किया गया था, जिसे दिनांक 15.1.2001 के आदेश के माध्यम से अपीलीय प्राधिकार के आदेश द्वारा सम्पुष्ट कर दिया गया था, उसकी अधिवर्षिता वर्ष 2004 में हुई है और, अतएव, पिछले पारिश्रमिक तथा सेवानिवृत्ति बकायों के भी भुगतान के लिये केवल जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ उत्तरदायी है।

7. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के निवेदन पर विचार किया है।

8. 2004(1) JCR 16 (Jhar.) में रिपोर्ट किये गये निर्णय के पैरा 2 में जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ के गठन के इतिहास पर चर्चा की गयी है, जो निम्नवत् पठित है:–

*^^22.3.2001 dk] dUn ljdkj u iuxBu vfèkfu;e dh èkkjk 62(4) d vèkhu g, f=i{kh; fu.k; d fucèkuk e rFkk bld vèkhu dkjokb djr g,] bl iHkko dk ,d vkicfèkd vkn'k fuxr fd;k Fkk fd fo|eku fcgkj jkT; fo|r ckM dh ifjlifÙk;k] nkf;Ro] vfèkdkj rFkk miØe ml vkn'k e bfxr <x l 1.4.2001 d iHkko l vkicfèkd :i l vkofVr dj fn; tk;xA mle ;g fofufn"Vr% micfèkr fd;k x;k Fkk fd lc) jkT; fo|r ckMk dk lc) jkT;k d jkT; {k=k d Hkhrj vofLFkr miHkkDrkvk l jktLo@cdk;k dk ,df=r dju dk vfèkdkj gkxkA bl idkj] dUn ljdkj d vkn'k u 1.4.2001 d iHkko l doy ifjlifÙk;k rFkk nkf;Rok ,o jktLok d ldyu e >kj[kM jkT; fo|r ckM dk iHkkoh cuk;k FkkA***

9. इस मामले में, अनुशासनिक प्राधिकार द्वारा 22.6.2000 को प्रथम प्रत्यर्थी पर बर्खास्तगी का दंड अधिरोपित किया गया था, जिसे अपीलीय प्राधिकार द्वारा दिनांक 15.1.2001 के आदेश द्वारा सम्पुष्ट कर दिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने बर्खास्तगी के दंड, जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा सम्पुष्ट कर दिया गया था, को अपास्त कर दिया था; परन्तु इस दौरान प्रथम प्रत्यर्थी ने वर्ष 2004 में अधिवर्षिता की अवस्था प्राप्त कर ली थी। चूँकि प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिवर्षिता की अवस्था प्राप्त कर ली है, सेवा में वास्तविक पुनर्बहाली का कोई प्रश्न नहीं रह गया है; बल्कि उसे सेवा में वैचारिक रूप से पुनर्बहाल किया गया था। जब वैचारिक पुनर्बहाली हुई है, तब इसे आवश्यक रूप से माना जाना है कि प्रथम प्रत्यर्थी को जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ में पुनर्बहाल किया गया था क्योंकि प्रत्यर्थी ने 2004 में अधिवर्षिता की अवस्था प्राप्त किया था। 2001 से 2004 के बीच, प्रथम प्रत्यर्थी को जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ की सेवा में माना जाना है जो 1.4.2001 को अस्तित्व में आया था। इस प्रकार, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से अपेक्षित भुगतान करने का उत्तरदायी जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ को अभिनिर्धारित किया है।

इस एल॰ पी॰ ए॰ में कोई गुण नहीं है तथा यह खारिज किये जाने योग्य है एवं तद्नुसार खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; i'kkUr dekj] U;k;efr

मुरारी प्रसाद भदानी

cuke

झारखंड राज्य

A.B.A. No. 1669 of 2013. Decided on 5th September, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 72 एवं 438–तलाशी तथा अभिग्रहण–किसी नागरिक के घर, और/या इमारत में तलाशी एवं अभिग्रहण करना एक गंभीर मामला है क्योंकि यह किसी नागरिक की निजता के अधिकार का उल्लंघन करता है–सूचनादाता पुलिस पदाधिकारी ने संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन यथावर्णित याची की निजता के अधिकार के उल्लंघन में याची की दुकान में तलाशी एवं अभिग्रहण किया था–अग्रिम जमानत प्रदान की गयी।

(पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Deepak Kumar, For the Petitioner; M/s R. Mukhopadhyay, G.S. Prasad, For the State.

आदेश

याची मुरारी प्रसाद भदानी द्वारा दाखिल अग्रिम जमानत का आवेदन श्री दीपक कुमार द्वारा प्रस्तुत किया गया है तथा विद्वान एस० सी०–II श्री आर० मुखोपाध्याय तथा विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री जी० एस० प्रसाद द्वारा इसका विरोध किया गया है।

2. यह अभिकथित किया गया है कि सूचनादाता, अर्थात, योगेन्द्र प्रसाद सिंह, जो कि सहायक उप–आरक्षी निरीक्षक है, ने याची के दुकान में प्रवेश किया था तथा तलाशी एवं अभिग्रहण का कार्य किया था। यह निवेदन किया गया था कि दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन यथा अभिकल्पित जिलाधिकारी या अनुमंडल दंडाधिकारी या दंडाधिकारी के किसी आदेश के बिना उक्त योगेन्द्र प्रसाद सिंह ने तलाशी एवं अभिग्रहण का कार्य किया था।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता के पूर्वोक्त निवेदनों की दृष्टि में, अपर लोक अभियोजक को सहायक उप–आरक्षी निरीक्षक योगेन्द्र प्रसाद सिंह द्वारा निष्पादित प्रतिशपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया गया था उसमें यह कथित करते हुए कि उसे याची की दुकान में तलाशी एवं अभिग्रहण करने के लिये किसने अधिकृत किया था। उक्त योगेन्द्र प्रसाद सिंह ने 11.8.2013 को प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया था, जिसमें पैरा सं० 11 में उसने कथित किया था कि उसे उसके उच्चतर पदाधिकारियों द्वारा तलाशी एवं अभिग्रहण करने के लिये निर्देश दिया गया था। फिर यह प्रतीत होता है कि 6.8.2013 को विद्वान अपर लोक अभियोजक ने पूर्वोक्त योगेन्द्र प्रसाद सिंह से अनुदेश की ईप्सा करने के उपरान्त निवेदन किया है कि बैंक मोड़ सर्किल के आरक्षी निरीक्षक, अर्थात, प्रेम रंजन शर्मा द्वारा ए० एस० आई० को याची की दुकान में तलाशी एवं अभिग्रहण करने का निर्देश दिया गया था। तत्पश्चात्, आरक्षी निरीक्षक, बैंक मोड़ सर्किल को इस न्यायालय में स्वयं उपस्थित होने तथा कारण–पृच्छा दाखिल करने का निर्देश दिया गया है। पूर्वोक्त निरीक्षक प्रेम रंजन शर्मा ने अपनी कारण–पृच्छा दाखिल किया है, जिसमें उसने कथित किया था कि उसने सूचनादाता को ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया था। यहाँ यह उल्लिखित करना असंगत नहीं है कि सूचनादाता प्रेम रंजन शर्मा नामक निरीक्षक का अधीनस्थ है तथा वह निरीक्षक के निर्देश पर अपने सारे आधिकारिक कर्त्तव्य कर सकता है।

4. किसी नागरिक के घर तथा/या ईमारत में तलाशी करना एक गंभीर मामला है क्योंकि यह किसी नागरिक की निजता के अधिकार का उल्लंघन करता है। मामले की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए, विधि बनाने वाले ने तलाशी के उद्देश्य के लिये किसी व्यक्ति के घर तथा/या ईमारत में प्रवेश करने की पुलिसकर्मियों की शक्ति पर एक प्रतिबंध लगया है जबतक कि उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 94 के अधीन यथा उपबंधित जिलाधिकारी, अनुमंडल दंडाधिकारी या प्रथम श्रेणी के दंडाधिकारी द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त नहीं बनाया गया हो।

5. प्रस्तुत मामले में, मैं पाता हूँ कि सूचनादाता योगेन्द्र प्रसाद सिंह, सहायक आरक्षी उप–निरीक्षक, धनसार पुलिस थाना ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 94 के उल्लंघन में याची की दुकान में तलाशी एवं अभिग्रहण किया था तथा तद्द्वारा उसने संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन यथा वर्णित याची की निजता के अधिकार का उल्लंघन किया था। इस प्रकार, सहायक आरक्षी उप–निरीक्षक योगेन्द्र प्रसाद सिंह के आचरण तथा निरीक्षक प्रेम रंजन शर्मा एवं सूचनादाता के आचरण की भी एतद्द्वारा भर्त्सना की जाती है। उन्हें विधि के अनुसार अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने तथा परतर उद्देश्य के लिये शक्ति का दुरूपयोग न करने की चेतावनी दी जाती है। मैं आरक्षी अधीक्षक, धनबाद को इस न्यायालय द्वारा पारित टिप्पणीयों को पूर्वोक्त पुलिस पदाधिकारियों के ए० सी० आर० में प्रविष्ट कराने का निर्देश देता हूँ।

6. चूँकि, याची की दुकान में की गई तलाशी एवं अभिग्रहण पूर्णत: अवैधानिक तथा दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के विरूद्ध है, मैं इस आवेदन को अनुज्ञात करता हूँ तथा याची को 17.9.2013

तक अवर न्यायालय में आत्मसमर्पण करने का निर्देश देता हूँ तथा उस दशा में, अवर न्यायालय को दं० प्र० सं० की धारा 438(2) के अधीन यथा अधिकथित शर्त्त के अध्यधीन धनबाद (धनसार) पुलिस थाना केस सं० 317 वर्ष 2013 (जी० आर० सं० 1245 वर्ष 2013) के संबंध में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद को समाधान कराते हुए दस-दस हजार रुपये के दो प्रतिभू के साथ इतने ही रुपये का जमानत बंध पत्र प्रस्तुत करने पर उपरोक्त नामजद याची को रिहा करने का निर्देश दिया जाता है।

7. इस आदेश की एक प्रतिलिपि आवश्यक कार्रवाई हेतु फैक्स के माध्यम से आरक्षी अधीक्षक, धनबाद को भेजी जाय।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड

cuke

सचिव, बिहार खान कामगार संघ के प्रतिनिधित्व में उनके कर्मकार एवं एक अन्य

W.P. (L) No. 3015 of 2001. Decided on 19th July, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन।

संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970–धाराएँ 7 एवं 12–संविदा श्रमिक का नियमितिकरण–कार्य आकस्मिक तथा आन्तरायिक प्रकृति का है तथा किसी भी समय कार्य करने के लिये सभी कर्मकारों की आवश्यकता नहीं थी–धारा 7 के अधीन स्थापन के उपबंधों के अननुपालन तथा धारा 12 के अधीन अनुज्ञप्ति न होने के प्रभाव का परिणाम नियमितिकरण में नहीं होगा बल्कि इसके परिणामतः सी० एल० आर० ए० अधिनियम की धाराओं 23/24 के अधीन अभियोजन होगा–यह तथ्य कि कर्मकार प्रधान नियोक्ता के कर्मचारीगण थे जिन्हें संवेदक के माध्यम से नियोजित किया गया था तथा यह कि यह मात्र एक छलावरण है, अपेक्षित सामग्रियों के आधार पर सिद्ध किया जाना था जिसे सिद्ध करने में कर्मकार विफल रहे थे–आक्षेपित अधिनिर्णय अभिखंडित। (पैराएँ 20 से 30)

निर्णयज विधि.–(1992)1 SCC 695; (2008)12 SCC 275; AIR 1978 SC 1410; (1978) 4 SCC 257; (2002) 4 SCC 609; (2001) 7 SCC 1; (2005) 5 SCC 100—Relied; (2002) 3 JCR 398; (2010) AIR SCW 542; (1994) 5 SCC 304; (2009) 1 SCC 20; (2005) 10 SCC 792; (2011) 1 SCC 635; (2006) 4 SCC 1; (2007)2 SCC 324; (2008) AIR SCW 3996—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Mehta, For the Petitioner; Mr. S.K.Laik, For the Respondents.

अपरेश कुमार सिंह, न्यायमूर्ति.–पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

2. संदर्भ केस सं० 28 वर्ष 1992 में केन्द्र सरकार औद्योगिक अधिकरण सं० 1, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 26 दिसंबर, 2000 का अधिनिर्णय प्रबंधन-रिट याची द्वारा चुनौती के अधीन है, जिसके द्वारा इसे लोयाबाद कोक संयंत्र के नियोजन में 27 संबद्ध व्यक्तियों को नियमित करने, तथापि पिछले पारिश्रमिक के बगैर, का निर्देश दिया गया है।

3. याची-प्रबंधन के अनुसार, 28 मार्च, 1986 को तलछट कुंडों को साफ करने तथा एक मुनासिब दूरी पर धूल को बाहर करने के लिये संकर्म आदेश निर्गत किया गया था। 20 सितम्बर, 1989 को बाद

में तलछट कुंडों को साफ करने के लिये मेसर्स कामगार श्रमिक सहयोग समिति को संकर्म आदेश निर्गत किया गया था। ये कर्मकार धनबाद जिला के भीतर सहकारी समिति, अर्थात, कामगार श्रमिक सहयोग समिति लि॰ के सदस्य होने का दावा करते हैं जिसकी निबंधन सं॰ आई॰ डी॰ एच॰ एन॰ 1981 है। 1989 के पहले, लोयाबाद में कोक संयंत्र में कतिपय संविदा कार्यों को करने के लिये इसी प्रकार का कार्य श्री मुस्लिम मियाँ को प्रदान किया गया था। लोयाबाद कोल संयंत्र पंप किये हुए पानी की सहायता से कोक के चूल्हों को बुझाने के उद्देश्य के लिये इनकी सतह पर इन्हें पृथक करने के उपरान्त कच्चे कोयले की आपूर्ति करके कठोर कोक तथा उपउत्पाद विनिर्मित करता है। कोक के विनिर्माण तथा इसे बुझाने की प्रक्रिया में उत्पन्न कोक के धुएँ को पानी के साथ प्रवाहित होने तथा जमा होने के उद्देश्यों के लिये निर्मित छोटे कुंडों में जमा होने दिया जाता है। इस प्रक्रिया में, कुंड विभिन्न ऊंचाईयों तक भर जाते हैं। कोक के विनिर्माण तथा इसे बुझाने की प्रक्रिया में उत्पन्न कोक वायु की मात्रा पर निर्भर करते हुए इन तलछट कुंडों को सप्ताह में एक या दो बार साफ किये जाने की आवश्यकता होती है तथा संविदा पर श्रमिक नियोजित करके यह कार्य किया जाता है।

4. याची–प्रबंधन के अनुसार वर्ष 1989 में संबद्ध कामगारों द्वारा उक्त मुस्लिम मियाँ के विरूद्ध रखी गयी कुछ व्यथाओं के कारण, प्रबंधन इसी कार्य को निष्पादित करने के लिये उक्त सहकारी समिति को एक संविदा प्रदान करने पर सहमत हो गया था। यह भी कथित किया गया है कि समय–समय पर उपलब्ध कार्यों के आधार पर आवश्यकतानुसार कार्य आन्तरायिक तथा आकस्मिक प्रकृति का है। तथापि, संबद्ध व्यक्तियों ने याची–मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड के लोयाबाद कोक संयंत्र की नामावली में अपनी सेवाओं का नियमितीकरण इप्सित करते हुए अपने संघ के माध्यम से एक औद्योगिक विवाद उठाया था। 26 मार्च, 1992 को श्रम मंत्रालय, भारत सरकार ने निम्नांकित विवाद अधिनिर्णय के लिये निर्दिष्ट कर दिया था:–

> *^^D;k e l l Hkkjr dkfdx dky fyfeVM d yk;kckn dkd l;= dh ukekoyh e Jh lUnj nlkèk ,o 26 vU; d fu;ferhdj.k d fy; fcgkj [kku dkexkj l?k dh ekx U;k;lxr g\ vxj ,lk g] rc dkexkj dku l vurk"k d gdnkj g***

5. प्रत्यर्थी–संघ ने नोटिस किये जाने पर अपना लिखित कथन दाखिल किया था यह तर्क देते हुए कि वह लम्बे समय से स्थायी तथा सतत् प्रकृति का कार्य करते रहे हैं और अतएव वह नियमितीकरण के हकदार हैं। लिखित कथन परिशिष्ट 1 के तौर पर संलग्न है। नीचे लिखे कथनों में यह तर्क दिया गया है कि अभिकथित मध्यस्थ न तो संबद्ध कामगारों की कार्य का पर्यवेक्षण कर रहा है और न ही संबद्ध कामगारों को किसी उपकरण की आपूर्ति कर रहा है। प्रबंधन कामगारों को नियमित करने से इनकार करने में तथा उन्हें एक अभिकथित सहकारी समिति गठित करने के लिये बाध्य करने में श्रमिक विरोधी नीति का अनुसरण कर रहा है क्योंकि कर्मचारीगण प्रबंधन द्वारा नियोजित किये गये हैं तथा यह व्यवस्था एक छलावरण मात्र है।

6. प्रबंधन ने भी, 30 अक्टूबर, 1992 को परिशिष्ट 2 के माध्यम से अपना लिखित कथन दाखिल किया था, यह तर्क देते हुए कि तलछट कुंडों को साफ करने के लिये सहकारी समिति के संवेदक को संकर्म आदेश निर्गत किये गये हैं जैसा कि पहले ही इसपर ऊपर इंगित किया जा चुका है। उन्होंने यह पक्ष लिया था कि कार्य आकस्मिक, अस्थायी तथा आंतरायिक प्रकृति का था जिसके लिये नियमित नौकरियों की आवश्यकता नहीं है।

7. तथापि, आक्षेपित अधिनिर्णय द्वारा विद्वान अधिकरण ने प्रबंधन को संबद्ध व्यक्तियों की सेवाएँ नियमित करने का निर्देश दिया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित अधिनिर्णय की आलोचना की है यह निवेदन करके कि विद्वान अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया है कि याची–प्रबंधन ने संविदा श्रमिक (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धारा 7(2) के अधीन कोई निबंधन प्रमाण पत्र दाखिल

नहीं किया था यह दर्शाने के लिये कि इसने 1970 के अधिनियम के अधीन संवेदक नियोजित करने के लिये स्थापन पंजीकृत कराया था। उन्होंने यह दर्शाने के लिये कोई भी दस्तावेज दाखिल नहीं किया है कि अभिकथित सहकारी समिति 1970 के अधिनियम के अधीन एक अनुज्ञप्तिधारी है, अतएव, विद्वान अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया था कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा स्थापित विधि के सिद्धांत की दृष्टि में, यह आवश्यक रूप से कहा जाना होगा कि संबद्ध व्यक्ति प्रबंधन के कामगार हैं तथा प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था कुछ और नहीं बल्कि वास्तविक मुद्दे को छुपाने का प्रयास है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे यह निवेदन करते हैं कि तत्पश्चात् विद्वान अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया था कि पर्दा हटाने के उपरान्त, यह स्पष्ट है कि संबद्ध व्यक्ति प्रबंधन के प्रत्यक्ष नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण के अधीन कार्य कर रहे हैं और अतएव, संबद्ध व्यक्ति प्रबंधन के कामगार हैं। विद्वान अधिकरण ने कार्य की मात्रा 1,37,909.07 सी० एफ० टी० होने तथा सफाई की दर 30 रु० प्रति सी० एफ० टी० होने पर भी विचार किया था जो इंगित करता है कि कार्य की मात्रा लंबी अवधि की थी। विद्वान अधिकरण ने उपस्थिति पंजी प्रस्तुत करने में विफल रहने के कारण प्रबंधन के विरूद्ध एक प्रतिकूल निष्कर्ष भी दिया था और इसके लिए प्रबंधन द्वारा कोई स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया गया था।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने पूर्वोक्त निष्कर्षों को विधि की गंभीर त्रुटियाँ बताते हुए उनकी आलोचना किया है। विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि विद्वान अधिकरण का ये निष्कर्ष कि चूँकि प्रबंधन ने 1970 के अधिनियम की धारा 7(2) के अधीन कोई पंजीयन प्रमाण पत्र दाखिल नहीं किया था एवं उसी अधिनियम के अधीन सहकारी समिति की कोई अनुज्ञप्ति भी दाखिल नहीं की गयी थी और इस प्रकार प्रबंधन की व्यवस्था छलावरण है जो इस निष्कर्ष तक ले जाता है कि संबद्ध व्यक्ति कंपनी के कामगार हैं, **(1992)1 SCC 695** पैरा 22 में रिपोर्ट किये गये **दीना नाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के स्पष्टत: विरूद्ध हैं। वह **(2002)4 SCC 609** पैराओं 19 एवं 20 में रिपोर्ट किये गये **वृहत्तर मुंबई नगर निगम बनाम के० वी० श्रमिक संघ एवं अन्य** के मामले में हुए माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा करते हैं।

9. याची-प्रबंधन के अनुसार, माननीय उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णयों में अतिस्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि सी० एल० आर० ए० अधिनियम, 1970 के प्रावधानों के अननुपालन, अर्थात, उक्त अधिनियम की धारा 7 के अधीन स्थापन के अपंजीयन तथा धारा 12 के अधीन अनुज्ञप्ति न होने के प्रभाव स्वरूप संबद्ध कामगारों का नियमितिकरण नहीं होगा बल्कि इसके परिणामत: सी० एल० आर० ए० अधिनियम, 1970 की धाराओं 23/24 के अधीन अभियोजन होगा। अतएव, विद्वान अधिकरण यह निष्कर्ष नहीं दे सकता था कि संविदा श्रम व्यवस्था मिथ्या या छलावरण है। यह निवेदन किया गया है कि इस प्रभाव का निष्कर्ष भी कि पर्दा उठाने पर, प्रबंधन को संबद्ध कर्मचारियों पर नियोक्ता एवं कर्मचारी की प्रकृति का नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण रखने वाला पाया गया है, अभिलेख की त्रुटि पर आधारित है तथा विधि के एक दोष के तुल्य है। अपने निवेदन के समर्थन में, उन्होंने **(2011)1 635 SCC** पैराओं 10-13 में रिपोर्ट किये गये **महाप्रबंधक (ओ० एस० डी०) बनाम भरत लाल** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जहाँ, उनके अनुसार, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह जांचने के लिये कि संविदा मिथ्या या छलावरण है, जो देखा जाना है वह यह है कि संवेदक के स्थान पर प्रधान नियोक्ता वेतन का भुगतान करता है कि नहीं तथा प्रधान नियोक्ता कार्य का नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण करता है या नहीं। इन दोनों मुद्दों पर कोई निष्कर्ष नहीं है। संकर्म संवेदक को प्रदान किया गया था, जो विपत्र तैयार करता था तथा निष्पादित कार्य की मात्रा के आधार पर संवेदक सहकारी समिति के नाम से चेकों के माध्यम से भुगतान किये जाते थे। प्रदान किया गया कार्य तलछट कुंडों से (sludge)

हटाने के लिये था जिसका पर्यवेक्षण संवेदक द्वारा किया जाता था। विद्वान अधिकरण द्वारा की गयी गणनाओं को निर्दिष्ट करते हुए, यह भी निवेदन किया गया है कि वह त्रुटिपूर्ण हैं तथा साफ–सफाई की प्रयोज्य दर 30 रुपया प्रति सौ सी॰ एफ॰ टी॰ है तथा 30 रुपया प्रति सी॰ एफ॰ टी॰ नहीं तथा इस प्रकार कार्य अल्प अवधि का था एवं अतएव स्थायी तथा सतत् प्रकृति का नहीं था, अपितु यह आकस्मिक प्रकृति का था।

10. याची–प्रबंधन के विद्वान अधिवक्ता ने **(2005)5 SCC 100** पैराओं 21 एवं 26 में रिपोर्ट किये गये **प्रबंधक, आर॰ बी॰ आई॰ बनाम एस॰ मनी** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए एक प्रतिकूल निष्कर्ष देने की भी आलोचना की है। उनकी ओर से यह निवेदन किया गया है कि एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने के लिए, मामले के एक पक्षकार के लिये अन्य पक्षकार को दस्तावेज प्रस्तुत करने का निर्देश देने के लिए एक आवेदन करना होता है तथा न्यायालय/अधिकरण को ऐसे दस्तावेजों के प्रस्तुतिकरण के लिये एक आदेश पारित करना होता है। इस प्रकार आदेश किये गये दस्तावेज को प्रस्तुत करने में विफल होने पर ही, इसके परिणामत: प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जायेगा। प्रस्तुत मामले में, अधिकरण द्वारा ऐसा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था तथा कामगारों/संघ द्वारा केवल एक आवेदन किया गया था, अतएव, कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता था।

11. याची के विद्वान अधिवक्ता **(2001)7 SCC 1** में रिपोर्ट किये गये **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्कर्स** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ के निर्णय पर भी भरोसा करते हैं, ये निवेदन करने के लिये कि प्रस्तुत संकर्म में संवेदक का नियोजन सी॰ एल॰ आर॰ ए॰ अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन अधिसूचना के निर्गमन द्वारा निषिद्ध नहीं था और अतएव कामगार नियमितिकरण के हकदार नहीं हैं। वह **(2006)4 SCC 1** में रिपोर्ट किये गये **कर्नाटक राज्य बनाम उमा देवी** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय तथा **(2007)2 SCC 324** में रिपोर्ट किये गये **लेखा पदाधिकारी बनाम के॰ बी॰ रमन्ना** के मामले में हुए माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा करते हैं, यह निवेदन करने के लिये कि मात्र 240 दिनों का समापन अपने आप में स्थायी बना देने के एक दावे को उद्‌भूत नहीं करता है, जैसा कि आक्षेपित अधिनिर्णय में विद्वान अधिकरण द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है। अतएव, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित अधिनिर्णय विधि की गंभीर त्रुटि तथा तथ्य के निष्कर्षों की गंभीर त्रुटि से ग्रस्त है जो किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है तथा इसके विरूद्ध दोषपूर्ण रूप से प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला गया है जो समूचे अधिनिर्णय को कानून की नजर में दूषित बना देता है। अतएव, यह अभिखंडित किये जाने योग्य है।

12. दूसरी ओर, कामगारों के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उन 27 कामगारों के संबंध में संदर्भ किया गया है जो मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के लोयाबाद कोक संयंत्र की परिधि तथा परिसर के भीतर स्थायी प्रकृति का कार्य कर रहे थे। ये कामगार प्रबंधन के प्रत्यक्ष नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण के अधीन अपना कार्य करते रहे हैं एवं कार्य के निष्पादन के लिये सभी उपकरणों की आपूर्ति प्रबंधन द्वारा की जाती रही है। ये सारे कामगारों ने प्रत्येक पंचांग वर्ष में 240 से अधिक दिनों तक कार्य किया है और अतएव वह प्रबंधन के नियमित कर्मचारी हैं। प्रबंधन वास्तविक मुद्दे को छिपा रहा है तथा अपनी नामावली पर उसे नियमित करने से इनकार कर रहा है। कामगारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अधिकरण ने पाया था कि उन्होंने सी॰ एल॰ आर॰ ए॰ अधिनियम, 1970 का उल्लंघन किया था क्योंकि प्रबंधन 1970 की अधिनियम की धारा 7(2) के अधीन एक निर्बोधित स्थापन नहीं है और न ही अवर न्यायालय के समक्ष सहकारी समिति को कोई अनुज्ञप्ति दाखिल की गयी थी। ऐसी परिस्थितियों में, केवल कामगारों को अपने नियमित कर्मचारीगण मानने से बचने के लिये याची द्वारा की गयी व्यवस्था एक कागजी व्यवस्था थी। अतएव, एक बार अधिकरण द्वारा यह पाये जाने पर कि कामगारों का कार्य एक मिथ्या तथा छलावरण है, अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचने में उचित है कि ये कामगार बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन के प्रत्यक्ष नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण एवं नियोजन के अधीन हैं तथा नियमितिकरण के हकदार हैं।

13. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता 240 से अधिक दिनों की अवधि के लिए इन कामगारों के नियोजन से संबंधित दूसरे मुद्दे पर विद्वान अधिकरण द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों का भी समर्थन करते हैं क्योंकि उनका नियोजन एक पंचांग पर्ष में है। ये निवेदन किया गया है कि कामगारों के गवाह, अर्थात, WW1 हीरा लाल पासवान ने अधिकरण के समक्ष स्पष्टत: अभिसाक्ष्य दिया था कि जो कार्य उन्होंने किया था वह दैनिक आधार पर आठ घंटे की ड्यूटी वाला स्थायी प्रकृति का है तथा तलछट कुंड़ों की वायु साफ करने की प्रकृति का है। उन्हें बिजली मिस्त्री या सफाई के कार्य जैसे अन्य कार्य भी सौंपे जाते हैं जब कभी भी इसकी आवश्यकता होती है। विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि प्रबंधन द्वारा प्रस्तुत प्रदर्शों के आधार पर, जो कि प्रदर्श M2/1 के रूप में एक संकर्म आदेश है जो 24 जुलाई, 1982 से 31 मार्च, 1990 की अवधि के लिये है, अर्थात, आठ महीनों एवं सात दिनों की अवधि के लिये है, विद्वान अधिकरण ने कार्य की मात्र 1,37,909.07 गणना करने तथा सफाई की दर तीस रुपया प्रति सी० एफ० टी० गणना करने के उपरान्त पाया था कि कार्य की मात्रा 40,00,000 रुपये अधिक की है। वे निवेदन करते हैं कि विद्वान अधिकरण पूर्वोक्त परिकलन तथा प्रबंधन द्वारा दाखिल पारिश्रमिक–प्रपत्र के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि इन सारी 27 व्यक्तियों को एक महीने में लगभग 20 दिनों के लिये नियोजित किया जाता है और अतएव प्रबंधन का यह दावा कि कार्य आकस्मिक प्रकृति का है जो सप्ताह में केवल तीन या चार बार किया जाता है, झूठा सिद्ध होता है। वह यह भी निवेदन करते हैं कि संघ की ओर से कामगारों के गवाह द्वारा एक बार यह स्पष्ट रूप से अभिसाक्ष्य दिये जाने पर कि वह 240 से अधिक दिनों से कार्य कर रहे हैं, ऐसे आवश्यक दस्तावेज साक्ष्य पर प्रस्तुत करके तथा अन्य मौखिक साक्ष्य के माध्यम से इसे खंडित करने के प्रमाण का भार प्रबंधन को विस्थापित हो गया था जिसे करने में वह विफल रहे हैं। अतएव, अधिकरण उनके विरूद्ध एक प्रतिकूल निष्कर्ष पर पहुँचने में न्यायसंगत हैं चूँकि वह उपस्थिति पंजी भी प्रस्तुत करने में विफल रहे हैं।

14. पूर्वोक्त परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में, जब विद्वान अधिकरण ने दोनों मुद्दों पर कामगारों के पक्ष में निष्कर्ष दिये हैं तथा पाया है कि उन्होंने एक पंचांग पर्ष में 240 से अधिक दिनों तक कार्य किया है, वह बी० सी० सी० एल० के प्रबंधन के अधीन लोयाबाद कोल संयंत्र की स्थायी नामावली में नियमितिकरण के हकदार हैं। अतएव, आक्षेपित अधिनिर्णय पूर्णत: न्यायसंगत, उचित है एवं इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

15. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **हुसैनभाई, कालीगट एवं अलथ फैक्ट्री, तेजहिला संघ एवं अन्य** के मामले, जो **AIR 1978 SC 1410,** पैराओं 5 से 7 में रिपोर्ट किया गया था, में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया था, यह निवेदन करने के लिये कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्टत: वह मापदंड अधिकथित किया है जिसके अधीन किये व्यक्ति को एक कामगार माना जाना है।

16. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड की अंगार पार्था कोलियरी के प्रबंधन से संबंधित कर्मचारीगण बनाम पीठासीन पदाधिकारी, केन्द्र सरकार औद्योगिक अधिकरण (संख्या 2)** के मामले, जो **(2002)3 JCR 398** पैरा 2 में रिपोर्ट किया गया था, में दिये गये इस न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भी भरोसा किया है, जिसे, उनके अनुसार, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा भी सम्पुष्ट किया गया है। वह निवेदन करते हैं कि खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया था कि जब इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा चुका है कि संवेदक का नियोजन छलावरण मात्र है, कर्मकार नियमित किये जाने के हकदार होते हैं। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **2008 AIR SCW 3996** पैराओं 16 से 18 में रिपोर्ट किये गये **जी० एम० ओ० एन० जी० सी० बनाम ओ० एन० जी० सी० संविदात्मक कामगार संघ** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया है। वह **2010 AIR SCW 542** में रिपोर्ट किये गये **निदेशक, मत्सयन टर्मिनल डिविजन बनाम भिखूभाई मेछजी भाई** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के मामले पर भी भरोसा करते हैं। जहाँ तक प्रमाण के भार से संबंधित प्रश्न का सवाल है, याची के अनुसार एक बार कामगार द्वारा यह अभिसाक्ष्य दिये जाने

पर कि उसने 240 दिनों तक कार्य किया है, यह साबित करने का भार नियोक्ता पर विस्थापित हो जाता है कि उसने ऐसा नहीं किया है।

17. याची के विद्वान अधिवक्ता ने **(1994)5 SCC 304** पैरा 7 में रिपोर्ट किये गये **आर॰ के॰ पांडा एवं अन्य बनाम भारतीय इस्पात प्राधिकार एवं अन्य** के मामले, तथा **(2009)1 SCC** पृष्ठ 20 में रिपोर्ट किये गये **कानपुर विद्युत आपूर्ति कंपनी लिमिटेड बनाम शमीम मिर्जा** के मामले में भी दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है। उन्होंने **2005(10) SCC 792** में रिपोर्ट किये गये **बैंक ऑफ बड़ौदा बनाम घीमरबही एच॰ रवारी** के मामले में दिये गये माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया था। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, एक बार विद्वान अधिकरण द्वारा यह पाये जाने पर कि ये व्यक्ति एक संवेदक की एक मिथ्या व्यवस्था के माध्यम से प्रबंधन द्वारा नियोजित किये गये हैं तथा वह एक पंचांग वर्ष में 240 दिनों तक कार्य कर रहे हैं, वह उनकी सेवाओं में नियमित किये जाने के हकदार हैं क्योंकि जो कार्य उन्होंने किया था, वह सतत् प्रकृति का है और इस प्रकार, आदेश के साथ किसी हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि ये विधि की किसी त्रुटि से ग्रस्त नहीं है।

18. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है तथा आक्षेपित अधिनिर्णय एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का भी अवलोकन किया है। विद्वान अधिकरण ने यथा उपरोक्त पक्षकारों का मामला सामने रखने के उपरान्त दो मुद्दे विरचित किये हैं:–

"(i) D;k lc) 0;fDr okLro e ,d lond d dedkj g ;k icèku u mUg lond d dedkjk d rkj ij fpfUgr djd eí dk Niku dk i;kl fd;k g

(ii) D;k og dk;] ft l lc) 0;fDr dj jg g] ,d LFkk;h iÑfr dk g vkj D;k mudh mifLFkfr ,d ipkx o"k e 240 fnuk l vfèkd Fkh

मुद्दा सं॰ (i) का जवाब देते समय, पक्षकारों की ओर से प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी साक्ष्य तथा उनके लिखित कथनों में उनकी ओर से प्रस्तुत अभिवाकों पर भी परिचर्चा करने के उपरान्त, विद्वान अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि प्रबंधन ने सी॰ एल॰ आर॰ ए॰ अधिनियम, 1970 के अधीन उसके स्थापन के निर्बंधित होने का कोई निबंधन प्रमाण पत्र और न ही उक्त अधिनियम के अधीन अभिकथित सहकारी समिति को प्रदत्त कोई दस्तावेज या अनुज्ञप्ति दाखिल किया है। अतएव, इसने इस निष्कर्ष पर पहुँचने की कार्यवाही किया था कि चूँकि प्रबंधन का स्थापन निबंधित नहीं है और न ही तथाकथित संवेदक कामगार श्रमिक सहयोग समिति लिमिटेड 1970 की अधिनियम के अधीन एक अनुज्ञप्तिधारी है, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा स्थापित विधि की सिद्धांत की दृष्टि में यह आवश्यक रूप से कहा जाना होगा कि संबद्ध व्यक्ति प्रबंधन के कर्मकार हैं तथा प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था कुछ और नहीं बल्कि वास्तविक मुद्दों को छुपाने का प्रयास है। तथापि, मुद्दा सं॰ 1 पर विद्वान अधिवक्ता द्वारा पहुँचा गया यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से **(1992)1 SCC 695** पैरा 22 में रिपोर्ट किये गये **दीना नाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड के मामले (ऊपर)** में तथा **(2002)4 SCC 609** पैरा 22 में रिपोर्ट किये गये **वृहत्तर मुंबई नगर निगम बनाम के॰ वी॰ श्रमिक संघ एवं अन्य के मामले (ऊपर)** में भी माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल है।

19. (1992) 1 SCC 695 में रिपोर्ट किये गये **दीना नाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय उर्वरक लिमिटेड** के मामले में पैरा 22 में अंतर्विष्ट माननीय उच्चतम न्यायालय की राय इसमें नीचे उत्कथित की गयी है:–

^^ijk 22- bl i'u dh tkp djuk rFkk bldk fu.k; djuk mPp U;k;ky; dk dk;Z ugh g fd fdl h LFkkiu e fdl h ifØ;k] ifjpkyu e ;k fdl h vU; dk;Z

e lfonk Je dk fu;ktu gVk;k tkuk pkfg, ;k ughA blij ekey ij fopkj dju d mijkUr fu.k; djuk ljdkj dk dk; g] tl fd vfèkfu;e dh èkkjk 10 d vèkhu fopkfjr fd; tku dh vko';drk gA ***vfèkfu;e e micfèkr ,dek= ifj.kke ;g g fd tgk ;k rk ièkku fu;kDrk ;k Jfed lond Øe'kh èkkjk 9 (;k 7) rFkk 12 dk mYy?ku djrk g] rc vfèkfu;e d vèkhu ;Fkk vfHkdfYir nkfMd ikoèkku g ftld fy; vfèkfu;e dh èkkjkvk 23 ,o 25 dk fufn"V fd;k tk ldrk gA bl idkj] gekjk n< er g fd lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu dk;okfg;k e ek= bl dkj.k fd lond ;k fu;kDrk u vfèkfu;e ;k fu;ek d fdlh ikoèkku dk mYy?ku fd;k Fkk ;g U;k;ky; lfonk Jfed dk ièkku fu;kDrk d depkjhx.k cuu dk eku fy; tku d fy; dkbZ ijekn'k fuxr ugh dj ldrk gA*** *ge dukVd mPPk U;k;ky; ;k xtjkr mPp U;k;ky; d fu.k; (Åij) ij dkbZ nf"Vdk.k vfHk0;Dr djuk ugh pkgx D;kfd ;g fu.k; bl U;k;ky; e pukrh d vèkhu g] ijUr ge bl vfHky[k ij j[kx fd ge ièkku fu;kDrk d vith;u ;k Je lond d vuKfIrèkkjh u gku d ckj e enkI mPp U;k;ky; d mijkfYyf[kr lEijh{k.kk l vkj u gh iokDr ekey e ckEc mPp U;k;ky; d nf"Vdk.k l lger gA gekjh jk; g fd djy mPp U;k;ky; rFkk fnYyh mPp U;k;ky; d fu.k; lgh g rFkk ge bUg vuekfnr djr gA*

(j[kkdu ey ikB dk fgLLkk ugh g] cy nu d fy; fd;k x;k g)

20. माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि सी॰ एल॰ आर॰ ए॰ अधिनियम के प्रावधानों के अननुपालन, अर्थात, धारा 7 के अधीन स्थापन के अनिबंधन तथा धारा 12 के अधीन अनुज्ञप्ति न होने का प्रभाव का परिणाम नियमितिकरण नहीं होगा बल्कि इसके परिणामत: सी॰ एल॰ आर॰ ए॰ अधिनियम की धाराओं 23/24 के अधीन अभियोजन होगा। अतएव, विद्वान अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचने पर सही नहीं था कि निबंधन तथा अनुज्ञप्ति न होने से, एक संवेदक के माध्यम से कार्य निष्पादित करने के लिये प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था एक मिथ्या व्यवस्था तथा छलावरण है। यह विवादित नहीं है कि उक्त संवेदक के माध्यम से पूरे किये गये कार्य की प्रकृति 1970 के अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन समुचित सरकार द्वारा निर्गत किसी अधिसूचना द्वारा निषिद्ध नहीं की गयी है। ऐसे अधिसूचना के निर्गमन पर संबद्ध कामगारों द्वारा उठाये गये एक विवाद पर किये गये एक संदर्भ पर औद्योगिक निर्णयकर्त्ता को इस निष्कर्ष पर पहुँचना होता है कि क्या **(2001) 7 SCC 1** पैराओं 125 एवं 126 में रिपोर्ट किसे गये **सेल बनाम नेशनल यूनियन वाटरफ्रंट वर्क्स** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की संवैधानिक पीठ द्वारा अधिकथित विधि की दृष्टि में ऐसी व्यवस्था एक मिथ्या व्यवस्था तथा छलावरण है। अतएव, पूर्वोक्त निष्कर्ष स्पष्ट रूप से माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के विरूद्ध है तथा विधि में दोषपूर्ण हैं।

21. जहाँ तक याची-बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रबंधन के अधीन 240 दिनों से अधिक तक कामगारों के नियोजन से संबंधित दूसरे मुद्दे का सवाल है, विद्वान अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि ये सारे 27 कामगार एक पंचांग वर्ष में 240 दिनों से अधिक की अवधि के लिये प्रबंधन के नियमित नियोजन में थे। यह निष्कर्ष केवल एक कामगार गवाह WW1 हीरा लाल पासवान के अकेले साक्ष्य पर आधारित है।

22. तथापि, याची के विद्वान अधिवक्ता कहे जाने पर संबद्ध कामगार गवाह द्वारा अभिलेख पर लाये गये किसी ऐसे साक्ष्य का समाधान कराने में विफल रहे हैं, इसे स्थापित करने के लिये कि उसके अलावा, 26 अन्य कामगारों, जो उसी संदर्भ के अधीन नियमितिकरण की ईप्सा कर रहे थे, को भी ऐसी

प्रकृति के कार्य के निष्पादन के लिये 240 दिनों से अधिक लम्बी तथा उल्लेखनीय अवधि के लिये नियोजित किया गया था। एक विशिष्ट अवधि के लिये उनके नियोजन के संबंध में एक-एक कर्मकार के मामले में अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं है। प्रदर्श M2/1 24 जुलाई, 1983 से 31 मार्च, 1990 तक की अवधि के लिये संवेदक को निर्गत मात्र एक संकर्म आदेश है।

23. दूसरी ओर, प्रबंधन का यह मामला है कि कार्य आकस्मिक तथा आन्तरायिक प्रकृति का है तथा किसी भी समय सभी कामगारों को कार्य करने की आवश्यकता नहीं थी। वस्तुत:, उनके अनुसार कार्य केवल एक सप्ताह में तीन एवं चार बार किया जाता है। ऐसे स्पष्ट इनकार को देखते हुए, यह आवश्यक था कि विद्वान अधिकरण को 27 कामगारों में से प्रत्येक के नियमित नियोजन तथा उनके द्वारा किये गये कार्य की सतत् प्रकृति के संबंध में भी एक निष्कर्ष पर पहुँचने के लिये प्रत्येक कामगार के संबंध में नियमित आधार पर 240 दिनों की अवधि के लिये कार्य करने का साक्ष्य अभिलेख पर लाया जाना आवश्यक था। विद्वान अधिकरण केवल एक गवाह WW1 के आधार पर तथा वह भी उसके मौखिक साक्ष्य पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि ये सारे 27 कामगार एक विशिष्ट पंचांग वर्ष में 240 से अधिक दिनों तक नियोजित थे, और यह किसी उपयुक्त वैज्ञानिक गणना पर भी आधारित प्रतीत नहीं होता है। विद्वान अधिकरण ने कार्य की दर 30 रुपये प्रति सी॰ एफ॰ टी॰ मानते हुए कार्य की मात्रा का गणना किया था जो, प्रबंधन के अनुसार, स्पष्ट रूप से दोषपूर्ण है इस तथ्य की दृष्टि में कि 1989 में प्रयोज्य दर 30 रुपये प्रति सौ सी॰ एफ॰ टी॰ था। अधिकरण द्वारा की गयी गणना के अनुसार कार्य की कुल लागत 40 लाख रुपये के स्थान पर 40 हजार रुपया आनी चाहिए थी। अतएव, ये गणनायें केवल अनुमान पर हैं एवं उपयुक्त तथ्यों पर आधारित प्रतीत नहीं होती हैं।

24. विद्वान अधिकरण ने संबंधित व्यक्तियों की उपस्थिति पंजी प्रस्तुत करने में विफल होने पर प्रबंधन के विरूद्ध एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला है, यद्यपि ऐसी पंजी प्रस्तुत करने के लिये कामगारों के आवेदन पर प्रबंधन के विरूद्ध कोई आदेश पारित नहीं किया गया था, अतएव, विद्वान अधिकरण द्वारा निकाला गया ऐसा प्रतिकूल निष्कर्ष भी **(2005) 5 SCC 100** पैराओं 21 से 26 में रिपोर्ट किये गये **प्रबंधक, आर॰ बी॰ आई॰ बनाम एस॰ मनी** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध है। याची-प्रबंधन को प्रश्नाधीन उपस्थिति पंजी प्रस्तुत करने के लिये नहीं कहा गया था, अतएव, उसके विरूद्ध ऐसा निष्कर्ष निकालने में अधिकरण ने स्पष्ट रूप से त्रुटि किया था।

25. अतएव, पूर्वोक्त तथ्यों तथा परिस्थितियों में, यह प्रतीत होता है कि विद्वान अधिकरण अपने द्वारा विरचित दोनों मुद्दों पर दोषपूर्ण निष्कर्षों पर पहुँचा है। 1970 के अधिनियम की धाराओं 7 एवं 12 के प्रावधानों का अनुपालन करने में विफलता इस अपरिहार्य निष्कर्ष तक नहीं ले जाती है कि उक्त प्रावधानों के उल्लंघन के कारण संबद्ध कामगारों को प्रबंधन की सेवाओं के अधीन नियमित किया जाना है। ऐसे अन्य दांडिक परिणाम हैं जो ऐसे उल्लंघन के कारण उद्भूत होते हैं।

26. वर्तमान मामले में मात्र ऐसे निष्कर्ष पर विद्वान अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया है कि एक संवेदक के माध्यम से कार्य निष्पादित करने की प्रबंधन की व्यवस्था एक मिथ्या व्यवस्था तथा छलावरण थी। दूसरी ओर, विद्वान अधिकरण एकल कर्मकार गवाह WW. 1 के मौखिक साक्ष्य के आधार पर इस निष्कर्ष पर आया है कि सभी 27 कर्मकार बीसीसीएल के लोयाबाद कोक प्लांट के प्रबंधन के अधीन एक कैलेण्डर वर्ष में 240 या इससे अधिक दिनों के लिए स्थायी प्रकृति के कार्य में लगे थे तथा इसलिए नियमितिकरण के हकदार थे। उपरोक्त निष्कर्ष भी स्पष्टत: उस प्रभाव के तर्कपूर्ण साक्ष्य पर आधारित नहीं है।

27. उपरोक्त तथ्यों तथा परिस्थितियों एवं कारणों की संपूर्णता की दृष्टि में, प्रत्यर्थीगण कर्मकारों द्वारा भरोसा किए गए निर्णय उनकी सहायता करने नहीं आते क्योंकि विद्वान अधिकरण के निष्कर्ष स्पष्टत:

स्थापित विधि के अनुरूप नहीं है। कर्मकार निर्धारित करने के परीक्षण से संबंधित विधि की प्रतिपादना सुस्थापित है जैसा **हुसैनभाई, कालीगट बनाम द अलथ फैक्टरी तेझीला यूनियन एवं अन्य** के **AIR 1978 SC 1410** में प्रकाशित एवं साथ ही **(1978) 4 SCC 257** में प्रकाशित मामलों में अधिकथित किया गया है। वर्तमान मामले में औद्योगिक अधिकरण द्वारा अधिनिर्णय के लिए विरचित प्रश्न यह था कि क्या संबंधित व्यक्ति वास्तव में संवेदक के कर्मकार थे या प्रबंधन के। इस मुद्दे के निर्धारण के लिए विद्वान औद्योगिक अधिकरण को संदर्भ मामले के कार्यवाहियों के दौरान पेश किए गए तर्कपूर्ण साक्ष्य के मूल्यांकन के उपरांत एक निष्कर्ष पर पहुंचना था पर अधिकरण ऐसा करने में विफल रहा था। इस मुद्दे के संबंध में आक्षेपित अधिनिर्णय में विद्वान अधिकरण द्वारा निकाले गये निष्कर्ष कि एक संवेदक के माध्यम से कर्मकार का नियोजन मात्र एक छलावरण था जैसा इसमें इसके उपर पहले ही चर्चा किया जा चुका है, इसके द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों पर आधारित हैं कि प्रबंधन का निबंधन नहीं था जैसा 1970 के अधिनियम की धारा 7(2) के अधीन अपेक्षित है और न ही सहकारी समिति अर्थात संवेदक को ही उक्त अधिनियम की धारा 12 के अधीन एक अनुज्ञप्ति है। किन्तु यह निष्कर्ष स्पष्टत: **दीनानाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय उर्वरक निगम (ऊपर)** के मामले में दिये गये निर्णय की दृष्टि में दोषपूर्ण है जैसा उपर उत्कथित किया गया है। अत:, कर्मकार द्वारा भरोसा किया गया निर्णय जो **(2002) 3 JCR 398 (ऊपर)** में रिपोर्ट किया गया है, भी वर्तमान मामले में लागू नहीं होता है। आक्षेपित अधिनिर्णय **(1992) 1 SCC 695** में रिपोर्ट किये गये **दीनानाथ एवं अन्य बनाम राष्ट्रीय उर्वरक निगम** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल है। अत:, **(2008) 12 SCC 275** में रिपोर्ट किये गये **महाप्रबंधक, तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग, सिलचर बनाम तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग ठेका पर नियोजित कामगार संघ** के मामले में दिये गये याची द्वारा भरोसा किया गया निर्णय कर्मकार के मामले का समर्थन नहीं करता बल्कि यह प्रबंधन याची के मामले की सहायता करता है। अधिकरण ने 1970 के अधिनियम की धारा 7(2) तथा 12 के प्रावधानों के उल्लंघन पर निष्कर्ष निकाला था कि प्रबंधन द्वारा की गयी व्यवस्था एक छलावरण थी। इसका पता करने के लिए पर्दा उठाने का कोई गंभीर प्रयास किया गया प्रतीत नहीं होता है कि इन कर्मकारों का नियोजन एक संवेदक के माध्यम से प्रबंधन द्वारा फैलाये गये छलावरण या छल की प्रकृति के थे।

28. वर्तमान मामले में, कर्मकार ने केवल एक गवाह अर्थात W.W. 1 पेश किए थे तथा शेष 26 कर्मकारों के संबंध में एक कैलेण्डर वर्ष में 240 दिनों के अधिक की अवधि के लिए प्रबंधन के नियमित नियोजन के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं थे। अधिकरण ने प्रबंधन से कोई उपस्थिति पंजी प्रस्तुत करने का आदेश पारित नहीं किया था पर जैसा कि निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में निर्दिष्ट किया गया है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल उपस्थिति पंजी प्रस्तुत न करने पर प्रबंधन के विरूद्ध बिना किसी विधिक आधार या औचित्य के प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला था। अत:, **2010 AIR SCW 542** में प्रकाशित **निदेशक, फिशरीज टर्मीनल डिविजन बनाम भीखूभाई मेघजी भाई (ऊपर)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर याची का भरोसा एक बार फिर भ्रामक है। **आर॰ के॰ पांडा एवं अन्य बनाम स्टील ऑथोरिटी ऑफ इंडिया एवं अन्य के (1994) 5 SCC 304** में प्रकाशित मामले पर कर्मकार द्वारा विश्वास किया गया निर्णय एक बार फिर याची की किसी मदद का नहीं है क्योंकि उक्त निर्णय के पैरा 7 पर अभिव्यक्त मत द्वारा भी तथ्य के इस प्रश्न का निर्णय करना औद्योगिक न्यायनिर्णायक का कर्तव्य था कि क्या कर्मकार एक संवेदक के माध्यम से नियोजित प्रधान नियोक्ता के कर्मचारीगण थे तथा वह मात्र एक छलावरण एवं छद्मावरण है। तथ्य के इस प्रश्न को अध्यपेक्षित सामग्रियों के आधार पर संविदा श्रमिकों द्वारा स्थापित किया जाना था जिसे स्थापित करने में कर्मकार वर्तमान मामले में विफल

रहा हैं। सबूत के भार के प्रश्न पर प्रत्यर्थीगण कर्मकारों द्वारा भरोसा किया गया **कानपुर विद्युत आपूर्ति निगम लिमिटेड बनाम शमीम मिर्जा** के **(2009) 1 SCC** के मामले में निर्णय तथा साथ ही **(2005) 10 SCC 792** में प्रकाशित **बैंक ऑफ बड़ौदा बनाम घेमरभाई हरिभाई रबारी** के मामले का निर्णय कोई मदद नहीं करता है, क्योंकि एकल गवाह W.W. 1 के माध्यम से प्रस्तुत साक्ष्य प्रथम दृष्टया यह स्थापित नहीं कर सकता था कि ये सभी 27 कर्मकार एक कैलेण्डर वर्ष में 240 से अधिक दिनों की अवधि के लिए प्रबंधन के स्थायी नियोजन में थे, ताकि इसका खंडन करने के लिए नियोक्ता पर भार डाला जा सके।

29. यथा उपरोक्त ऐसी परिस्थितियों में, प्रत्यर्थीगण कर्मकारों द्वारा भरोसा किए गये निर्णय उनकी सहायता करने नहीं आता है क्योंकि विद्वान अधिकरण के निष्कर्ष सुस्थापित विधि के प्रतिकूल है तथा किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य पर आधारित नहीं है।

30. अत:, इन परिस्थितियों में आक्षेपित अधिनिर्णय विधि की गंभीर त्रुटियों एवं निष्कर्षों से ग्रस्त है जो मामले की तह तक जाता है एवं इसलिए विधि में कायम नहीं रखा जा सकता एवं तद्नुसार अभिखंडित किया जाता है। तद्नुसार रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy] dk;dkjh e[; U;k;kèkh'k ,o vferko dekj xIrk]
U;k;efr

भवन सिंह

cuke

हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 5328 of 2012. Decided on 19th September, 2013.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–एच॰ ई॰ सी॰ द्वारा जल प्रभार में 16-20 गुना वृद्धि–न तो प्रभार अत्यधिक हैं और न ही उनका वितरण भेदभावपूर्ण है–जल उपभोग की ओर प्रत्यर्थी द्वारा बढ़ाया गया प्रभार न लाभ न हानि आधार पर है और एच॰ ई॰ सी॰ के क्वार्टरों पर काबिज व्यक्तियों के बीच भार का वितरण बिल्कुल वैज्ञानिक प्रकृति का है–25,000/- रुपयों के व्यय के साथ पी॰ आई॰ एल॰ खारिज किया गया। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Amar Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. Rajiv Ranjan, For the H.E.C.; J.C. to A.A.G., For the State; Mr. R.R. Nath, For the R.M.C..

डी॰ एन॰ पटेल, कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश.–वर्तमान रिट याचिका निम्नलिखित प्रार्थना के लिए दाखिल की गयी है:–

^^fd tufgr ;kfpdk d :i e oreku fjV ;kfpdk e ;kph fjV ;kfpdk d ifjf'k"V 1 e vrfo"V vè;{k&lg&çcèk fun'kd] goh bthfu;fjx dkjikj'ku fyfeVM] jkph }kjk tkjh ifji= l0 5/2012 vkj 6/2012 oky fnukd 21.8.2012 d ifji=] ftld }kjk çR;Fkh l0 1u fnukd 1.8.2009 d çHkko l ty çHkkjk dh çpfyr nj dh ryuk e dgh vfèkd ty çHkkj dh nj dk 16-20 xuk voèk :i l c<k fn;k g tk vR;fèkd g vkj fcYdy vkèkkjghu g] d vfHk[kMu d fy, lefpr fjV@vkn'k@fun'k tkjh dju dh çkFkuk djrk g vkj ;kph vkx ?kjy ç;ktu l ,p0 b0 lh0 Vkmuf'ki e tykifr d lcèk e nj@çHkkj tk

*mfpr] ;fDr;Dr vkj fofèk d vu#i gk fu;r@fofuf'pr dju d fy, çR;Fkh l0 1 dk fun'k nu dh vkj vU; vurk"k vFkok vurk"kk ftudk ;kph oèk :i l gdnkj g d fy, çkFkuk djrk gA***

2. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड (संक्षेप के लाभ के लिए इसमें इसके बाद 'एच॰ ई॰ सी॰' के रूप में निर्दिष्ट) के कॉलोनी में निवास कर रहा है। जल प्रभार जो प्रत्यर्थी कंपनी प्रभारित कर रही थी को प्रचलित दर की तुलना में 16-20 गुना बढ़ा दिया गया है और, इसलिए, जनहित याचिका के रूप में वर्तमान याचिका दाखिल की गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे इंगित किया है कि विद्यमान प्रभार क्या थे और जल उपभोग का नया प्रभार क्या है जैसा प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा अधिरोपित किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा प्रभार 16-20 गुना नहीं बढ़ाया जा सकता है और, इसलिए, यह अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि सरकार शायद एच॰ ई॰ सी॰ से उच्चतर राशि वसूल कर रही थी लेकिन कर्मचारियों का सरकार के साथ कोई कठोर संबंध नहीं है। कॉलोनी एच॰ ई॰ सी॰ की है। वे अरसे से कॉलोनी में निवास कर रहे हैं। लगभग एक लाख लोग निवास कर रहे हैं और, इसलिए, आवेदन जनहित याचिका मानी जा सकती है और प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा अधिरोपित अत्यधिक जल प्रभार का आदेश अपास्त और अभिखंडित किया जा सकता है।

4. हमने प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि विस्तृत प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है और अंत में दिनांक 1 अगस्त, 2013 को शपथ पत्र दाखिल किया गया है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि एच॰ ई॰ सी॰ टाउनशिप के विभिन्न सेक्टरों में गैर-आवासीय भवनों, दुकानों, विद्यालयों, आदि और विभिन्न प्रकार के 11,109 आवासीय क्वार्टरों वाला टाउनशिप है। एच॰ ई॰ सी॰ झारखंड सरकार के पेयजल एवं स्वास्थ्य विभाग से भारी मात्रा में पेयजल एकत्रित करता है और उसे इसके लिए सरकार को 1323.14 लाख रुपयों की बड़ी राशि का भुगतान करता है जबकि एच॰ ई॰ सी॰ उपभोक्ताओं से 424.91 लाख रुपया वसूल करता है। एच॰ ई॰ सी॰ केंद्र सरकार के स्वामित्व वाली प्रबंधित, चलायी जा रही और वित्त प्रदान की गयी कंपनी है। झारखंड सरकार से भुगतेय पाया गया देय राशि काफी उच्चतर राशि है और इसलिए 228.46/- लाख रुपयों की वसूली में कमी के कारण उन्होंने जल प्रभार बढ़ा दिया है और न कि इससे लाभ कमाने के लिए बल्कि न लाभ न हानि के आधार पर। अनेक वर्षों बाद जल प्रभार बढ़ाए गए हैं और जल प्रभार के रूप में संग्रहित राशि का भुगतान झारखंड सरकार को किया जा रहा है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अगस्त, 2013 में दाखिल प्रतिशपथ पत्र में विस्तारपूर्वक इन आँकड़ों को दिया गया है और कंपनी जल प्रभार से लाभ नहीं कमा रही है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न प्रकार के क्वार्टरों में रहने वालों के उपर प्रभार का वितरण वैज्ञानिक है। इन विवरणों को भी अगस्त, 2013 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र में पैराग्राफ 12 में और आगे दिया गया है और निवेदन किया गया है कि बढ़ायी गयी जल प्रभार की राशि वस्तुत: विधि की दृष्टि में वृद्धि नहीं है क्योंकि झारखंड सरकार द्वारा जो भी प्रभारित किया जा रहा है उसे एच॰ ई॰ सी॰ क्वार्टरों में रहने वालों से उद्ग्रहित किया जाता है।

राँची नगर निगम द्वारा उद्ग्रहित तुलनात्मक चार्ट का उल्लेख पैराग्राफ 20 में किया गया है और निवेदन किया गया है कि एच॰ ई॰ सी॰ राँची नगर निगम द्वारा उद्ग्रहित प्रभार की तुलना कहीं कम राशि प्रभारित की जा रही है। परिस्थिति के इस संवर्ग में इस रिट याचिका को न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

5. राँची नगर निगम के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वस्तुतः उनका इस रिट याचिका से कोई लेना-देना नहीं है। राँची नगर निगम के विरुद्ध अभिकथन नहीं है और न ही राँची नगर निगम के विरुद्ध प्रार्थना है, तब भी राँची नगर निगम को मुकदमा में खींचा जा रहा है, अतः इस याचिका को व्यय के साथ खारिज किया जा सकता है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने राँची नगर निगम के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रचारित तर्कों को बराबर रूप से स्वीकार करते हैं और निवेदन करते हैं कि वे आवश्यक पक्ष नहीं हैं। झारखंड राज्य के विरुद्ध प्रार्थना नहीं है और न ही झारखंड राज्य के विरुद्ध कोई अभिकथन है, अतः यह याचिका व्यय के साथ खारिज की जा सकती है।

7. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए तथा इस रिट याचिका में दाखिल प्रतिशपथ पत्रों के परिशीलन के बाद हम मुख्यतः निम्नलिखित तथ्यों और कारणों से इस रिट याचिका को ग्रहण करने का कोई कारण नहीं देखते हैं:-

(i) oreku ;kfpdk e[;r% bl rF; d dkj.k nkf[ky dh x;h g fd ,p0 b0 lh0 }kjk ty çHkkj c<k fn;k x;k gA ijh ;kfpdk vR;Ur lhfer dN0;fDr;k l lcfèkr g tk diuh dh dkykfu;k e fuokl dj jg gA ***bl çdkj] ;g tufgr ;kfpdk fcYdy ugh gA***

(ii) ekey d rF;k dk n[kr g, ;g çrhr gkrk g fd le; d vR;Ur vkjHkre fcn ij çR;Fkh l0 1 }kjk fu;r ty çHkkj bruk de Fkk fd 228.46 yk[k #i;k dh deh Fkh D;kfd ,p0 b0 lh0 >kj[kM jkT; l ty [kjhn jgk gA çR;d [kjhn lE;d ifrQy d fy, vk'kf;r gA >kj[kM ljdkj }kjk ,p0 b0 lh0 dk fn;k x;k fcy jkf'k 1323.14 yk[k #i;k g tlk ,p0 b0 lh0 }kjk fnukd 1 vxLr] 2013 dk nkf[ky çfr 'kiFk i= e dfFkr fd;k x;k gA ljdkj u tykifr dk nj c<k fn;k g vkj çR;Fkh l0 1 }kjk ty çHkkj c<k fn;k x;k gA

(iii) jkph uxj fuxe {k= ,p0 b0 lh0 d vkoklh; dkykuh {k= d fudVre gA jkph uxj fuxe vkj ,p0 b0 lh0 }kjk mnxfgr çHkkj ,p0 b0 lh0 }kjk nkf[ky çfr 'kiFk i= d ijk 20 e fufn"V fd, x, gA bu njk dk n[kr g, ;g çrhr gkrk g fd ,p0 b0 lh0 jkph uxj fuxe }kjk çHkkfjr nj dh ryuk e de nj ij çHkkfjr dj jgk gA

(iv) bld vfrfjDr] DokVjk d vkdkjk dk n[kr g, ljdkjh vfèklpuk d erkfcd c<k, x, çHkkjk dk oKkfud :i l foHkkftr fd;k x;k g] cM DokVjk d fy, ty çHkkj vfèkd gA bl çdkj] u rk çHkkj vR;fèkd g vkj u gh mudk forj.k HknHkkoi.k gA bld foijhr] çR;Fkh l0 1 }kjk ty miHkkx dh vkj c<k;k

x;k çHkkj fcYdy u ykHk u gkfu vkèkkj ij g vkj ,p0 b0 lh0 d DokVjk ij dkfct 0;fDr;k d chp Hkkj dk forj.k fcYdy oKkfud çÑfr dk gA

(v) DokVj d fcYV&vi {k= d erkfcd ty çHkkj dk forj.k fcYdy >kj[kM ljdkj dh vfèklpuk d vudy g tk ,p0 b0 lh0 }kjk nkf[ky fnukd 1 vxLr] 2013 d çfr'kiFk i= d ifjf'k"V B ij gA

8. पूर्वोक्त तथ्यों, परिस्थितियों और कारणों की दृष्टि में हम इस जनहित याचिका को ग्रहण करने का कोई कारण नहीं देखते हैं। अतः, यह जनहित याचिका एतद्द्वारा 25,000/- रुपयों के व्यय के साथ खारिज की जाती है जिसे याची द्वारा झारखंड विधिक सेवा प्राधिकरण, न्याय सदन, डोरंडा, राँची के समक्ष आज के दिन से दस सप्ताह की अवधि के भीतर जमा किया जाएगा।

9. रजिस्ट्री को इस आदेश की प्रति को सचिव, झारखंड विधिक सेवा प्राधिकरण को भेजने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

निकोलस सूरीन

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (S) No. 5184 of 2011. Decided on 23rd October, 2013.

सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–अस्वीकरण–याची ने अपने पिता की मृत्यु के बाद समय के भीतर आवेदन दिया था–प्रत्यर्थीगण ने इसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि याची ने वेटेज प्वाइंट प्रणाली के अंतर्गत 53 अंक पाया था–याची ने अपना मामला बनाने के लिए कि उसके पास अपने पिता की मृत्यु के बाद उसके नाम में भूमि का काफी छोटा टुकड़ा था, उसके पूर्वज के नाम में भूमि के न्यागमन के किसी विवरण को संलग्न नहीं किया है–प्रत्यर्थीगण को वास सुविधा के बिन्दु पर शून्य अंक देने का दोष नहीं दिया जा सकता था–वेटेज प्वाइंट प्रणाली के आधार पर मूल्यांकन के बाद 53 अंक दिए जाने में दोष नहीं निकाला जा सकता है–रिट याचिका में हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है। (पैरा 6)

निर्णयज विधि.–2001 (1) PLJR 711—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s. Ram Kishore Prasad, Praful Jojo, For the Petitioners; M/s. Bijay Kumar Pathak, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची प्रत्यर्थी सं॰ 5 वरीय महाप्रबंधक, बी॰ एस॰ एन॰ एल॰, राँची के डिविजनल इंजीनियर (प्रशासन) कार्यालय द्वारा जारी दिनांक 15.7.2011 के आदेश का अभिखंडन इप्सित कर रहा है जिसके द्वारा अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए उसका आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है। वह दिनांक 26.2.2003 को अपने पिता माइकल सूरीन, जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हो गयी, की मृत्यु के बदले अनुकंपा के आधार पर उसको नियुक्त करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाना भी इप्सित करता है।

3. याची को समस्त अध्यपेक्षित कागजात के साथ अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए दिनांक 9.3.2004 को आवेदन देता हुआ कहा जाता है। याची का प्रतिवाद यह है कि मनमाने तरीके से मापदंड के अधीन विहित कमतर अंकों को देकर पूर्णत: अवैध आधार पर इसको अस्वीकार करने के लिए लगभग आठ वर्षों के विलंब के बाद निर्णय लिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता प्रत्यर्थीगण के प्रतिशपथ पत्र के प्रत्युत्तर के रूप में निवेदन करते हैं कि याची को वास सुविधा के प्रश्न पर 10 अंक दिए जाने चाहिए थे क्योंकि उसके पास घर और भूमि नहीं है किंतु उसे प्रत्यर्थीगण द्वारा शून्य अंक दिया गया है। याची के अनुसार, कट–ऑफ बिंदु 55 अंक पर नियत किया गया था। याची को मनमाने रूप से 53 अंक दिया गया है जिसका परिणाम अनुकंपा पर नियुक्ति से इनकार में हुआ। याची का मुख्य प्रतिवाद यह है कि वेटेज प्वायंट प्रणाली जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा विकसित किया गया है के अधीन वास सुविधा के बिंदु पर शून्य अंकों का मनमाना आवंटन आवेदकों के मामले में किया गया है। याची की ओर से प्रतिवाद किया गया है आवेदन देते समय अंचलाधिकारी, कामदारा, जिला गुमला द्वारा जारी आवासीय प्रमाण पत्र दिया गया था जिसमें याची के प्रपितामह लिडा मुंडा के नाम में 2.1 एकड़ भूमि उपदर्शित की गयी थी। किंतु याची ने प्रत्यर्थी के उत्तर के प्रत्युत्तर के रूप में स्वयं द्वारा तैयार की गयी वंशावली संलग्न किया है जिसके अनुसार मूल संपत्ति उसके प्रपितामह लिडा मुंडा के नाम में थी जो अनेक छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित हो गयी। याची अपने प्रपितामह लिडा मुंडा की चौथी पीढ़ी का और माइकेल सूरीन का पुत्र है। अत: उसने अपने प्रपितामह के नाम में कुल आवासीय पूर्वज भूमि का एक अत्यन्त छोटा टुकड़ा विरासत में पाया है। वह निवेदन करता है कि उसके पास घर नहीं है और वह राँची में किराए के घर में रह रहा है। ऐसी परिस्थितियों में, प्रत्यर्थीगण उस आधार पर अंक देते हुए याची के पास समुचित वास सुविधा की कमी को विचार में लेने के लिए बाध्य थे। अत: अनुकंपा नियुक्ति के उसके मामले को अस्वीकार करता आक्षेपित आदेश अवैध है और इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

4. प्रत्यर्थीगण ने आक्षेपित आदेश में अंतर्विष्ट दृष्टिकोण का समर्थन किया है। प्रत्यर्थी बी॰ एस॰ एन॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि ऐसे आवेदकों, जो अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करते हैं के परस्पर विरोधी दावों पर विचार करने के लिए वैज्ञानिक आधार विकसित किया गया है। नीति, जो दिनांक 27.6.2007 के परिशिष्ट–A5 पर अंतर्विष्ट है, के अनुसार, ऐसे बिंदुओं जैसे (1) आश्रित का वेटेज, (2) मूल परिवार पेंशन, (3) बची हुई सेवा, (4) आवेदक का वेटेज, (5) टर्मिनल लाभ (6) वास–सुविधा के लिए अंक देने के लिए वेटेज प्वायंट प्रणाली विकसित की गयी है। परिवार के किसी उत्तरजीवी सदस्य के मासिक आय और विलंबित अनुरोध के शीर्ष के अधीन ऋणात्मक अंक भी विकसित किए गए हैं। ऐसे तरीके से निर्धारण मापदंड अधिकथित किया गया है। पचपन अथवा अधिक शुद्ध अंकों वाले मामलों को अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए कॉरपोरेट हाई पॉवर कमिटी द्वारा विचार के पात्र के रूप में प्रथम दृष्टया माना जाएगा। पचपन अंक से कम के मामलों को अनावश्यक माना जाएगा और अस्वीकार कर दिया जाएगा। ऐसे मापदंड पर आधारित, प्रत्यर्थीगण ने प्रकट किया है कि याची ने वेटेज प्वायंट प्रणाली के अधीन ऐसी समस्त संगणित बिंदुओं पर 53 अंक पाया है। यह सत्य है कि वास सुविधा के बिंदु पर याची स्वयं याची द्वारा प्रस्तुत आवासीय प्रमाण पत्र के आधार पर, जो प्रकट करता है कि उसके पूर्वजों

के पास 2.1 एकड़ भूमि थी, शून्य अंक दिया गया है। ऐसी परिस्थिति में, उसे कोई वासु सुविधा नहीं रखने वाले के रूप में नहीं कहा जा सकता है, अत: याची को शून्य अंक दिया गया है। यह निवेदन किया गया है कि याची अब प्रत्युत्तर जिसमें उसने वंशावली दिया है दाखिल करके यह कथन करते हुए कि उसके पास घर नहीं है और वह किराए के घर में रह रहा है; अपने मामले को सुधारने का प्रयास कर रहा है। अत: अस्वीकरण के आक्षेपित आदेश में कोई दुर्बलता नहीं जोड़ी जानी चाहिए जिसके द्वारा याची का दावा अस्वीकार कर दिया गया है।

5. प्रत्युत्तर में याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थीगण ने मनमाने रूप से आठ वर्षों तक मामले को लंबित रखा और अनुकंपा नियुक्ति के मामले में प्रत्यर्थीगण के इस रवैये को **अमीन अंसारी बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 2001 (1) PLJR 711, में पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अननुमोदित किया गया है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। अभिलेख पर लाए गए और इस आदेश के आरंभिक भाग में दर्ज किए गए तथ्यों से वह प्रकट है कि याची ने दिनांक 26.2.2003 को अपने पिता की मृत्यु के बाद समय के भीतर अर्थात् दिनांक 9.3.2004 को आवेदन दिया था। प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 15.7.2011 को इसे इस आधार पर अस्वीकार कर दिया है कि याची ने परिशिष्ट A5 के मुताबिक वेटेज प्वायंट प्रणाली, जो दिनांक 27.6.2007 के परिशिष्ट A5 के रूप में संलग्न प्रत्यर्थी बी० एस० एन० एल० के नीति के मुताबिक विकसित मापदंड है, के अधीन 53 अंक पाया है। यह प्रतीत होता है कि जी० एम० टी० डॉ०, राँची से दिनांक 28.3.2005 को जरुरी दस्तावेजों को प्राप्त करने के बाद दिनांक 4.5.2005 को हाई पावर कमिटी द्वारा याची के मामले पर विचार किया गया था। उक्त कमिटी ने उपलब्ध रिक्ति के अनुरुप 32 मामलों पर विचार किया जहाँ याची का नाम प्रतीक्षा सूची में क्रमांक 70 पर आता था। तत्पश्चात, बी० एस० एन० एल० मुख्यालय ने अनुकंपा आधार पर नियुक्ति स्थगित कर दिया था। वेटेज प्वायंट प्रणाली नीति विकसित की गयी थी, जिसे दिनांक 19.8.2013 को प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल पूरक शपथपत्र के दिनांक 27.6.2007 के परिशिष्ट A5 के रूप में संलग्न किया गया है, जिसके अधीन षष्टम सर्किल उच्चतर शक्ति कमिटी के समक्ष उसका मामला रखकर पुनर्विचार किया गया था। दिनांक 15.7.2011 को ऐसे मूल्यांकन पर याची वेटेज प्वायंट प्रणाली के अधीन विभिन्न बिंदुओं के मूल्यांकन के आधार पर 53 अंक पाया है जबकि पात्र उम्मीदवार के रूप में ऐसे किसी आवेदक को मानने के लिए न्यूनतम नेट प्वायंट 55 अंक नियत किया गया है। यह भी सत्य है कि आवेदन दाखिल करते समय याची ने यह दर्शाते हुए कि वह ग्राम सालेगुटु, पी० ओ० सालेगुटु, पी० एस० कामदारा, जिला गुमला का निवासी है और लिडा मुंडा की संतति है जिसके नाम में 2.1 एकड़ भूमि रजिस्टर की गयी थी। किंतु, याची ने अपना मामला बनाने के लिए कि अपने पिता की मृत्यु के बाद उसके नाम में भूमि का अत्यंत छोटा टुकड़ा है, अपने पूर्वज के नाम में उक्त भूमि के न्यागमन का कोई विवरण संलग्न नहीं किया है। उक्त दस्तावेज अर्थात् स्वयं याची द्वारा तैयार की गयी वंशावली जिसे अभिलेख पर लाया गया है और दिनांक 21.10.2013 को याची की ओर से दाखिल उत्तर के प्रत्युत्तर में संलग्न किया गया है। अत:, प्रत्यर्थीगण को वास सुविधा के बिंदु पर शून्य अंक देने का दोष नहीं दिया जा सकता था क्योंकि याची का अपना प्रमाणपत्र दर्शाता है कि उसके पूर्वज के नाम में 2.1 एकड़ भूमि थी। इन परिस्थितियों में, वेटेज प्वायंट प्रणाली, जो आक्षेपित आदेश जारी किए जाने का आधार है, के आधार पर 53 अंक देने में दोष नहीं निकाला जा सकता है। अत:, रिट याचिका में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. किंतु, प्रत्यर्थीगण याची के मामले पर पुनर्विचार करेंगे यदि वह युक्तियुक्त समय के भीतर किसी तर्कपूर्ण और विधित: ग्राह्य दस्तावेजों द्वारा यह दर्शाने में सक्षम होता है कि उसके पास अपने नाम में भूमि का अत्यन्त छोटा टुकड़ा है अथवा उसके पास कोई वास सुविधा नहीं है।

8. तद्नुसार, पूर्वोक्त तरीके से इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

मेघना रुबी कच्छप

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 7663 of 2012. Decided on 19th September, 2013.

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005—धाराएँ 18 एवं 20—दंड–इप्सित की गयी सूचना प्रदान करने में विफलता–दंड अधिरोपित करने के पहले याची को सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था–धारा 18(2) के अधीन अनुध्यात जाँच आरंभ नहीं की गयी थी–आवेदक द्वारा इप्सित की गयी सूचनाओं में से कुछ निश्चय ही लोकहित में नहीं है और न ही आर० टी० आई० अधिनियम, 2005 की परिधि के अंतर्गत हैं–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने का दायी है। (पैराएँ 11 से 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Kumar, For the Petitioner; Mr. Sumit Prakash, For the Respondent Nos. 1 & 2.

आदेश

याची अपील सं० 2672 वर्ष 2011 मुख्य सूचना आयुक्त, झारखंड सरकार, राँची द्वारा पारित दिनांक 24.9.2012 के आदेश को चुनौती देते हुए इस न्यायालय के पास आयी है।

2. रिट याचिका में प्रकट किए गए मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची जिला गिरिडीह में बिरनी में प्रखंड विकास पदाधिकारी के रूप में पदस्थापित है। दिनांक 19.7.2011 को व्यक्तियों जो वृद्धावस्था पेंशन का लाभ ले रहे हैं से संबंधित अनेक सूचनाओं को इप्सित करते हुए किसी भुवनेश्वर मोदी द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (संक्षेप में 'अधिनियम') के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था। चूँकि इप्सित की गयी सूचना इतनी अधिक थी कि इनको सांविधिक अवधि के अंतर्गत प्रदान करना लोक सूचना अधिकारी के लिए संभव नहीं था, किंतु दिनांक 14.10.2011 को पेंशन सत्यापन रिपोर्ट के साथ कतिपय सूचनाएँ आवेदक को प्रदान की गयी थीं। आवेदक अर्थात् भुवनेश्वर मोदी उसको सूचना प्रदान किए जाने के लिए निर्देश इप्सित करते हुए उपायुक्त, गिरीडीह के पास गया और तत्पश्चात उसने अपील सं० 2672 वर्ष 2011 दाखिल किया जिसमें दिनांक 24.9.2012 के आदेश द्वारा याची पर 10,000/- रुपया का दंड अधिरोपित किया गया था और इसलिए याची वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आयी है।

3. याची के और प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आवेदक द्वारा इप्सित की गयी सूचनाएँ इतनी अधिक थीं कि 30 दिनों के सांविधिक अवधि के अंतर्गत समस्त सूचनाओं की आपूर्ति करना

संभव नहीं था। आवेदक ने इतना भिन्न सूचना इप्सित किया था जिनको जुटाने और आवेदक को मुहैया कराने में गंभीर प्रयासों की आवश्यकता थी। उन्होंने आगे निवेदन किया कि आवेदक द्वारा इप्सित की गयी सूचना लोक हित में नहीं है बल्कि आवेदक लोकहित में सूचना इप्सित करने के बहाने लोक प्राधिकारियों एवं अन्य को परेशान किया करता था। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण मुख्य चुनाव आयुक्त द्वारा नहीं किया गया है और याची पर 10,000/- रुपया का दंड अधिरोपित किया गया है जो न्यायोचित नहीं है और विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. उक्त के विरुद्ध झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया है और निवेदन किया है कि दिनांक 24.9.2012 के आक्षेपित आदेश से यह प्रतीत होगा कि याची को कारण बताओ नोटिस के प्रति अपना उत्तर दाखिल करने का पर्याप्त अवसर दिया गया था किंतु चूँकि याची अपना उत्तर दाखिल करने में विफल रही, उस पर 10,000/- रुपयों का दंड अधिरोपित किया गया है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि मूल आवेदक अर्थात् भुवनेश्वर मोदी को वर्तमान कार्यवाही में पक्ष नहीं बनाया गया है और प्रत्यर्थी सं॰ 3 अर्थात् मुख्य चुनाव आयुक्त को मामले में सुने जाने की आवश्यकता है।

6. प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवादों का उत्तर देते हुए याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि याची ने अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया के उल्लंघन में दंड का आदेश पारित करने के लिए आयोग के अधिकारिता को चुनौती दिया है, आवेदक इस मामले में आवश्यक पक्ष नहीं है और आयोग के मामले में सुनने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि आयोग सांविधिक निकाय है जो झारखंड राज्य में कार्यशील है और झारखंड राज्य का वर्तमान कार्यवाही में सम्यक रूप से प्रतिनिधित्व किया गया है।

7. मामले के तथ्यों पर आने से पहले अधिनियम के अधीन प्रावधानों पर गौर करना लाभदायी होगा। अधिनियम की धारा 18 आयोग की शक्ति और कार्य पर विचार करती है और धारा 19 अपील के लिए फोरम प्रावधानित करती है। अधिनियम की धारा 20 दंडों पर विचार करती है।

8. अधिनियम की धाराओं 18 और 20 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*18. **lpuk vk;kxk dh 'kfDr;k vkj dk;-&**(1) bl vfèkfu;e d micèkk d vèkhu jgr g, ;FkkfLFkfr dUnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dk ;g dr0; gkxk fd og fuEufyf[kr fdlh , l 0;fDr l f'kdk;r ikIr dj vkj mldh tkp dj &*

(a) tk] ;FkkfLFkfr] fdlh dUnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh dk bl dkj.k l vujkèk iLrr dju e vleFk jgk g fd bl vfèkfu;e d vèkhu ,l vfèkdkjh dh fu;fDr ugh dh xbi g ;k] ;FkkfLFkfr] dUnh; lgk;d ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; lgk;d ykd lpuk vfèkdkjh u bl vfèkfu;e d vèkhu lpuk ;k vihy d fy, èkkjk 19 dh mièkkjk (1) e fofufn"V dUnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh vFkok ojh; vfèkdkjh ;k ;FkkfLFkfr] dUnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dk mld vkonu dk Hktu d fy, Lohdkj dju l bdkj dj fn;k g(

(b) ftl bl vfèkfu;e d vèkhu vujkèk dh xb dkb tkudkjh rd igp d fy, bdkj dj fn;k x;k g(

(c) ftl bl vfèkfu;e d vèkhu fofufn"V le;&lhek d Hkhrj lpuk d fy, ;k lpuk rd igp d fy, vujkèk dk mÙkj ugh fn;k x;k g(

(d) ftll ,lh Qhl dh jde dk lnk; dju dh vi{kk dh xb g] tk og vufpr le>rk g(

(e) tk ;g fo'okl djrk g fd mls bl vfèkfu;e d vèkhu vi.k] Hke e Mkyu okyh ;k feF;k lpuk nh xb g(vkj

(f) bl vfèkfu;e d vèkhu vfHky[kk d fy, vujkèk dju ;k mu rd igp ikIr dju l lcfèkr fdlh vU; fo"k; d lcèk eA

(2) tgk ;FkkfLFkfr] dUnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dk ;g lekèkku gk ldrk g fd ml fo"k; e tkp dju d fy, ;fDr;Dr vkèkkj g ogk og bld lcèk e tkp vkjEHk dj ldxkA

(3) ;FkkfLFkfr] dUnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dk bl ckr d vèkhu fdlh ekey e tkp djr le; ogh 'kfDr;k ikIr gkxh tk fuEufyf[kr ekeyk d lcèk e flfoy ifØ;k lfgrk] 1908 d vèkhu fdlh okn dk fopkj.k djr le; flfoy U;k;ky; e fufgr gkrh g vFkkr %&

(a) fdUgh 0;fDr;k dk leu djuk vkj mUg mifLFkr djuk ;k 'kiFk ij ekf[kd ;k fyf[kr lk{; nu d fy, vkj nLrkot ;k pht i'k dju d fy, mudk foo'k djuk(

(b) nLrkotk d idVhdj.k vkj fujh{k.k dh vi{kk djuk(

(c) 'kiFki= ij lk{; dk vfHkxg.k djuk(

(d) fdlh U;k;ky; ;k dk;ky; l fdlh ykd vfHky[k ;k mldh ifr;k exkuk(

(e) lkf{k;k ;k nLrkotk dh ijh{kk d fy, leu tkjh djuk(vkj

(f) dkb vU; fo"k; tk fofgr fd;k tk,A

(4) ;FkkfLFkfr] lln ;k jkT; foèkkueMy d fdlh vU; vfèkfu;e e vrfo"V fdlh vlxr ckr d gkr g, Hkh] ;FkkfLFkfr] dUnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx bl vfèkfu;e d vèkhu fdlh f'kdk;r dh tkp dju d nkjku ,l fdlh vfHky[k dh ijh{kk dj ldxk] ftl ;g vfèkfu;e ykx gkrk g vkj tk ykd ikfèkdkjh d fu;=.k e g vkj mld }kjk ,l fdlh vfHky[k dk fdUgh Hkh vkèkkjk ij jkdk ugh tk,xkA

20- 'kkfLr-&(1) tgk fdlh f'kdk;r ;k vihy dk fofu'p; djr le;] ;FkkfLFkfr] dnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dh ;g jk; g fd] ;FkkfLFkfr] dnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh u] fdlh ;fDr;Dr dkj.k d fcuk lpuk d fy,] dkb vkonu ikIr dju l bdkj fd;k g ;k èkkjk 7 dh miènkjk (1) d vèkhu lpuk d fy, fofufn"V le; d Hkhrj lpuk ugh nh g ;k vlnHkkoiod lpuk d fy, vujkèk l bdkj fd;k g ;k tkuc>dj xyr]

vi.k ;k Hkked lpuk nh g ;k ml lpuk dk u"V dj fn;k g tk vujkèk dh fo"k; Fkh ;k fdlh jhfr l lpuk nu e ckèkk Mkyh g] rk og ,l iR;d fnu d fy,] tc rd vkonu ikIr fd;k tkrk g ;k lpuk nh tkrh g] nk lk ipkl #i, dh 'kkfLr vfèkjkfir djxk] rFkkfi] ,lh 'kkfLr dh dy jde iPphl gtkj #i; l vfèkd ugh gkxh %

ijr ;FkkfLFkfr] dnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh dk ml ij dkb 'kkfLr vfèkjkfir fd, tku d io] luokb dk ;fDr;Dr volj fn;k tk,xk %

ijUr ;g vkj fd ;g lkfcr dju dk Hkkj fd mlu ;fDr;Dr :i l vkj rRijrkiod dk; fd;k g ;FkkfLFkfr] dUnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh ij gkxkA

(2) tgk fdlh f'kdk;r ;k vihy dk fofu'p; djr le;] ;FkkfLFkfr] dnh; lpuk vk;kx ;k jkT; lpuk vk;kx dh ;g jk; g fd] ;FkkfLFkfr] dnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh] fdlh ;fDr;Dr dkj.k d fcuk vkj yxkrkj lpuk d fy, dkb vkonu ikIr dju e vlQy jgk g ;k mlu èkkjk 7 dh mièkkjk (1) d vèkhu fofufn"V le; d Hkhrj lpuk ugh nh g ;k vlnHkkoiod lpuk d fy, vujkèk l bdkj fd;k g ;k tkuc>dj xyr] vi.k ;k Hkked lpuk nh g ;k ,lh lpuk dk u"V dj fn;k g] tk vujkèk dk fo"k; Fkh ;k fdlh jhfr l lpuk nu e ckèkk Mkyh g ogk og] ;FkkfLFkfr] ,l dnh; ykd lpuk vfèkdkjh ;k jkT; ykd lpuk vfèkdkjh d fo#) ml ykx lok fu;ek d vèkhu vu'kkIfud dkjokb d fy, flQkfj'k djxkA**

9. अधिनियम की धारा 18 में अंतर्विष्ट प्रावधान का परिशीलन प्रकट करेगा कि जब आयोग संतुष्ट है कि मामले में जाँच करने के युक्तियुक्त आधार हैं, यह उसके संबंध में जाँच आरंभ कर सकता है। धारा 18 की उपधारा (3) अधिनियम की धारा 18 के अधीन मामले में जाँच करते हुए आयोग की शक्ति प्रावधानित करती है।

10. अधिनियम की धारा 20 प्रावधानित करती है कि किसी परिवाद अथवा अपील को विनिश्चित करने के समय पर यदि आयोग मत निर्मित करता है कि किसी युक्तियुक्त कारण के बिना कोई अधिकारी सूचना के लिए आवेदन प्राप्त करने से इनकार करता है अथवा ऐसी सूचना धारा 7 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट समय के भीतर प्रस्तुत नहीं की गयी थी अथवा सूचना का अनुरोध असद्भावपूर्वक अस्वीकार किया गया था अथवा गलत, अपूर्ण अथवा भ्रामक सूचना दी गयी थी अथवा सूचना जो अनुरोध का विषय वस्तु थी विनष्ट कर दी गयी थी अथवा सूचना प्रस्तुत करने में किसी तरीके से रुकावट डाली गयी थी, आयोग दंड अधिरोपित करेगा। किंतु, उसमें यह प्रावधानित किया गया है कि कोई दंड अधिरोपित करने के पहले अधिकारी को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया जाएगा।

11. मामले के अभिलेख से और विशेषत: दिनांक 24.9.2012 के आक्षेपित आदेश से मैं पाता हूँ कि अपील अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं की गयी थी और इसे लंबित रखा गया था और सुनवाई की अगली तिथि दिनांक 8.1.2013 थी। मैं आगे पाता हूँ कि अधिनियम की धारा 18 (2) के अधीन अनुध्यात जाँच आरंभ नहीं की गयी। जैसा अधिनियम की धारा 20 (1) के अधीन उपदर्शित किया गया है, आयोग द्वारा दिनांक 24.9.2012 के आक्षेपित आदेश में कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया है। दिनांक 24.9.2012

के आक्षेपित आदेश द्वारा दंड अधिरोपित किया गया है और ऐसा दंड अधिरोपित करने के पहले याची को अधिनियम की धारा 20(1) के परन्तुक के निबंधनानुसार सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया है।

12. अब मामले के तथ्यों पर आते हुए मैं पाता हूँ कि आवेदक अर्थात् भुवनेश्वर मोदी ने भिन्न-भिन्न सूचनाओं को इप्सित करते हुए दिनांकों 19.7.2011, 27.9.2011 और 24.10.2011 के आवेदनों को दाखिल किया है। आवेदक द्वारा इप्सित की गयी सूचनाओं में से कुछ न तो लोकहित में हैं और न ही सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की परिधि के अंतर्गत हैं। ऐसी सूचनाओं में से एक प्रखंड में व्यक्तियों की कुल संख्या, जो अपनी वास्तविक आयु और सत्य का दमन करके अवैध रूप से पेंशन पा रहे हैं, के प्रकटकरण से संबंधित है। दिनांक 19.7.2011 के आवेदन में क्रमांक 4 पर इप्सित सूचना उन अधिकारियों के नामों के प्रकटकरण से संबंधित है जिनकी प्रेरणा पर देश में वित्तीय घोटाला हुआ है। मेरा निश्चित मत है कि ऐसी सूचना प्रदान करने का अनुरोध अधिनियम में अंतर्विष्ट प्रावधान का दुरुपयोग है और आयोग द्वारा वर्तमान मामले पर विचार करते हुए मामले के इस पहलू को बिल्कुल अनदेखा कर दिया गया है। मैं आगे पाता हूँ कि याची ने अनेक अवसरों पर मामले में अपने प्राधिकृत प्रतिनिधि को उपस्थित होने की अनुमति देने का अनुरोध किया और दिनांक 24.9.2012 के आक्षेपित आदेश में यह दर्ज किया गया है कि विगत तिथि पर याची अपनी पुत्री के बीमार होने के कारण आयोग के समक्ष उपस्थित नहीं हो सकी थी।

13. उक्त तथ्यों और परिस्थितियों की दृष्टि में, मेरा सुविचारित मत है कि दिनांक 24.9.2012 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने का दायी है। मैं आगे अभिनिर्धारित करता हूँ कि दिनांक 24.9.2012 का आक्षेपित आदेश अधिकारिताहीन है। दो किश्तों में 10,000/- रुपया की कटौती करने का आयोग द्वारा जारी निर्देश भी अभिखंडित किया जाता है और यदि दिनांक 24.9.2012 के आदेश द्वारा अधिरोपित दंड पहले ही याची के वेतन से काट लिया गया है। इसे उसे तुरन्त वापस किया जाएगा।

14. पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राम शरण सिन्हा एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 4317 of 2009. Decided on 24th October, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

सेवा विधि–प्रत्यावर्तन–निजी सहायक के पद से स्टेनोग्राफर के पद पर–पूर्व के दस्तावेजों पर संदेह करने का कारण नहीं है जो इस निष्कर्ष की ओर ले जाय कि याचीगण को आरंभ में स्वयं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन विभिन्न कार्यालयों में नियुक्त किया गया था और वे इस रूप में कार्यालयों में बने रहे जो निजी सहायक के पद पर उनके उत्क्रमण के लिए उनकी नामों की अनुशंसा का आधार था–भूगर्भशास्त्र निदेशालय वर्ष 2000 के पहले भी सचिवालय और सहयोगी कार्यालयों का भाग था–प्रत्यावर्तन का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–याचीगण अपने उत्क्रमण के अनुसरण में निजी सहायक के रूप में विचार किए जाने के हकदार होंगे। (पैराएँ 10 से 13)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan, Shresth Gautam, For the Petitioner; M/s R. Bhengra, R. Kerketta, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान रिट आवेदन में याचीगण ने संयुक्त सचिव, कार्मिक प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार द्वारा जारी दिनांक 22.8.2009 के मेमो सं० 216 (परिशिष्ट–19) में अंतर्विष्ट कार्यालय आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा उन्हें निजी सहायक के पद से स्टेनोग्राफर के पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया गया है।

3. वर्तमान विवाद की पृष्ठभूमि है और रिट याचिका में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के समाधान के लिए आवश्यक तथ्यों जिनका कथन संक्षेप में करने की आवश्यकता है को यहाँ नीचे उपदर्शित किया जा रहा है। वर्तमान याचीगण को उप निदेशक, भूगर्भशास्त्र, राँची सर्किल द्वारा जारी दिनांक 27.5.1988 के कार्यालय आदेश द्वारा नियुक्त किया गया था जिसे याचीगण द्वारा प्रतिशपथ पत्र के प्रत्युत्तर के परिशिष्ट 6 और प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दाखिल उत्तर के परिशिष्ट B के तहत अभिलेख पर लाया गया है। आरंभ में ही याचीगण के उक्त नियुक्ति पत्र की विषय वस्तु का उल्लेख करना प्रासंगिक है क्योंकि इसका मामले के परिणाम पर सारवान प्रभाव हो सकता है। कार्यालय आदेश कथन करता है कि दिनांक 5.5.1988 के मेमो सं० 2786 एम० पटना में अंतर्विष्ट निदेशक, भूगर्भशास्त्र, बिहार, पटना के निर्देशानुसार और भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन विभिन्न कार्यालयों के अधीन सृजित पद के विरुद्ध इन याचीगण को कुछ अन्य के साथ विभागीय चयन कमिटी की अनुशंसा पर स्टेनोग्राफर के रूप में नियुक्त किया गया था और विभिन्न कार्यालयों में पदस्थापित किया गया था। याची सं० 1 जिसका नाम क्रमांक 6 पर अंकित था, अपर निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, पटना के कार्यालयों में पदस्थापित किया गया था। याची सं० 2 जिसका नाम क्रमांक 2 पर आया को पटना में उसी विभाग में उपनिदेशक, भूगर्भशास्त्र, मुख्यालय में पदस्थापित किया गया था। याची सं० 3 क्रमांक 5 पर आया और उसे पटना में उसी विभाग में उपनिदेशक, भूगर्भशास्त्र, एडवांस प्लानिंग के कार्यालय में पदस्थापित किया गया था। उक्त कार्यालय के अधीन नियुक्त अन्य व्यक्तियों को उपनिदेशक, भूगर्भशास्त्र, डाटा बैंक, पटना उपनिदेशक, राज्य भूगर्भशास्त्र प्रयोगशाला, हजारीबाग, और अपर निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, राँची जैसे निदेशालय के अधीन कार्यालयों में पदस्थापित किया गया था। नियुक्ति आदेश उपनिदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, राँची सर्किल, राँची द्वारा जारी किया गया था। ये याचीगण समय–समय पर विभिन्न कार्यालयों में पदस्थापित होते हुए भूगर्भशास्त्र निदेशालय, मुख्यालय में बने रहे। दिनांक 4-10.9.1990 को जारी पत्र सं० 788 के तहत कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, बिहार (इसमें इसके बाद डी० ओ० पी० टी० के रूप में निर्दिष्ट) ने ऐसे स्टेनोग्राफरों के नामों को इप्सित किया जिन्हें दिनांक 10.11.1988 के पहले सचिवालय और इसके संबद्ध कार्यालयों में नियुक्त किया गया था और जिनके नामों पर निजी सहायक के पद पर उत्क्रमण के लिए विचार किया जाना था। एक और व्यक्ति के साथ वर्तमान याचीगण के नामों को दिनांक 7.11.1990 के पत्र के तहत डी० ओ० पी० टी०, बिहार सरकार को उनको निजी सहायक के पद पर उत्क्रमित किए जाने पर विचार किए जाने के लिए अनुशंसित किया गया था जो निदेशक, भूगर्भशास्त्र, पटना, बिहार द्वारा जारी परिशिष्ट–7 के रूप में संलग्न है। उनके नियुक्ति पत्रों, आदेश जिसके अधीन ऐसे स्टेनोग्राफरों के पदों को सृजित किया गया था, याचीगण सहित ऐसे स्टेनोग्राफरों का अद्यतन सेवा पुस्तिका और सम्यक रूप से प्रमाण पत्रित ए० सी० आर० को ऐसे उत्क्रमण के लिए उनके मामलों पर विचार किए

जाने के लिए कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग को अग्रसारित किया गया था। तत्पश्चात, निर्णय जो दिनांक 23.6.1995 के परिशिष्ट 8 पर अंतर्विष्ट है, द्वारा डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार ने ऐसे स्टेनोग्राफरों जिन्हें दिनांक 10.11.1988 के पहले सचिवालय और संबद्ध कार्यालयों में नियुक्त किया गया था, को ऐसी अधिसूचना की तिथि से निजी सहायक के रूप में उत्क्रमित करने का निर्णय लिया। इन याचीगण के नाम खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग के विरुद्ध दर्शाये गए क्रमशः 5, 6 और 8 पर उक्त आदेश के साथ संलग्न परिशिष्ट में अंतर्विष्ट हैं। ऐसी परिस्थिति में, दिनांक 10.7.1995 के पत्र (परिशिष्ट 9) के तहत परिशिष्ट 8 में अंतर्विष्ट डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार के निर्णय के अनुकूल भूगर्भशास्त्र निदेशालय द्वारा कार्यालय आदेश जारी किया गया था और इन याचीगण जो स्टेनोग्राफर थे को दिनांक 26.6.1995 के प्रभाव से भार मुक्त करते हुए निजी सहायक के रूप में अपना पदग्रहण करने के लिए अनुमति दी गयी थी। उसके परिणामस्वरुप दिनांक 23.8.1995 को डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार द्वारा परिशिष्ट 10 भी जारी किया गया था जहाँ उनके पदग्रहण करने की तिथि उपदर्शित की गयी थी। याचीगण का नाम उक्त सूची में क्रमशः क्रमांक 1, 2, 4 पर अंकित था। तत्पश्चात, परिशिष्ट 11 के तहत उनको डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, पटना, बिहार द्वारा जारी दिनांक 9.2.2002 के कार्यालय आदेश द्वारा संपुष्ट किया गया था।

4. पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में विवाद जो आक्षेपित आदेश जारी करने की ओर ले गया, किसी नवल किशोर प्रसाद सिंह द्वारा स्वयं का याचीगण की तरह समस्थित व्यक्ति होने का दावा करते हुए रिट याचिका सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 दाखिल किए जाने पर आरंभ हुआ। उसने यह अभिकथित करते हुए कि वर्तमान याचीगण और एक अन्य जो उसके जूनियर थे और स्टेनोग्राफर के रूप में कार्यरत थे को पहले ही दिनांक 23.6.1995 के पत्र में अंतर्विष्ट आदेश के तहत निजी सहायक के रूप में उत्क्रमित किया गया है, डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार के दिनांक 4.10.1990 के पत्र द्वारा किए गए तलब पर निजी सहायक के रूप में नियुक्ति/उत्क्रमण के उसके मामले की अनुशंसा करने का प्रत्यर्थीगण पर निर्देश इप्सित किया। उक्त रिट याचिका में वर्तमान याचीगण भी उपस्थित हुए और राज्य के अधिवक्ता सहित पक्षों के अधिवक्ता को सुनने के बाद दिनांक 17.9.2004 को पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निर्णय (परिशिष्ट 12) पारित किया गया था। उक्त निर्णय के प्रवृत्त प्रासंगिक भाग का उद्धरण यहाँ नीचे उत्कथित किया जाता है:–

> *^^jkT; çR;Fkhx.k }kjk fy, x, nf"Vdk.k fd u rk ;kph vkj u gh futh çR;Fkhx.k futh lgk;d d :i e mRØe.k@fu;fDr d fy, ik= g D;kfd mUg lfpoky; vFkok bld lc) dk;ky;k e LVukxkQj d :i e dHkh fu;Dr ugh fd;k x;k Fkk] dh nf"V e e jkT; çR;Fkhx.k dk ;g fun'k nr g, bl fjV vkonu dk fuiVkrk g fd o ;k rk futh lgk;d d dMj l futh çR;Fkhx.k (7 l 10) d mRØe.k@fu;fDr dk jí dj ;k fQj mDr dMj e ;kph dk vu'kflr@fu;Dr@ mRØfer dj D;kfd LohÑr :i l ;kph dk futh çR;Fkhx.k dh fu;fDr d dkQh igy fun'kd] [kku ,o HkxHk'kkL= }kjk LVukxkQj d :i e fu;Dr fd;k x;k g vkj futh çR;Fkhx.k dh fu;fDr@mRØe.k jí ugh fd, tku dh fLFkfr e ;kph dk u doy futh lgk;d d :i e fu;Dr fd;k tkuk pkfg, cfYd ml frfFk l ftl l futh çR;Fkhx.k dk bu ykHkk dk vuKkr fd;k x;k Fkk ikfj.kkfed èkuh; ykHk Hkh fn;k tkuk pkfg, D;kfd ;kph Lo; jkph vFkok Hkkxyij dHkh ugh x;k FkkA ml mu LFkkuk ij LFkkukrfjr fd;k x;k Fkk vkj oèk LFkkukrj.k vkn'k d vuikyu e og jkph@Hkkxyij x;k Fkk] vr% ml ml vkèkkj ij èkuh; ykHkk l ofpr ugh*

djuk pkfg,A bl vkn'k dh çfr dh çkfIr@çLrfr dh frfFk l rhu ekg d Hkhrj bl vkn'k dk dk;kfUor fd;k tkuk pkfg,A

;g fjV vkonu fuiVk;k tkrk gA**

5. वर्तमान याचीगण ने उक्त निर्णय से व्यथित होकर एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 1065 वर्ष 2004 दाखिल किया जिसे याचीगण को मामले पर पुनर्विलोकन/पुनर्विचार के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश के पास जाने की स्वतंत्रता देते हुए निपटाया गया था। उक्त एल॰ पी॰ ए॰ में दिनांक 2.11.2004 का निर्णय परिशिष्ट–13 के रूप में संलग्न किया गया है। तत्पश्चात, याचीगण ने सिविल रिव्यू सं॰ 182 वर्ष 2004 और 188 वर्ष 2004 दाखिल किया। उक्त पुनर्विलोकन याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 में पारित दिनांक 17.9.2004 के निर्देश के निबंधनानुसार प्रत्यर्थी बिहार राज्य ने दिनांक 16.7.2005 का कार्यालय आदेश सं॰ 191 जारी किया था जिसके अधीन वर्तमान याचीगण जो पुनर्विलोकन याचीगण थे को निजी सहायक के पद से स्टेनोग्राफर के पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया गया था। पूर्वोक्त घटनाक्रमों को विचार में लेते हुए पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 17.8.2005 के निर्णय के तहत निम्नलिखित निबंधनों में पुनर्विलोकन याचिकाओं को निपटाया:–

^^;kphx.k vkj fcgkj jkT; dk luu ij ejk nf"Vdk.k g fd ;kphx.k dk ,d vU; fjV vkonu nkf[ky djd fnukd 16 tykb] 2005 d dk;ky; vkn'k l0 1919 dk fojks/k djuk pkfg, ftl ij lh0 MCY;0 t0 lh0 l0 7088 o"k 1999 e ikfjr fnukd 17.9.2004 d vkn'k e nt fu"d"kk d ckotn fofek d vu#i Lo; bld viu x.kkx.k ij fopkj fd;k tk,xkA**

6. इन याचीगण को कैडर आवंटन के अनुसरण में दिनांक 15.6.2005 को भारमुक्त कर दिए जाने पर उत्तरवर्ती झारखंड राज्य को आवंटित किया गया था। किंतु अन्य समस्थित व्यक्ति उत्तरवर्ती बिहार राज्य में बने रहे थे और दिनांक 16.7.2005 के आदेश के विरुद्ध रिट आवेदन दाखिल किया जिसे उसके अभ्यावेदन को निपटाने का निर्देश डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार को देते हुए निपटाया गया था। किंतु याचीगण के विरुद्ध समुचित कार्रवाई करने के लिए, क्योंकि उनकी सेवाएँ झारखंड राज्य को अंतरित कर दी गयी थी, बिहार राज्य द्वारा भेजी गयी संसूचना के आलोक में याचीगण को दिनांक 31.5.2006 के मेमो सं॰ 2741 के तहत कारण बताने को कहा गया था और स्पष्टीकरण इप्सित किया गया था कि क्यों नहीं उन्हें स्टेनोग्राफर के पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया जाए चूँकि डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 28.5.1992 की अधिसूचना के मुताबिक यद्यपि खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग का नाम सचिवालय के साथ संबद्ध कार्यालय के रूप में उपदर्शित किया गया है किंतु उक्त सूची में भूगर्भशास्त्र निदेशालय उपदर्शित नहीं किया गया है। चूँकि उनका नियुक्ति पत्र उप निदेशक, भूगर्भशास्त्र, राँची सर्किल, राँची के दिनांक 27.5.1988 के हस्ताक्षर के अधीन जारी किया गया था, उन्हें यह स्पष्ट करने के लिए कहा गया था कि क्यों नहीं उन्हें निजी सहायक के पद से स्टेनाग्राफर के पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया जाए। याचीगण ने परिशिष्ट 18 के तहत अपना प्रत्युत्तर दाखिल किया और अन्य बातों के साथ दृष्टिकोण अपनाया कि खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय सचिवालय के संबद्ध कार्यालयों का भाग है जो स्वयं विकास भवन, पटना में सचिवालय के अधीन काम करता है और, इसलिए, डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार, पटना द्वारा दिनांक 23.6.1995 को जारी आदेश द्वारा उनका उत्क्रमण बिल्कुल सही और वैध है। तत्पश्चात, संयुक्त सचिव, कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार के हस्ताक्षर के अधीन परिशिष्ट 19 पर अंतर्विष्ट दिनांक 22.8.2009 का आक्षेपित आदेश जारी किया गया था।

7. अत: विनिश्चयकरण के लिए वर्तमान रिट याचिका में उद्भूत होने वाला प्रश्न है:–

(i) D;k ;kphx.k dk etj fjDr in d fo#) HkxHk'kkL= fun'kky; e fu;Dr fd;k x;k Fkk vkj mUg inèkkjh d :i e ekuk tkuk Fkk ftUg Lo; HkxHk'kkL= fun'kky; e vkj u fd fun'kky; d {k=h; dk;ky;k e fu;Dr fd;k x;k Fkk

(ii) ;fn ;kphx.k HkxHk'kkL= fun'kky; e fu;Dr fd, x, Fk] D;k Lo; HkxHk'kkL= fun'kky; lfpoky; d dk;ky; d lkFk lc) g ftlu futh lgk;d d in ij mud mRØe.k dk U;k;kfpr Bgjk;k

8. याचीगण ने खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग के वर्ष 1994-1995 की प्रशासनिक रिपोर्ट परिशिष्ट–1 पर विश्वास किया है जो भूगर्भशास्त्र निदेशालय के सृजन पर विचार करता है। परिशिष्ट–1 के प्रासंगिक अंश को अंतर्विष्ट करने वाला वर्तमान रिट याचिका का पृष्ठ 62, 63, 64 और 70 भूगर्भशास्त्र निदेशालय के और स्वयं निदेशालय मुख्यालय के अधीन इसके विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालयों एवं अन्य कार्यालयों से संबंधित है।

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इन याचीगण को निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र के निर्देशों के अधीन विभागीय चयन कमिटी की अनुशंसा पर और भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन सृजित पद पर नियुक्त किया गया है। उन्हें कार्यालयों में अपनी नियुक्ति के आरंभ से ही स्वयं निदेशालय के अधीन पदस्थापित किया गया है। उन्हें न तो किसी मंजूर पद के विरुद्ध क्षेत्रीय कार्यालयों में नियुक्त किया गया है और न ही कभी बाहर स्थानांतरित किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि खान एवं भूगर्भशास्त्र, बिहार सरकार के लोक सूचना पदाधिकारी द्वारा निर्गत दिनांक 24.3.2009 को स्वयं निदेशालय सचिवालय के पत्र सं॰ 391/M, पटना (परिशिष्ट 20) में अंतर्विष्ट संसूचना के तहत सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन प्रस्तुत विनिर्दिष्ट सूचना की दृष्टि में विवादित नहीं है। यह स्पष्टत: कथन करता है कि भूगर्भशास्त्र निदेशालय वर्ष 2000 के पहले से सचिवालय और इसके सहयोगी कार्यालयों का भाग था। याची के विद्वान अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि उक्त पत्र भी उपदर्शित करता है कि वर्ष 2000 से पहले नियुक्त कार्मिक के पद के सृजन से संबंधित फाइल विभाग में उपलब्ध नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद यह है कि यह तथ्य कि भूगर्भशास्त्र निदेशालय सचिवालय और सहयोगी कार्यालयों का भाग है, आगे परिशिष्ट 24 पर अंतर्विष्ट दिनांक 2.8.2010 को स्वयं झारखंड सरकार द्वारा अधिसूचित नियमों की दृष्टि में प्रबलित होता है। उसके साथ संलग्न परिशिष्ट में क्रमांक 31 पर यह स्पष्टत: उपदर्शित किया गया है कि खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय सचिवालय का भाग है। ऐसी परिस्थितियों में, यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण का संपूर्ण मामला, जो प्रत्युत्तर के प्रति प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दिए गए उत्तर के परिशिष्ट A के तहत अभिलेख में लाए गए दिनांक 2.3.2000 के पत्र पर टिका है, इस निष्कर्ष पर लाने के लिए किसी ताथ्यिक आधार के बिना है कि इन याचीगण को क्षेत्रीय कार्यालयों में स्टेनोग्राफर के मंजूर रिक्त पद के विरुद्ध नियुक्त किया गया था। केवल यही आक्षेपित आदेश जारी किए जाने और निजी सहायक के पद से स्टेनोग्राफर के पद पर याचीगण को प्रत्यावर्तित करने के लिए प्रत्यर्थी राज्य द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का आधार है। याचीगण ने फाइलों पर की गयी टिप्पणियों पर भी विश्वास किया है जो प्रत्युत्तर के परिशिष्ट 7 पर अंतर्विष्ट है जो सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 में उक्त नवल किशोर प्रसाद सिंह द्वारा दाखिल रिट याचिका में दाखिल किए जाने के लिए उनका दृष्टिकोण तैयार करने में खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग के अधीन विभिन्न उपक्रम द्वारा किया गया

कार्य अंतर्विष्ट करता है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि फाइल पर संपूर्ण टीका केवल उपदर्शित करेगी कि प्रासंगिक दस्तावेजों जो इन याचीगण के पद के सृजन से संबंधित थे, उपलब्ध नहीं थे जब ऐसा कार्य किया गया था और केवल निष्कर्षीय आधार पर और वह भी वरीय विधिक अधिकारी के नोटिंग के आधार पर प्रत्यर्थीगण ने दृष्टिकोण लिया है कि याचीगण का उत्क्रमण न्यायोचित नहीं था क्योंकि उन्हें खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन क्षेत्रीय कार्यालयों में रिक्त पद के विरुद्ध नियुक्त किया गया था। यही दिनांक 2.3.2000 के पत्र को जारी करने का आधार है। ऐसी परिस्थितियों में, याची के विद्वान अधिवक्ता ने विस्तृत तर्क के बाद आक्षेपित आदेश का विरोध किया है।

9. प्रत्यर्थी राज्य द्वारा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है। प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थीगण की कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने के लिए प्रत्युत्तर के उत्तर के परिशिष्ट A पर अंतर्विष्ट दिनांक 2.3.2000 के पत्र पर भरोसा किया है। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण को भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन क्षेत्रीय कार्यालयों के लिए सृजित पद पर नियुक्त किया गया था और इसलिए ऐसे पदधारी जो सचिवालय अथवा सहयोगी कार्यालयों में पदस्थापित थे के असमान निजी सहायक के पद पर उत्क्रमण के लिए उन पर विचार नहीं किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि इस धारणा के अधीन कि खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय भी सचिवालय का सहयोगी कार्यालय है, इन याचीगण को वर्ष 1995 में निजी सहायक के पद पर उत्क्रमित किया गया है। किंतु प्रत्यर्थीगण ने परिशिष्ट–1 के रूप में संलग्न दस्तावेजों को विवादित नहीं किया है जो खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के सृजन से संबंधित है। वे दस्तावेज जो परिशिष्ट 6, 7, 8, 9 और 10 पर संलग्न है कि अभिप्रमाणिकता को विवादित नहीं करते हैं जिसमें इन याचीगण पर पहले विचार किया गया था और सक्षम प्राधिकारी द्वारा उनके मामले पर सम्यक रूप से विचार किए जाने के बाद निजी सहायक के पद पर उत्क्रमित किया गया था। प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि पटना उच्च न्यायालय द्वारा सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 में पहले पारित निर्देश के अनुसरण में डी॰ ओ॰ पी॰ टी॰, बिहार सरकार, पटना द्वारा भी विवाद्यक विनिश्चित किए जाने के बाद आक्षेपित आदेश जारी किया गया है जो दिनांक 16.7.2005 का कार्यालय आदेश (परिशिष्ट–16) है। दिनांक 22.8.2009 का परिशिष्ट D (आक्षेपित आदेश) पुनः प्रत्युत्तर के उत्तर के परिशिष्ट A के तहत अभिलेख पर लाए गए दिनांक 2.3.2000 के पत्र सं॰ 785 में अंतर्विष्ट खान एवं भूगर्भ शास्त्र विभाग, बिहार सरकार की संसूचना पर आधारित है। अतः, प्रत्यर्थीगण आक्षेपित आदेश जारी करने में न्यायोचित हैं क्योंकि याचीगण ऐसी परिस्थिति में निजी सहायक के पद पर उत्क्रमित किए जाने के लिए विधितः हकदार नहीं हैं।

10. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है और आक्षेपित आदेश सहित अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। विवाद, जो याचीगण के उत्क्रमण के बाद सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 में किसी नवल किशोर प्रसाद सिंह द्वारा चुनौती दिए जाने पर कुछ समय से चलता हुआ प्रतीत होता है, के समुचित समाधान के लिए प्रासंगिक विवाद्यक को प्रासंगिक दस्तावेजों जो खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय से संबंधित है और उन दस्तावेजों जो याचीगण की नियुक्ति और निजी सहायक के पद पर उनके पश्चातवर्ती उत्क्रमण से संबंधित है जिनको बाद में दिनांक 2.3.2000 के पत्र के आधार पर निरसित कर दिया गया है, पर विचार करने के बाद संबोधित किया जा सकता है। खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, बिहार सरकार का वर्ष 1994-95 का प्रशासनिक रिपोर्ट, परिशिष्ट 1 खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के सृजन के इतिहास पर विचार करता है। इसका परिशीलन दर्शाता है कि खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग के अधीन भूगर्भशास्त्र निदेशालय प्रारंभ में निदेशक, खान, अपर

निदेशक, खान तथा अधीनस्थ प्राधिकारियों से गठित था। निदेशालय के अधीन कुछ और पद सृजित किए गये थे जो उपनिदेशक, योजना; उपनिदेशक, डाटा बैंक और अन्य पद थे। आगे रिट याचिका के परिशिष्ट 1 के पृष्ठ 11 के परिशीलन से प्रतीत होता है कि खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग के क्षेत्रीय कार्यालयों को जमशेदपुर, राँची, डालटेनगंज, भागलपुर, संथाल परगना और मुजफ्फरपुर में सृजित किया गया था। यह आगे उपदर्शित करता है कि स्वयं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अपने अधीन विभिन्न कार्यालय थे जैसे डाटा बैंक, राज्य भूगर्भशास्त्र प्रयोगशाला, हजारीबाग, 'बेगान' इकाई, एडवांस प्लानिंग एन्ड मॉनिटरिंग सेल, कुछ अन्य सेल और हजारीबाग में कार्यशाला।

11. याचीगण के दिनांक 27.5.1988 के नियुक्ति पत्र, प्रत्युत्तर के उत्तर का परिशिष्ट B, का परिशीलन जैसा निर्णय के आरंभिक भाग में निर्दिष्ट किया गया है, दर्शाता है कि भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन विभिन्न कार्यालयों के लिए सृजित पद के विरुद्ध विभागीय चयन कमिटी द्वारा इन याचीगण के नामों की अनुशंसा की गयी थी और दिनांक 5.5.1988 के मेमो सं० 2786M पटना में अंतर्विष्ट निदेशक, भूगर्भशास्त्र, पटना, बिहार के निर्देश के निबंधनानुसार इन याचीगण को अपर निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, पटना में उसी विभाग में उप निदेशक, भूगर्भशास्त्र मुख्यालय के पटना में उसी विभाग के अधीन उपनिदेशक, भूगर्भशास्त्र, एडवांस प्लानिंग के कार्यालयों जैसे कार्यालय में इन याचीगण को नियुक्त और पदस्थापित किया गया था। उसी कार्यालय आदेश के अधीन नियुक्त अन्य व्यक्तियों को निदेशालय के अधीन जैसे उपनिदेशक, भूगर्भशास्त्र, डाटा बैंक, पटना के अधीन, उपनिदेशक, राज्य भूगर्भशास्त्र प्रयोगशाला, हजारीबाग के अधीन और अपर निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग, राँची के अधीन पदस्थापित किया गया था। ये कार्यालय खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन थे और न कि क्षेत्रीय कार्यालय जैसा परिशिष्ट-1 के पृष्ठ 70 के परिशीलन से प्रकट होगा। याचीगण निजी सहायक के पद पर उत्क्रमण के लिए अपने मामलों पर विचार किए जाने के लिए डी० ओ० पी० टी०, बिहार सरकार द्वारा दिनांक 4-10.9.1999 को जारी पत्र सं० 788 (परिशिष्ट 6) के निबंधनानुसार अपने नामों की अनुशंसा किए जाने तक मुख्यालय में विभिन्न कार्यालयों में भूगर्भशास्त्र निदेशालय में बने रहे। परिशिष्ट-7 उनके नियुक्ति पत्रों, पद के सृजन से संबंधित फाइल, अद्यतन सेवा पुस्तिका और सम्यक रूप से प्रमाण पत्रित ए० सी० आर० जैसे इन याचीगण के आवश्यक विवरणों को अग्रसारित करने वाला निदेशक, भूगर्भशास्त्र के हस्ताक्षर के अधीन दिनांक 7.11.1990 का पत्र है। यह अंततः दिनांक 23.6.1995 के परिशिष्ट-8 पर अंतर्विष्ट डी० ओ० पी० टी०, बिहार सरकार, पटना के सचेत निर्णय द्वारा याचीगण के उत्क्रमण की ओर ले गया; इन याचीगण सहित व्यक्तियों के नामों को उक्त पत्र के साथ संलग्न सूची में उपदर्शित किया गया है। तत्पश्चात, याचीगण कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग द्वारा जारी दिनांक 23.8.1995 के परिशिष्ट-10 के तहत उत्क्रमित पद पर पदग्रहण करने के लिए भारमुक्त किए गए थे। कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, पटना, बिहार द्वारा दिनांक 9.2.2002 के परिशिष्ट-11 के तहत अनेक अन्य के साथ उनकी सेवाओं को निजी सहायक के रूप में संपुष्ट किया गया था। ये समकालीन दस्तावेज हैं जिनका परिशीलन वर्तमान मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक को विनिश्चित करते हुए किया जा सकता है और जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिए गए निर्णय पर आधारित हैं। ये दस्तावेज 15-20 वर्ष पुराने हैं।

12. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण ने डी० ओ० पी० टी०, बिहार सरकार को संबोधित भूगर्भशास्त्र विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 2.3.2000 के पत्र के आधार पर राज्य की आक्षेपित कार्रवाई को

न्यायोचित ठहराया है। दिनांक 2.3.2000 के पत्र के पैरा 2 का विषय वस्तु वर्णित करता है कि याचीगण को भूगर्भशास्त्र निदेशालय के क्षेत्रीय कार्यालयों में मंजूर पद के विरुद्ध नियुक्त किया गया था और न कि सचिवालय और इसके सहयोगी कार्यालयों के अधीन। स्वयं दिनांक 2.3.2000 का उक्त पत्र नवल किशोर प्रसाद सिंह द्वारा दाखिल रिट याचिका सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 की दृष्टि में जारी किया गया था जिसका स्वयं उक्त पत्र में निर्देश है। पूर्वोक्त पत्र जारी करने की पृष्ठभूमि नोटिंग से भी प्रकट है जिसे याचीगण द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन प्राप्त किया गया है और जो प्रतिशपथ पत्र के प्रति दाखिल प्रत्युत्तर के परिशिष्ट 7 पर अंतर्विष्ट है। उक्त प्रत्युत्तर जो परिशिष्ट 7 का भाग है के पृष्ठों 40, 41, 42, 43, 46 पर नोटिंग का परिशीलन दर्शाता है कि अधिक्रम में उत्तरवर्ती प्राधिकारियों ने नोट किया है कि पद, जिस पर याचीगण को आरंभ में स्टेनोग्राफर के रूप में नियुक्त किया गया था, के सृजन से संबंधित फाइल उपलब्ध नहीं थी। पृष्ठ 46 पर अंतर्विष्ट अंतिम नोटिंग में निष्कर्ष निकाला गया है कि भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन विभिन्न कार्यालयों में इन पदों को सृजित किया गया था और न कि सचिवालय और इसके सहयोगी कार्यालयों में। किंतु यह निष्कर्ष याचीगण का मामला खारिज नहीं करता है क्योंकि विभिन्न कार्यालय जिनके अधीन उन्हें नियुक्त किया गया था स्वयं निदेशालय के अधीन कार्यालय थे जैसे डाटा बैंक कार्यालय, एडवांस मॉनिटरिंग एवं प्लानिंग सेल विकास भवन, पटना अवस्थित अपर निदेशक, खान एवं भूगर्भशास्त्र, खान विभाग, बिहार सरकार का कार्यालय। अत:, फाइल में दिनांक 2.3.2000 के पत्र में ऐसे नोटिंग की पृष्ठभूमि में, निष्कर्ष कि पद जिस पर याचीगण को नियुक्त किया गया था को भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन सृजित नहीं किया गया था बल्कि अन्य क्षेत्रीय कार्यालयों में किया गया था, किसी सामग्री पर आधारित नहीं है जो अभिलेख पर मौजूद थे। दूसरी ओर, ऐसे निष्कर्ष ने समकालीन दस्तावेजों को अविश्वसनीय बनाया जो याचीगण की मूल नियुक्ति और निजी सहायक के पद पर उनके उत्क्रमण की ओर ले जाने वाला परिशिष्ट 7 से 10 के तहत संचालित कार्य से संबंधित थे। सक्षम प्राधिकारी द्वारा समय के प्रासंगिक बिंदु पर तैयार किए गए पूर्विक दस्तावेज इस निश्चित निष्कर्ष की ओर ले जाते हैं कि इन याचीगण को स्वयं निदेशक, भूगर्भशास्त्र के आदेशों द्वारा भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन नियुक्त किया गया था। यहाँ यह गौर करना प्रासंगिक होगा कि पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने पुनर्विलोकन याचिकाओं में दिनांक 17.8.2005 के निर्णय में स्पष्टत: संप्रेक्षित किया था कि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 7088 वर्ष 1999 में पारित दिनांक 17.9.2004 के आदेश में दर्ज निष्कर्षों के बावजूद याचीगण के मामले पर स्वयं इसके गुणागुण पर विधि के अनुरुप विचार किया जाएगा। अत: यह प्रकट है कि मूल प्रश्न कि क्या इन याचीगण की मूल नियुक्ति भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन सृजित मंजूर रिक्त पद के विरुद्ध की गयी थी, को पहले विनिश्चित कभी नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी बिहार राज्य के दृष्टिकोण पर, जैसा दिनांक 2.3.2000 के पत्र में परिलक्षित है, समस्त बाद की कार्रवाई की गयी है जिसका परिणाम स्टेनोग्राफर के मूल पद पर याचीगण के प्रत्यावर्तन में हुआ। पूर्व के दस्तावेजों को अविश्वसनीय मानने का कारण नहीं है जिनकों यहाँ उपर बारबार निर्दिष्ट किया गया है और जो इस निष्कर्ष की ओर ले जाता है कि इन याचीगण को आरंभ में स्वयं भूगर्भशास्त्र निदेशालय के अधीन विभिन्न कार्यालयों में नियुक्त किया गया था और वे उक्त कार्यालयों में बने रहे जो निजी सहायक के पद पर उत्क्रमण के लिए उनके नामों की अनुशंसा का आधार था और प्रकटत: उत्क्रमण के लिए दिनांक 23.6.1995 का पत्र (परिशिष्ट 8) जारी करने की ओर ले गया है। अत:, पहले विरचित विवाद्यक सं॰

1 का उत्तर याचीगण के पक्ष में दिया जाता है। परिशिष्ट 20 में अंतर्विष्ट सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन लोक सूचना अधिकारी, खान एवं भूगर्भशास्त्र बिहार सरकार द्वारा प्रस्तुत विनिर्दिष्ट सूचना की दृष्टि में द्वितीय विवाद्यक के संबंध में अधिक विवाद नहीं है कि भूगर्भशास्त्र निदेशालय वर्ष 2000 के पहले भी सचिवालय और सहयोगी कार्यालयों का भाग था। अत: निर्णय के आरंभ में किए गए चर्चा को ध्यान में रखते हुए द्वितीय विवाद्यक का उत्तर भी याचीगण के पक्ष में दिया जाता है। झारखंड सरकार ने सचिवालय सेवा नियमावली, 2010 (परिशिष्ट 24) अधिसूचित किया है जिसके अधीन परिशिष्ट के क्रमांक 31 के मुताबिक खान एवं भूगर्भशास्त्र निदेशालय को सचिवालय और सहयोगी कार्यालयों का भाग अभिनिर्धारित किया गया है। किंतु यह याचीगण के मामले का समर्थन करने के लिए भूतलक्षी प्रभाव नहीं रख सकता है।

13. तथ्यों एवं परिस्थितियों की संपूर्णता में और यहाँ उपर चर्चा किए गए कारणों की दृष्टि में आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन शक्ति के प्रयोग में विधिक संवीक्षा की परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं होता है। अत: आक्षेपित आदेश अपास्त करना होगा। तद्नुसार, कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार के संयुक्त सचिव द्वारा जारी दिनांक 22.8.2009 के मेमो सं॰ 216 (परिशिष्ट 19) में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा याचीगण को निजी सहायक के पद से स्टेनोग्राफर के पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। याचीगण दिनांक 23.6.1995 के परिशिष्ट 8 के तहत किए गए अपने उत्क्रमण के अनुसरण में निजी सहायक के रूप में विचार किए जाने के हकदार होंगे और उस तिथि जिस पर उन्हें प्रत्यावर्तित किया गया है से उक्त पद पर बने रहने और वेतन, वरीयता आदि समस्त लाभों को पाने के हकदार भी होंगे।

14. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efrx.k

श्याम पदो मंडल

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 1215 of 2004. Decided on 29th October, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34 एवं 307/34—किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000—धाराएँ 7A एवं 15—हत्या एवं हत्या का प्रयास–दोषसिद्धि–किशोरिता का अभिवचन–किसी भी चरण पर किशोरिता का दावा और इसका विनिश्चयकरण किया जा सकता है भले ही किशोर अब किशोर नहीं रहा हो–अपीलार्थी अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर था–अपीलार्थी अब 33 वर्ष की आयु का है और उसे विशेष गृह भेजना उपयुक्त नहीं होगा विशेषत: जब वह पहले ही तीन वर्षों के परिरोध के दंड की महत्तम अवधि के विरुद्ध 9 वर्षों से अधिक की अवधि का दंडादेश भुगत चुका है–दोषसिद्धि संपुष्ट की गयी किंतु दंडादेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 24 से 32)

निर्णयज विधि.–AIR 2005 SC 2731; (1997)8 SCC 720; 1984 Supp. SCC 228; (1989)3 SCC 1; 1995 Supp. (4) SCC 419—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. P.P.N. Roy, For the Appellant; A.P.P., For the State.

आदेश

एकमात्र अपीलार्थी श्याम पदो मंडल जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन 10,000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कठोर कारावास का दंडादेश दिया गया था और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में उसे आगे छह माह का कठोर कारावास भुगतना है। जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धाराओं 307/34 का संबंध है, उसे पाँच वर्ष के कठोर कारावास और 5000/- रुपया जुर्माना का दंडादेश दिया गया था और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में उसे आगे तीन माह का कठोर कारावास भुगतना होगा। दोनों दंडादेशों को साथ चलना था। अपने दंडादेश का लगभग नौ वर्ष भुगतने के बाद उसने इस अपील के लंबित रहने के दौरान इस न्यायालय में अपराध की कारिता की तिथि पर स्वयं के किशोर होने का दावा किया।

2. उसने किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 (इसमें इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 7A सह-पठित धारा 49 के अधीन आवेदन भी दाखिल किया और अपनी किशोरिता के संबंध में जाँच करने के प्रयोजन से और तत्पश्चात विधि के अनुरुप अग्रसर होने के लिए किशोर न्याय बोर्ड, सरायकेला, खरसाँवा को अपना रिमांड देने के लिए प्रार्थना किया।

3. दिनांक 24.7.2013 के आदेश के तहत अपीलार्थी की आयु के विनिश्चयकरण और रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए मामला किशोर न्याय बोर्ड, सरायकेला-खरसावाँ को निर्दिष्ट किया गया था। तत्पश्चात, अपीलार्थी को किशोर अभिनिर्धारित करते हुए दिनांक 14.8.2013 की रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। बोर्ड की रिपोर्ट के आधार पर, अपीलार्थी की आयु घटना की तिथि पर 14 से 17 वर्ष तक की होती है।

4. बोर्ड का उक्त रिपोर्ट प्राप्त करने पर, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विधि के अनुरुप आदेश पारित करने के लिए प्रार्थना किया है।

5. अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी को अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर अभिनिर्धारित किए जाने पर उस पर किशोर न्याय (बालकों की देखरेख तथा संरक्षण) अधिनियम, 2000 के प्रावधानों के अधीन विचार किए जाने की आवश्यकता है और मामला उक्त अधिनियम की धारा 14 के प्रावधानों के अधीन जाँच करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड, सरायकेला-खरसावाँ को भेजा जाए।

6. विद्वान वरीय अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि चूँकि विधि से अनभिज्ञ होने के कारण याची द्वारा उक्त बिंदु पहले नहीं उठाया गया था, उसका विचारण नियमित न्यायालय में किया गया था और सत्र विचारण में उसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 सहपठित 307/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन आजीवन कठोर कारावास भुगतने और 10,000/- रुपयों का जुर्माना भुगतान करने का दंडादेश दिया गया था और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 307/34 के अधीन अपराध करने के लिए 5000/- रुपयों के जुर्माना के साथ पाँच वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलना है।

7. उन्होंने निवेदन किया कि तत्पश्चात अपीलार्थी अब तक 9 वर्ष से अधिक का दंडादेश पहले ही भुगत चुका है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ऐसी स्थिति में, अपराध जिसके लिए उसे आरोपित किया गया है, के संबंध में बोर्ड द्वारा जाँच का निर्देश देना उक्त विधि के उद्देश्य और आत्मा का उल्लंघन करेगा क्योंकि अपीलार्थी पहले ही सत्र विचारण की कठोरता से पीड़ित हो चुका है और 9 वर्षों से अधिक का दंडादेश भी भुगत चुका है जबकि अधिनियम की धारा 15 (1) (g) केवल तीन वर्ष तक विशेष ग्रह में किशोर के रहने की महत्तम अवधि विहित करती है।

9. उन्होंने आग्रह किया कि अपीलार्थी पहले ही नौ वर्षों से अधिक का दंडादेश भुगत चुका है और समुचित आदेश पारित करने के लिए अपीलार्थी को बोर्ड के पास भेजना न्याय के हित में न्यायोचित और उचित नहीं होगा जैसा अधिनियम की धारा 7A (2) में परिकल्पित किया गया है।

10. विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **लाखन लाल बनाम बिहार राज्य AIR 2011 Supreme Court 842,** में लगभग समरुप मामले पर विचार किया है और इस न्यायालय ने भी **दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 777 वर्ष 2009** में **लाखन लाल के मामले (उपर)** का अनुसरण करते हुए दिनांक 20.8.2013 को निर्णय दिया है और यह मामला उक्त निर्णयों द्वारा पूरी तरह आच्छादित है।

11. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में तथ्य और परिस्थितियाँ लगभग **लखन लाल (उपर)** मामले के समरुप है। किशोर न्याय बोर्ड के रिपोर्ट के मुताबिक अपीलार्थी अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर था। किंतु, अनभिज्ञता के कारण, उसका विचारण नियमित न्यायालय द्वारा किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 सह पठित 307/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन 10,000/- रुपयों के जुर्माना के साथ आजीवन कठोर कारावास भुगतने का और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 307/34 के अधीन 5000/- रुपयों के जुर्माना के साथ पाँच वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। अपीलार्थी पहले ही नौ वर्षों से अधिक का दंडादेश भुगत चुका है और **लखन लाल के मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में अपीलार्थी दंडादेश को अपास्त करने के बाद निर्मुक्त किए जाने का हकदार है।

12. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने अपीलार्थी के प्रतिवाद और प्रार्थना का विरोध किया। उन्होंने निवेदन किया कि अपीलार्थी अब तक मौन रहा और पहले किशोरिता का दावा कभी नहीं किया। पहले उक्त आधार नहीं लेने पर अपीलार्थी उक्त अधिनियम के किसी लाभ को पाने का हकदार नहीं है।

13. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि वैकल्पिक रूप से उस पर उक्त अधिनियम की धारा 15 के प्रावधान के अधीन विचार किए जाने की आवश्यकता है और उसे उक्त अधिनियम की धारा 15 के अधीन समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजा जा सकता है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि धारा 7A (2) के प्रावधान के अधीन न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश प्रभावहीन समझा जाएगा।

14. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों, जिनको अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्दिष्ट किया गया है और जिन पर विश्वास किया गया है, में धारा 7A (2) के प्रभाव पर विचार नहीं किया गया था और इस प्रकार, यह मामला उन निर्णयों द्वारा आच्छादित नहीं है।

15. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अपीलार्थी की दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय की और किशोर न्याय बोर्ड, सरायकेला-खरसावाँ द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों/साक्ष्यों पर पूरी तरह चर्चा करने के बाद पाया कि अभियोजन अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 सहपठित 307/34 के अधीन आरोप स्थापित करने में सक्षम हुआ था।

16. विद्वान अवर न्यायालय विस्तृत चर्चा पर और अ॰ सा॰ 1 से अ॰ सा॰ 9 के परिसाक्ष्यों तथा अ॰ सा॰ 10 और अ॰ सा॰ 11 के चिकित्सीय साक्ष्य पर विचार करने के बाद उक्त निष्कर्ष पर आया है।

विद्वान विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप को युक्तियुक्त संदेह के परे स्थापित किया गया पाया।

17. अभिलेख पर उपलब्ध तथ्य और साक्ष्य के सूक्ष्म संवीक्षण पर हम विद्वान विचारण न्यायालय के निष्कर्ष में दुर्बलता नहीं पाते हैं।

18. अपीलार्थी के दोष को स्थापित करने के लिए पर्याप्त सामग्री एवं साक्ष्य की दृष्टि में, अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और निष्कर्षों को चुनौती नहीं दिया है किंतु **लखन लाल** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और दांडिक अपील **(डी॰ बी॰) सं॰ 777 वर्ष 2009** में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के आलोक में आक्षेपित दंडादेश को अपास्त करके अपराध की कारिता की तिथि पर उसकी किशोरिता के आधार पर अपीलार्थी की निर्मुक्ति के लिए जोरदार प्रार्थना किया है।

19. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने अधिनियम की धारा 7A (2) के अधीन प्रावधान के आलोक में समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजने के लिए हमें आश्वस्त करने का प्रयास किया।

20. दोनों पक्षों के विस्तृत तर्कों को सुनने पर और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 के प्रावधानों और **लखन लाल (ऊपर)** सहित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों का परीक्षण करने पर हम विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ के निवेदन को स्वीकार करने में अक्षम हैं।

21. अधिनियम की धारा 7A अनुसरित की जाने वाली प्रक्रिया प्रावधानित करती है जब किसी न्यायालय के समक्ष किशोरिता का दावा किया जाता है। धारा 7A का पठन निम्नलिखित है :–

*^^7-A- **fdlh U;k;ky; d le{k fd'kkjkoLFkk dk nkok fd, tku ij vulj.k dh tku okyh ifØ;k-**&(1) tc dHkh fdlh U;k;ky; d le{k fd'kkjkoLFkk dk dkb nkok fd;k tkrk g ;k U;k;ky; dh ;g jk; g fd vfHk;Dr 0;fDr vijkèk dkfjr gku dh rkjh[k dk fd'kkj Fkk rc U;k;ky; ,l 0;fDr dh vk; dk voèkkj.k dju d fy; tkp djxk] ,lk lk{; yxk tk vko';d gk (fdUr 'kiFk&i= ij ugh) vkj bl ckj e mldh fudVre vk; dk dFku djr g, fu"d"k vfHkfyf[kr djxk fd og 0;fDr fd'kkj ;k ckyd g vFkok ugh%*

ijUr fd'kkjkoLFkk dk nkok fdlh U;k;ky; d le{k fd;k tk ldxk vkj ml fdlh Hkh iØe ij] ;gk rd fd ekey d vfre fuiVku d i'pkr Hkh] ekU;rk nh tk,xh vkj ,l nko dk bl vfèkfu;e e vkj mld vèkhu cuk, x, fu;ek d micUèkk d vulkj voèkkj.k fd;k tk,xk] Hky gh mldh fd'kkjkoLFkk bl vfèkfu;e d ikjEHk dh rkjh[k dk ;k mll igy lekIr gk xb gkA

*(2) ;fn U;k;ky; bl fu"d"k ij igprk g fd dkb 0;fDr mi&èkkjk (1) d vèkhu dkfjr dju dh rkjh[k dk fd'kkj Fkk] rk og ml fd'kkj dk lefpr vkn'k ikfjr fd, tku d fy, ckM dk Hktxk] vkj ;fn U;k;ky; }kjk dkb n.Mkn'k ikfjr fd;k x;k g rk ;g le>k tk,xk fd mldk dkb iHkko ugh gA**

22. उक्त धारा के सादे पठन पर हम पाते हैं कि किसी भी चरण पर किशोरिता का दावा उठाया जा सकता है और इसे विनिश्चित किया जा सकता है भले ही किशोर की किशोरिता इस अधिनियम के आरंभ होने की तिथि पर अथवा इसके पहले समाप्त हो गयी हो।

23. इस प्रावधान की दृष्टि में, अपीलार्थी का दावा इस न्यायालय द्वारा ग्रहण किया गया था और बोर्ड द्वारा इसकी जाँच करवायी गयी थी।

24. किशोर न्याय बोर्ड, सरायकेला–खरसावाँ ने जाँच करने के बाद रिपोर्ट दिया कि अपीलार्थी अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर था। प्रत्यर्थी राज्य द्वारा उक्त रिपोर्ट को चुनौती नहीं दी गयी है।

25. धारा 7A (2) प्रावधानित करती है कि यदि न्यायालय किसी व्यक्ति को अपराध की कारिता की तिथि पर किशोर पाता है, यह समुचित आदेश पारित करने के लिए किशोर को बोर्ड के पास भेजेगा और दंडादेश, यदि हो, प्रभावहीन समझा जाएगा।

26. जब एक बार अपीलार्थी किशोर अभिनिर्धारित किया गया है, उसे उक्त प्रावधान के अधीन समुचित आदेश पारित करने के लिए बोर्ड के पास भेजा जाना चाहिए था।

27. किंतु, अधिनियम की धारा 15, जो किशोर के संबंध में बोर्ड द्वारा आदेश पारित करने के लिए प्रावधान बनाती है, धारा 15 (1) (g) के तहत तीन वर्ष की अवधि के लिए किशोर को विशेष गृह भेजने का महत्तम दंड विहित करती है।

28. न्यायालय में विवादित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी 9 वर्षों से अधिक का दंडादेश भुगत चुका है।

29. लाखन लाल बनाम बिहार राज्य, AIR 2011 Supreme Court 842, मामले में अपीलार्थी लाखन लाल उच्च न्यायालय द्वारा अपनी दांडिक अपील की खारिजी से व्यथित था जिसके द्वारा हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित 34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट की गयी थी। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपील की सुनवाई के दौरान यह निवेदन किया गया था कि अपराध की कारिता के समय पर अपीलार्थी उक्त अधिनियम की धारा 2 (k) के अर्थ के अंतर्गत किशोर था और इसलिए, अपीलार्थी के विरुद्ध पारित दंडादेश अपास्त किए जाने का दायी है। तत्पश्चात माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, AIR 2005 SC 2731;** मामले में संवैधानिक पीठ के निर्णय और **भोला भगत बनाम बिहार राज्य, 1997 (8) SCC 720; गोपीनाथ घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, 1984 Supp SCC 228; भूपराम बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, 1989 (3) SCC 1** और **प्रदीप कुमार बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, 1995 Supp (4) SCC 419** मामलों में निर्णयों सहित पूर्व न्यायिक उद्घोषणाओं के आलोक में उक्त निवेदनों पर विचार किया। तब माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि आरोपों के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि संपोषित करते हुए उनको अधिनिर्णीत दंडादेशों को अपास्त करने की आवश्यकता है। **लखन लाल (ऊपर)** मामले में विचार किए जाने की तिथि पर अपीलार्थीगण 40 वर्ष की आयु पार कर चुके थे। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया था विशेष गृह के वातावरण के लिए यह उपयुक्त नहीं होगा और इस तथ्य की दृष्टि में कि वे 2000 अधिनियम की धारा 15 के अधीन प्रावधानित तीन वर्षों की महत्तम अवधि की तुलना में अधिक के दंडादेश की वास्तविक अवधि भुगत चुके थे। भारतीय दंड संहिता की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि करते हुए उनको अधिनिर्णीत दंडादेश अपास्त कर दिया गया था।

30. वर्तमान मामले के स्वीकृत तथ्यों की दृष्टि में हमारा दृष्टिकोण है कि अपीलार्थी का मामला **लखन लाल के मामले (ऊपर)** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि और दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 777 वर्ष 2009 में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, जिसमें **लखन लाल के मामले (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अनुसरण किया गया था, की परिधि में आता है।

31. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी अब 33 वर्ष की आयु का है और हम महसूस करते हैं कि उसको विशेष गृह भेजना उपयुक्त नहीं होगा विशेषत:; जब वह अधिनियम की धारा 15(1)(g) के अधीन प्रावधानित विशेष गृह में परिरोध की तीन वर्षों के दंड की महत्तम अवधि के विरुद्ध 9 वर्षों से अधिक का दंडादेश पहले ही भुगत चुका है।

32. यहाँ पहले की गयी चर्चा और दर्ज किए गए कारण की दृष्टि में भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 सह-पठित धारा 307/34 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि संपुष्ट करते हुए हम उसको अधिनिर्णीत दंडादेश अपास्त करते हैं।

33. तद्नुसार, अपीलार्थी को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

34. यह अपील निपटायी जाती है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

मैली देवी

cuke

दामोदर घाटी निगम एवं अन्य

W.P. (S) No. 2687 of 2013. Decided on 24th October, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

श्रम एवं औद्योगिक विधि–पेंशन–डी॰ वी॰ सी॰ सी॰ पी॰ एफ॰ योजना में बने रहने के लिए और पेंशन तथा उपदान योजना नहीं चुनने के लिए विकल्प का प्रयोग किया जाना था–भले ही डी॰ वी॰ सी॰ सी॰ पी॰ एफ॰ योजना से डी॰ वी॰ सी॰ पेंशन-सह-उपदान योजना में जाने के लिए कर्मचारी द्वारा विकल्प का प्रयोग नहीं किया गया है, दिनांक 27.3.1989 के ओ॰ एम॰ के निबंधनानुसार कर्मचारी को पेंशन का लाभ प्रदान किया जाएगा–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Ms. Suchitra Pandey, For the Petitioner; Ms. Debolina Sen Hirani, For the DVC.

न्यायालय द्वारा–याची निम्नलिखित प्रार्थनाओं को करते हुए इस न्यायालय के पास आया है:–

"(i) fnukd 14.7.2008 d i= l0 AP/Miscl/369, ft ld }kjk vkj ft ld vèkhu ikfjokfjd i'ku dh etjh d fy, vihy vLohdkj dj nh x;h Fkh] d vfHk[kMu d fy, mRç"k.k dh çÑfr dk fjV vFkok lefpr fjV@vkn'k@fun'k tkjh dju d fy,A

,o

(ii) fnukd 8.5.2009 d i= l0 PLPP/Mailee Devi 8237, ft ld }kjk vkj ft ld vèkhu fnukd 14.7.2008 d i=k d rgr lfpr fu.k; li.k cuk;k x;k Fkk@vuekfnr fd;k x;k Fkk] d vfHk[kMu d fy, lefpr fjV@vkn'k@fun'k vFkok mRç"k.k dh çÑfr dk fjV vkx tkjh dju d fy,A

,o

(iii) gdnkjh dh frfFk l ;kph dk lkfofèkd C;kt d lkFk ikfjokfjd i'ku cdk;k fueDr dju d fy, çR;Fkhx.k ij lefpr fjV@vkn'k@fun'k vFkok fun'k d fy, fjV tkjh dju d fy,A

,o@vFkok

*(iv) dkb vU; lefpr fjV@vkn'k@fun'k ft l ;kph dk U;k; nu d fy, lefpr vkj ;kX; le>k tk ldrk gA***

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची के पति की मृत्यु सेवारत रहते हुए दिनांक 18.2.1987 को हो गयी है और तत्पश्चात, याची ने दिनांक 5.5.1999 के पत्र के तहत वरीय कार्मिक प्रबंधक, बोकारो थर्मल पावर स्टेशन डी॰ वी॰ सी॰ से अपने पति के सेवानिवृत्ति देयों का भुगतान करने के लिये कहा। याची ने पुन: सहायक लेखा अधिकारी (पी॰ आर॰) से अपने पति के बकाया देयों का भुगतान करने का अनुरोध करते हुए दिनांक 8.6.2000 का पत्र लिखा। दिनांक 14.7.2008 के पत्र द्वारा याची को सूचित किया गया था कि विकल्प जिसका प्रयोग करने की आवश्यकता कर्मचारी को थी, के अनुपस्थिति में याची का दावा स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

3. आक्षेपित आदेश को न्यायोचित ठहराते हुए ऑफिस मेमोरेन्डम दिनांक 27.3.1989 को दोहराते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि चूँकि याची के पति की मृत्यु वर्ष 1987 में ही हो गयी थी, उसके पास विकल्प का प्रयोग करने का अवसर नहीं था जैसा दिनांक 27.3.1989 के ऑफिस मेमो के अधीन प्रावधानित किया गया है। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि उक्त मेमो के खंड 1 के निबंधनानुसार भले ही विकल्प का प्रयोग नहीं किया जाता है, याची डी॰ वी॰ सी॰ पेंशन–सह–उपदान योजना के लाभ की हकदार है जिससे याची को न्यायोचित रूप से इनकार नहीं किया जा सकता है।

6. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची शुद्ध हृदय से इस न्यायालय के पास नहीं आयी है और उसने रिट याचिका में प्रकट नहीं किया है कि उसने आधिकारिक वास–सुविधा खाली नहीं किया है। वह आगे निवेदन करती हैं कि चूँकि विकल्प का प्रयोग नहीं किया गया था, याची का दावा सही प्रकार से अस्वीकार किया गया है।

7. दिनांक 27.3.1989 के ऑफिस मेमो को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^fo"k; ij Hkkjr ljdkj d vkn'kk d vulj.k e fuxe u fuEufyf[kr fu.k; fd;k g%&

1. MhO ohO lhO lhO ihO ,QO d leLr lnL;] tk fnukd 1.1.1986 dk lok e Fk vFkok bl vfèklpuk dk tkjh dju dh frfFk ij vHkh Hkh lok e g] dk mud fofufn"Vr% MhO ohO lhO lhO ihO ,QO ;ktuk dk fodYi ugh puu d vè;èkhu MhO ohO lhO i'ku&lg&minku ;ktuk e 'kkfey le>k tk,xkA bld lkFk lyXu Qke e fnukd 31 vxLr] 1989 d Hkhrj fodYi puuk gkxk vkj y[kk vfèkdkjh (fufèk)] dnh; y[kk dk;ky;] MhO ohO lhO dk lfpr fd;k tkuk gkxkA MhO ohO lhO lhO ihO ,QO d leLr lnL;k ftul ,lk fodYi ml frfFk d Hkhrj çklr ugh fd;k x;k g dk i'ku ;ktuk e 'kkfey le>k tk,xkA

2. MhO ohO lhO lhO ihO ,QO d lnL; tk fnukd 1.1.1986 dk lok e Fk%

(a) fdr bl vfèklpuk d tkjh gku d igy lokfuoÙk gk x, g vkj ftud ekey e mud lhO ihO ,QO [kkrk dk vfre 0;oLFkkiu dk fn;k x;k g d ikl Hkh i'ku ;ktuk e 'kkfey gku dk fodYi gkxk ijUr ;g fd o fuxe l v'knk;h jkf'k iku vkj i'ku&lg&minku ;ktuk dk ykHk yu d ç;ktu l bl mud }kjk ykVk, tku d chp dh vofèk d fy, ml ij C;kt d lkFk viu lhO ihO ,QO [kkr d 0;oLFkkiu e Hkxrku dh x;h fuxe dh v'knk;h jkf'k dk lefir djr gA

(b) fdr vc lokfuoÙk gk x, g vkj ftud ekey e fuxe d v'knku vFkok bld fdlh Hkkx dk Hkxrku ugh fd;k x;k g] mUg lokfuofÙk ykHk vuKkr fd, tk,x ekuk o MhO ohO lhO i'ku&lg&minku ;ktuk }kjk vkPNkfnr Fk tc rd o fofufn"Vr% lhO ihO ,Q0 dk viu ikl j[kuk ugh pur gA

(c) fdr vc viuh lok fuofÙk d igy vFkok ckn e mudh eR; gk pdh g] mud ekey dk ijk (1) vFkok ijk 2(a) ;FkkfLFkfr] d vu#i 0;oLFkkfir fd;k tk,xkA ,l ekeyk e MhO ohO lhO i'ku ;ktuk d vèkhu ykHk dk ik= cuu d fy, fnukd 31.8.1989 d Hkhrj foèkok@foèkj@uke funf'kr@fofèkd mÙkjthoh }kjk fodYi dk ç;kx fd;k tk,xkA

(3) mDr ;ktuk d fy, tc ,d ckj fodYi dk ç;kx dj fy;k tkrk g] og vfre cu tk,xkA mDr ijk 2(a) vkj (c) }kjk vkPNkfnr ekeyk d çdkj e mDr ;ktuk d erkfcd i'ku puu oky lhO ihO ,Q0 d lnL; fnukd 31 vxLr] 1989 d Hkhrj lokfuofÙk d le; ij fudkyh x;h jkf'k ij C;kt d lkFk fuxe dk v'knku okil ykVku d nk;h gkxA mud fodYi d Lohdj.k d igy rhu ekg d ij foyc dh vofèk d fy, 10% okf"kd nj ij okil ykVu okyh jkf'k ij ljy C;kt Hkxr; gkxkA

(4) lhO ihO ,Q0 [kkrk e lCIfØI'ku@v'knku dk tkjh ugh j[ku dh dkjokb doy fodYi dk ç;kx dju d fy, fofufn"V vfre frfFk lekIr gk tku ij dh tk ldrh gA

(5) ;g vkO ,e0 mu depkfj;k ij ykx ugh gkxk ftUg iufu;ktu ij MhO ohO lhO lhO ihO ,Q0 dk lCIØkbc dju dh vuefr nh tkrh gA ;g od&pkTM LFkkiu ij lokjr depkfj;k ij rc rd ugh ykx gkxk tc rd mUg fu;fer dMj@LFkkiu d vèkhu ugh yk;k tkrk g vkj depkjh tk dk;yk [kku Hkfo"; fufèk }kjk 'kkfIr gkr gA

*(6) bl vkO ,e0 dk tkjh dju d ckn Hkjrh fd, x, leLr u, 'kkfey gku oky 0;fDr;k dk lhO ihO ,Q0 vFkok thO ihO ,Q0 d fy, fodYi puu dh vuefr nh tk ldrh g] ftl Hkh o puuk pkgr gA***

8. मैं पाता हूँ कि दिनांक 27.3.1989 के ऑफिस मेमोरेन्डम के गलत व्याख्या पर याची का दावा अस्वीकार कर दिया गया है। दिनांक 27.3.1989 के मेमोरेन्डम के पैरा 1 में यह विनिर्दिष्टत: स्पष्ट किया गया है कि समस्त कर्मचारी जो दिनांक 1.1.1986 को सेवा में थे, को पेंशन एवं उपदान योजना में शामिल समझा जाएगा। डी॰ वी॰ सी॰ सी॰ पी॰ एफ॰ योजना में बने रहने के लिए और न कि पेंशन तथा उपदान योजना चुनने के लिए विकल्प का प्रयोग किया जाना था। याची का पति दिनांक 1.1.1986 को सेवा में था और इसलिए, वह डी॰ वी॰ सी॰ पेंशन-सह-उपदान योजना के अधीन लाभ का हकदार था। दिनांक 27.3.1989 के ऑफिस मेमोरेन्डम के पैरा 2 (b) का सादा पठन प्रकट करता है कि भले ही कर्मचारी द्वारा डी॰ वी॰ सी॰ सी॰ पी॰ एफ॰ योजना से डी॰ वी॰ सी॰ पेंशन-सह-उपदान योजना में जाने के लिए विकल्प का प्रयोग नहीं किया गया है, कर्मचारी को पेंशन का लाभ दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त, वर्तमान मामले में चूँकि याची के पति की मृत्यु दिनांक 18.2.1987 को हुई थी और ऑफिस मेमो दिनांक 27.3.1989 को जारी किया गया था, अत:, याची के पति के पास विकल्प चुनने का अवसर नहीं था जैसा दिनांक 27.3.1989 के ऑफिस मेमो में प्रावधानित किया गया है।

9. पूर्वोक्त की दृष्टि में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।